In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# उत्तराखण्ड हिमालय की वनौषधियां एवं खनिज

## (Medicinal Plants & Minerals of Uttarakhand Himalaya)

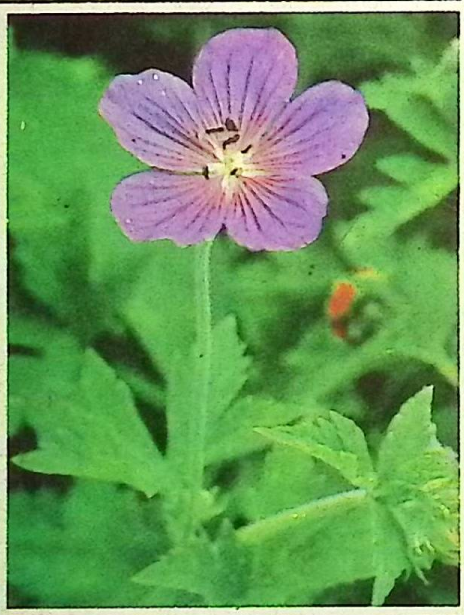

लालजड़ी *Geranium wallichianum*

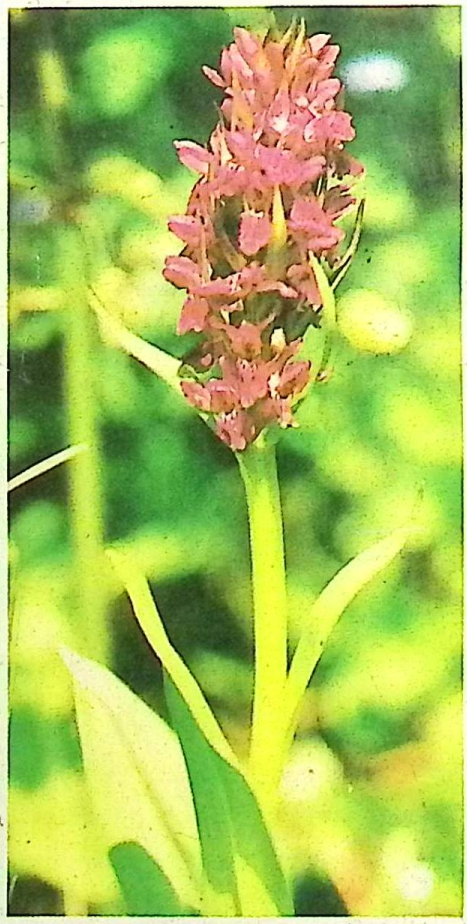

सालमपंजा *Dactylorhiza hatagirea*

चन्द्रायण *Paeonia emodi*

डॉ॰ मायाराम उनियाल

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

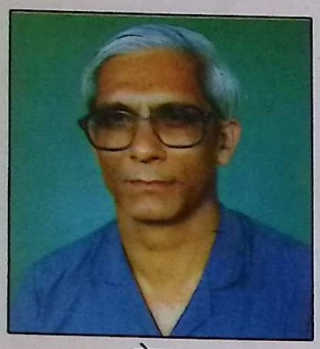

लेखक

## डॉ॰ मायाराम उनियाल

*जन्म स्थान :* दोणी, कोटीफैगूल, टिहरी गढ़वाल, उ.प्र.।
*जन्म तिथि :* 3-5-1940
*वर्तमान पद :* निदेशक, भारतीय काय चिकित्सा संस्थान, पटियाला (केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली)
*मानद उपाधि :* वनौषधि विद्यापति (श्रीलंका) आयुर्वेद पुर्नवसु (भारत)।
*शोधपत्र :* राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय आयुर्वेद पत्र, पत्रिकाओं में लगभग 400 शोध पत्रों का हिन्दी, अंग्रेजी में प्रकाशन।
*प्रकाशन :*

1. उत्तराखण्ड वनौषधि दर्शिका (सचित्र) केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् (भारत सरकार) नई दिल्ली।
2. अष्ठांग संग्रह की वनस्पतियाँ, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. पटना।
3. मेडिसिनल फ्लोरा आफ गढ़वाल हिमालय (अंग्रेजी) श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, लि. नागपुर, महामहिम राष्ट्रपति डॉ॰ शंकरदयाल शर्मा जी द्वारा विमोचन।
4. प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्यगुण विज्ञानम् सचित्र, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. पटना, स्वास्थ्य मंत्री करतारी देवी, हरियाणा सरकार द्वारा विमोचन।
5. संस्कृत साहित्य में पर्यावरण एवं कालिदास की वनस्पतियाँ (सचित्र) श्री शर्मा आयुर्वेद मन्दिर, दतिया।
6. लद्दाख हिमालय की वनसम्पदा एवं तिब्बती चिकित्सा प्रणाली। डाबर इण्डिया द्वारा आयुर्वेद विकास में प्रकाशित सचित्र लेखमाला एवं केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् द्वारा पुरस्कृत।
7. बिहार के आदिवासी एवं जड़ी-बूटियाँ, वैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान, पटना।
8. आयुर्वेद अनुसन्धान-दर्शिका, वैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. पटना।
9. कतिपय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठियों में आयुर्वेद प्रदर्शनियों का आयोजन एवं शोधपत्र प्रस्तुत।
10. वर्ष 1993 में हर्बल एकेडमी एवार्ड से सम्मानित।
11. विदेशयात्रा-श्रीलंका, ब्राजील, सिंगापुर, बैंकाक, नेपाल, मौरेसिस।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Vaidya. Jai Dada Bhatji
National Ayurvedic Library
Punjabi Bagh, New Delhi-26
Call No.....
Book No.....
Acc No.....003674

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# उत्तराखण्ड हिमालय की वनौषधियां एवं खनिज

## (Medicinal Plants & Minerals of Uttarakhand Himalaya)

*लेखक*

**डॉ॰ मायाराम उनियाल**

वनौषधि विद्यापति (श्रीलंका)

आयुर्वेद पुनर्वसु (भारत)

**मधुसूदन उनियाल**

(वनस्पतिज्ञ)

*प्रकाशक*

**बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान**

**बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन. लि॰,**

**पटना-800001 (बिहार)**

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

*भूमिका :*
**श्री बनवारीलाल शर्मा**
प्रबन्ध निदेशक

*प्रकाशक :*
**बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान**
बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०
पटना–800001 (बिहार)

*प्रथम संस्करण :* एक हजार प्रतियाँ

*वर्ष : मई* 1997

*मूल्य :* 350-00

*मुद्रक :*
**लखेड़ा प्रिंटिग प्रेस**
भाना भवन, ए–18, अवन्तिका, सैक्टर–2,
रोहिणी, दिल्ली–110085
दूरभाष : 7274754



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# विषय-अनुक्रमणिका


| | | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. | भूमिका | V |
| 2. | प्राक्कथन | VII |
| 3. | कुलानुसार द्रव्यों के हिन्दी एवं वैज्ञानिक नामों की तालिका | XIII |
| 4. | द्रव्यों के संस्कृत एवं स्थानिक नामों की अकारादिक्रम से तालिका | XXV |
| *प्रथम भाग :* | | |
| 5. | उत्तराखण्ड हिमालय का भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिचय | 1 |
| 6. | संस्कृत कवियों द्वारा हिमालय की महिमा | 7 |
| 7. | आयुर्वेदावतरण का इतिहास | 8 |
| 8. | उत्तराखण्ड के प्रमुख स्थान एवं प्राकृतिक सौन्दर्य स्थल | 17 |
| 9. | मध्यहिमालय का सौन्दर्यस्थल हेमकुण्ड एवं फूलों की घाटी | 33 |
| 10. | नन्दा देवी सेंकचुरी | 37 |
| 11. | उत्तराखण्ड हिमालय : भूमि उपयोग नियोजन | 43 |
| 12. | पर्यावरण सन्तुलन एवं भारतीय संस्कृति में वन | 50 |
| 13. | उत्तराखण्ड में जलवायु के अनुसार जड़ी-बूटी उत्पादन कृषि | 55 |
| *द्वितीय भाग :* | | |
| 14. | औद्भिज द्रव्यों का वानस्पतिक स्वरूप एवं पहचान | 69 |
| 15. | लोक प्रचलित स्थानिक जड़ी-बूटियों से उपचार (फोक्लोर) | 243 |
| 16. | उत्तराखण्ड के जनपदों में कुटीर उद्योग एवं खाद्यसामग्री में उपयोगी वनस्पतियाँ | 253 |
| 17. | उत्तराखण्ड से प्राप्त पशुचारा में उपयोगी पेड़-पौधे | 257 |
| *तृतीय भाग :* | | |
| 18. | उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध औषधोपयोगी खनिज | 260 |
| 19. | उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध रत्न-उपरत्न | 266 |
| 20. | उत्तराखण्ड हिमालय में भू-ऊर्जा के स्रोत | 267 |
| 21. | उत्तराखण्ड हिमालय के वन्य जीव-जन्तु | 268 |
| 22. | कस्तूरी का स्रोत : कस्तूरा मृग | 269 |
| 23. | वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दतालिका | 271 |
| 24. | सन्दर्भ ग्रन्थ तालिका | 275 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

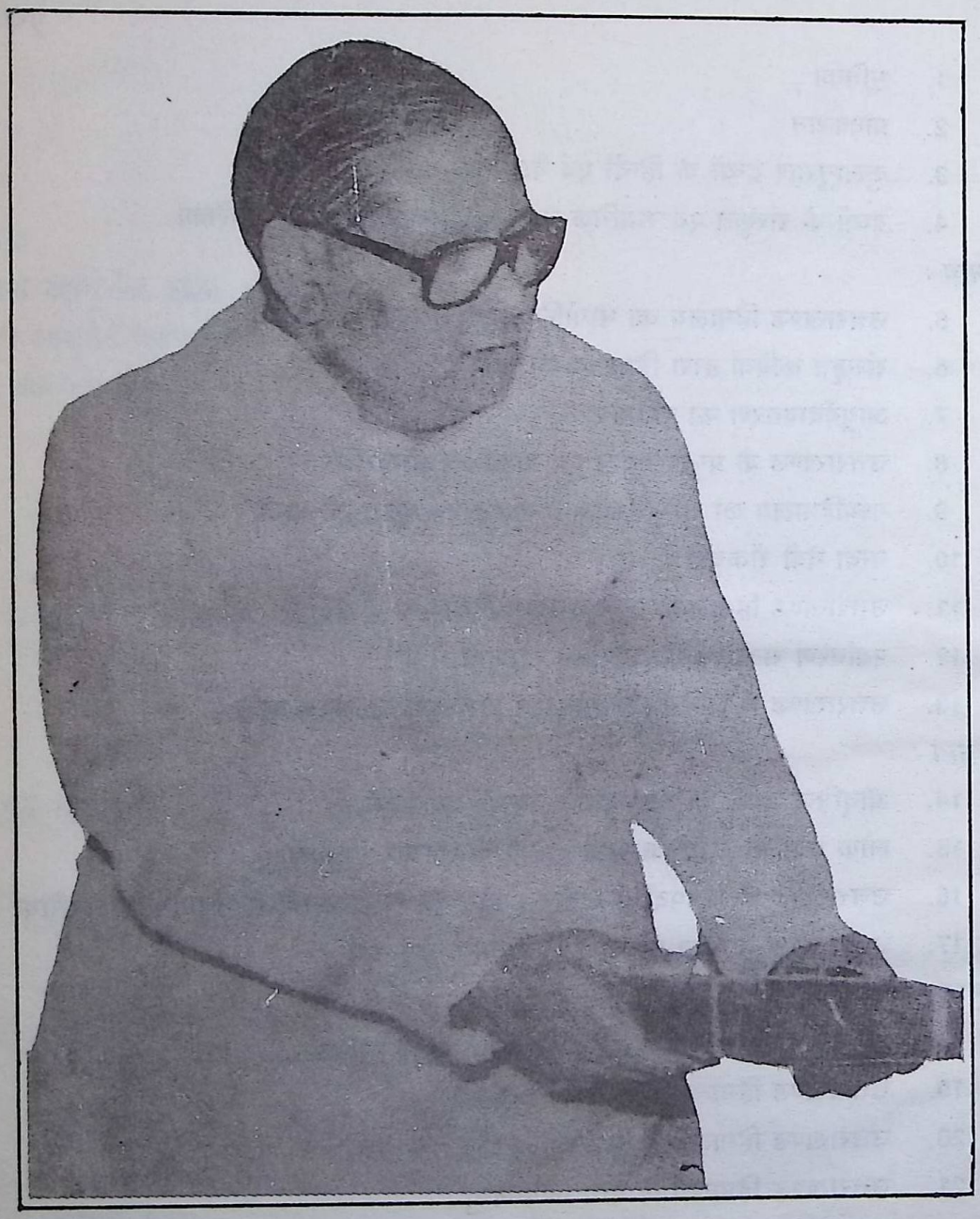

प्रेरणास्रोत, श्री बनवारी लाल शर्मा, प्रबन्ध निदेशक श्री बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि., पटना को सादर समर्पित ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# भूमिका

आयुर्वेद संसार का न केवल प्राचीनतम चिकित्सा विज्ञान है अपितु जीवन का भी विज्ञान है। अतयेव स्वस्थ एवं आतुर दोनों के लिए उपादेय त्रिसूत्रात्मक शाश्वत एवं आप्तोपदिष्ठ आयुर्वेद ज्ञान की परम्परा विकसित हुई। जैसा कि चरक संहिताकार ने निर्दिष्ट किया है।

**यथा : हेतुलिंगौषधं ज्ञानं स्वस्थातुर परायणम्।**
**त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुवधेयं पितामहः।।** *(चरक सूत्रस्थान)*

अर्थात हेतु के द्वारा उन कारणों का बोध होता है जिनके द्वारा शरीरस्थ दोषों का संचय, प्रकोप, आदि होकर विकार उत्पन्न होते हैं। शरीरस्थ दोषों के संचय प्रकोप, प्रसर, स्थानसंश्रय, व्यक्ति एवं भेदावस्था में जो लक्षण शरीर में उत्पन्न होते हैं, उसे लिंग सूत्र कहते हैं। शरीर को स्वस्थ रखने और शारीरिक विकृति को दूर कर शरीर में दोषों की साम्यावस्था का विशेष महत्व है। औषधि शब्द से आहार–विहार का भी बोध होता है। औषधि शब्द से आयुर्वेद में औद्भिज, जांगम, प्राणिज, पार्थिव, खनिज सभी प्रकार के द्रव्यों का प्रयोग होता है। इस विषय का विस्तृत ज्ञान एवं वर्णन जिस शास्त्र में किया जाता है उसे आजकल द्रव्यगुण विज्ञान एवं निघण्टुशास्त्र (मेटोरियामेड़िका) कहते हैं। अतयेव चिकित्सक को द्रव्यगुण शास्त्र का विस्तृत रूप से नामरूप परिचय, रस, गुण, वीर्य, विपाक एवं गुण धर्मो की जानकारी होना अपेक्षित है।

वैदिक काल से ही मानव ने जड़ी–बूटियों द्वारा रोगों से छुटकारा दिलाने में सफलता प्राप्त की है। आज भी भारत के कतिपय सूदूर ग्रामीण आंचलों, हिमालय के सीमावर्ती भागों में बसने वाले आदिवासी जन–जातियां, ग्रामीण वैद्य, पशुपालक कतिपय पारम्परिक स्थानिक जड़ी–बूटियों द्वारा सफल चिकित्सा करने में सक्षम है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये उत्तराखण्ड हिमालय के सुदूर स्थित सीमावर्ती जनपदों में लोक प्रचलित स्थानिक जड़ी–बूटियों खनिजों एवं जान्तव द्रव्यों की उपलब्धता का चयन लेखक ने आलेख रूप में तीन भागों में तैयार किया है, जो कि सराहनीय कार्य हैं।

उत्तराखण्ड हिमालय को भारत का ताज, प्रहरी, और नगाधिराज आदि कतिपय नामों से सम्बोधित किया गया है। इसकी गोद में जहां साहित्य और संस्कृति ने जन्म लिया है वहीं विज्ञान के लिये भी हिमालय को अद्भुत प्रयोगशाला बनाकर वैज्ञानिकों को शोधकार्य के लिये अवसर दिया है। सत्य की खोज ही विज्ञान का आधार है। विज्ञान प्रकृति के सिद्धान्तों को सत्य की कसौटी पर प्रस्तुत करता है। इस हिमालय ने अनादि काल से ही अपने अस्तित्व के कारण, साधु सन्त, ऋषि मुनि, पर्यटक एवं वैज्ञानिको को सदैव अपनी ओर आकृष्ट किया है। यह हिमालय कतिपय धार्मिक तीर्थो, बर्फ से ढकी सनातन पर्वत श्रेणियों, जल–प्रपातों एवं कल–कल निनाद करती नदियों एवं वेगवान् झरनों से भरपूर है। हिमाच्छादित क्षेत्रों, घाटियों के समीप हरी–भरी मखमली बुग्याल (एलपाइन मेडोज) में कतिपय किस्मों के रंग–बिरगे सुगन्धित औषधीय पौधे नैसर्गिक रूप से विद्यमान हैं। हिमालय की खनिज सम्पदा के कुछ प्रमुख खनिज



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लोहा, तांबा, मैग्नेसाइट, फास्फोराईट, जिप्सम, चूना आदि खनिज प्रमुख है। भू उर्जा में उपयोगी गर्म पानी के स्रोतों की उपलब्धता इस उत्तराखण्ड हिमालय में विद्यमान है। आज आर्थिक दृष्टिकोण से हिमालयं की वनसम्पदा की स्थिति शोचनीय है। वह एक गम्भीर शोचनीय विषय है कि कुछ दशको से हिमालय की प्राकृतिक वनस्पतियां दिनों दिन लुप्त होती जा रही है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग कलकता द्वारा प्रकाशित महत्वपूर्ण दस्तावेज में लगभग 214 प्रजातियां संकटग्रस्त हो चुकी है। इसलिये आवश्यक हो गया है कि हिमालय के पर्यावरण सन्तुलन हेतु इन नैसर्गिक वनों का विकास एवं अनैतिक विदोहन को रोकने के उपायों पर ध्यान दिया जाय। जड़ी–बूटियों की खेती कार्यक्रम को विकसित किया जाय। उपरोक्त सभी उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए **डॉ॰ मायाराम उनियाल** ने उत्तराखण्ड हिमालय की वनौषधियां एवं खनिज नामक रचना तैयार की है। प्रस्तुत पुस्तक में उत्तराखण्ड हिमालय के आठों जनपदों की वनौषधियों का भौगोलिक विवरण, संस्कृत, स्थानिक नाम, ग्रामीण चिकित्सकीय प्रयोग, शास्त्रीय योग एवं आयुर्वेदिक गुणधर्मो का लगभग सहस्त्राधिक वनौषधि द्रव्यों, खनिजों, व कस्तूरामृग जैसे उपयोगी वन्य जन्तुओं का समावेश किया है। पुस्तक में वैज्ञानिक शब्दावली का प्रयोग विशेष रूप से किया गया जोकि सराहनीय है। बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन शोध संस्थान पटना कतिपय गवेषणात्मक मौलिक रचनाओं के प्रकाशन को प्राथमिकता देता है।

**डॉ॰ मायाराम उनियाल** जी द्वारा लिखित पुस्तक का प्रकाशन सामयिक आवश्यकता की दिशा में एक प्रशंसनीय प्रयास है। डॉ॰ उनियाल इस विषय के न केवल अधिकारी विद्वान है अपितु उन्होनें स्वयं लगभग 25 वर्षो से भी अधिक समय तक दुर्गम पर्वताँचलों, उत्तराखण्ड, सिक्किम, भूटान, लेह–लद्दाख, हिमांचल प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश, नेपाल, आदि पर्वतीय स्थानों का अनेक बार वनौषधि भ्रमण किया है तथा कतिपय उपयोगी ग्रन्थ प्रकाशित किये है। अतः यह उपयोगी रचना उत्तराखण्ड के आर्थिक विकास के साधनों की उपलब्धता में एक महत्वपूर्ण सामग्री होगी ऐसी मेरी धारणा है। ऐसी उपयोगी पुस्तक के प्रणयन के लिये डॉ॰ मायाराम उनियाल धन्यवाद के पात्र है। मुझे विश्वास है कि आयुर्वेद जगत अनुसंधान के क्षेत्र में इस महत्वपूर्ण रचना का यथोचित स्वागत होगा।

पटना (बिहार)
मई, 1997

**बनवारी लाल शर्मा**
प्रबन्ध निदेशक, बैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि.
एवं संस्थापक बैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान
पटना (बिहार)



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# लेखकीय-प्राक्कथन

मानव सृष्टि के आदि पुरूष भगवान मनु के साथ–साथ मानव भी अपने खान–पान वस्त्र आदि साधनों की खोज अपने जीवन के विकास के साथ–साथ करता चला आया है। सर्वप्रथम मनुष्य ने अपनी बिमारियों के ईलाज के लिए मिट्टी, जल, अग्नि एवं वायु पंच महाभूत को अपना आधार बनाया। ज्वर, रक्त–पित्त, पैत्तिक विकारों के शमन हेतु जल का प्रयोग, सर्दी एवं कास, आदि कफज व्याधियों तथा वायु विकार हेतु धूप, अग्नि, स्वेद, वाष्प का उपयोग, चर्म रोग एवं फोड़ा–फुन्सी के लिए गीली मिट्टी का लेप करता चला आया है। आजकल यह प्रणाली प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के नाम से जानी जाती है। धीरे–धीरे मानव का जैसा विकास होता गया उसने स्थावर एवं जांगम सृष्टि में उत्पन्न द्रव्यों, खाद्य पदार्थो को कच्चाखाना, पकाकर खाना, किस वस्तु को खाना, किसे न खाना, कैसे पेय पदार्थ पीना या न पीना आदि नियमों का निर्माण किया ज्यों–ज्यों सृष्टि फैली त्यों–त्यों अन्य लोगों ने भी अपने अनुभवों को प्रकट करना आरंभ किया, ये अनुभव आयुर्वेद के अनुभव थे।

महर्षि चरक ने आयुर्वेद को अनादि एवं शाश्वत कहा है, क्योंकि जब से जीवन का प्रारंभ हुआ और जब से जीव का ज्ञान हुआ तभी से आयुर्वेद की सत्ता प्रारंभ होती है। सुश्रुत ने यहां तक कहा है कि ब्रह्मा ने सृष्टि से पूर्व आयुर्वेद की रचना की है। सभी संहिताकारों ने ब्रह्मा से आयुर्वेद का प्रादुर्भाव बताया है ।

**यथा : सोऽमायुर्वेदः शाश्वतोऽयं निर्दिश्यते।**
**अनादित्वात् स्वभावसंसिद्ध लक्षणत्वात्।।** *(च०सू०अ० 30)*

आयुर्वेद अनादि काल से वनस्पतियों का प्रयोग अपने खाद्य सामग्री, औषधि, रहन–सहन, कला एवं संस्कृति के रूप में करता चला आ रहा है जिससे प्राणिमात्र के रोग निवारण के नियम एवं उपचार बताये गये हैं। इन्हीं नियमों के आधार पर वेदों में आयुर्वेद सम्बन्धी सूक्त बनाये गये। कालान्तर वे ही अनुभव संहिताओं के रूप में लिपिबद्ध करते समय इन आर्ष ग्रंथों ने यह स्वीकार किया है कि लोक परम्परा उपयोगी ज्ञान कहीं से प्राप्त करना बुरा नहीं है।

**यथा : कृत्स्नों हि लोको बुद्धिमतामाचार्य।**
**शत्रु श्चा बुद्धिमताम्।।** *(चरक वि० 8/14)*

मानव विकास के साथ–साथ मनुष्य ने प्रकृति की और दृष्टि डाली और वह धीरे–धीरे वनौषधि द्रव्यों की खोज करने लगा तथा कतिपय द्रब्यों को अनायास चबाकर देखा गया कि रोगी उसे चबाकर स्वस्थ हो गया। मंत्रों द्वारा भी रोगों की चिकित्सा का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है, जिसका उदाहरण रामायण में भगवान श्री राम के वनवास के समय माता कौशल्या को यह ज्ञान था कि युद्ध में एवं आकस्मिक आघात पर कौन–सी औषधि का प्रयोग होना चाहिए। उस समय माता ने श्री राम के मस्तक पर अक्षत, रोली, चन्दन लगाया एवं विशल्यकर्णी नामक औषधि को मंत्रों द्वारा पढ़ते हुए श्री राम के हाथ में बांध दिया। इसी प्रकार मुनि विश्वामित्र ने भी श्री राम को बला, अंतिबला नाम के औषध मंत्र प्रदान किये थे जिससे श्री राम को रोग, चिन्ता आदि से बचाया जा सके।

**यथा : औषधिं च सुसिद्धार्थ विशल्यकर्णीशुभाम्।**
**चकार रक्षां कौशल्या मंत्रमभिजजापच।।**
**मंत्रंतत्रां गृहाणत्वं, वलामतिवलां तथा।**
**न श्रमों न ज्वरो व, ते नस्तस्यविपर्ययम्।।** *(बालमीकीरामायण–वन काण्ड)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसी प्रकार प्राचीन काल से रोगोपचार हेतु तीन बातों का प्रचलन था, जिसमें मंत्र, रोग को उत्पन्न करने वाला देवता एवं जड़ी–बूटियों द्वारा चिकित्सा। यथा :

1. देविक अनुभूतियों द्वारा 2. पशु–पक्षियों द्वारा 3. आकस्मिक प्रयोगों द्वारा।

**1. देविक अनुभूतियों द्वारा (टैलिपैथि) :** इस विधि द्वारा औषधि द्रव्यों की खोज करने वाला देश भारत एवं चीन है। इस प्रकारकी खोज करने वाले मनुष्य में एक प्रकार का दैविक ज्ञान होता है कि अमुक वनस्पति अमुकरोग के लिए श्रेष्ठ है। आदिवासी क्षेत्रों में देवी–देवताओं का प्रवेश जब किसी व्यक्ति विशेष में प्रविष्ठ करता है तो वह रोग निवारण एवं ग्रह–बाधाहर के उपाय बताता है।

**2. पशु-पक्षियों द्वारा :** पशु–पक्षियों द्वारा यह देखा गया है कि अस्वस्थ होने पर पशु–पक्षी स्वयं प्रकृति से औषधि द्रव्यों की खोजकर अपनी चिकित्सा करते हैं। अथर्ववेद में यह स्पष्ट कहा है कि पशु–पक्षियों आदि से भी वनस्पति संबंधी ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। सुअर जिस वीरुध को खाता है, नेवला जिस औषधि को जानता है, सर्प, तथा गंधर्व जिन औषधियों को जानते हैं, उनका रोगी की रक्षा के लिए आह्वान करता हूँ। पुष्पवती, अंकुरवती, फलवती और फलहीन सभी वनस्पतियां माता के सदृश अरिष्ट रक्षार्थ व्यक्ति की रक्षा करे। यह उल्लेख वेदों में वर्णित है।

**यथा : वराहो वेरुधं वीचं वेद भेषजीम्।**
**सर्पा गंधर्वा या विदुस्ता, अस्माअवसे हुवे।।**
**पुष्पवती : प्रसूमती फलिनीऽफला उतः।**
**स मातरं इव दुहामस्मा, अरिष्ठतये।।** *(अथर्ववेद 8/6)*

पशु–पक्षियों को विष, अविष खाद्य सामग्री का घ्राण एवं दैविक अनुभूति से जानकारी हो जाती है। भोजन विषाक्त है या नहीं, इसकी परीक्षा हेतु भारतीय संस्कृति में काकवली, श्वानवली देने की प्रथा है। यदि आहार में विष होगा तो उसके खाने से कौवे का स्वर धीमा पड़ जाता है एवं अधिक खाने से मर जाता है। इसीलिये राजाओं के यहां तोता, मैना, कोयल आदि पक्षी एवं कुत्ता बिल्ली रहते थे। अतः भोजन के समय से पूर्व राजा काग, बन्दर, चकोर, मोर, हंस, कबूतर आदि को भोजन दिया करते थे।

**यथा : म्रियते मक्षिका प्राशः काक सामस्वरोभवेत्।।**
**हंस स्चलति ग्लानि, जीवं जीवस्य जायते।।** *(अष्टांगहृदयः)*

अर्थात् विषयुक्त भोजन सामने आने से ही तोता, मैना, चातक चिल्लाने लगते हैं। हंस के सामने विषयुक्तभोजन रखा जाए, वह लड़खडाते हुए पीछे हटने लगता है। चकोर पक्षी के नेत्र विषयुक्त भोजन देखते ही लाल हो जाते हैं। अन्न को अग्नि में भोजन से पूर्व होमकरने का विधान भी इसी आशय पर निर्भर करता है कि यदि विषयुक्त भोजन अग्नि मे डाले तो वह जोर से चटचटाने लगता है, उसमें मोर के कण्ठ के समान नील ज्योति निकलती है ज्वाला एक सी नहीं होती है ।

**यथा : हुतभुक्तेन चान्ने, भृशं चट चटायते।**
**मयूरकण्ठप्रतिभो, जायते चापि दुःसहः।।** *(वा. रामायण)*

**3. आकस्मिक प्रयोगों द्वारा :** मानव विकास के साथ–साथ मनुष्य ने प्रकृति की ओर दृष्टि डाली और वह धीरे–धीरे वनौषधि द्रव्यों को अपने जीवन के हित एवं अहितकर द्रव्यों को अनायास चबाकर देखा गया तो रोगी उसे चबाकर स्वस्थ हो गया। इसी तरह मानव का विकासपूर्ण रूप से नहीं हुआ था तो भोजन आदि की पूर्ति हेतु वे जंगली जानवरों से या आपस में लड़ जाते थे एवं जिनमें कुछ घायल हो जाते थे, उस समय अपने आपको बचाने के लिए पेड़ो की छाल लगाकर रक्तस्राव रोकते थे या कभी अस्वस्थ हो जाने के कारण कन्दमूल खाकर अपने को स्वस्थ रखते थे।

इसी प्रकार रामायण, महाभारत आदि पौराणिक ग्रंथों में उत्तम गुणवान संतान हेतु औषधि सिद्ध पायष सेवन कराने का विधान था।

**यथा : पायसं प्रतिगृणीत्व पुत्रीयेविदमात्मनः।** *(वा० रामायण)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसी प्रकार रावण जब सीता को हर कर जब लंका ले गया तथा सीता जी वियोग के कारण भोजन सेवन नहीं करती थी तो इन्द्र ने ब्रह्मा जी की आज्ञा से अशोक वाटिका में सीता जी को हविष्यान्न सेवन कराया, जिसके सेवन करने से कई वर्षो तक भूख–प्यास नहीं लगती है।

**यथा : तस्मादन्नमिदं सीते हविष्यान्नमहंस्वयम्।**
**क्षुधा तुषा च रम्भोरू वर्षाणां मयुतैरपि।।** *(वा०रा० अरण्यकाण्ड)*

रीछराज वानर जाम्ववान एवं सुषेण भी कुशल चिकित्सक थे, उन्होंने भी विभीषण द्वारा हनुमान को बुलाकर आदेश दिया कि पर्वत श्रेष्ठ हिमालय के द्रोणगिरि एवं कैलाश पर्वत पर दिप्तिमान कई प्रकार की औषधियां हैं जो अपनी प्रभा से दिशाओं को प्रकाशित किये रहती हैं वह पर्वत सब प्रकार की औषधियों से सम्पन्न है, उनमे संजीवनी, विशल्यकर्णी, सावर्ण्यकर्णी एवं संधानकर्णी मुख्य है।

**यथा : हिमवन्तनगश्रेष्ठं हनुमन्गन्तुमहीम्।**
**मृत संजीवनी चैव विशल्यकरर्णी मपि।।**
**सावर्ण्यकरणी चैव, संधानकरणी तथा।।** *(बा० रा० युद्धकाण्ड 74-30-31)*

इसी प्रकार मूर्च्छा दूर करने के लिये सुषेण वैद्य द्वारा संजीवनी औषधि को कूट–पीस कर लक्ष्मण की नाक में टपका देने पर नस्य से ही लक्ष्मण की मूर्च्छा दूर होना आदि उदाहरण हैं।

**यथा : सुषेणो वानरः श्रेष्ठो जग्राहीत्पाद्यचौषधी।**
**लक्ष्मणस्य ददौ नस्तः सुषेणसमुहाद्युतिः।।** *(वा०रा० युद्ध काण्ड)*

इस प्रकार रामायण एवं महाभारत के युद्ध काण्ड में कतिपय दिव्यौषधियों का उल्लेख मिलता है जिनकी पहचान करने की मुख्य रूप से आवश्यकता है। जिसके कुछ अन्य उदाहरण निम्न प्रकार से है।

विशल्यकर्णी, सावर्ण्यकर्णी, संजीवनी, संधानकर्णी, बला, गजकन्द, सोमलता (सोमरस) आदि औषधियों का उपयोग युद्धकाल में वीरों की रक्षा के लिए किया जाता था। राज्याभिषेक के समय सर्वौषधि जल का प्रयोग होता था। इसी प्रकार वंशी की धुन करते हुए वांश का प्रयोग मानव जीवन के सहअस्तित्व का द्योतक वनस्पतियां हैं।

इसी प्रकार नागकेशर, नागदमन, द्रोण, रक्तचन्दन, चन्दन, नारिकेल, पद्म, पारिभद्रक पुण्डरीक, पुन्नाग, बकुल, बदरी, कुश, दूर्वा, विल्व, शर, शमी, वंश, अशोक, शाल, देवदारू, शिरीष, शाल्मली, हिन्ताक, क्षीरीवृक्ष (वट, पीपल, गूलर, पाखर) आदि वृक्षों एवं शाकीय द्रव्यों का उल्लेख संस्कृत साहित्य में वर्णित है।

उपरोक्त प्रसंगों से यह स्पष्ट है कि वनौषधियों का ज्ञान पशु, पक्षी, जंगली जानवर, आदिवासी वनेचर एवं ऋषि–मुनियों को था। इनका वनों से सीधा सम्पर्क था। यही जीवनोपयोगी ज्ञान को जब लिपीबद्ध किया गया एवं अनेकों भाषा में अनुवाद किया गया जिसे कि अष्टांग आयुर्वेद कहा गया है। इसी प्राणी जाति औषधोपयोगी वनस्पतिशास्त्र को इथनो–बॉटनी कहते हैं। इथनोंबॉटनी को आयुर्वेद द्रव्यगुणशास्त्र का एक अंग कहा जा सकता है।

The Study of the direct relationship between Plants and man is an interdisciplnary Science is called **Ethno-Botany.**

इसे आधुनिक परिभाषा के अनुसार कई शाखाओं में विभक्त किया गया है। इस जीवनोपयोगी ज्ञान को आदिवासी लोगों से प्राप्त किया जा सकता है। भारत की आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा आदिवासी है। ये आदिवासी जन जातियां हिमालय की तराई से लेकर पर्वतीय प्रदेशों उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, राजस्थान, मध्य–प्रदेश, नेपाल, अण्डमान–निकोबार आदि द्वीप समूहों में फैले हुए हैं। इन समुदायों में तरह–तरह की भाषाओं एवं परम्पराओं का प्रचलन है जोकि हमारी संस्कृति पर आधारित है। यही कारण है कि रामायण काल से ही वानर, रीछ आदि जन–जातियों से राम का सहयोग वनों में मिलना, महाभारत काल में भीम और अर्जुन का आदिम जन–जातियों के साथ विवाह, चन्द्रगुप्त की सहायता, किरात, भिल्ल, पुलिन्द, आदिम जन–जातियों के घटना का इतिहास इन आदिवासी समुदाय की मुख्यधारा से जुड़ा हुआ है। आजादी के 50 वर्षो के बाद भी आज सही रूप से हम इस परम्परागत प्रचलित ज्ञान को इनसे सही रूप से प्राप्त नहीं कर सके। आज विश्व स्वास्थ संगठन का ध्यान इस लोक परम्परागत प्रचलित अनुभवों



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

को संग्रह करने की दिशा में आकृष्ट हुआ है। सभी देशों में इस ज्ञान के आंकड़ो के संकलन हेतु सर्वेक्षण कार्य प्रारम्भ किये जा रहे हैं। केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध–अनुसंधान परिषद, जो कि स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार के अधीनस्थ संस्था है, विगत कतिपय वर्षो से वनौषधि सर्वेक्षण का कार्य कर रही हैं। इसमें नवीन, अज्ञात एवं दिव्यौषधियों की खोज में विशेष दिशा परिवर्तन की आवश्यकता है। दिव्यौषधियों की खोज में कुछ प्रयास किया गया है जो कि निम्न प्रकार से है।

**दिव्यौषधियों का ऐतिहासिक पक्ष (वैदिक काल) :**

वैदिक ग्रन्थों संहिता एवं उपनिषदों के संदर्भ में स्थलों से मालूम पड़ता है कि हमारे आर्षग्रन्थों में दिव्यौषधियों की महिमा का विशेष वर्णन किया गया है।

अथर्ववेद काण्ड 8 सूत्र 2 के मन्त्र में औषधि महिमा का उल्लेख है। यथा अन्तरिक्ष भूलोक सभी के लिये औषधियां कल्याणप्रद हो, सूर्य, चन्द्र, जल, पवन आदि सुखमय रक्षक बनें, मानव दीर्घायु प्राप्त कर मृत्यु के चुंगल से बचे रहें, हमारे लिये औषधियां रसों से परिपूर्ण एवं गुणवती हों।

इसी प्रकार संहिता ग्रन्थों में भी औषधियों की महिमा का उल्लेख है। जैसे देवताओं के अनेक भेद प्रभेद है वैसे ही दिव्यौषधियों की अनेक जाति एवं उपजातियां है। इस प्रकार की विविधता को देखकर चिकित्सक संदेह में पड़ जाता है। उसे धैर्यपूर्वक औषधियों के गुणप्रभावादि का ज्ञान कर निः संदेह होकर चिकित्सा कार्य सम्पादन करना चाहिए, भगवान् दिवोदास धन्वतरि ने भी मनुष्य की उत्पति से पूर्व वनौषधियों की उत्पति का उल्लेख किया है। मानव से पूर्व पहले स्थावर एवं औद्भिज सृष्टि का सृजन हुआ एवं तदन्तर प्राणी जगत की सृष्टि हुई जिसे पाषाण युग कहते है। जिसमें धीरे–धीरे मानव ने बुद्धिपूर्वक इस औद्भिज सृष्टि से अपने आरोग्य एवं रोग निवारण हेतु वनौषधि द्रव्यों को काम में लाने लगा एवं उनके गुण रस, वीर्य विपाक का भी अध्ययन करने लगा तथा इस काल में मानव को कतिपय औषधियों का ज्ञान हो चुका था जिसके फलस्वरूप द्रव्यगुण शास्त्र का सृजन हुआ।

वैदिक काल में इन दिव्यौषधियों की जानकारी मिलने के कारण हमारें ऋषियों ने दिब्यगुणवाली औषधियों की मातृ स्वरूप होने से देवी की तरह उनकी प्रार्थना की है। संहिताकालीन ऋषि–मुनियों ने भी औषधियों की खोज में नदी–नालों हिमालय की घाटियों एवं निघण्टु ग्रन्थों का निर्माण किया। धीरे–धीरे इन ग्रन्थों के टीकाकारों चक्रपाणी, गंगाधर, डल्हण, जेज्जट, इन्दु, हेमाद्रि, भावमिश्र, भानुमति आदि में मतैक्य न होने के कारण कतिपय वनौषधियां संदिग्ध एवं अनेकार्थ बोधक हो गयी। इसलिए यह आवश्यक है कि अज्ञात एवं संदिग्ध द्रव्यों की पहिचान और जानकारी प्राप्त करने हेतु आदिवासी वनचरों, भेड़, बकरी पालने वालों ग्वालों और साधु महात्माओं से पूछ कर परम्परागत स्थानिक उपयोग की जड़ी–बूटियों का पता लगाना चाहिए।

प्राचीनों द्वारा अपनाई गयी औषधियों की पहिचान की विधि गौ, सूअर, मृग, पक्षी, सर्प, गरूड, नकुल, गंधर्व आदि वन्य जन्तुओं द्वारा ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इस दिशा में भी अन्वेषकों का ध्यान आकृष्ट होना चाहिए।

लेखक ने उक्त परम्परा के आधार पर गिरीराज उत्तराखण्ड हिमालय की कतिपय पर्वत श्रेणियों की घाटियों में भ्रमण कर स्थानिक बनचरों आदिवासीयों से सम्पर्क किया, जैसा कि सर्वविदित है कि वह गिरिराज हिमालय अनेक किस्म की वनौषधियों के लिये विश्वविख्यात है। यही कारण है, वेदों, पुराणों एवं संहिता ग्रंथों में हिमालय को भारत मुकुट एवं वन सम्पदा का अक्षय भण्डार कहा है। अथर्ववेद में भी हिमालय में पैदा होने वाली औषधियों की विशेष रूप से प्रार्थना की गयी है। इसी गिरीराज हिमालय में अनादिकाल से ब्रह्मादिक ऋषि–मुनियों पांडव आदि भारतीय राजर्षि सनातन धर्म के महर्षि एवं योगियों ने गंगा, यमुना, अलकनन्दा, मन्दाकिनी, व्यास, सतलुज, चन्द्रभाग, नर्मदा, सिन्धु, काबेरी, ब्रह्मपुत्र, आदि कतिपय पुण्य सलिला सरिताओं के तट पर और गिरी गुफाओं में बैठकर हजारों वर्ष पर्यन्त उग्र तपस्या का अनुष्ठान किया था। इसी हिमालय में विश्वविख्यात प्रसिद्ध हिम शैल नन्दाकोट, भृगुकांठा, केदारकांठा, सुमेरू–पर्वत, द्रोणागिरी, कैलाश, सहगिरी, गन्धमादन पर्वत, चौखम्बा, सतोपंथ, कंचनजंघा आदि कतिपय हिमश्रृगं दिब्य गन्धवाली जड़ी–बूटियों के स्रोत रहे हैं। स्कन्द पुराण में भी गन्धमादन, सुमेरू, द्रोणागिरी, आदि हिमशैलों का उल्लेख



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मिलता है। इन्हीं हिमशैलों पर संहिता ग्रन्थों में वर्णित 24 प्रकार के सोमों की प्राप्ति–स्थान के स्त्रोत का निर्देश किया गया है। संहिताकार ने भी हिमालय में मिलने वाली वनौषधियों को सौम्यगुण प्रधान लिखा है। यह नगाधिराज हिमालय जितना सुन्दर, उतना ही विस्तृत एवं वनौषधि का अक्षय भंडार है। इन वनौषधियों के साथ–साथ इन पर्वत श्रेणियों की घाटियों में अनेक प्रकार के खनिज, धातु, उपधातु एवं वन्यजन्तु भी पाए जाते है।

मध्य हिमालय में बसने वाले किरात, तगण आदि जनजातियों की परम्परा में उत्तराखण्ड के शिल्पकार मुख्य हैं। प्राचीन काल में इन जनजातियों के पूर्वजों का यहां का शासक रहना और उनके सिक्कों का प्रचलन के प्रमाण मिले हैं। इन आधारों पर विद्वानों ने सिद्ध किया है कि अलकनन्दा के उपरी भाग के निवासियों को आज भी तंगणी के नाम से जाना जाता है। पर्वतीय क्षेत्र के गंगा की घाटियों में बसने वाले किरात कहलाये गये। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान गीर्यसन का मत है कि गढ़वाल तथा कुमाऊँ की प्राचीन जनजातियाँ किरात थे। पुराणों में भी किरात वेशधारी शिव एवं पार्वती को भी किराती के नाम के सन्दर्भ मिलते हैं।

महर्षि चरक ने हिमालय की वन सम्पदा का उल्लेख करते हुये उल्लेख किया है कि "कैरातिका रवनति औषधम्"। अर्थात किरात जनजातियाँ हिमालय की औषधियों का संग्रह करते है। इसी आधार पर किरातदेशोत्पन्न चिरायता का नाम किराततिक्त पड़ा है। यथा–**"किरातदेशोत्पन्न औषधविशेष किराततिक्तः"** प्रायः पौराणिक एवं धार्मिक ग्रन्थों में किरात, मिल्ल, तगण आदि जनजातियाँ हिमालय में निवास करती थी, ऐसे सन्दर्भ मिलते है।

**यथा : कैलासे किन्नराकीर्णे वहुप्रस्त्रवणौषधे।**
**पादपै : विवधै : स्निग्धै नित्यं कुसुम संम्पदा।।** *(च०सू० 21)*

भारतीय परम्पराओं के अनुसार उत्तराखण्ड मध्य हिमालय वह क्षेत्र है जो भारतीय संस्कृति का स्रोत रहा है। जहां वेदव्यास ने महाभारत की रचना की तथा जो अनादिकाल से ऋषि मुनियों की तपःस्थली रही है। इसी हिमालय में अंगिरा, जमदग्नी, वशिष्ठ, कश्यप, भृगु, आत्रेय, भारद्वाज, कात्यायन, शौनक आदि ऋषियों ने लोकोपकार एवं रोगोपशमन हेतु सभा का आयोजन किया।

**यथा : समवेता पुण्यकर्माण पार्श्वे हिमवत शुभेः।** *(च०सू० 1-7)*

महर्षि चरक ने भी औषधि द्रव्यों के लिये हिमालय को श्रेष्ठ बतलाया है।

**यथा : हिमवान् औषध भूमिनां श्रेष्ठम्।** *(चरक)*

महर्षि चरक ने काष्ठादि औषधियों की उपादेयता पर विशेष जोर दिया है। स्वयं चरक ने यायावर के रूप में उत्तराखण्ड हिमालय में भ्रमण किया जिसका स्पष्ट प्रमाण पौड़ी जनपद के दुगड़ा विकासखण्ड के एक पर्वत शिखर का नाम चरक का डाण्डा आज भी विद्यमान है। औषध द्रव्यों के मर्मज्ञ महर्षि चरक ने विभिन्न घाटियों में भ्रमण करने के बाद यह स्वीकार किया है कि

**औषधीनां परा भूमि हिमवान् शैलसतमः।** *(चरक)*

प्राचीन काल में यहां अनेक शिक्षण केन्द्र थे जिनमें बद्रीनाथ के पास सरस्वती के तट पर व्यास एवं जैमिनी ऋषि का आश्रम है। यहां पर महर्षि व्यास ने बैठकर अठारह पुराणों की रचना की। कश्यप एवं चरक का बद्रीनाथ एवं गन्धमादन पर्वत पर वशिष्ठ एवं अरुन्धती का हिमवदाश्रम, जमदग्नी का उत्तरकाशी में, गर्ग का द्रोणागिरी में, मनु का माना में, अगस्त्य एवं गौतम का मन्दाकिनी के तट पर, पराशर का यमनोत्री के पास, भरत एवं परशुराम का उत्तरकाशी में, भृगु का केदारकांठा में, अत्री एवं अनूसया का गोपेश्वर आदि स्थानों पर अनेको विद्यापीठ विद्यमान थे जो कि भारतीय संस्कृति के प्रतीक है चरक संहिता चिकित्सा स्थान अध्याय एक के आधार पर हिमालय में देवराज इन्द्र से भृगु, अंगिरा, वशिष्ठ, कश्यप, अगस्त्य, पुलस्त्य, वांमदेव, आदि ऋषियों ने आयुर्वेद का अध्यन किया था, ऐसा उल्लेख मिलता है।

यह हिमालय आरोग्य को देने वाला जल एवं वनसम्पदा का विशाल भण्डार वाला भूभाग है। उत्तराखण्ड के उपरोक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1962 में गुरूकुल कांगड़ी हरिद्वार एवं वर्ष 1964 में रानीखेत में वनौषधि सर्वेक्षण एकक की स्थापना केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा की गई तथा वर्ष 1970 में सी. सी. आर. आई. एम, नामक अनुसंधान परिषद (भारत सरकार) नई दिल्ली की स्थापना की गई जिसमें महत्वपूर्ण



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

शोध कार्य किया गया। लेखक द्वारा उत्तराखण्ड की जड़ी–बूटियों पर कतिपय महत्वपूर्ण लेख हिन्दी एवं अंग्रेजी में आयुर्वेद की पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशित किये है। दो महत्वपूर्ण पुस्तकों का भी प्रकाशन किया गया। इनमें "उत्तराखण्ड वनौषधि दर्शिका "सचित्र (हिन्दी) एव "मेडिसिनल फ्लोरा आफ गढ़वाल हिमालय सचित्र" (अंग्रेजी) प्रकाशन जिसका लोकार्पण महामहिम **राष्ट्रपति, डॉ॰ शंकर दयाल शर्मा** जी द्वारा किया गया।

अतः उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उत्तराखण्ड हिमालय की जो औषधीय प्रजातियां दिनो–दिन लुप्त होतीं जा रही हैं। उनका संरक्षण सम्वर्धन एवं पारम्परिक खेती को प्रोत्साहित करना अनिवार्य है। ताकि वन सरंक्षण के साथ–साथ जल स्रोतों का विकास एवं हिमालयी पर्यावरण का सन्तुलन बना रहें। इसलिये इस नैसर्गिक हिमालय की सुरक्षा हिमालय वासियों की मूल भूत समस्याओं के निराकरण किये बिना सम्भव नहीं है। इसी दृष्टि को ध्यान में रखते हुये "उत्तराखण्ड हिमालय की वनौषधियां एवं खनिज" नामक रचना तैयार की है। रचना को तीन भागों में विभक्त किया गया है। प्रथम भाग में उत्तराखण्ड के जनपदों की जनसंख्या भौगोलिक विवरण, धार्मिक एवं प्रमुख पर्यटन स्थलों का विवरण व संस्कृति के विषय में जानकारी दी गई है।

द्वितीय भाग में उत्तराखण्ड की वनौषधियों का संस्कृत, स्थानिक नाम, ग्रामीण चिकित्सकीय प्रयोग हिन्दी विज्ञान शब्दावली के द्वारा उनका स्वरूप वर्णन, प्राप्तिस्थान, वॉटनिकल नाम तथा क्षेत्रीय सूचनाओं के आधार पर यथा सम्भव आयुर्वेदिक शास्त्रीय नामों को सचित्र वर्णन करने का प्रयास किया गया है। इस भाग में लगभग एक हजार से भी अधिक औषधोपयोगी पादपों के आयुर्वेदीय गुण–धर्मो की जानकारी दी गई है। तृतीय भाग में इस भूभाग में भू वैज्ञानिक सर्वेक्षणों के आधार पर उपलब्ध पार्थिव द्रव्यों, खनिजों एवं चिकित्सोपयोगी जान्तव द्रव्यों के विषय में जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

**आभार प्रदर्शन :** भूमिका के लेखन एवं प्रकाशन हेतु लेखक **श्री. बनवारी लाल शर्मा,** प्रबन्ध निदेशक वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. पटना का विशेष रूप से कृतज्ञ है।

पुस्तक लेखन एवं निर्देशन हेतु निदेशक, केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् (आई. एस. एम) केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली का हृदय से आभारी है। आयुर्वेदीय औषधि निर्णय एवं परामर्श हेतु स्वर्गीय ठा. बलवन्त सिंह जी एवं आचार्य प्रियवर्त शर्मा वाराणसी का सदैव कृतज्ञ है। वनौषधि सर्वेक्षण यात्राओं के आयोजन हेतु पुण्यश्लोकीय स्वनामध्न्य वैद्यराज **पं. रामनारायण शर्मा** वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. झांसी का सदैव आभारी हूँ जिन्होने स्वयं हिमालय की दुर्गमघाटियों का वनौषधि यात्राओं में दल के साथ भ्रमण कर जड़ी–बूटियों की पहचान की दिशा में प्रेरणा दी। लेखन सामग्री के सहयोग एवं रेखाचित्रों के तैयार करने में बेटी **रज्जना कुकरेती** एवं **सीमा थपलियाल** तथा परिवार के सभी सदस्यों को धन्यवाद देता हूँ। रंगीन औषधीय पादपों के चित्रों के सहयोग हेतु **डॉ. अरूण बडोनी** का विशेष रूप से धन्यवाद करता हूँ।

पुस्तक प्रकाशन के आर्थिक अनुदान हेतु वैद्यनाथ आयुर्वेद शोध संस्थान पटना के संस्थापक श्री बी. एल. शर्मा का हृदय से विशेषरूप से आभारी है। जिनके सतत वनौषधि अनुसंधान में विशेष निष्ठा एवं प्रेरणा के फलस्वरूप यह प्रकाशन कार्य सम्पन्न हो सका है।

अन्त में लेखक उन सभी पूर्ववर्ती लेखकों शोधकर्ताओं एवं विद्वानों का हृदय से आभार प्रकट करता है जिनके कतिपय संदर्भ स्थलों का समावेश साभार इस रचना में किया गया है। लेखक उन सभी पर्वतीय आंचलों में बसने वाले ग्रामीणों का आभारी है जिनके सहयोग से जड़ी–बूटियों के स्थानिक प्रयोग एवं स्थानिक नामों की जानकारी मिल सकी है। वॉटनिकल नामों के नामरूप परिचय हेतु फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टिच्यूट (एफ. आर. आई.) देहरादून, वनस्पति पादपालय की सहायता ली गई है। इस सहयोग हेतु लेखक संस्थान का आभारी है।

बी–98, अवन्तिका, सेक्टर-1, रोहिणी,
दिल्ली–110085 दूरभाष : 7271233

**विदुषामनुचर :**
*(वैद्य मायाराम उनियाल)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# कुलानुसार द्रव्यों के हिन्दी एवं वैज्ञानिक नामों की तालिका


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| **वत्सनाभादिवर्ग** | **RANUNCULACEAE** | **69** |
| अतिविषा | Aconitum heterophyllum Wall. | 69 |
| वत्सनाभ | A. falconeri Stapf. | 70 |
| | A. ferox Wall. | 70 |
| श्रृंगीविष | A. chasmanthum Stapf. | 71 |
| | A. deinorrhium Stapf. | 71 |
| | A. balfourii Stapf. | 71 |
| | A. atrox Mukheriee. | 71 |
| | A. leave. | 71 |
| प्रतिविषा | A. vioeaceam Jacy. | 72 |
| | A. laciniatum Stapf | 74 |
| | A. spicatum Stapf. | 81 |
| | A. luridum Hook. f. | 75 |
| | A. elwesii. | 75 |
| विखमा | A. palmatum D. Don. | 75 |
| | A. naviaculare. | 75 |
| जदवार | Delphinium denudatum Wall. | 81 |
| | D. vestitum Wall. | 81 |
| | D. brunonianum Royle. | 81 |
| काण्डीर | Ranunculus sceleratus Linn. | 82 |
| | R. arvensis Linn. | 82 |
| | R. diffusus DC. | 82 |
| | R. hirtellus Royle. | 82 |
| अगेली | Anemone obtusiloba D. Don. | 82 |
| | A. vitifolia Buch-Ham. | 82 |
| | A. narcissifolia L. | 82 |
| | Aqiulagia pubiflora Wall. | 83 |
| मनीरू | Caltha palustris Linn. | 83 |
| उदसलीव | Paeonia emodi Wall. | 83 |
| | P. officinalis. | 84 |
| मनीरू | Actaea spicata Linn. | 84 |
| पीतमूला | Thalictrum foliosum D | 84 |
| | T. reniforne Wall. | 84 |
| | T. cultratum Wall. | 84 |
| | spp. platycarpum Bruhl. | 84 |
| | T. eleganus Wall. | 84 |
| ममीरा | Coptis teeta. | 84 |
| संटाई | Clematis gouriana Roxb. | 85 |
| | C. barbllata Edg. | 85 |
| | C. buchaniana DC. | 85 |
| | C. roylei Reher. | 85 |
| **चम्पकादिवर्ग** | **MAGNOLIACEAE** | **85** |
| चम्पा | Michelia champaca Linn. | 85 |
| | Schizandra grandiflora DC. | 85 |
| **सीताफलादिवर्ग** | **ANONACEAE** | **86** |
| सीताफल | Anona squamosa Linn. | 86 |
| **गुडूच्यादिवर्ग** | **MENISPERMACEAE** | **86** |
| गिलोय | Tinospora cordifolia Mierr. | 86 |
| कन्दगुडूची | T. malabarica Mierr. | 87 |
| पाठा | Cissamples pareira Linn. | 87 |
| राजपाठा | Stephania glabra Mierr. | 88 |
| | S. gernandifolia. | 88 |
| तिलफारो | Cocculus laurifoluis DC. | 88 |
| छिलहिण्ट | C. hirsutus (Linn.) Diel | 88 |
| **दारूहरिद्रादिकुल** | **BERBERIDACEAE** | **89** |
| दारूहरिद्रा | Berberis aristata DC. | 89 |
| किनगोड़ | B. lycium Royle. | 89 |
| काशमोई | B. asiatica Roxb. | 89 |
| तोतरो | B. chirita Roxb. | 89 |
| | B. petioluris Wall. | 90 |
| | B. jaeschkeana CK. | 90 |
| हलदिया | Mehonia nepalensis DC. | 90 |
| वन्यकर्कटी | Podophyllum hexandrum Royle. | 90 |
| **अहिफेनकुल** | **PAPAVERACEAE** | **91** |
| अफीम | Papaver somniferum Linn. | 91 |
| कलिहारु | Meconopsis aculeata Royle. | 92 |
| | M. napaulensis. | 92 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| स्वर्णक्षीरी | Argemone mexicana Linn. | 92 |
| हिरवी | Euphorbia thomsoniana. | 92 |
| **कमलादिवर्ग** | **NEMPHAEACEAE** | **93** |
| कमल | Nelumbo nucifera Gaertn. | 93 |
| | Nymphaea alba. | 93 |
| **पर्पटादिवर्ग** | **FUMARIACEAE** | **94** |
| पित्तपापड़ा | Fumaria parviflora Lam. | 94 |
| | F. indica. | 94 |
| इन्द्रजटा | Corydalis govaniana Wall. | 94 |
| | C. ramosa Wall. | 94 |
| | C. cornuta Royle. | 95 |
| **वरूणादिवर्ग** | **CAPPARIDACEAE** | **95** |
| वरूण | Crataeva nurvala Buch. | 95 |
| तिलपर्णी | Gynandropsis gynandra (L) Bri. | 96 |
| जख्या | Cleome viscosa Linn. | 96 |
| हिंस्त्रा | Capparis sepiaria Linn. | 96 |
| व्याघ्रनखी | C. spinosa Linn. | 97 |
| | C. zeylinaca Linn. | 97 |
| करीर | C. decidua. | 97 |
| **सर्षपकुल** | **CRUCIFERAE** | **97** |
| खूवकला | Siymbrium irio Linn. | 97 |
| | Capsella bursa-pastoris. | 97 |
| | Cardamine impatiens Linn. | 97 |
| | Arabis amplexicanlis Edgew. | 97 |
| | Draba glacialis Adams. | 97 |
| | Nasturtium fontanum Asch. | 97 |
| | N. palustre D.C. | 97 |
| | Eruca sativa Linn. | 97 |
| चन्द्रशूर | Lepidum sativum Linn. | 97 |
| तोदरी | Matthiola indica R. Br. | 97 |
| मूली | Raphanus sativus Linn. | 98 |
| सरसों | Brassica campestris. | 98 |
| राई | B. juna (L) Czern. | 98 |
| बरमूला | Megacarpea polyandra Benth. | 98 |
| | Draba glacialis Adams. | 98 |
| | Nasturtium fontanum Asch | 98 |
| **बन्पशाकुल** | **VIOLACEAE** | **98** |
| वन्पशिका | Viola serpens Wall. | 98 |
| | V. biflora Linn. | 99 |
| | V. canescens Wall. | 99 |
| **विकंकतककुल** | **FLACOURTIACEAE** | **99** |
| प्राचीनामलक | Flacouritia jangomas Read. | 99 |
| विकंकत | Feacurtia indica Merr. | 99 |
| **लोणिकादिवर्ग** | **PORTULACEAE** | **100** |
| लोणिका | Portulaca oleracea Linn. | 100 |
| लोनीशाक | Portulaca quadrifida. | 100 |
| | P. tuberosa Roxb. | 100 |
| | **CARYOPHYLLACEAE** | **100** |
| | Arenaria kashmirica Edgew. | 100 |
| | Cypsophylla cerastioides | 100 |
| | Stellaria aquatica Scop. | 100 |
| | S. medica Linn. | 100 |
| | Polycarpea corymbosa Lam. | 100 |
| | Lichnis nutans Benth. | 100 |
| | L. pilosa Edgew. | 100 |
| | Silene cucubalus Wibel. | 100 |
| | **TAMARICACEAE** | **101** |
| | Myricaria bracteate Royle. | 101 |
| **वासन्तीकुल** | **HYPERICACEAE** | **101** |
| | Hypericum patulum Thunb. | 101 |
| | H. perforatum Linn. | 101 |
| | H. elodeoides Choisy. | 101 |
| | **POLYGALACEAE** | **101** |
| मराडू | Polygala chinensis Linn. | 101 |
| | P. abyssinica Fre. | 101 |
| **बलाकुल** | **MALVACEAE** | **102** |
| बला | Sida cordifolia Linn. | 102 |
| भूमिवला | S. veronicaefolia Linn. | 102 |
| खरेंटी | S. spinosa Linn. | 102 |
| | S. acuta Burm. | 102 |
| | S. rhombifolia Linn. | 102 |
| अतिवला | Abutilon indicum Sweet. | 102 |
| | A. graveolens W. of A. | 102 |
| कामल्या | Hibiscus cancellatus Roxb. | 103 |
| खुब्बा | Malva rotundifolia Linn. | 103 |
| | M. verticillata Linn. | 103 |
| | Urena lobata Linn. | 103 |
| **शाल्मलीकुल** | **BOMBACACEAE** | **103** |
| शाल्मली | Salmalia malabarica Schalt. | 103 |
| **मुचुकुन्दावर्ग** | **STERCULIACEAE** | **104** |
| मुचुकुन्द | Pterosperinum suberifolium. Linn. | 104 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| मरोड़फली | Helicteres isora Linn. | 105 |
| **धन्वनकुल** | **TILIACEAE** | **105** |
| नागवला | Grewia hirsuta Vahl. | 105 |
| धामिन | G. tilaefolia Vahl. | 106 |
| | G. elastica. | 106 |
| फालसा | G. asiatica Linn. | 105 |
| भीमल | G. oppositifolia Roxb. | 106 |
| चुंचु | Corchorus aestuans Linn. | 107 |
| वृ. चुंचु | C. olitorus. | 107 |
| | C. capsularis. | 107 |
| झिंझिरीटा | Triumfetta bartramia Linn. | 107 |
| **वासन्तीकुल** | **LINACEAE** | **107** |
| वासन्ती | Reinwardtia indica Dum. | 107 |
| **माधवीकुल** | **MALPIGHIACEAE** | **107** |
| माधवी | Hiptage benghabensis Kurz. | 108 |
| **लालजड़ीकुल** | **GERANIACEAE** | **108** |
| लालजड़ी | Geranium wallichianum. | 108 |
| | G. nepalense Linn. | 108 |
| | G. molle Linn. | 108 |
| **चांगेरीकुल** | **OXALIDACEAE** | **108** |
| चांगेरी | Oxalis acetosella Linn. | 108 |
| | O. corniculata Linn. | 108 |
| | **BALSAMINACEAE** | **109** |
| गुलमेहन्दी | Impatines balsamina Linn. | 109 |
| | I. cristata Wall. | 109 |
| | I. scabrida D.C. | 109 |
| **विल्वकुल** | **RUTACEAE** | **109** |
| विल्व | Aegle marmelos Correa. | 109 |
| कपित्थ | Feronia lamonia (Linn.) Sw. | 110 |
| तुम्बुरू | Zanthoxylum alatum Roxb. | 110 |
| | Fagra oxyphylla. | 110 |
| कांचन | Toddalia asiatica Lam. | 111 |
| केदारपाती | Skimmia laureola Seib. | 111 |
| कढ़ीनीमपत्ता | Murraya koenigli Spreng. | 111 |
| कामनी | M. exotica Linn. | 111 |
| बेली | Lamonia acidissima W. of A. | 112 |
| पिस्सूबूटी | Boenninghausenia albiflora | 112 |
| **रोहिणीकुल** | **SIMARUBACEAE** | **112** |
| मांसरोहिणी | Picrasma quassioides Bem. | 112 |
| अरलु | Ailanthus excelsa Roxb. | 112 |
| **निम्बकुल** | **MELIACEAE** | **113** |
| नीम | Azadirachta indica A. Jass. | 113 |
| वकायन | Melia azedarach Linn. | 114 |
| **गुग्गुल्वादिवर्ग** | **BURSERACEAE** | **115** |
| सलई | Boswella serrata Roxb. | 115 |
| **ज्योतिष्मत्यादिवर्ग** | **CELASTRACEAE** | **115** |
| मालकांगनी | Celastrus paniculatus Willd. | 115 |
| कृष्णमोक्षक | Elaeodendron gleaucum. | 116 |
| घण्टापाटली | Schrebera swietenioides. | 116 |
| भिल्लोटक | Euonymus tingens Wall. | 116 |
| | E. hamiltonianus. | 116 |
| **बदरादिवर्ग** | **RHAMNACEAE** | **117** |
| बेर | Zizyphus jujuba Lam. | 117 |
| थंथार | Rhamnus virgata Roxb. | 118 |
| गौंता | Rhamnus triquetra Wall. | 118 |
| **द्राक्षाकुल** | **VITACEAE** | **118** |
| अमृतस्त्रवा | Vitis latifolia Roxb. | 118 |
| नगास्या | Leea aspera Edgew. | 118 |
| **अरिष्ठकादिकुल** | **SAPINDACEAE** | **119** |
| रीठा | Sapindus mukorossi Gaertn. | 119 |
| काकादनी | Cardiospermum halicacabum | 119 |
| कुसुम | Schleichera trijuga Willd | 119 |
| पांगर | Aesculus indica Cole. | 120 |
| नागदौन | Staphlea emodi Wall. | 120 |
| **आम्रादिवर्ग** | **ANACARDIACEAE** | **120** |
| आम्रातक | Spondias mangifera Willd. | 121 |
| कर्कटश्रृंगी | Pistacia integerrima Stew. | 121 |
| भिलावा | Semecarpus anacardium Linn. | 122 |
| झींगन | Lannea grandia Engl. | 122 |
| तिन्तिडीक | Rhus parviflora Roxb. | 122 |
| अखोड़िया | R. wallichii Hook f. | 123 |
| | R. punjabensis Stew. | 123 |
| चमतुंगलो | R. cotinus Linn. | 123 |
| अरकोल | R. succedanea Linn. | 123 |
| चिरौंजी | Buchanania lanzan Sloreng. | 123 |
| **शोभाज्जनादिवर्ग** | **MORINGACEAE** | **123** |
| शिग्रु | Moringa oliefera Lam. | 124 |
| **कोरेरियेसी** | **CORIARIACEAE** | **124** |
| मसूरी | Coriaria nepalensis Wall. | 124 |
| **पलाशादिवर्ग** | **PAPILIONACEAE** | **124** |
| पलाश | Butea monosperma Lam. | 125 |
| मुद्गपर्णी | Phaseolus trilobes Aitt. | 125 |
| | P. calcaratus Roxb. | 125 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| माषपर्णी | P. labialis Spreng. | 126 |
| शालपर्णी | Desmodium gangeticum D.C. | 126 |
| | D. latifolium D.C. | 126 |
| | D. laxiflorum D.C. | 126 |
| | D. pulchelum Benth. | 126 |
| पृश्निपर्णी | Uraria picta Desv. | 127 |
| | U. lagopoides D.C. | 127 |
| वीरव्रट | Flemingia bracteata Wight. | 128 |
| गुंजा | Abrus precatorius Linn. | 127 |
| रूद्रवन्ती | Astragalus condolleanus. Royle | 128 |
| | A. leucocephalus Grah. | 128 |
| | A. chlorostrachys Lindl. | 128 |
| कपिकच्छु | Mucuna prurita Hook. | 128 |
| भैंसलगलो | M. imbricata D.C. | 128 |
| सीसम | Delbergia sissoo Roxb. | 129 |
| तिनिश | Ougenia dalbergiodes Benth. | 129 |
| विदारीकन्द | Pueraria tuberosa D.C. | 130 |
| कुलत्थ | Dolichos biflorus Linn. | 130 |
| करंज्ज | Pongamia pinnata Merr. | 130 |
| नीली | Indigofera tinctoria. | 131 |
| | I. pulchella Roxb. | 131 |
| | I. heterantha Wall. | 131 |
| शणपुष्पी | Crotalaria juncea L. | 131 |
| | C. albiba Heyne. | 131 |
| | C. sericea Retz. | 131 |
| | C. calycina Schr. | 131 |
| जंगलीदाल | Atylosia scarabaeoides. | 131 |
| पारिभद्र | Erythrina suberosa Roxb. | 132 |
| | E. variegata Linn. | 132 |
| चक्षुस्या | Cassia absus Linn. | 132 |
| सटफल | Trifolium repens Linn. | 132 |
| मेथिका | Trigonella foenum-graecusm. | 133 |
| शरपुंखा | Tephorsia purpurea Linn. | 133 |
| | Hechysarum microcalyx Baker. | 134 |
| | Lotus corniculatus Linn. | 134 |
| | Vicia pallida Turcz. | 134 |
| | Uraria Lagotus DC. | 134 |
| | Zorina gibbosa Span. | 134 |
| | Parochetus communis Buch-Ham. | 135 |
| | Oxytropis thomsonii Benth. | 134 |
| **पूतिकरज्जादिवर्ग** | **CAESALPINIACEAE** | **134** |
| पूतिकरज्ज | Cacesalpinia crista Linn. | 134 |
| | C. sepiaria Roxb. | 135 |
| अमलतास | Cassia fistula Linn. | 136 |
| कासर्मद | C. occidentalis Linn. | 136 |
| श्यामसुन्दर्र | C. laevigata. | 136 |
| चक्रर्मद | C. tora Linn. | 136 |
| काँचनार | Bauhinia variegata Linn. | 136 |
| | B. purpurea Linn. | 136 |
| कंणदी | B. retusa Roxb. | 136 |
| मालझन | B. vahlii. | 137 |
| ईमली | Tamarindus indicus Linn. | 137 |
| **बब्बूलादिवर्ग** | **MINUSACEAE** | **138** |
| बब्बूल | Acacia arabica Willd. | 138 |
| खदिर | A. catechu Willd. | 138 |
| शिरीष | Albizzia lebbck Benth. | 139 |
| सफेद सिरस | A. procera (Roxb.) Benth. | 139 |
| | A. odorotissima Benth. | 139 |
| छुई–मुई | Mimosa pudica Linn. | 139 |
| **पद्मकादिवर्ग** | **ROSACEAE** | **140** |
| पद्मकाष्ठ | Prunus cerasoides D. Don. | 140 |
| गुलाब | Rosa centifolia Linn. | 140 |
| | R. damascena Mill. | 140 |
| कुब्जक | R. moschata Her. | 141 |
| | R. sericea Lindil. | 141 |
| | R. macrophylla Lindil. | 141 |
| चूलू | Prunus cerasus Linn. | 141 |
| आड़ू | P. persica Bat. | 141 |
| सेव | Pyrus malus. | 142 |
| नाशपाती | P. communis Linn. | 142 |
| लोकाट | Eriobotrya japonica Lindil. | 142 |
| जामुनी | Prunus cornuta Stud. | 142 |
| हिंसालु | Rubus ellipticus Sm. | 142 |
| | R. nutans Wall. | 142 |
| | R. paniculatus Smith. | 142 |
| मेहल | Pyrus pashia Buch-Ham. | 142 |
| | P. lanata Don. | 142 |
| बज्रदन्ती | Potentilla fulgens Wall. | 143 |
| | P. atrosanguinea Lodd. | 143 |
| | P. napalensis Hook. f. | 143 |
| | P. albifolia Wall. | 143 |
| | P. ambigua Comb. | 143 |
| भेंकल | Prinsepia utilis Royle. | 143 |
| स्ट्रावेरी | Fragaria vesca Linn. | 143 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| | F. nubicola Lindl. | 143 |
| रींस | Cotoneaster bacillaris Wall. | 144 |
| | C. acouminatus Lindl. | 144 |
| | C. microphyllus Wall. | 144 |
| छिंगारू | Crataegus crenulata Roxb. | 144 |
| | Agrimonia eupatorium Linn. | 144 |
| | Geum urbanum Linn. | 144 |
| | Sibblildia parviflora Willd. | 144 |
| | Sorbus aucuparia Linn. | 144 |
| | Spiraea canescens D. Don. | 144 |
| | Oxytropis thomsonii Benth | 144 |
| **पाषाणभेद कुल** | **SAXIFRAGACEAE** | **144** |
| पाषाणभेद | Bergenia ligulata Wall. | 144 |
| | B. ciliata Royle. | 145 |
| | B. stryacheyi H.K. | 145 |
| असकुटा | Ribes nigrum Linn. | 145 |
| | R. Rubrum Linn. | 145 |
| | R. alpestre Wall. | 145 |
| | Deutzia staminea R. Br. | 145 |
| | Saxifraga brunoniana Wall. | 145 |
| | S. diversifolia Wall. | 145 |
| | Parnassia nubicola Wall. | 145 |
| | **CRASSULACEAE** | **145** |
| पर्णबीज | Kalanchoe spathulata DC. | 146 |
| मिरघा | Sedum multicaule Wall. | 146 |
| | S. ewersii Ledeb. | 146 |
| | S. heterodontum H.K. | 146 |
| | S. linearifolium Royle. | 146 |
| | Tillaea pentandra Royle. | 146 |
| | **DROSERACEAE.** | **146** |
| मुखजली | Drosera lunata Buch-Ham. | 146 |
| **लवंगादिवर्ग** | **MYRTACEAE.** | **147** |
| जामून | Syzygium cumini Skeels. | 147 |
| नदीजम्बू | S. operculatum Gamble. | 147 |
| तैलपर्णी | Eucalyptus globulus Labier. | 147 |
| **धातक्यादिवर्ग** | **LYTHRACEAE.** | **148** |
| धातकी | Woodfordia fruticosa Kurr. | 148 |
| मेहन्दी | Loswonia inermis Linn. | 148 |
| **दाडिमादिवर्ग** | **PUNICACEAE.** | **149** |
| दाडिम | Punica granatum Linn. | 149 |
| **श्रृंगाटकादिवर्ग** | **ONAGRACEAE.** | **149** |
| मीलू | Epilobium hirsutum Linn. | 149 |
| | E. roseum Sch. | 150 |
| | E. palustre Linn. | 150 |
| **सप्तचक्रादिवर्ग** | **SAMYDACEAE.** | **150** |
| चिल्हक | Casearia graveolens Dalz. | 150 |
| | C. tomentosa Roxb. | 150 |
| | **MELASTOMATACEAE.** | **150** |
| कुकर | Osbeckia stellata Wall. | 150 |
| **कोशातक्यादिवर्ग** | **CUCURBITACEAE.** | **150** |
| विशाला | Trichosanthes bracteata Voigh. | 151 |
| वन्यपटोल | T. cucumerina Linn. | 151 |
| शिवलिंगी | Bryanopsis lacinissa Nand. | 151 |
| कन्दुरी | Coccinia indica W. of. A. | 152 |
| करेला | Momordica charantica Linn. | 152 |
| कर्कोटक | M. diocia Roxb. | 152 |
| वन्यकुन्दरू | Melothria heterophylla Cong. | 153 |
| कुष्माण्ड | Benincasa hispida Cong. | 153 |
| कटुतुम्बी, | Lagenaria siceraria Stan. | 153 |
| देवदाली, | Luffa echinata Roxb. | 154 |
| तोरी | L. acutangula Roxb. | 154 |
| घिया तोरई | L. aegrptiaca Mill. | 155 |
| ककड़ी | Cucumis sativus Linn. | 154 |
| खरबूजा | C. melo Linn. | 155 |
| पटोल | Trichosanthus dioca Roxb. | 155 |
| चचीण्डा | T. cucumerina var. anguina. | 155 |
| **हरीतक्यादिवर्ग** | **COMBORETACEAE** | **155** |
| हरड़ | Terminalia chebula Retg. | 155 |
| वहेड़ा | T. belerica Roxb. | 156 |
| अर्जुन | T. arjuna W. of A. | 156 |
| सैन | T. tomentosa W. of A. | 157 |
| धव | Anogeissus latifolia Wall. | 157 |
| **जीरकादिवर्ग** | **UMBELLIFERAE** | **157** |
| ब्राह्मी (मण्डूकपर्णी) | Centella asiatica Linn. | 157 |
| | Addrocotyle jovanica Thumb. | 158 |
| चोरक | Angelica glauca Edgew. | 158 |
| | A. archangelica Linn. | 159 |
| गन्धायण | Heracleum pinnatum C.B.Cl. | 159 |
| | H. lanatum. | 159 |
| मुरामांसी | Selinium tenuifolium Wall. | 159 |
| भूतकेशी | S. vaginatum C.B.Cl. | 159 |
| छत्र्या | Trachyspermum falconeri. | 160 |
| जंगलीजीरा | Bupleurum falcatum Linn. | 160 |
| | B. jucundum Kurz. | 160 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| तिरोई | Pimpinella diversifolia DC. | 160 |
| लेसर | Pteorospermum candallii. | 160 |
| | Bupleurum longicaule Wall. | 161 |
| | Chaerophyllum villosum Wall. | 161 |
| | Trachidium roylei Lindl. | 161 |
| | **ARALIACEAE** | **161** |
| वान्दा | Hedera nepalensis K. Koch. | 161 |
| | **CAPRIFOLIACEAE** | **161** |
| तिल्वक | Viburnum nervosum D. Don. | 161 |
| मस्यांणू | V. cotinifolium D. Don. | 162 |
| | V. arubescens Wall. | 162 |
| | V. mullaha Buch-Ham. | 162 |
| | Lonicera myrtillus Hook. f. | 162 |
| वनचिलु | Lonicera angustifolia Wall. | 162 |
| | **CORNACEAE** | **163** |
| भमोरी | Cornus capitata Wall. | 163 |
| | Marlea chinensis Parker | 163 |
| **मज्जिष्ठादिवर्ग** | **RUBIACEAE** | **163** |
| मज्जिष्ठा | Rubia cordifolia Linn. | 163 |
| मदन फल | Randia dumetorum Lamk. | 163 |
| मेंढल | R. tetrasperma Roxb. | 164 |
| तिलक | Wendlandia exserta DC. | 164 |
| हरिद्रु | Adina cordifolia Hook. | 164 |
| थनैला | Gardenia turgida Roxb. | 165 |
| पापरी | Pavetta indica Linn. | 165 |
| गन्धप्रसारणी | Paederia foetida Linn. | 165 |
| | Oldenlandia corymbosa Linn. | 165 |
| छोटीकुरी | Galium mollugo Linn. | 165 |
| | G. aparine Linn. | 166 |
| पदाड्या | Hamiltonia suaveolns Roxb. | 166 |
| | Leptodermis lanceolata Wall. | 166 |
| **जटामांस्यादिवर्ग** | **VALERIANACEAE** | **166** |
| जटामांसी | Nardostachys jatamansi DC. | 166 |
| तगर | Valeriana wallichii DC. | 167 |
| | V. hardwickii Wall. | 167 |
| | **DIPSACEAE** | **167** |
| विषकंडार | Morina longifolia Wall. | 167 |
| **भृंगराजादिवर्ग** | **COMPOSITAE** | **168** |
| कूठ | Saussurea lappa C.B.Cl. | 168 |
| स्थलपद्म | S. obvallata Wall. | 169 |
| फेनकमल | S. gossypiphora D. Don. | 168 |
| दमनक | Artemisia vulgaris Linn. | 169 |
| शेषकी | A. maritima Linn. | 169 |
| अफसन्तीन | A. absinthium Linn. | 169 |
| गंगातुलसी | A. sacrorum Ledeb. | 169 |
| | A. vestita Wall. | 170 |
| | A. scoparia Waldst. | 170 |
| | A. parviflora Wight | 170 |
| दुग्धफेनी | Taraxacum officinale Wigg. | 170 |
| भृंगराज | Eclipta alba Hassk. | 170 |
| सहदेवी | Vernoia cinerea Less. | 170 |
| सोमराजी | Centratherum antheminticum. | 171 |
| जंगली पुदीना | Ageratum conyzoides Linn. | 171 |
| अकलकोहड़ी | Tridax procumbens Linn. | 171 |
| नखछिकनी | Centipeda minima A.Br. | 171 |
| कुरो | Zanthium strumarium Linn. | 172 |
| नीलकंठी | Senecio alatus Wall. | 172 |
| | S. jacquemontianus Benth. | 172 |
| चोपालों | Sonchus asper Vil. | 172 |
| | S. oleraceus Linn. | 172 |
| जातुकन्द | Jurinea macrocephala Benth. | 172 |
| कुरी | Biclens pilosa Linn. | 173 |
| कड़वीवूटी | Ainsliaea aptera DC. | 173 |
| बुरुन्स | Cnicus wallichii DC. | 173 |
| पुष्करमूल | Inula racemosa Hook. f. | 173 |
| गुग्गल (गोगल) | Tanacetum longifolium | 174 |
| कंटेला | Echinops niveus Wall. | 174 |
| गोरखमुण्डी | Spharanthus indicus Linn. | 174 |
| गेन्दा | Tagetes arecta Linn. | 174 |
| मयूरशिखा | Elephantopus scaber Linn. | 174 |
| | Adenostemma lavenia Linn. | 175 |
| | Ainsliaea pteropoda. D.C. | 175 |
| | Anaphalis cuneifolia HK. f. | 175 |
| | A. margaritaceae Benth. | 175 |
| | A. royleana DC. | 175 |
| | A. araneosa DC. | 175 |
| | A. triplinervis C.B.Cl. | 175 |
| | Aster peduncularis Wall. | 175 |
| | A. indamellus Grieson. | 175 |
| | Cicerbita macrarhiza Royle. | 175 |
| | Cremanthodium arnicodes. | 175 |
| | Dubyaea hispida D. Don. | 175 |
| | Erigeron alpinus Linn. | 175 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| | E. multiradiatus (DC.) Benth. | 175 |
| | Eschenbachia stricta Willd. | 175 |
| | Gnaphalium affine D. Don. | 175 |
| | Gynura angulosa. DC. | 175 |
| | Helinium grandiflorum Willd. | 175 |
| | Inula cuspidata C.B.Cl. | 175 |
| | Inula cappa DC. | 175 |
| | Leontopodium himalayanum. | 175 |
| | Laggera alata. Schultz. Bip. | 175 |
| | Myriatis wallichii Less. | 175 |
| | Prenanthes brunoniana Wall. | 175 |
| | Saussurea heteromalla. | 175 |
| | S. denticulata Wall. | 175 |
| | S. hypoleuca Spreng. | 175 |
| | S. piptathera Edgew. | 175 |
| | Senecio chrysanthemoides. | 175 |
| | S. rufinervis DC. | 175 |
| | S. alatus Wall ex DC. | 175 |
| | S. kuntianus Wall ex DC. | 175 |
| | S. quinquelobus Wall. | 175 |
| | Solidago virga-aurea Linn. | 176 |
| | Tricholepis elongata DC. | 176 |
| | Lactuca brunoniana Clarke. | 176 |
| | Cirsium veratum Spreng. | 176 |
| | **ERICACEAE** | **176** |
| अंयार | Lyonia ovalifolia Durde. | 176 |
| तालीस | Rhododendron anthopogon | 176 |
| कोठ्या | R. lepidotum Wall. | 176 |
| बुरान्स | R. arboreum Sm. | 177 |
| सिमरू | R. campanulatum D. Don. | 176 |
| | Cassiope fastigiata D. Don. | 177 |
| | Gaultheria trichophylla Royle. | 177 |
| **चित्रकादिवर्ग** | **PLUMBAGINACEAE** | **177** |
| चित्रक | Plumbago zeylanica Linn. | 177 |
| | **PRIMULACEAE** | **178** |
| जोंकमारी | Angallis arvensis Linn. | 178 |
| **लोध्रादिवर्ग** | **SYMPOGACEAE** | **178** |
| लोध्र | Symplocos crataegoides Ham. | 178 |
| | S. racemosa Roxb. | 178 |
| **जात्यादिकुल** | **OLEACEAE** | **178** |
| जाती | Jasminum grandiflorum Linn. | 178 |
| चमेली | J. arborscens Roxb. | 179 |
| हेमपुष्पिका | J. humile Linn. | 179 |
| मालती | J. sambae Ait. | 179 |
| कुन्द | J. multiflorum And. | 179 |
| यूथिका | J. auriculatum Vahl. | 179 |
| शिवमल्ली | Osmanthus fragrans Lour. | 179 |
| सफोरी | Syringa emodi Wall. | 179 |
| हारसिंगार | Nyctanthes arbortristis Linn. | 180 |
| मुष्कक | Schrebera swietenioides Roxb. | 180 |
| **मधुकादिवर्ग** | **SAPOTACEAE** | **180** |
| महुआ | Madhuca indica J. F. Gmel. | 180 |
| मौलसरी | Mimusopus elengi Linn. | 181 |
| **तिन्दुकादिवर्ग** | **EBENACEAE** | **181** |
| काकतिन्दुक | Diospyras cordifolia Roxb. | 181 |
| तिन्दुक | D. tomentosa Roxb. | 181 |
| | D. montana Roxb. | 182 |
| **पील्वादिवर्ग** | **SALVADORACEAE** | **182** |
| पीलू | Salvadora persica Linn. | 182 |
| | S. oleoides Dcne. | 182 |
| **कुटजादिवर्ग** | **APOCYNACEAE** | **182** |
| कुटज | Holarrhena antidyenterica Wall. | 182 |
| मीठा इन्द्रयव | Wrightia tomentosa R.of.S. | 183 |
| सर्पगन्धा | Rauwalfia serpentina Benth. | 183 |
| सप्तपर्ण | Alstonia scholaris Br. | 183 |
| आस्फोता | Vallaris heynei Spreng. | 184 |
| जंगलीकरौन्दा | Carissa spinarum A. DC. | 184 |
| कनेर | Nericum indicum Mill. | 184 |
| **अर्कादिवर्ग** | **ASCLEPIADACEAE** | **185** |
| कृष्णसारिवा | Crypotolpis buchanani. | 185 |
| | Periploca calophylla Fale. | 185 |
| मूर्वा | Marsdenia tenacissima Wall. | 185 |
| मूर्वाभेद | M. royle Wight. | 186 |
| काकतुण्डी | Asclepias curassavica Linn. | 186 |
| अर्क | Calotropis procera Br. | 186 |
| श्वेतार्क | C. gigantea Br. | 186 |
| उत्तमारणी | Daemia extensa R. Br. | 187 |
| अर्कपुष्पी | Holostemma integrifolia. | 187 |
| अर्कपर्णी | Tylophora asthamafica Ham. | 187 |
| अट्टेरनी | T. hirsuta Wight. | 187 |
| जीवन्ती | Leptadenia reticulata W of A. | 187 |
| गिलोडय | Ceropegia bulbosa Roxb. | 188 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| | Cynanchum vincetoxicum. | 188 |
| | Hoya longifolia Wall. | 188 |
| **किरातादिवर्ग** | **GENTIANACEAE** | **188** |
| किरात–तिक्त | Swertia chirata Buch-Ham. | 188 |
| चिरायता | S. purpurascens Wall. | 189 |
| | S. cordata Wall. | 189 |
| | S. cuneata Wall. | 189 |
| | S. paniculata Wall. | 189 |
| | S. angustifolia Ham. | 189 |
| त्रायमाण | Gentiana karroo Royle. | 189 |
| | G. capitata Buch-Ham. | 190 |
| **श्लेष्मातकादिवर्ग** | **BORAGINACEAE** | **190** |
| लिसोड़ा | Cordia dichotama Fors. | 190 |
| रतन जोत | Onosma echiodes Linn. | 190 |
| | Onosma emodi. | 190 |
| गोजिह्वा | Macrotomia benthami DC. | 191 |
| अघःपुष्पी | Trichodesma indicum Br. | 191 |
| अन्धाहुली | Cynoglossum wallichii D. Don. | 191 |
| | C. micranthum Desb. | 191 |
| | C. zeylanicum. | 191 |
| | Macrotomia euchroma. | 191 |
| | Lasio caryum diffusum. | 191 |
| **त्रिवृतादिवर्ग** | **CONVOLVULACEAE** | **191** |
| शंखपुष्पी भेद | Evolvulus alsinoides Linn. | 192 |
| कालादाना | Ipomaea hederacea Jacq. | 192 |
| | I. hispida. | 192 |
| आकाशवेल | Cuscuta reflexa Roxb. | 192 |
| **कण्टकार्यादिवर्ग** | **SOLANACEAE** | **192** |
| कण्टकारी | Solanum zanthocarpum. | 193 |
| बृहती | Solanum indicum Linn. | 193 |
| | S. torvum Sw. | 193 |
| | S. khasianum Clarke. | 193 |
| | S. verbascifolium Linn. | 193 |
| अश्वगन्धा | Withania somnifera Dunal. | 194 |
| पारसीक यवानी | Hyoscyamus niger Linn. | 194 |
| कृष्णधत्तूर | Datura stramonium Linn. | 195 |
| मकोय | Solanum nigrum Linn. | 195 |
| तम्बाकू | Nicotiana tabacum Linn. | 195 |
| वेलाडोना | Atropa bladona Linn. | 196 |
| | A. acuminata Linn. | 196 |
| | Nicandra physaloides Gaertn. | 196 |
| **तिक्तादिवर्ग** | **SCROPHULARIACEAE** | **196** |
| कुटकी | Picrorhiza kurroa Royle. | 196 |
| जलनीम | Bacopa monnieri Pennel. | 197 |
| गीदड़तम्बाकू | Verbascum thapsus Linn. | 197 |
| हृत्तपत्री | Digitalis lanata Ehrh. | 197 |
| | D. purpurea Linn. | 197 |
| | Euphrasia schlagintweitii. | 198 |
| | Hemiphragma heterophyllum. | 198 |
| | Lindenbergia grandiflora. | 198 |
| | Lindernea ciliata | 198 |
| | Majus japonicus Thumb. | 198 |
| | Pedicularis bicornuta. | 198 |
| | P. longiflora Rudolf. | 198 |
| | P. megalantha Don. | 198 |
| | Scrophularia decomposita. | 198 |
| | S. calycina Benth. | 198 |
| | Verbascum thapsus Linn. | 198 |
| | Veronica cana Wall ex DC. | 198 |
| | V. laxa Benth. | 198 |
| **श्योनाकादिवर्ग** | **BIGNONIACEAE** | **198** |
| श्योनाक | Oroxylum indicum Vent. | 198 |
| पाटला | Sterosperum suavealens DC. | 198 |
| **तिलादिवर्ग** | **PEDALIACEAE** | **199** |
| बिच्छुआ | Martynia deandra Glox. | 199 |
| तिल | Sesamum indicum Linn. | 199 |
| **वासादिवर्ग** | **ACANTHACEAE** | **200** |
| आटरूषक | Adhatoda vasica Nees. | 200 |
| काकजंघा | Peristrophe bicalyculata Nees. | 200 |
| वासिंगू | Barleria cristata Linn. | 200 |
| | Strobilanthus kuntianus And. | 200 |
| | Pteracanthus alatus Wall. | 200 |
| | Aechmanthera tometosa | 200 |
| **निर्गुण्डीकुल** | **VERBENACEAE** | **201** |
| निर्गुण्डी | Vitex negundo Linn. | 201 |
| प्रियंगु | Callicarpa macrophylla Vahl. | 201 |
| भारंगी | Clerodendron serratum. | 202 |
| ब्रह्मयष्ठी | C siphonanthus R. Br. | 202 |
| अग्निमन्थ | C. phlomides Linn. | 203 |
| भांट | C. infortunatum Garten. | 203 |
| अरणीभेद | Premna barbata Wall. | 203 |
| वकार | P. latifolia Roxb. | 203 |
| | P. herbacea Roxb. | 203 |
| गम्भारी | Gmelina arborea Linn. | 203 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ट सं. |
|---|---|---|
| सागौन | Tectona grandis Linn. | 204 |
| **तुलस्यादिवर्ग** | **LABIATAE** | **204** |
| उस्तखद्दूस | Prunella vulgaris Linn. | 204 |
| वन्ययवानी | Thymus serpyllum Linn. | 204 |
| द्रोणपुष्पी | Leucas cephalotes Spreng. | 205 |
| पूदीना | Mentha longifolia Huds | 205 |
| | M. arvensis Linn. | 205 |
| कमरकस | Salvia plebeja R. Br. | 205 |
| | S. lanata Roxb. | 205 |
| करु | Roylea calycina Btig. | 205 |
| फणींझक | Pogostemon parviflorus. | 206 |
| नीलकंठी | Ajuga bracteosa Wall. | 206 |
| तुलसी | Ocimum sanctum Linn. | 206 |
| | O. basilicum Linn. | 206 |
| | O. gratissium. | 206 |
| | O. Cleremedelicum. | 206 |
| मरूवक | Origanum vulgare Linn. | 207 |
| | Salvia hians Royle ex HK. | 207 |
| | S. lanata Roxb. | 207 |
| | S. nubicola Sweet. | 207 |
| | Stachys serica Wall. | 207 |
| | Scutellaria prostrata Jasq. | 207 |
| | Thymus sertyllum Linn. | 207 |
| | Micromeria biflora Benth. | 207 |
| | Elshotzia patrinii Garck. | 207 |
| | Nepeta deucophylla Benth. | 207 |
| **पुनर्नवादिवर्ग** | **NYCTAGINACEAE** | **208** |
| पुनर्नवा | Boerhaavia diffusa Linn. | 208 |
| गुलावांस | Mirabilis jalapa Linn. | 208 |
| **ईसवगोलादिवर्ग** | **PLANTAGINACEAE** | **208** |
| ईसवगोल (जंगली) | Plantago major Linn. | 208 |
| **अपामार्गादिवर्ग** | **AMARANTHACEAE** | **209** |
| अपामार्ग | Achyranthes aspera Linn. | 209 |
| कांटाचौलाई | Amaranthus spinosa Linn. | 209 |
| मारछा | A. paniculatus Linn. | 209 |
| **वास्तुकादिवर्ग** | **CHENOPODIACEAE** | 210 |
| वास्तुक | Chenopodium album Linn. | 210 |
| सुगन्धवास्तूक | C. ambrosiaoides Linn. | 210 |
| | C. botrys. | 210 |
| **चुक्रादिवर्ग** | **POLYGONACEAE** | **210** |
| अज्जुवार | Polygonum amplexicaule. | 210 |
| रेवन्दचीनी | Rheum emodi Wall. | 210 |
| ढोलू | R. webbianum Royle. | 211 |
| | R. moorcroftianum Royle. | 211 |
| कोटू | Fagopyrum esculantum Moe. | 211 |
| विशल्यकर्णी | Polygonum recumbens. | 211 |
| निर्विषी | P. rumicifolium Royle. | 211 |
| | Fagopyrum tataricum Gaertn. | 212 |
| | F. cymosum Meissn. | 212 |
| | Polygonum affine D. Don. | 212 |
| | P. aviculare Linn. | 212 |
| | P. polystachynum Wall. | 212 |
| | P. viviparum Linn. | 212 |
| | Oxyria digyna Hill. | 212 |
| | Bistorta macrophylla. | 212 |
| **पिप्पलीकुल** | **PIPERACEAE** | **212** |
| पिप्पली | Piper longum Linn. | 212 |
| **जरगूकुल** | **PHYTOLACCACEAE** | **213** |
| जरगू | Phytolacca acinosa Roxb. | 213 |
| **कर्पूरादिवर्ग** | **LAURACEAE** | **213** |
| तेजपत्ता | Cinnamomum tamala Ness. | 213 |
| कर्पूर | C. camphora Nees. | 214 |
| कोंला | Machilus odoratissima Nees. | 214 |
| रासूर | Litsaea umbrosa Nees. | 214 |
| मेदासक | L. chinensis Linn. | 214 |
| **वन्दाकादिवर्ग** | **LORANTHACEAE** | **215** |
| वन्दाक | Dendrophthose falcata Etti. | 215 |
| **अर्गुवादिवर्ग** | **THYMALIACEAE** | **215** |
| सतपुड़ा | Daphne papyracea Wall. | 215 |
| | **ELAEAGINACEAE** | **215** |
| आमील | Hippophae rhamnoides Ser. | 215 |
| | H. salicifolia D. Don. | 215 |
| **एरण्डादिवर्ग** | **EUPHORBIACEAE** | **216** |
| आमलकी | Emblica offinales Gaertn. | 216 |
| कम्पिल्लक | Malloutus philippinensis Muell. | 216 |
| एरण्ड | Ricinus communis Linn. | 217 |
| दन्ती | Baliospermum montanum. | 217 |
| भूम्यालकी | Phyllanthus urinaria Linn. | 218 |
| सप्तला | Euphorbia pilosa Linn. | 218 |
| | E. hirta Linn. | 218 |
| | E. thymifolia Linn. | 218 |
| स्नुही | E. nivulia Buch-Ham | 219 |
| | E. royleana Boiss. | 219 |
| अधोगुड़ा | E. acaulis Roxb. | 219 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| पुंत्रजीव | Patranjiva roxburghii Wall | 219 |
| अरण्डी | Jatraopha curcas Linn. | 219 |
| एकदांनिया | Bridelia retusa Spring | 220 |
| पानी गंभार | Trewia nudiflora Linn. | 220 |
| चामरी | Glochidion velutinum Wigh. | 220 |
| खिन्ना | Sapium insigne Trimen. | 220 |
| | Acalypha brachystachya. | 220 |
| | Arochne cordifolia. | 220 |
| | Phyllanthus virgatus J.G. | 220 |
| | **BUXACEAE** | **220** |
| पापरी | Buxus wallichiana. | 220 |
| **वटादिवर्ग** | **URTICACEAE** | **220** |
| उदुम्बर | Ficus racemosa Linn. | 220 |
| काकोद्म्बरिका | Ficus hispida Linn. | 221 |
| जंगलीअंजीर | Ficus palmata. | 221 |
| वट | Ficus bengalensis Linn. | 221 |
| प्लक्ष | Ficus infectoria Roxb. | 221 |
| पीपल | Ficus religiosa Linn. | 221 |
| तिमिला | Ficus roxburghii | 221 |
| विच्छुबूटी | Girardiana diversifolia Friss. | 221 |
| हेमर | Ulmus wallichiana Planch. | 221 |
| केमू | Morus alba Linn. | 221 |
| | Boehmeria platyphylla D.Don. | 222 |
| | Chamabainia cuspidata. | 222 |
| | Conostegia hirta Miq. | 222 |
| | Elatostema sessile Forst. | 222 |
| | Lecanthus wallichii Wedd. | 222 |
| | Laportea terminalis Wight. | 222 |
| | Pilea umbrosa Wedd. | 222 |
| **विजयादिवर्ग** | **CANNABINACEAE** | **222** |
| विजया | Cannabis sativa Linn. | 222 |
| **अक्षोड़ादिवर्ग** | **JUGLANDACEAE** | **222** |
| अखरोड़ | Jaglans regia Linn. | 222 |
| **कटफलादिवर्ग** | **MYRICACEAE** | **223** |
| कटफल | Myrica nagi Thunb. | 223 |
| **भोर्जपत्रादिवर्ग** | **BETULIACEAE** | **223** |
| भोजपत्र | Betula utilis D. Don. | 223 |
| **माजूफलादिवर्ग** | **FAGACEAE** | **224** |
| बांझ | Quercus incana Roxb. | 224 |
| खरसू | Q. dilatats Lindle. | 224 |
| मौरू | Q. semecarpifolia Sam. | 224 |
| | **SALICACEAE** | **224** |
| जलवेतस | Salix terasperma Roxb. | 224 |
| | S. elegans Wall. | 224 |
| **एकबीजपत्री** | **MONOCOTYLEDONS** | **224** |
| **मुज्जातकादिवर्ग** | **ORCHIDACEAE** | **224** |
| जीवक–ऋषभक | Microstylis wallichii Lindl. | 224 |
| जीवकभेद | M. muscifera Ridl. | 225 |
| | M. cylindrostachya Rchb. | 225 |
| | Laparis rostrata Rehb. | 225 |
| ऋद्धि–बृद्धि | Habenaria intermedia D.Don. | 225 |
| | H. acuminata D. Don. | 226 |
| | H. griffithii H.K. | 226 |
| जीवन्ती | Pholidota articulata Lindl. | 226 |
| मुज्जातक | Orchid latifolia Linn. | 226 |
| सालप | Eulophia campestris Wall. | 226 |
| | E. herbacea Lindl. | 226 |
| | E. harmuskii Duthie. | 226 |
| | Calanthe tricarinata Lindl. | 227 |
| | Cypripedium elegans. | 227 |
| | Dendrobium narmale Falc. | 227 |
| | Dendrobium alpestre Royle. | 227 |
| | Dendrobium amoenum Wall. | 227 |
| | Epipactis royleana Lindl. | 227 |
| | Gastrodia orobanchoides. | 227 |
| | Goodyera repens Linn. | 227 |
| | Hemipilia cordifolia Lindl. | 227 |
| | Oreorchis indica Hk. | 227 |
| | Oreorchis micrantha Lindl. | 227 |
| | Malaxis acuminata D.Don. | 227 |
| | Spiranthes sinensis | 227 |
| | Dactylorhiza hatagirea | 227 |
| वंगीय रास्ना | Vanda parviflora Lindl. | 227 |
| | Vanda cristata Lindl. | 227 |
| | Viscus album Linn. | 227 |
| **हरिद्राकुल** | **ZINGIBERACEAE** | **228** |
| केमुक | Costus speciosus Sm. | 228 |
| काकोली | Roscoea procera Wall. | 228 |
| | R. alpina Wall. | 228 |
| तवक्षीर | Curcuma angustifolia Roxb. | 229 |
| हरिद्रा | C. longa Linn. | 229 |
| कपूरकचरी | Hedychium spicatum Ham. | 229 |
| अदरक | Zingider officinale Rose. | 230 |
| **तालमूल्यादिवर्ग** | **AMARYLLIDACEAE** | **230** |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| कालीमूशली | Curculigo ordioides Gaert | 230 |
| | **IRIDACEAE** | **230** |
| हैमवतीवंचा | Iris kumoonensis Wall. | 230 |
| **वाराहीकन्दादिवर्ग** | **DIOSCOREACEAE** | **231** |
| वाराही, | Dioscorea bulbifera Linn. | 231 |
| सिंगली | D. deltoidea Wall. | 231 |
| तैल्ड | D. belophylla Vaight | 231 |
| | D. pentaphylla Linn. | 231 |
| **रसोनादिवर्ग** | **LILIACEAE** | **231** |
| शतावरी | Asparagus racemosus Willd. | 231 |
| | A. adscendens Roxb. | 231 |
| | A. curillus. | 231 |
| | A. gracilis. | 231 |
| चिड़ियामूसली | A. filicinus Buch-Ham. | 231 |
| क्षीरकाकोली | Lilium polyphyllum D. Don. | 232 |
| | Lillium wallichianum Schult. | 232 |
| | Nomocharis oxypetala. | 232 |
| | Nomocharis nana E.H. | 232 |
| | Fritillaria cirrhosa D.Don. | 232 |
| | F. roylei Hook. | 232 |
| दुधियावच | Paris polyphylla Smith. | 232 |
| कुकरजाड़ी | Smilax aspera Linn. | 233 |
| | S. macrophylla Roxb. | 233 |
| कलिहारी | Gloriosa superba Linn. | 233 |
| कोलकन्द | Urginea indica Kunth. | 233 |
| मेदा–महामेदा | Polygonatum vertecillatum Alloi. | 233 |
| महामेदा | P. cirrhifolium Royle. | 234 |
| जम्बीरक | Allium stracheyi Baker. | 234 |
| | A. wallichii Kunth. | 234 |
| पांगड़ी | A. govanianum Wall. | 234 |
| लसुन | A. sativum Linn. | 234 |
| प्याज | A. cepa Linn. | 234 |
| | A. rubellum Bieb. | 234 |
| | Cardiocrinum giganteum. | 234 |
| | Chlorophytum tuberosum. | 234 |
| | Disporum cantoniense. | 234 |
| | Fritillaria royleii Hook. | 235 |
| | Nomocharis oxypetala | 235 |
| | Polygonatum verticillatum. | 235 |
| | Smilacina pallida Royle. | 235 |
| | Smilax elegans Wall. | 235 |
| | Trillium govanianum Wall. | 235 |

| संस्कृत/हिन्दी | Botanical Name | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| **वचादिवर्ग** | **ARACEAE** | **235** |
| वचा | Acorus calamus Linn. | 235 |
| गजपिप्पली | Scindapsus officinalis Sch. | 235 |
| क्रोव्रामीन | Arisaema concinum Schott. | 236 |
| | A. tartuosum Schott. | 236 |
| | A. jacquemontii Bl. | 236 |
| **उशीरादिवर्ग** | **GRAMINAE** | **236** |
| रोहिष | Cymbopogon schoenanthus. | 236 |
| | C. jwarancusa Schut. | 236 |
| दूर्व्वा | Cynodon dactylon Linn. | 236 |
| वांस | Bambusa bambos Druee. | 237 |
| कुश | Desmostachya bipinnata. | 237 |
| काश | Saccharum spontaneum Linn. | 237 |
| शर | S. munja Roxb. | 237 |
| उशीर | Vetiveria zizanioides Nash. | 237 |
| | **CYPERACEAE** | **237** |
| मुस्ता | Cyperus rotundus Linn. | 237 |
| **सोमादिवर्ग** | **GENTACEAE** | **238** |
| सोम | Ephedra gerardiana Wall. | 238 |
| हाउवेर | Juniperus communis Linn. | 238 |
| | J. recurva Ham. | 238 |
| **तालीसादिवर्ग** | **TAXACEAE** | **239** |
| थुनेर | Taxus baccata Linn. | 239 |
| तालीस | Abies webbiana Lindl. | 239 |
| रौंसली | A. pindrow Spach. | 239 |
| **देवदाव्यादिवर्ग** | **PINACEAE** | **241** |
| देवदार | Cedrus deodara Lour. | 241 |
| चीड़ | Pinus roxburghii Sargent. | 241 |
| कैल | P. excelsa Wall. | 241 |
| **शैलेयकुल** | **PARMELIACEAE** | **242** |
| शैलेय | Parmelia perlata Ach. | 242 |
| | **LYCOPODIACEAE** | **242** |
| बेली | Lycopodium clavatum Linn. | 242 |
| | Lycopodium setaceum Linn. | 242 |
| | Pleopeltis thunbergiana. | 242 |
| | **POLYPODIACEAE** | **242** |
| हंसपदी | Adiantum lunulatum Linn. | 242 |
| | Adiantum candatum Linn. | 242 |
| | Polypodium amoenum Wall. | 242 |
| | **EQUISETACEAE** | **242** |
| जोड़–तोड़ | Equisetum debile Roxb. | 242 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

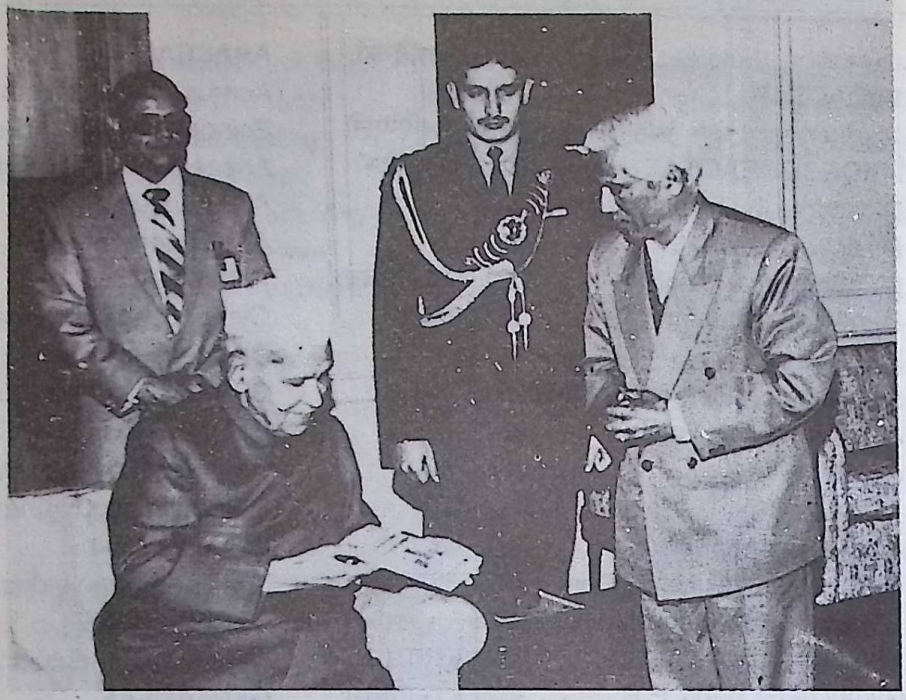

महामहिम राष्ट्रपति डॉ॰ शंकर दयाल शर्मा जी पुस्तक का विमोचन करते हुए एवं डॉ॰ मायाराम उनियाल पुस्तक के विषय में जानकारी देते हुये परिलक्षित

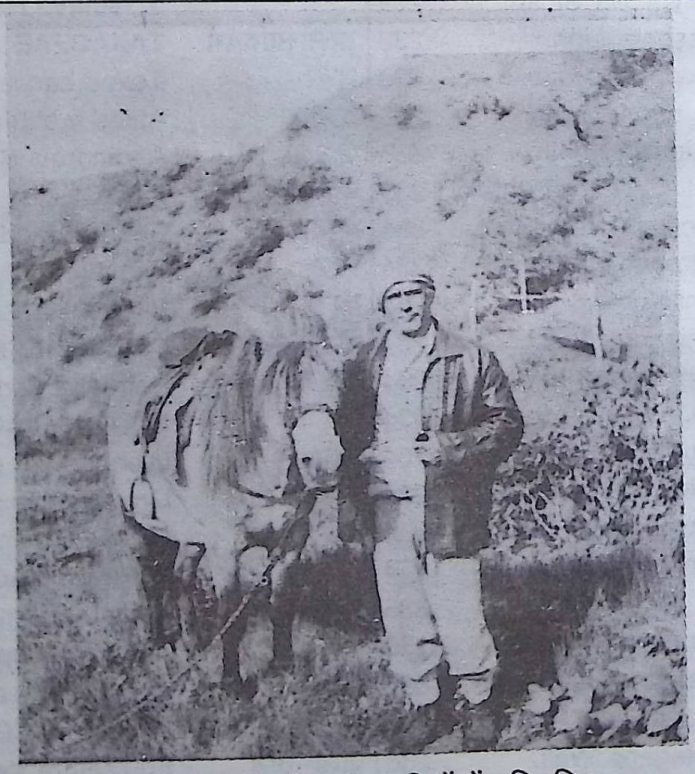

लेखक हिमालय की दुर्गम धाटियों में परिलक्षित :



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# द्रव्यो के संस्कृत एवं स्थानिक नामों की अकारादिक्रम से तालिका


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| अकलकोहड़ी | 171 |
| अखोड़िया | 123 |
| अरणी | 203 |
| अरणी भेद, वकार | 203 |
| अग्निमन्थ | 203 |
| अतिबला, कंघी | 102 |
| अतिविषा, अतीस | 69 |
| अनियार, अंयार | 176 |
| अफसन्तीन, कीटमार | 169 |
| अपामार्ग, चिरचिटा | 209 |
| अपामार्गादिवर्ग | 209 |
| असकुटा | 145 |
| अरकोल | 123 |
| असन, सैन | 157 |
| अरूलुक, अरलु | 112 |
| अम्लिका, इमली | 137 |
| अमृतस्त्रवा, छिवाड़ी | 118 |
| अर्क, आक | 186 |
| अर्कपुष्पी | 187 |
| अर्कपर्णी | 187 |
| अर्कादिवर्ग | 185 |
| अलर्क, श्वेतार्क | 186 |
| अधःपुष्पी, अंधाहुली | 191 |
| अश्वगन्धा, असगंध | 194 |
| अदरक | 230 |
| अरण्डी | 219 |
| अगेली | 82 |
| अंजुवार | 210 |
| अरिष्ठककुल | 119 |
| अरिष्ठक, रीठा | 119 |
| अहिफेन, अफीम | 91 |
| अहिफेन कुल | 91 |
| अगुर्वादिवर्ग | 215 |
| अटेरनी | 187 |
| अधोगुडा | 219 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| अक्षोड, अखरोट | 222 |
| अर्जुन, कोह | 156 |
| आम्रादिवर्ग | 120 |
| आम्रातक, अम्वाड़ा | 121 |
| आकाशवल्ली, आकाश बेल | 192 |
| आटरूषक, अडूसा | 200 |
| आमलकी, आंवला | 216 |
| आमील, आमीण | 215 |
| आरग्वध, अमलतास | 135 |
| आरूक, आडू | 141 |
| आस्फोता, दुधी बेल | 184 |
| इन्द्रजटा, भूतकेश | 94 |
| इसवगोलादिवर्ग | 208 |
| इसबगोल जंगली | 208 |
| उत्तमारणी, उत्तरण | 187 |
| उदसलीव, चन्द्रया, मंमेक | 83 |
| उदुम्बर, पिलखू | 220 |
| उस्तखद्दूस | 204 |
| उशीर | 237 |
| उशीरादिवर्ग | 236 |
| एकदानियाँ | 220 |
| एरण्ड, अरण्ड | 217 |
| एरण्डादिवर्ग | 216 |
| एलवालुक, चुलू | 141 |
| ऋद्धि–वृद्धि | 225 |
| कटःफल, काफल | 223 |
| कटःफलादिवर्ग | 223 |
| कंटेला | 174 |
| कड़वीबूटी | 173 |
| कढ़ीनीम, गन्धेलो | 111 |
| कंणदी | 136 |
| कन्दगुडूची, गिलोय | 87 |
| कमरकस | 205 |
| कमलादिवर्ग | 93 |
| कमल | 93 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| करंज्ज | 130 |
| कपित्थ, कैंथ | 110 |
| कपिकच्छु, कौचं | 128 |
| करू | 205 |
| कम्पील्लक, रीणों, कमीला | 216 |
| करीर | 97 |
| कटुतुम्बी | 153 |
| कलिहारी, लांगली | 233 |
| करवीर, कनेर | 184 |
| कर्कटश्रृंगी, काकड़ासिंगी | 121 |
| कर्कोटक | 152 |
| कर्पूरादिवर्ग | 213 |
| कर्पूर, कपूर | 214 |
| कण्टकारी | 193 |
| कण्टकार्यादिवर्ग | 192 |
| कलिहारू | 92 |
| कन्दूरी | 152 |
| कपूरकचरी | 229 |
| कालादाना | 192 |
| कालीमूसली | 230 |
| कारवेलक, करैला | 152 |
| काकजंघा | 200 |
| काकतिन्दुक, विषतेन्दु | 181 |
| काकतुण्डी, कंकवा | 186 |
| काकमाची, मकोय | 195 |
| काकोली | 228 |
| काकादनी, कर्णस्फोटा | 119 |
| काकोदुम्बरिका, कठगूलर | 221 |
| कांण्डीर, अगलैंण, जलधनिय | 82 |
| कांचन, कंज | 111 |
| काँचनार, गुरीयाल | 136 |
| कांतलू, निर्विषी | 211 |
| कामनी | 111 |
| काशमोई | 89 |
| कामल्या | 103 |
| कालाशिरीष | 139 |
| कासमर्द, कसौन्दी | 136 |
| कालीदुधी, सारिवाकृष्ण | 185 |
| काश, कांस | 237 |
| किणही, सफेदशिरीष | 136 |
| किराततिक्तादिवर्ग | 188 |
| किराततिक्त, चिरायता | 188 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| किरीष, सिंगली | 231 |
| किनगोड | 89 |
| कुकरजाड़ी | 233 |
| कुरी | 173 |
| कुटजादिवर्ग | 182 |
| कुटज, कूड़ा | 182 |
| कुटकी,कौडाई, कडू | 196 |
| कुन्द | 179 |
| कुब्जक, कुजा | 141 |
| बुरांस, कुरवक | 177 |
| कुरी, हारसिंगार | 180 |
| कुष्ठ, कूठ | 168 |
| कुश | 237 |
| कुष्माण्ड, पेठा | 153 |
| कुरो | 172 |
| कुकंर | 150 |
| कुलत्थ | 130 |
| कृष्णसारिवा, कालीदुधी | 185 |
| कृष्णमोक्षक, जमरासी | 116 |
| कृष्णधतूर | 195 |
| क्रोब्रामीन | 236 |
| केमुक | 228 |
| कैल | 241 |
| कोटू, ओगल | 211 |
| कोविदार, गुरियाल | 136 |
| कौंला | 214 |
| कोलकन्द, जंगलीप्याज | 233 |
| कुसुम, कोशाम्र | 119 |
| कोशातक्यादिवर्ग | 150 |
| कोशातकी, तोरी | 154 |
| खदिर, खैर | 138 |
| खरेंटी, बला | 102 |
| खरबूजा | 155 |
| खरसू | 224 |
| खिन्ना | 220 |
| खुब्बा | 103 |
| खूबकलां | 97 |
| गजपिप्पली, हथकौंल | 235 |
| गंगातुलसी | 169 |
| गण्डगात्र, सीताफल | 86 |
| गम्भारी, गंभार | 203 |
| गन्धायण | 159 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| गीदड़तमाखू, भमाकु | 197 |
| गन्धप्रसारणी | 165 |
| गिलोड्य | 188 |
| गुडूचीं, गिलोय | 86 |
| गुंजा, रत्ती | 127 |
| गुलमेंहदी | 109 |
| गुलाब | 140 |
| गुलाबाँस | 208 |
| गुग्गुल्वादिवर्ग | 115 |
| गुडूच्यादिवर्ग | 86 |
| गेंदा | 174 |
| गोगलधूप | 172 |
| गोगल, गुग्गल | 174 |
| गोरखमुण्ड़ी | 174 |
| गोजिह्वा, लालजड़ी | 191 |
| गौंता | 118 |
| घण्टापाटली | 116 |
| घियातोरी | 155 |
| चचिण्डा | 155 |
| चक्रमर्द, पनवाड़ | 136 |
| चंचु, चेंच | 107 |
| चम्पकादिवर्ग | 85 |
| चम्पक, चम्पा | 85 |
| चमतुंगलो | 123 |
| चमेली | 179 |
| चक्षुष्या, चाकसू | 132 |
| चन्द्रसूर | 97 |
| चांगेरी, खट्टीबूटी | 108 |
| चांगेरीकुल | 108 |
| चामरी | 220 |
| चिरायता | 189 |
| चिड़ियामूशली | 231 |
| चिल्हक, चीला | 150 |
| चिरौंजी | 123 |
| चित्रकादिवर्ग | 177 |
| चीड़ | 241 |
| चित्रक | 177 |
| चुक्रादिवर्ग | 210 |
| चुलु | 141 |
| चोपालो | 172 |
| चोरक, चोरा | 158 |
| छिलहिण्ट, जलजमनी | 88 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| छत्र्या | 159,160 |
| छिक्किका, नखछिकनी | 171 |
| छोटीकुरी | 165 |
| छिंगारू | 144 |
| छुईमुई | 139 |
| जख्या | 96 |
| जटामांस्यादिवर्ग | 166 |
| जटामांसी, मांसी | 166 |
| जदवार, बुडींण | 81 |
| जलनीम, ब्राह्मी | 197 |
| जंगली अंजीर | 221 |
| जंगलीं करौन्दा | 184 |
| जंगली दाल | 131 |
| जंगली पुदीना | 171 |
| जंगली जीरा | 160 |
| जम्बीरक, जम्बु | 234 |
| जम्बु, जामुन | 147 |
| जलवेतस | 224 |
| जरगूकुल | 213 |
| जरगू | 213 |
| जामुनी | 142 |
| जात्यादिकुल | 178 |
| जाती, चमेली | 178 |
| जातुकन्द, गूगलधूप | 172 |
| जिंगीणी,झींगन | 122 |
| जीरकादिवर्ग | 157 |
| जीवक–ऋषभक | 224 |
| जीवकभेद | 225 |
| जीवन्ती | 226 |
| जोड़गंढा, सोम | 238 |
| जोड़–तोड़ | 242 |
| जोंकमारी | 178 |
| ज्योतिष्मत्यादिवर्ग | 115 |
| ज्योतिष्मती, मालकौंणी | 115 |
| झिंझरिटा, चिकती | 107 |
| झिंगन | 122 |
| झण्डू, गेन्दा | 174 |
| ढोलु, आर्चा | 211 |
| तगर, सुमंया | 167 |
| तण्डुलीयक, काँटाचौलाई | 209 |
| तवक्षीर, वंणहल्दो | 229 |
| तरूणी, गुलाब | 140 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| ताम्रकूट, तमाखू | 195 |
| तालीस | 239 |
| तालीसादिवर्ग | 239 |
| तिन्तिडीक, तुंगलो | 122 |
| तालमूली | 230 |
| ताल्मूल्यादिवर्ग | 230 |
| तिनिश, सांदन | 129 |
| तिलादिवर्ग | 199 |
| तिल | 199 |
| तिन्दुकादिवर्ग | 181 |
| तिन्दुक, तेन्दू | 181 |
| तिरोई | 160 |
| तिल्वक | 161 |
| तिलक | 164 |
| तिलपर्णी, हुलहुल | 96 |
| तिलफारो | 88 |
| तिमिला | 221 |
| तुम्बुरू, टिम्बरू | 110 |
| तुलसी | 206 |
| तुलस्यादिवर्ग | 204 |
| तिक्तादिवर्ग | 196 |
| तूद, केमू | 221 |
| तुरड़, तैल्ड | 231 |
| तोतरो | 89 |
| तैलपर्णी | 147 |
| तोदरी | 97 |
| थंथार, चढ़ोला | 118 |
| थनैला | 165 |
| थुनेर | 239 |
| दन्ती | 217 |
| दमनक कुंडजा | 169 |
| दाडिम,अनार | 149 |
| दारूहरिद्राकुल | 89 |
| दारूहरिद्रा, किनगोड | 89 |
| द्राक्षाकुल | 118 |
| दुग्धफेनी, दुधी | 170 |
| दुधियावच | 232 |
| दूर्व्वा, दूब | 236 |
| देवदाली | 154 |
| देवदारू, देवदार | 241 |
| द्रोणपुष्पी, गुम्मा | 205 |
| धव, बांकली | 157 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| धतूरासफेद | 195 |
| धन्वन, धामिन | 106 |
| धन्यवन कुल | 105 |
| धातक्यादिकुल | 148 |
| धातकी, धौल | 148 |
| नगास्या | 118 |
| नदिजम्बू क्षुद्रजम्बू | 147 |
| नखछिकनी | 171 |
| नागबला, गुलशकरी | 105 |
| नागदौन, मरछोव | 120 |
| नाशपाती | 142 |
| निर्गुण्डीकुल | 201 |
| निर्गुण्डी, सम्भालु | 201 |
| निर्विषी | 211 |
| निम्बकुल | 113 |
| निम्ब, नीम | 113 |
| नीली | 131 |
| नीलकंठी | 172,206 |
| पदाडया | 166 |
| पलाण्डु | 234 |
| पलाश, ठाक | 125 |
| पलाशदिवर्ग | 124 |
| पटोल | 155 |
| परूषक, फालसा | 106 |
| पट्टिकालोघ्र, लोध | 178 |
| पद्मकादिवर्ग | 140 |
| पद्मक, पयां | 140 |
| पर्पट, पित्तपापड़ा | 94 |
| प्लक्ष, पिलखन | 221 |
| पर्णबीज,पथरचूर | 146 |
| पर्पटादिवर्ग | 94 |
| प्रतिविषा | 72 |
| पांगड़ी | 234 |
| पाटला, पाठल | 198 |
| पाठा, पाड़ी | 88 |
| पांगर, वखोर | 120 |
| पापरी, अंगारी | 165 |
| पारषीक यवानी | 194 |
| पापरी | 220 |
| पारिभद्र, मदार | 132 |
| पाषाणभेद | 144 |
| पाषाणभेदादिकुल | 144 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| प्राचीनामलक | 99 |
| पिस्सूबूटी | 112 |
| पिप्पलीकुल | 212 |
| पिप्पली | 212 |
| पीपल, अश्वत्थ | 221 |
| पिपल्वादिवर्ग | 182 |
| पीलू | 182 |
| पीतमूला | 84 |
| प्रियंगू, दहिया | 201 |
| प्रियाल, चिरौंजी | 123 |
| पृश्निपर्णी, पिठवन | 127 |
| पुनर्नवादिवर्ग | 208 |
| पुनर्नवा, पूर्णो | 208 |
| पुष्करमूल, मानू | 173 |
| पूतिकरज्जादिवर्ग | 134 |
| पूतिकरज्ज | 134 |
| पूतिहा, पूदीना | 205 |
| फणीज्झक, फांगलो | 206 |
| फालसा | 105 |
| फेनकमल, भेड़गन्धा | 168 |
| बदरादिवर्ग | 117 |
| बदर, बेर | 117 |
| बब्बूलादिवर्ग | 138 |
| बब्बूल, कीकर | 138 |
| बलाकुल | 102 |
| बला, खरेंटी | 102 |
| बकुल, मौलसरी | 181 |
| ब्रह्मयष्ठिका, चिंगारी | 202 |
| बिच्छुआ | 199 |
| बज्रदन्ती | 143 |
| बंश, बांस | 237 |
| बंगीय रास्ना | 227 |
| बचादिवर्ग | 235 |
| बचा, बच | 235 |
| ब्याघ्रनखी, हींस | 97 |
| ब्राह्मी, जलनीम | 197 |
| ब्राह्मी, मण्डूकपर्णी | 157 |
| बांझ | 224 |
| बासन्ती,फ्यूंली | 107 |
| बिदारीकन्द, सराल | 130 |
| बिखमा | 75 |
| बहेड़ा | 156 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| बिम्बी, कन्दूरी | 152 |
| बृहती, कण्टकारीबड़ी | 193 |
| बृ. चचुं | 107 |
| बिल्वकुल | 109 |
| बिल्व, बेल | 109 |
| बुरांस, कुरूवक | 177 |
| बुरून्स | 173 |
| बेली | 112 |
| भृंगराज, भांगरा | 170 |
| भारंगी | 202 |
| भमोरी | 163 |
| भल्लातक, भिलावा | 122 |
| भस्याणू | 162 |
| भाँट | 203 |
| भिल्लोटक | 116 |
| भीमल, भ्यूंल | 106 |
| भेंकल | 143 |
| भूतकेशी | 159 |
| भूमिबला | 102 |
| भूर्ज, भोजपत्र | 223 |
| भूम्यालकी, भुइआंवला | 218 |
| भैंसलगलो | 128 |
| भोजपत्रादिवर्ग | 223 |
| मण्डूकपर्णी, ब्राह्मी | 157 |
| मदन, मेंणदू | 163 |
| मधुक, महुआ | 180 |
| मधूकपुष्पी, च्यूरा | 181 |
| मधुकादिवर्ग | 180 |
| मनीरू | 83,84 |
| ममीरा, पीलीजड़ी | 84 |
| मदयन्तिका, मेंहदी | 148 |
| मकोय | 195 |
| मराडू | 101 |
| मरोडफली | 105 |
| मरूवक | 207 |
| मज्जिष्ठादिवर्ग | 163 |
| मंज्जीष्ठा, मंजीठ | 163 |
| मयूरशिखा | 174 |
| मसूरी, बरूल | 124 |
| महानिम्ब, डैंकण | 114 |
| माधबीकुल | 107 |
| माधवी, अनेता | 107 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| मालझन, मालू | 137 |
| मारीष, मारछो | 209 |
| माजूफलादिवर्ग | 224 |
| माषपर्णी, जंगली दाल | 126 |
| मालती | 179 |
| माँसरोहिणी | 112 |
| मालकांगनी | 115 |
| मिरघा | 146 |
| मुखजली | 146 |
| मुचुकुन्दादिवर्ग | 104 |
| मुचुकुन्द | 104 |
| मुद्गपर्णी, मुगवन | 125 |
| मुस्ता, मोथा | 237 |
| मुज्जातकादिवर्ग | 224 |
| मुज्जातक, सालमपज्जा | 226 |
| मुण्डी, गोरखमुण्डी | 174 |
| मुरामांसी, मूर | 159 |
| मूर्वा | 185 |
| मूर्वा भेद | 186 |
| मीठा इन्द्रयव | 183 |
| मीलू | 149 |
| मूलक, मूली | 98 |
| मेंथिका, मेथी | 133 |
| मेदासक, मेदालकड़ी | 214 |
| मेदा–महामेदा | 233 |
| मेंठल | 164 |
| मेंहल | 142 |
| मुष्कक, मोखा | 180 |
| मोरू, | 224 |
| मोलसरी | 181 |
| यूथिका | 179 |
| रसोनादिवर्ग | 231 |
| रसोन, लसुन | 234 |
| रतनजोत, लालजड़ी | 190 |
| राई–राजिका | 98 |
| राजपाठा, गिन्दाडू | 88 |
| रूद्रवन्ती, रूदन्ती | 128 |
| रेवन्दचीनी, आर्चा | 210 |
| रोहिषतृण | 236 |
| रोहिणीकुल | 112 |
| रौंसली | 239 |
| रींस | 144 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| लताकरज्ज, कांटाकरंज | 134 |
| लवंगादिवर्ग | 147 |
| लसुन | 234 |
| लाजवन्ती, छुई–मुई | 139 |
| लालजड़ीकुल | 108 |
| लालजड़ी | 108 |
| लांगली, कलिहारी | 233 |
| लेसर | 160 |
| लोघ्रादिवर्ग | 178 |
| लोध्र, लोध | 178 |
| लोणिकाकुल | 100 |
| लोणिका, लानी | 100 |
| लोनीशाक | 100 |
| वन्पशाकुल | 98 |
| वन्पशा, डुण्डिविराली | 98 |
| वरमूला | 98 |
| वीरव्रट | 128 |
| वटादिवर्ग | 220 |
| वट–बड़ | 221 |
| वन्यपटोल | 251 |
| वत्सनाभ,मीठाविख | 70 |
| वत्सनाभादिकुल | 69 |
| वकार | 203 |
| वन्ययवानी | 204 |
| वन्यकर्कटी | 90 |
| वन्यकुन्दरू | 153 |
| वरूणादिवर्ग | 95 |
| वरूण, वरना | 95 |
| वनचिलु | 162 |
| वन्दाक | 215,227 |
| वकायन | 114 |
| वासन्तीकुल | 101 |
| वान्दा | 161 |
| वासा | 200 |
| वासादिवर्ग | 200 |
| वासिंगू | 200 |
| वास्तूक, बथुआ | 210 |
| वाराहीकन्ददादिवर्ग | 231 |
| वाराही, गेंठी | 231 |
| विकंतक–कंडाई | 99 |
| विकंतककुल | 99 |
| विजया, भांग | 222 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust


| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| विजयादिकुल | 222 |
| विशाला, इन्द्रायण | 151 |
| विषकंडार | 167 |
| विशल्यकर्णी | 211 |
| वेलाड़ोना | 196 |
| शर | 237 |
| शटी, शेल्डू | 229 |
| शणपुष्पी, शण | 131 |
| शतावरी, झिंझणी | 231 |
| शरपुंखा | 133 |
| शंखपुष्पी भेद | 192 |
| शालपर्णी, सटिवन | 126 |
| शाल्मलीकुल | 103 |
| शाल्मली, समेल | 103 |
| श्लेष्मातकादिकुल | 190 |
| श्लेष्मातक, लिसोड़ा | 190 |
| श्यामसुन्दरी | 136 |
| श्योनाकादिवर्ग | 198 |
| श्योनाक | 198 |
| शिरीष, कालाशिरीष | 139 |
| शिबमल्ली, शिलंगी | 151 |
| शिंशपा, सीसम | 129 |
| शिवलिंगी | 151 |
| शैलेयकुल | 242 |
| शैलेय, छड़ीला | 242 |
| शेफालिका, पारिजात | 180 |
| शेषकी, छामस्या | 169 |
| शोभाज्जनादिकुल | 123 |
| शोभाज्जन, सैंजन | 124 |
| सटःफल | 132 |
| सतपुड़ा | 215 |
| सप्तपर्ण, छितवन | 183 |
| सप्तचक्रादिवर्ग | 150 |
| सर्पगन्धा | 180 |
| सप्तला, चोपालु | 218 |
| सर्पा, कोब्रामीन | 236 |
| सर्षपकुल | 97 |
| सर्षप, सरसों | 98 |
| सरल–चीड़ | 241 |
| स्थलपद्म, कौंल | 169 |
| सहदेवी | 170 |
| सफोरी | 179 |

| संस्कृत/स्थानिक नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|
| सलई | 115 |
| संटाई | 85 |
| स्नुही, शुलु | 219 |
| सुरसा, तुलसी | 206 |
| स्वर्णक्षीरी, कंटेला | 92 |
| स्ट्रावेरी | 143 |
| सालप | 226 |
| सागोन | 204 |
| सीसम | 129 |
| सिंगली | 231 |
| सिमरू | 176 |
| सीताफलादिवर्ग | 86 |
| सीताफल | 86 |
| सुगन्धवास्तूक | 210 |
| सैरेयक, अतरासु | 176 |
| सोमराजी, घोड़ाजीरी | 171 |
| स्थौणेयक, थुनैर | 239 |
| सूची, वेलाडोना | 196 |
| सोमादिवर्ग | 238 |
| सोमकल्प | 238 |
| हरीतकी, हरड़ | 155 |
| हरीतक्यादिवर्ग | 155 |
| हरिद्राकुल | 228 |
| हरिद्रु | 164 |
| हरिद्रा, हलदी | 229 |
| हपुषा, हाउबेर | 238 |
| हलदिया | 90 |
| हारसिंगार | 180 |
| हिंसालु, हींस | 142 |
| हिरवी | 92 |
| हिंस्त्रा | 96 |
| हेमपुष्पिका | 179 |
| हेमर, कीटमारा | 221 |
| हैमवती वचा | 230 |
| हृत्तपत्री | 197 |
| हंसपदी | 242 |
| क्षीरकाकोली | 232 |
| श्रृंगीविष | 71 |
| श्रृंगाटकादिवर्ग | 149 |
| त्रिवृतादिवर्ग | 191 |
| त्रपुष, ककड़ी | 154 |
| त्रायमाण, कडू | 189 |




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## प्रथम भाग

# उत्तराखण्ड हिमालय का भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिचय

उत्तराखण्ड हिमालय भारत के मस्तक का चमकता हुआ मुकुट हिन्दू जाति का उत्तुंग अभिमान, भारतीय संस्कृति का अमिट स्मारक स्तूप, देवताओं की लीला भूमि और तीर्थों का भण्डार है। इस हिमालय का यशोगान करके वेदव्यास ने महाभारत की रचना की तथा अनादि काल से ऋषि–मुनियों की तपस्थली रही है। इसी उत्तराखण्ड में नवीं शत्ताब्दी में आदि गुरू शंकराचार्य को दिव्यज्योति की प्राप्ति हुई। महाकवि कालिदास ने भी हिमालय के नैसर्गिक सौन्दर्य का यशोगान करके अपनी लेखनियों को कृतार्थ किया है। उसकी चोटियों की गगनचुम्बी उच्चता, उसकी सनातन हिमरेखाओं की निर्मल पवित्रता, उसकी (गहरी) चोटियों की स्वर्गीय सुषमा उन चोटियों, हिमनदों से प्रवाहित होने वाली कल–कल नादिनी स्वच्छ धाराओं की उत्ताल तरंगे और (झरने) जलप्रपातों की शोभा, भारतवासियों के हृदय में आदर्श जगाने की अमोध शक्ति रखती है। जिन पूर्वज आचार्यो, ऋषि–महर्षियों तथा राजाओं ने भारतवर्ष में अनेक प्रकार के धार्मिक, राजनैतिक, संग्रामों से समय–समय पर अनेक प्रकार के उलट–फेर करके अपनी जाति, धर्म और देश की केवल रक्षा ही नहीं की, अपितु भारत का आदर्श जीवन बनाया था, उन्होंने आरम्भ में इसी हिमालय के शिखरों की छाया में, उसकी कल–कल, नादिनी निर्मल सरिताओं, नदियों के संगमों में उसके आमोद पूर्ण देवदारु के सधन वनों की दिव्य छायामयी गुफाओं में हिमनदों के पास बादलों से कल्लोल प्रेम करने वाली कठोर चट्टानों में बैठकर लोकहित तपश्चर्या करके अध्यात्मबल का संचय किया था । योरोपियन विद्वानों एवं शास्त्रवेत्ताओं का कहना है कि हिमालय की जलवायु में कोई विषाक्त कीटाणू उत्पन्न नहीं हो सकते तथा न ठहर सकते हैं।

देवात्मा हिमालय की जिस पावन धरती में, गंगा, यमुना, मन्दाकिनी, अलकनन्दा, धौली आदि कतिपय पावन नदियों का उद्गम स्थल है। वही ब्रह्मा का मानसरोवर, विष्णु का बद्रिनाथ और महेश शिव का केदारनाथ, मदमहेश्वर, गंगा का उद्गम स्थल गंगोत्री, यमुना का यमनोत्री एवं उमा (पार्वती) का नन्दाकोट और कार्तिकेय का कौञ्चद्वार है। यही धरती गणेश और दूर्गा की क्रीडा भूमि है। यक्ष, गन्र्धव, किन्नरों की लीला भूमि, खश, किरात और आर्यो की देवभूमि हिमालय है। इसी परिकल्पना के अन्तर्गत मध्यहिमालय का वह भाग जिसमें कतिपय पौराणिक एवं धार्मिक महत्व के तीर्थ एवं मन्दिर विराजमान है जोकि उत्तराखण्ड के नाम से अलग पहिचान बनाये हुए है।

आज के परिपेक्ष्य में उत्तर प्रदेश का उत्तरी पर्वतीय भाग उत्तराखण्ड जो टौन्स नदी से कालीनदी तक फैला हुआ है। कि जोकि वर्तमान में गढ़वाल और कुमांऊ दो मण्डलों में विभाजित है। पौराणिक ग्रन्थों में यह केदार एवं कूर्माञ्चल के नाम से जाना जाता है।

**यथा : खण्डा पञ्चहिमालयस्य कथिता नैपाल कूर्माञ्चलौ।**
**केदारोऽथ जलन्धरोऽथ रुचिरः कश्मीरसंज्ञोत्तिमः।।** *(केदारखण्डः)*

केदारखण्ड से गढ़वाल मण्डल–देहरादून, उत्तरकाशी, टिहरी, चमोली एवं पौड़ी गढ़वाल जनपद हैं तथा कूर्माञ्चल से कुमाऊं मण्डल, अल्मोड़ा, नैनीताल, पिथौरागढ़ जनपदों में विभक्त है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तराखण्ड



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

का क्षेत्रफल 51125 वर्ग की०मी० एवं वर्ष 1991 की जनगणना के आधार पर जनसंख्या वर्ग 5926146 लाख है। उत्तराखण्ड के जनपदों की संख्या, क्षेत्रफल वर्ग किलोमीटर एवं वर्ष 1991 की जनगणना के आधार पर निम्न प्रकार से स्पष्ट है।

| क्रम सं. | जनपद | क्षेत्रफल वर्ग कि०मी० | जनसंख्या (वर्ष 1991) (लाख में) |
|---|---|---|---|
| **गढ़वाल मण्डल :** | | | |
| 1. | चमोली | 9125 वर्ग कि० मी० | 454871 लाख |
| 2. | उत्तरकाशी | 8016 वर्ग कि० मी० | 239709 लाख |
| 3. | पौड़ी गढ़वाल | 5440 वर्ग कि० मी० | 682535 लाख |
| 4. | टिहरी गढ़वाल | 4421 वर्ग कि० मी० | 580153 लाख |
| 5. | देहरादून | 3088 वर्ग कि० मी० | 1024679 लाख |
| **गढ़वाल मण्डल कुल क्षेत्रफल** | | **30,090 वर्ग कि० मी०** | **कुल जनसंख्या 2982947 लाख** |
| **कुमाऊं मण्डल :** | | | |
| 6. | पिथौरागढ़ | 7217 वर्ग कि० मी० | 566408 लाख |
| 7. | अल्मोड़ा | 7023 वर्ग कि० मी० | 836617 लाख |
| 8. | नैनीताल | 6792 वर्ग कि० मी० | 1540174 लाख |
| **कुमाऊं मण्डल कुल क्षेत्रफल** | | **21032 वर्ग कि० मी०** | **कुल जनसंख्या 2943199 लाख** |

**उत्तराखण्ड मण्डल कुल क्षेत्रफल 51125 वर्ग कि० मी० कुल जनसंख्या 5926146 (वर्ष 1991) जनगणना**

**मानसभूमि :** (कुमाऊं) पर कत्यूरी राजवंश का कालीनदी के पार डोटी (नेपाल) के पठार पर कई सदियों तक शासन रहा। इन आक्रान्ताओं अशोकल्ल, क्राथल्ल और गोरखालियों ने तीन बार उत्तराखण्ड की स्वायत्ता का उच्छेदन किया। मानसखण्ड (कुमांऊ) तथा केदारखण्ड (गढ़वाल) में भौगोलिक एकता के साथ–साथ खान–पान, भाषा, संस्कृति और रक्त की एकता भी है। दोनों प्रायः एक ही राजवंश द्वारा अथवा एक जैसे शासन तन्त्र द्वारा शासित होते रहे हैं। उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक स्त्रोत बुद्ध निर्वाण से पूर्व तक पौराणिक पुरावृत का बुद्ध से लेकर कत्यूरी शासन 1223 ई० तक की गाथा को गोरखाली शासन, ''सन् 1790-1815 ई०'' तक की घटनाओं का विषद प्रामाणिक ऐतिहासिक उल्लेख डा० शिवप्रसाद डबराल द्वारा रचित "उत्तराखण्ड का इतिहास" भाग 1 से 5 में उपलब्ध है। उल्लेखनीय है कि 1000ई० से आरम्भ महमूद गजनवी के आक्रमणों से उत्तर भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना हो जाने से उत्तर भारत के समस्त हिन्दु राजवंशी का उच्छेदन हो गया। ग्यारहवीं सदी से लेकर चौदहवीं सदी तक जो उथल–पुथल मची थी, उसमें उत्तर भारत के हिन्दू आयुध जीवियों ने हिमालय तथा विन्ध्याचल की ढलानों पर शरण ली पन्द्रहवीं शताब्दी में पंवार राजवंश की स्थापना भी आयुध जीवियों ने ही की थी। आयुध जीवी रोहिलों के द्वारा 1743 से कुमाऊं के विध्वंस का जो चक्र चला उसमें 1790 में गोरखाली आयुध जीवियों ने पूर्णाहुती दी। 1790 से कुमाऊं व 1792 से गढ़वाल का राजनैतिक व प्रसाशनिक नियंत्रण गोरखा राज्य के अधीन चला गया जो 1815 तक गोरखों के ही



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अधीन रहा। 1815 ई० में सिंगोली की संधि के उपरान्त गढ़वाल व कुंमाऊ पर ईस्ट इन्डिया कम्पनी का नियंत्रण हो गया। इस संधि के अनुसार काली से अलकनन्दा का पूर्वीतट, मन्दाकिनी–अलकनन्दा के बीच के भाग व इससे पूर्व का भाग पूर्णतया ब्रिटिश सरकार के प्रसाशनिक नियंत्रण में चला गया तथा पश्चिम से पश्चिमी क्षेत्र टिहरी रियासत के रूप में पंवार वंश को लौटा दिया गया। इस तरह उत्तराखण्ड भूभाग दो प्रसाशनिक संभागों में बंट गया किन्तु इनकी प्रसाशनिक व्यवस्था ब्रिटिश प्रसाशनिक ढांचे में चलती रही।

1854 में नैनीताल के कुमांऊ मण्डल का मुख्यालय बनाया गया। 1890 में अल्मोड़ा जनपद क्रमशः अल्मोड़ा नैनीताल जनपदों में विभक्त किया गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त 1949 में टिहरी रियासत कुमाऊं मण्डल में विलीन करने से टिहरी जनपद भी इसी मण्डल में जुड़ गया। 1960 में क्रमशः टिहरी जनपद टिहरी, उत्तरकाशी एवं गढ़वाल जनपद क्रमशः पौड़ी व चमोली तथा अल्मोड़ा जनपद क्रमशः अल्मोड़ा व पिथौरागढ़ जनपदों में विभक्त कर दिये गये। सन् 1961 से 1968 तक कुमाऊं मण्डल के अल्मोड़ा, नैनीताल, पौड़ी व टिहरी चार जिले रहे। 1968 में देहरादून, पौड़ी, टिहरी, उत्तरकाशी व चमोली जनपदों को गढ़वाल मण्डल में पुर्नगठित किया गया तथा पौड़ी को गढ़वाल मण्डल का मुख्यालय बनाया गया। 1968 में पुर्नगठित कुमाऊं मण्डल में पिथौरागढ़, अल्मोड़ा व नैनीताल जनपद रखे गये। सन् 1968 मे जहाँ गढ़वाल मण्डल का सृजन हुआ, वहीं पूरे उत्तराखण्ड क्षेत्र के आठों जनपदों की प्रसाशनिक व्यवस्था के लिये पर्वतीय विकास परिषद का गठन किया गया एवं वर्ष 1994 में उत्तराखण्ड विकास विभाग नाम दिया गया। वर्तमान में उत्तराखण्ड भूभाग की वर्ष 1991 में जनगणना के आधार पर विस्तृत आंकड़ो की तालिका निम्न प्रकार से अंकित है।

## उत्तराखण्ड के विकासखण्ड

| क्र.सं. | मद | विवरण |
|---|---|---|
| 1. | भौगोलिक क्षेत्रफल (1991) | 51125 वर्ग कि.मी. |
| 2. | जनसंख्या (1991) | 5926146 |
| 3. | जनसंख्या घनत्व (1991) | 116 प्रति वर्ग कि.मी. |
| 4. | अनुसूचित जाति की जनसंख्या (1991) | 989658 |
| 5. | अनुसूचित जाति का : | 16.7 |
| 6. | अनुसूचित जनजाति की संख्या (1991) | 209838 |
| 7. | अनुसूचित जनजाति का : | 3.54 |
| 8. | उत्तराखण्ड की विभिन्न प्रसाशनिक इकाईयां : | |
| | (1) जनपद | 8 |
| | (2) तहसील | 39 |
| | (3) नगर | 65 |
| | (4) ग्राम सभा | 6262 |
| | (5) न्याय पंचायत | 625 |
| | (6) विकास खण्ड | 89 |
| | (7) राजस्व ग्राम | 15956 |

| क्र.सं. | मद | विवरण |
|---|---|---|
| | चिकित्सा संस्थाएं : | |
| 9. | एलोपैथिक चिकित्सालय एवं औषधालय (1992-93) | |
| | (क) संस्थाएं | 402 |
| | (ख) शैय्याएं | 7387 |
| 10. | होम्योपैथिक चिकित्सालय एवं औषधालय (1992-93) | |
| | (क) संस्थाएं | 55 |
| | (ख) शैय्याएं | 32 |
| 11. | आयुवैदिक एवं युनानी चिकित्सालय एंव औषधालय (1992&93) | |
| | (क) संस्थाएं | 369 |
| | (ख) शैय्याएं | 1257 |
| 12. | कुल भौगोलिक क्षेत्रफल | 51,125.00 |
| | कुल वन क्षेत्रफल | 34,248.57 |
| | वन विभाग के अधीन वन क्षेत्र | |
| | (क) आरक्षित वन | 23,512.14 |
| | (ख) संरक्षित वन | 81.59 |
| | (ग) अवर्गीकृत तथा निहित वन | 75.49 |
| | वन क्षेत्र जो वन विभाग के नियंत्रण में नहीं हैं | |
| | (क) सिविल सोयम | 8,013.63 |
| | (ख) पंचायती वन | 2,368.00 |
| | (ग) निजी, कैन्टोमेंट तथा नगरपालिका आदि | 197.72 |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# जिलेवार आंकड़े-1991

| विषय वस्तु | अल्मोड़ा | नैनीताल | पिथौरागढ़ | उत्तरकाशी | चमोली | टिहरी | देहरादून | पौड़ी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. भौगोलिक क्षेत्रफल (वर्ग कि. मी.) | 5385 | 6794 | 8856 | 8016 | 9168 | 4421 | 3088 | 5397 | **51125** |
| कृषि उत्पादन (मी. टन) | | | | | | | | | |
| (क) चांवल | 43105 | 338606 | 37395 | 14079 | 23118 | 21651 | 30529 | 30634 | **539117** |
| (ख) मक्का | 2137 | 8525 | 6266 | 558 | 297 | 2449 | 18273 | 2406 | **40911** |
| (ग) गेहूँ | 66662 | 287326 | 61027 | 21204 | 26079 | 54716 | 39779 | 51348 | **608141** |
| (घ) जौ | 5531 | 2062 | 8473 | 739 | 2162 | 5064 | 3295 | 8186 | **35512** |
| (ड) सांवा (झंगोरा) | 18064 | 1317 | 3606 | 3677 | 5072 | 30795 | 859 | 26664 | **90054** |
| (च) मंडुवा (कोदो) | 45758 | 7400 | 22653 | 8447 | 20733 | 25652 | 5064 | 323481 | **69055** |
| (छ) कुल दालें | 2709 | 5739 | 4612 | 695 | 263 | 1854 | 2159 | 216 | **20217** |
| (ज) कुल तिलहन | 662 | 5254 | 426 | 806 | 429 | 757 | 2206 | 601 | **11141** |
| (झ) गन्ना | 112 | 2559335 | 1060 | | | | 363247 | 56 | **2923810** |
| (ञ) आलू | 23938 | 61089 | 38458 | 33222 | 33814 | 27383 | 24436 | 5975 | **248315** |
| 2. वर्षा 1988-89 (मि. मी.) | 1172 | 1394 | 887 | 1361 | 1915 | 1639 | 2288 | 1934 | - |
| 3. नहरों की लम्बाई (कि. मी.) | 862 | 1822 | 444 | 642 | 525 | 540 | 760 | 881 | **6486** |

## विकासखण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| **1. अल्मोड़ा (जनपद)** | | | | | |
| 1. | ताकुला | 315.00 | 53.97 | 58.90 | 12080 |
| 2. | धौलादेवा | 323.00 | 52.93 | 59.27 | 11551 |
| 3. | भैसियाछीना | 376.00 | 29.74 | 28.58 | 5618 |
| 4. | लमगड़ा | 213.00 | 39.21 | 44.66 | 8492 |
| 5. | हवालबाग | 212.03 | 73.41 | 64.30 | 13025 |
| 6. | कपकोट | 1416.00 | 62.00 | 70.41 | 13859 |
| 7. | गरूड़ | 215.00 | 49.59 | 57.70 | 11196 |
| 8. | बागेश्वर | 445.00 | 62.92 | 67.39 | 13676 |
| 9. | चौखुटिया | 181.00 | 47.86 | 49.78 | 10065 |
| 10. | ताड़ीखेत | 255.77 | 76.94 | 65.88 | 12695 |
| 11. | द्वाराहाट | 309.90 | 59.44 | 60.20 | 12506 |
| 12. | भिकियासैंण | 167.00 | 40.54 | 41.76 | 8796 |
| 13. | स्याल्दे | 44.00 | 48.37 | 50.10 | 10098 |
| 14. | सल्ट | 305.00 | 57.48 | 63.21 | 12842 |
| **योग अल्मोड़ा** | | **4977.70** | **754.70** | **782.14** | **156499** |

## विकासखण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| **2. नैनीताल (जनपद)** | | | | | |
| 1. | ओखला कांडा | 167.00 | 29.80 | 37.54 | 6483 |
| 2. | बेताल घाट | 143.00 | 29.84 | 35.46 | 6729 |
| 3. | रामगढ़ | 142.00 | 28.08 | 33.20 | 6386 |
| 4. | भीमताल | 113.19 | 62.90 | 37.54 | 6910 |
| 5. | धारी | 104.00 | 19.45 | 24.54 | 4083 |
| 6. | कोट बाग | 134.16 | 32.24 | 34.20 | 6121 |
| 7. | हल्द्वानी | 167.87 | 143.46 | 90.10 | 16111 |
| 8. | रामनगर | 146.46 | 71.92 | 55.61 | 9958 |
| 9. | काशीपुर | 190.46 | 99.71 | 57.89 | 10186 |
| 10. | जसपुर | 236.00 | 77.64 | 74.46 | 11963 |
| 11. | बाजपुर | 290.62 | 75.42 | 74.22 | 12237 |
| 12. | रूदपुर | 228.48 | 126.29 | 87.22 | 15084 |
| 13. | खटीमा | 361.41 | 113.97 | 134.95 | 21757 |
| 14. | सितारगंज | 334.00 | 96.17 | 110.52 | 17050 |
| **योग नैनीताल(ग्रामीण)** | | **3095.00** | **1082.68** | **966.01** | **164249** |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

### 3. पिथौरागढ़ (जनपद)

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | कनालीछीना | 352.00 | 42.18 | 44.41 | 9068 |
| 2. | डीडीहाट | 211.00 | 34.22 | 33.41 | 6703 |
| 3. | बेरीनाग | 200.00 | 42.69 | 46.09 | 9520 |
| 4. | धारचुला | 2979.50 | 44.31 | 98.70 | 9385 |
| 5. | पिथौरागढ़ | 178.00 | 61.02 | 53.89 | 10226 |
| 6. | गंगोलीहाट | 314.00 | 59.81 | 65.59 | 13414 |
| 7. | मूनाकोट | 198.00 | 41.35 | 54.59 | 9380 |
| 8. | मुन्स्यारी | 2623.00 | 39.37 | 43.12 | 8876 |
| 9. | चम्पावत | 453.00 | 34.55 | 39.96 | 7691 |
| 10. | बाराकोट | 181.00 | 21.13 | 23.90 | 4741 |
| 11. | लोहाघाट | 220.50 | 33.18 | 36.38 | 7267 |
| 12. | पाटी | 244.00 | 34.06 | 42.92 | 8162 |
| | **योग पिथौरागढ (ग्रामीण)** | **8154.00** | **487.00** | **523.96** | **104433** |

## विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

### 4. उत्तराकाशी (जनपद)

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | भटवाड़ी | 261.47 | 44.63 | 42.08 | 8345 |
| 2. | डुण्डा | 127.00 | 35.37 | 44.75 | 8371 |
| 3. | चिन्यालीसौड़ | 133.00 | 28.16 | 36.31 | 6885 |
| 4. | नौगांव | 426.53 | 41.38 | 48.06 | 8701 |
| 5. | पुरोला | 56.00 | 16.39 | 21.53 | 4049 |
| 6. | मोरी | 88.00 | 21.34 | 26.55 | 4547 |
| | **योग उत्तरकाशी** | **1092.00** | **187.27** | **219.28** | **40898** |

## विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

### 5. चमोली (जनपद)

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | जोशीमठ | 3650.06 | 29.83 | 21.25 | 4578 |
| 2. | कर्णप्रयाग | 339.00 | 38.12 | 30.03 | 6212 |
| 3. | गैरसैण | 406.80 | 40.93 | 51.49 | 9429 |
| 4. | नारायणबगड़ | 274.00 | 36.06 | 43.58 | 8841 |
| 5. | थराली | 272.40 | 23.59 | 29.63 | 5702 |
| 6. | देवाल | 511.00 | 15.77 | 20.43 | 4000 |
| 7. | दसोली | 812.08 | 37.59 | 33.14 | 6519 |
| 8. | घाट | 283.00 | 22.48 | 28.52 | 5293 |
| 9. | ना. पोखरी | 547.80 | 40.25 | 46.79 | 9382 |
| 10. | ऊखीमठ | 1088.75 | 30.59 | 38.65 | 7480 |
| 11. | अगस्त्यमुनि | 516.00 | 51.21 | 59.38 | 12433 |
| 12. | खिर्सु | | | 10.33 | 2082 |
| | **योग चमोली (ग्रामीण)** | **8641.20** | **362.32** | **413.22** | **81951** |

## विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल

### 6. टिहरी गढ़वाल (जनपद)

| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | जौनपुर | 485.00 | 42.69 | 50.34 | 8249 |
| 2. | चम्बा | 446.00 | 45.32 | 51.69 | 10402 |
| 3. | थौलधार | 21.00 | 29.67 | 44.27 | 8738 |
| 4. | भिलंगना | 1250.00 | 51.19 | 60.86 | 11149 |
| 5. | प्रतापगढ़ | 231.00 | 45.86 | 52.85 | 9105 |
| 6. | जाखनीधार | 271.00 | 54.05 | 46.08 | 8913 |
| 7. | जखोली | 625.00 | 69.22 | 79.47 | 15049 |
| 8. | देवप्रयाग | 425.00 | 47.04 | 49.34 | 10490 |
| 9. | कीर्तिनगर | 181.00 | 46.10 | 50.78 | 10250 |
| 10. | नरेन्द्रनगर | 256.00 | 53.77 | 60.59 | 11840 |
| | **योग टिहरी गढ़वाल** | **4380.00** | **495.00** | **546.27** | **104185** |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल | | | | |
|---|---|---|---|---|
| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
| **7. देहरादून (जनपद)** | | | | | |
| 1. | चकराता | 534.48 | 44.63 | 49.10 | 6445 |
| 2. | कालसी | 483.59 | 41.31 | 49.51 | 6708 |
| 3. | विकासनगर | 421.99 | 87.34 | 87.50 | 15886 |
| 4. | सहसपुर | 629.43 | 138.08 | 102.32 | 19043 |
| 5. | रायपुर | 536.67 | 223.31 | 108.09 | 20450 |
| 6. | डोईवाला | 333.85 | 119.10 | 102.75 | 1828 |
| | योग देहरादून (ग्रामीण) | 2940.01 | 753.78 | 499.27 | 86819 |

| विकास खण्ड, जनसंख्या एवं क्षेत्रफल | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्र. सं. | जनपद एवं विकास खण्ड का नाम | विकास खण्ड क्षे. वर्ग कि.मी. | विकास खण्ड की जनसंख्या (हजार में) 1981 | 1991 | परिवारों की संख्या 1991 |
| **8. पौड़ी गढ़वाल (जनपद)** | | | | | |
| 1. | पौड़ी | 193.74 | 55.26 | 31.36 | 6791 |
| 2. | कोट | 184.29 | 30.05 | 28.76 | 6353 |
| 3. | खिरसु | 516.50 | 47.08 | 31.58 | 6873 |
| 4. | पाबौ | 436.00 | 35.76 | 37.76 | 7819 |
| 5. | कल्जीखाल | 235.00 | 35.24 | 35.58 | 7813 |
| 6. | थलीसैण | 652.00 | 43.66 | 50.89 | 9681 |
| 7. | दुगड्डा | 455.38 | 84.31 | 80.59 | 15770 |
| 8. | यमकेश्वर | 644.00 | 37.35 | 40.57 | 8401 |
| 9. | ढ़ांगू | 672.00 | 41.92 | 44.08 | 9160 |
| 10. | लैंसडाउन | 299.09 | 41.08 | 33.20 | 6581 |
| 11. | चांदकोट | 170.00 | 34.76 | 34.08 | 7432 |
| 12. | पोखड़ा | 138.00 | 26.48 | 29.32 | 6126 |
| 13. | रिखणीखाल | 330.00 | 31.62 | 33.93 | 6696 |
| 14. | बिरौंखाल | 244.00 | 49.96 | 63.65 | 13539 |
| 15. | नैनीडांडा | 270.00 | 35.26 | 21.02 | 4188 |
| | योग पौडी गढ़वाल (ग्रामीण) | 5440.00 | 629.79 | 546.38 | 133213 |

(टिहरी जन विकास परिषद द्वारा प्रकाशित स्मारिका पहिचान से साभार उद्धृतः)

**पौराणिक सन्दर्भों के आधार पर उत्तराखण्ड :**

(जैसा कि पूर्व प्रसंग में स्पष्ट किया गया है) उत्तर प्रदेश का भूभाग उत्तराखण्ड जो टौन्सनदी से कालीनदी तक फैला हुआ है वह केदारखण्ड (गढ़वाल मण्डल) एवं कूर्माञ्चल (कुमाउं मण्डल) के नाम से जाना जाता है । यह केदारखण्ड गंगाद्वार हरिद्वार से लेकर महासनातन हिमालय के हिमपर्वत शिखरों तक और तमसा (टौन्स) के तट से लेकर बौद्धाञ्चल बधांण तक केदारखण्ड कहलाता है।

**यथा : गंगाद्वार समारभ्य यावत् श्वेतगिरिर्भवेत्।**
**तमसा तटसः पूर्व तथा काष्ठगिरिर्भवेत्।।** *(केदारखण्ड अध्याय 206-207)*

कूर्माञ्चल खण्ड में नन्दादेवी, त्रिशूल, पिडांर, कालीनदी एवं नेपाल के पठारी भागों तक का भूभाग है। महाकवि कालिदास ने भी कुमारसम्भव नामक काव्य में हिमालय के भूभाग का मानचित्र का वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि इस हिमालय की एक प्राकृतिक सुधढ़ दीवार एशिया महाद्वीप भारतवर्ष के उत्तर–तिब्बत के दक्षिण में तिब्बत एंव भारत की सीमा बनाते हुये धनुषाकार पूर्व से पश्चिम को चली गई है।

**यथा : अस्त्युत्तरस्यां दिशिदेवतात्मा, हिमालयो नाम नगाधिराजः।**
**पूर्वापरो तोयनिधीवगाह्य, स्थित्वापृथिव्या इव मानदण्डः।।** *(कुमारसम्भव सर्ग)*

अर्थात् पूर्व में ब्रह्मपुत्र की घाटी से पश्चिम में सिन्धु घाटी तक लगभग दो हजार मील की लम्बाई में अबिछिन्न श्रृंखलाबद्ध चली गई हैं। ये चोटियां पूर्व और पश्चिम की सीमा बनाती है। दक्षिण सीमा में आसाम, बिहार, संयुक्त प्रान्त और पंजाब के शस्य श्यामल हरे–भरे मैदानी सधन–वनाच्छादित तराई क्षेत्र के वन है। उत्तरी सीमा में तिब्बत, चीन विद्यमान हैं। इस विशाल हिमालय में से मध्य हिमालय का भूभाग उत्तराखण्ड हिमालय है। इस खण्ड की सीमायें हिमाचल



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रदेश, नेपाल, तिब्बत, चीन की पर्वत मालायें बनाती है जिसमें यमुना, गंगा, भागीरथी, टौन्स, अलकनन्दा एवं कालीनदी प्रवाहित होती हैं। विशाल हिमालय के पर्वतीय प्रदेश निम्न प्रकार से है।

| क्रम संख्या | पर्वतीय प्रदेशों के नाम | अनुमानित क्षेत्रफल वर्ग कि०मी० |
|---|---|---|
| 1. | अरूणाचल प्रदेश (नेफा) | 83473 |
| 2. | उत्तराखण्ड (मध्यहिमालय) | 51125 |
| 3. | जम्मू–कश्मीर (लद्वाख) | (आंकड़े उपलब्ध नहीं) |
| 4. | नागालैण्ड | 16579 |
| 5. | मणिपुर | 22327 |
| 6. | मिजोरम | 21081 |
| 7. | मेघालय | 22249 |
| 8. | सिक्किम | 7096 |
| 9. | हिमाचल प्रदेश | 55673 |
| 10. | वेस्टबंगाल के पर्वतीय भाग दार्जिलिंग जनपद | – |
| 11. | आसाम प्रदेश के पर्वतीय भूभाग | – |

प्राचीन परम्पराओं के अनुसार कालिदास का हिमालय कैलाश, मानसरोवर, त्रिविष्ठ (तिब्बत) का कुछ भाग थौलिंगमठ तक का क्षेत्र भी है जो अब चीन का अंग बन गया है।

## संस्कृत कवियों द्वारा हिमालय की महिमा

महाकवि कालिदास के अतिरिक्त संस्कृत के पूर्व एवं परवर्ती कवियों ने हिमालय पर अपनी लेखनी चलाकर नगाधिराज की आलौकिक छटा की महिमा का उल्लेख किया है। शिव एवं मत्स्यपुराण, महाभारत, नैषधचरीतम् किरात्तार्जुनीयम् साहित्य दर्पण एवं वेदों तथा संहिताग्रंथों में हिमालय को विशेष रुप से चित्रित किया है। कालिदास की तरह विस्तृत वर्णन केवल माध और भारवी ने किया है। मत्स्यपुराण के 117 वें अध्याय में कुछ श्लोक हिमालय के वर्णन को लेकर लिखे गये हैं। यथा राजा पुरु ने देखा कि हिमालय मेघ की शाल ओढे श्वेत मेघों की पगड़ी बांधे सूर्य–चन्द्र का मुकुट धारण किये सर्वदा में बर्फ को भस्म की तरह लपेटे हुए मध्य में गैरिक धातुओं का संयोग किये हुये, ऐसा प्रतीत होता है जैसे अक्षत–चन्दन आदि से युक्त पंचागुली की छाप ही किसी ने मार दी हो। शिव पुराण में तो शिव जी के ससुर के रूप में हिमालय का उल्लेख अधिक हुआ है।

हिमालय को नगाधिराज व गिरीराज के रूप में महाकवि कालिदास ने प्रतिष्ठित किया है। यथा "हिमालयोनाम नगाधिराज" (कुमारसम्भवः) एवं (यस्यार्थे गिरिराज शब्दम्) यही बात अलंकार सर्वस्व ने उनके घनी भूत मण्डल को श्वेत छत्र के रूप में प्रतिपादित किया है। हिमालय अपनी दानवीरता के कारण भी प्रसिद्ध रहा है किन्तु आस्था सत्पात्र को देने में अधिक है। महाकवि कालिदास ने हिमालय के वर्णन में सहृयता, उदारता, नैसर्गिगता, मंणी, जडी–बूटियों की बाहुल्यता, शरणागत की वात्सल्यता आदि की प्रचुरता में अपने काव्यों एवं नाटकों में जब भी अवसर आया वर्णन किया है। कवि कालिदास की तरह माघ ने भी हिमालय के शरणागत वात्सल्य को प्रकट किया है। राक्षसों के भय से त्रस्त देवराज इन्द्र भी हिमालय में शरण लेते थे और अपने अशुभ दिनों को यही व्यतीत करते थे। महाकवि माघ ने अर्जुन तथा किरात वेशधारी शिव के प्रसंग में हिमालय का वर्णन किया है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदावतरण का इतिहास :** आयुर्वेद के ज्ञाता शारङ्धर ने हिमालय को नगाधिराज मानने का यही कारण माना है कि उन्होंने अपनी बेटी का विवाह आशुतोष भगवान् महाकाल के साथ किया है जो त्रिभुवन पति भी है। इस प्रकार कालिदास के हिमालय के वर्णन में बाल्मिकी, व्यास आदि की परम्परा का चरमोत्कर्ष हुआ, तो बाद के कवियों के लिये एक अनुकरणीय उदाहरण बना। हिमालय की गोद मे बसे कैलाश, मानसरोवर का अनुपम सौन्दर्य विश्व प्रसिद्ध है। कैलाश–मानसरोवर आज तिब्बत के उस भाग में स्थित है जहॉ पर चीन का अधिकार है। प्राचीन पौणाणिक उल्लेखों के आधार पर महाभारत के आठवें अध्याय तथा वनपर्व के पिंचासिवें अध्याय में मानसरोवर का उल्लेख है। बाल्मिकी रामायण में विश्वमित्र कहते हैं नरश्रेष्ठ राम कैलाश पर्वत पर ब्रहमा के संकल्प मात्र से मानसरोवर की उत्त्पत्ति हुई थी। (वा० रा० बालकाण्ड 24-8) स्कन्ध पुराण के काशीखण्ड के अध्याय 13 तथा हरिवंश के अध्याय 201 के अनुसार कैलाश भगवान बिष्णु की नाभी से उत्पन्न हुआ। देवी भागवत् में भी इसी प्रकार का उल्लेख मिलता है श्रीमद्भागवत् (4,6,9) के अनुसार कैलाश में भगवान शंकर का निवास है। इस उत्तराखण्ड में शैवप्रधान धर्मावलम्बी हैं। इस प्रदेश का गढ़वाल नामकरण महाराजा अजयपाल के द्वारा हुआ। प्राचीन काल में यहां पर अनेक शिक्षण केन्द्र थे। जिनमें प्रमुख केन्द्र इस प्रकार से हैं। यथा–बद्रिनाथ के पास सरस्वती के तट पर व्यास एवं जैमिनिऋषि का आश्रम है। यहां पर महर्षिब्यास ने बैठकर महाभारत एवं अट्ठारह पुराणों की रचना की। कश्यप एवं चरक का बद्रिनाथ एवं गन्धमादन पर्वत पर, वशिष्ठ एवं अरून्धती का हिमदाश्रम में, जमदग्नी का उत्तरकाशी के पास, गर्ग का द्रोणगिरी में, मनु का माना में, अगस्त्य तथा गौतम का मन्दाकिनी के तट पर, पराशर का यमनोत्री के पास, भरत एवं परशुराम का उत्तरकाशी में, भृगु का केदारकांटा में अत्री एवं अनसूया का गोपेश्वर में इन स्थानों पर अनेकों विधापीठ विद्यमान थे जो कि भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं। इसी सन्दर्भ में चरक संहिता चिकित्सा अध्याय एक में देवराज इन्द्र से भृगु, अंगिरा अत्री, वशिष्ठ, कश्यप, अगस्त्य, पुलस्त्य, वामदेव आदि ऋषियों का हिमालय में आयुर्वेद अध्ययन करने के प्रमाण मिलते हैं।

यह हिमालय दिब्यौषधियों का उद्गम स्थल है। जिस पर भृगु आदि महर्षियों ने देवराज इन्द्र से आयुर्वेद का अध्ययन किया था। चरकसंहिता में यह भी उल्लेख मिलता है कि हिमालय में गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, किरात एवं देवता निवास करते हैं। किरात, भिल्ल आदिमजन जातियां हिमालय में उपलब्ध जड़ी–बूटियों से भली भांति परचित थी। यह हिमालय आरोग्य को देने वाला एवं जलस्त्रोतों, रत्नों एवं विपुल बनसम्पदा का भण्डार है।
महर्षिचरक ने भी उल्लेख किया है कि हिमालय औषधि भूमि में श्रेष्ठ माना गया है। रसायनविदों ने हिमालय की औषधद्रब्यों को सर्वश्रेष्ठ एवं सौम्यगुण प्रधान माना है।

**यथा : हिमवानौषधि भूमिनां श्रेष्ठम्।**
**औषधीनां पराभूमि हिमवान् शैलसत्तमः।।** *(च०सू०अ० 25)*
**तथा : कैलासे किन्नरा कीर्णे वहुप्रसवणौषधे।**
**पादपैविविधैः स्निग्धै नित्यं कुसुम सम्पदा।।** *(चरक सू० 21-3)*

उपरोक्त विद्यापीठों के विषय में चरक ने स्पष्ट रूप से विशद वर्णन किया है कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं। समस्त ऋषिगण हिमालय में यायावर के रुप में भ्रमण करते हुये तथा हिमालय के पार्श्व में बैठकर कतिपय सम्भाषा परिषदों एवं शास्त्र चर्चाओं के माध्यम से प्राणिमात्र के कल्याण के लिये आयुर्वेद का प्रसार किया करते थे।

**यथा : विघ्नभूतायदा रोगाः प्रादुर्भूताः शरीरिणाम्।**
**तपोपवासाध्ययन ब्रह्मचर्य व्रतायुषाम्।।**
**तदाभूतेष्वनुक्रोधं पुरस्कृत्य महर्षयः।**
**समेता पुण्यकर्माणः पार्श्वेहिमवत शुभेः।।** *(च०सू०अ० 1-67)*

रोग जब उत्पन्न हो गये तब प्राणधारियों पर दया भाव को आगे कर पुण्य कार्य करने वाले महर्षिगणों ने हिमालय पर्वत के एक सुन्दर भाग में उपस्थित होकर रोग निवारण के लिये सम्भाषा की इस सम्भाषा परिषद् में जितने महर्षि एकत्र हुये उनकी गणना इस प्रकार से है। यथा–अङ्गिरा, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप, भृगु, आत्रेय, गौतम, सांख्य, पुलस्त्य, नारद, असित, अगस्त्य, वामदेव, मार्कण्येय, भारद्वाज, विश्वामित्र, भार्गव, च्यवन, गालव, वादरायण शौनक, शाकुनेय,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कांकायन, मरीचि शौनक, शाकुनेय, वालखिल्ल आदि कतिपय महर्षिगण हिमालय के सुन्दर भूभाग में बैठकर लोकोपकार हेतु शास्त्रचर्चा करने लगे।

आयुर्वेद रोगाक्रान्त शरीर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चतुर्विध पुरूषार्थ की प्राप्ति में प्रमुख बाधक एवं कारण मानता है। इसलिये ये चतुर्विध पुरूषार्थ हेतु आरोग्य होना आवश्यक है। इसलिये रोग निवारण के उपायों हेतु भारद्वाज महर्षि इन्द्र के पास हिमालय में गये। इस प्रकार दीर्ध जीवन की इच्छा करते हुये ऋषिगणों ने प्रजाहित और आयु को बढ़ाने के लिये भारद्वाज ऋषि से आयुर्वेद ग्रहण किया इस प्रकार के कतिपय प्रसंगः रोगशमनार्थ ऋषि मुनियों द्वारा आयोजित संगोष्ठियों के प्रमाण चरक आदि संहिता ग्रन्थों में उपलब्ध है। आयुर्वेद का सारा ज्ञान वेद से उपलब्ध है। इसलिये आयुर्वेद को वेदों का उपवेद कहा गया है।

**यथा : सिद्ध विद्याधराकीर्णे, कैलासे नन्दनोपमें।**
**तप्पमानं तपस्तीव्रं सार्थाद्धर्म मिवस्थिरम्।।**
**आयुर्वेद विदांश्रेष्ठं भिषग्विद्याप्रवर्तकम्।**
**पुर्नवसु जितात्मानम्, अग्निवेशोऽब्रवीदबचः।।** *(चरक संहिता)*

आयुर्वेद शिक्षा के विस्तार एवं गूठ विषयों को सरल बनाने वाले संग्रहकार वाग्भट्ट, जेज्जट्ट, डल्हण आदि आर्चायों की जन्मस्थली हिमालय रही है। आयुर्वेदावतरण का इतिहास ब्रह्मा–दक्षप्रजापति एवं देवलोक भिषक् अश्विनी कुमार, इन्द्रादि एवं महर्षियों की जानकारी उत्तराखण्ड हिमालय परिचय के सन्दर्भ में और भी विस्तृत रूप से इस प्रसंग में दी जा रही है। जोकि इस प्रकार से है।

**आयुर्वेद परम्परा (आयुर्वेदावतरण का इतिहास) :**

**चरक, सुश्रुत एवं अष्टांगहृदय के अनुसार ब्रह्मा ने दक्षप्रजापति को आयुर्वेद का उपदेश दिया-सिखाया।**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**ब्रह्मणा हि यथाप्रोक्तमायुर्वेदं प्रजापतिः।** *(चरक)*
**ब्रह्मणा प्रोवाच, ततः प्रजापतिरधिजगो।**
**ब्रह्मस्मृत्वा युषो वेदं प्रजापतिमाशिग्रहत।।** *(अष्टांग हृदय)*

इस ज्ञान का सम्बन्ध ब्रह्मा से और प्रजा का सम्बन्ध दक्ष प्रजापति से है। इसलिए ज्ञान का प्रथम उपदेश ब्रह्मा ने दक्ष प्रजापति को दिया। दक्ष को ब्रह्मा का मानस पुत्र माना जाता है।

यों तो आयुर्वेदावतरण का क्रम आयुर्वेद संहिताओं के अनुसार ब्रह्मा से इन्द्र तक है। क्रम में एकरूपता का विवरण प्राप्त होता है। इन्द्र के बाद प्रत्येक संहिताओं में अपना पृथक क्रम वर्णित है। मुख्यतः चरक, सुश्रुत एवं कश्यप संहिता में भारद्वाज, धन्वन्तरि तथा कश्यप, वशिष्ट आदि महर्षियों ने इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया और प्रत्येक सम्प्रदाय में अपने प्रमुख पात्र को इन्द्र से साक्षात् सम्बन्ध किया।

ब्रह्मवैवर्त (ब्रह्माखण्ड अ० 16) पुराणानुसार प्रजापति ने चारों वेदों को देखकर उनके अर्थों का चिन्तन–मनन कर एक अन्य आयुर्वेद नाम का पंचम वेद बनाया और उस वेद को भास्कर को दिया। उसके अधार पर भास्कर ने अपनी स्वतन्त्र संहिता अर्थात् भास्कर संहिता बनायी।.भास्कर ने अपने शिष्यों को आयुर्वेद का ज्ञान दिया और उन्होंने भी अपनी संहिताओं की रचना की। यथा :

| क्र० स० | भास्कर के शिष्य | | और उनके ग्रन्थ |
|---|---|---|---|
| 1. | धन्वन्तरि | ... | चिकित्सा तत्व विज्ञान |
| 2. | दिवोदास | ... | चिकित्सा दर्शन |
| 3. | काशीराज | ... | चिकित्सा कौमुदी |
| 4. | अश्विनी कुमार | ... | चिकित्सा सार तन्त्र |
| 5. | नकुल | ... | वैद्यकसर्वस्व |
| 6. | सहदेव | ... | व्याधि सिन्धु विमर्दन |
| 7. | यम | ... | ज्ञानार्णव |
| 8. | च्यवन | ... | जीवदान |
| 9. | जनक | ... | वैद्य संदेह भंजन |
| 10. | बुद्ध | ... | सर्वसार |
| 11. | जाबलि | ... | तन्त्रसार |
| 12. | जाजलि | ... | वेदांगसार |
| 13. | पैल | ... | निदान |
| 14. | करथ | ... | सर्वधर |
| 15. | अगस्त्य | ... | द्वैध निर्णय तन्त्र आदि। |

**देवलोक के भिषक-अश्विनी कुमार :**

**अश्विनी देवभिषजी यक्षवाहावि-तिस्मृतौ ।**
**दक्षस्य हि शिरश्च्छन्नं पुनस्ताभ्यांसमाहितम् ।**
**वज्रिणश्च-भुजस्तम्भः स्ताभ्यांमेवचिकित्सितः।।** *(च०चि० 344)*

अश्विनी कुमार द्वारा दक्ष के कटे हुए शिर को जोड़ना, भग देवता की अन्धी हुई आँखों को पुनः दृष्टि प्रद्रान करना एवं इन्द्र के भुजस्तम्भ को ठीक करना आदि चिकित्साओं का उल्लेख पुनर्वसु आत्रेय ने अपनी संहिता में किया है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

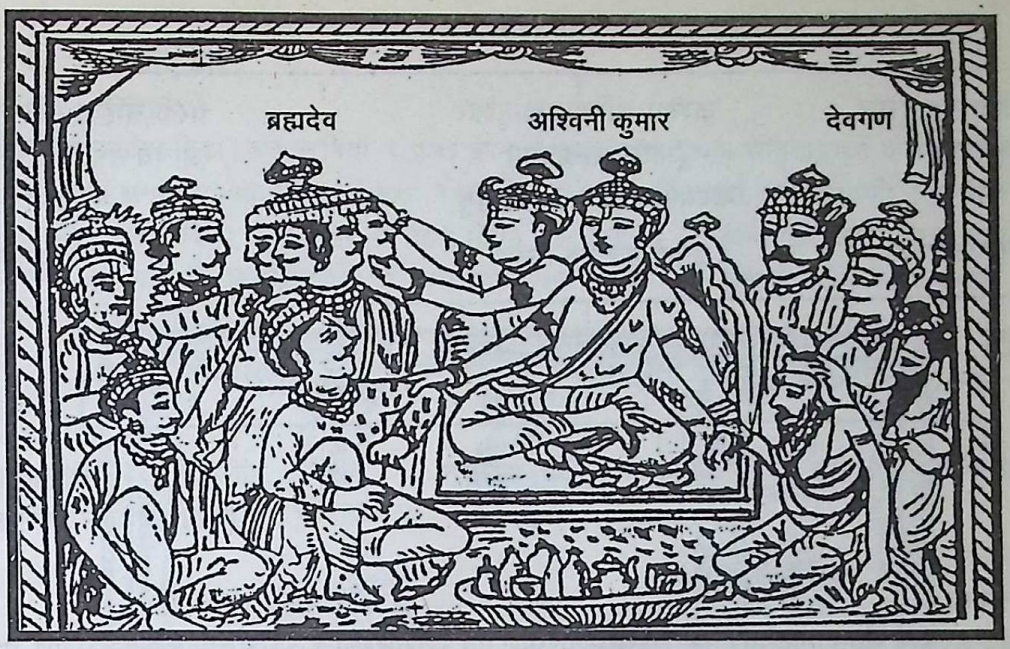


**अश्विनी कुमार भैरव के काटे हुये ब्रह्मदेव के मस्तक को जोड़ते हुये।**

प्रजापति दक्ष के यज्ञ में महादेव के गणों द्वारा घायल हुए सैनिकों की अश्विनी कुमार द्वारा चिकित्सा करने का उल्लेख स्कन्दपुराण मे मिलता है।

**यथा : ज्वरैस्तु पीडितान् देवान् द्यष्ठवाविष्णुर्हसन्निभः।**
**देवाश्विनौतदाह्य व्याधीन हन्तुं तदामृतिम्।।** *(स्कन्दपुराण)*

**आयुर्वेदावतरण-लौकिक परम्परा :**

आयुर्वेद का ज्ञान देवलोक (ब्रह्मा से इन्द्र तक) से भूमण्डल (मृत्युलोक) पर आगमन के क्रम को लौकिक परम्परा माना गया है। इस परम्परा के सम्बन्ध में चरक संहिता में स्पष्ट उल्लेख है कि रोगों से क्लेश प्राप्त होने पर ऋषियों ने अपने पुराने निवास स्थान, जो ग्राम्यदोष (यानी सामूहिक जीवन अथवा ग्राम्य या नगर बसाकर रहने की प्रणाली) से रहित था, में ऋषि गोष्ठी का आयोजन कर निश्चय किया कि देवराज इन्द्र ही रोगों से बचा सकते हैं, वही रोगों की शान्ति का उपाय बता सकते हैं, किन्तु जटिल प्रश्न यह था कि सहस्त्राक्ष देवाधिपति महारानी शची के पति इन्द्र के पास कौन जावें।

यह प्रश्न सुनते ही महर्षि भारद्वाज बोल उठे कि इस कार्य के लिये मुझे मनोनयन किया जाय।

**यथा : अहमर्थे नियुज्जेऽयमत्रेति प्रथम वचः।**
**भरद्वाजोऽब्रवीत्तस्माद् ऋषिभिः स नियोजितः।।** *(चरक सू० 1-19)*

तद्पश्चात् सभी ऋषियों यथा–अङ्गिरा, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप, भृगु, आत्रेय, सांख्य, पुलस्त्य, नारद, असित, जमदग्नि, वामदेव, मारकण्डेय, आश्वलायन, परीक्षित, भिक्षु, आत्रेय, भारद्वाज, विश्वामित्र, च्यवन, अभिजित, गार्ग्य आदि ने एकमत होकर इन्द्र के पास जाने के लिए भारद्वाज को मनोनयन किया।

भारद्वाज इन्द्र के यहाँ चले गए और उसने अङ्गिरा आदि महर्षियों के संदेश को सुनाया कि मृत्युलोक में प्राणियों का भयभीत करने वाले अनेक तरह के रोग उत्पन्न हो गये है। कृपाकर आप उन रोगों की शान्ति का उपाय बतलावें।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

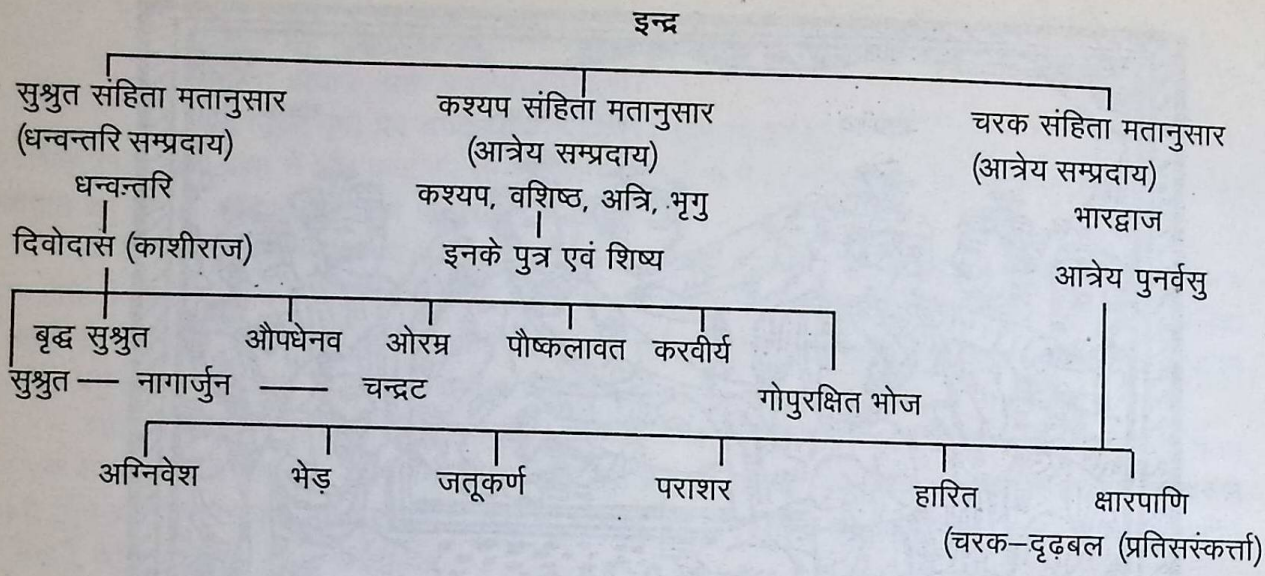


**आत्रेय सम्प्रदाय :**

तदन्तर इन्द्र ने महामति भारद्वाज को स्वस्थपरायण एवं अतुरपरायण हेतु–लिंग औषधज्ञान से पूर्ण, पुण्य तथा शाश्वत आयुर्वेद का उपदेश दिया। जिसका प्रथम ज्ञाता ब्रहा।

**यथा : हेतुलिंगौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम् ।**
**त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः।।** *(चरक सू० 1/25)*

भारद्वाज ने इन्द्र द्वारा प्राप्त आयुर्वेद का उपदेश ऋषियों को दिया, उनमें आत्रेय प्रमुख थे।

**आत्रेय पुनर्वसु :** पुनः अपने छ : शिष्यों यथा :

(1) अग्निवेश
(2) भेल
(3) जतुकर्ण



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

(4) पराशर

(5) हारीत और

(6) क्षारपाणि

को आयुर्वेद का उपदेश दिया। इन ऋषियों ने प्राप्त ज्ञान के आधार पर पृथक संहिताग्रन्थों की रचना की।

**धन्वन्तरि सम्प्रदाय** : आदि काल में ब्रह्मा ने आयुर्वेद का प्रवचन किया था, उसे प्रजापति ने प्राप्त किया, उससे अश्विनी कुमारों ने प्राप्त किया, उनसे इन्द्र ने ग्रहण किया और इन्द्र से मैंने (धन्वन्तरि) इस शास्त्र को प्राप्त किया और यह पवित्र कर्तव्य है कि मैं शिक्षार्थियों को उस शास्त्र का उपदेश दूं क्योंकि मैं आदि देव धन्वन्तरि हूँ।

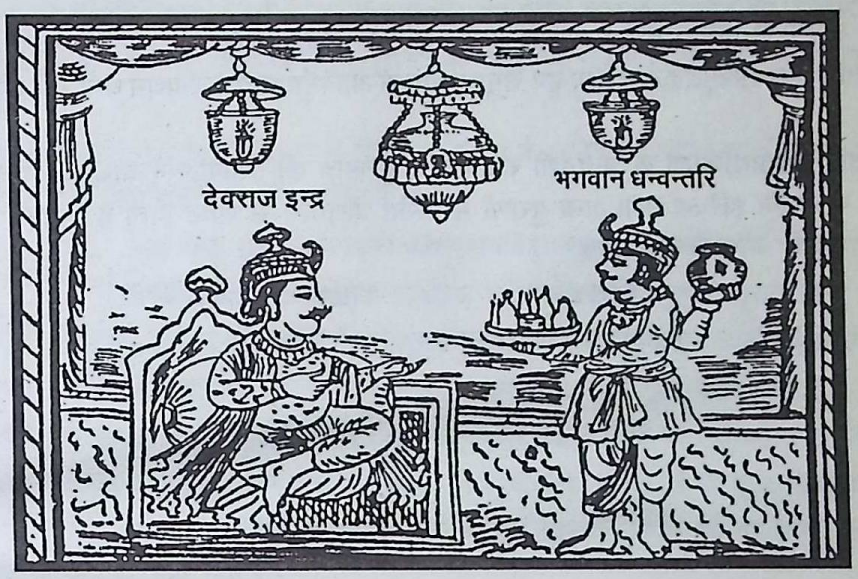


मैंने देवताओं की चिकित्सा कर उन्हें जरा, रुजा और मृत्यु से मुक्त किया है। अब अन्य आयुर्वेदांगो के साथ प्रमुख रूप से शल्य प्रधान आयुर्वेद का उपदेश करने के लिये इस भूमंडल पर अवतीर्ण हुआ हूँ।

चरक संहिता में आत्रेय संप्रदाय और सुश्रुत संहिता में धन्वन्तरि संप्रदाय का नाम आया है।

धन्वन्तरि ने इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर अपने सुश्रुत, प्रभृति शिष्यों को शल्य प्रधान आयुर्वेद का उपदेश दिया।

जो कुछ भी हो पुराणों में भी क्षीरसागर मन्थन से अमृत कलश लिये हुए धन्वन्तरि के प्रगट होने की कथा वर्णित है। धन्वन्तरि समुद्र से निकले हुए चौहद रत्नों में से गिने जाते हैं।

**यथा : श्री, मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज।**
**धनु, धन्वन्तरि, धेनु, राशि, कल्पद्रुम, विष वाजि।।**

देव युग के आदि धन्वन्तरि समुद्र मंथन से अमृत कलश लेकर अवतरित हुए थे। वाल्मिकी रामायण में इसका उल्लेख है।

**यथा : उदतिष्ठत्सुधर्मात्मासदण्ड सकमण्डलुः।**

हरिवंश पुराण में भी लिखा है –

**जातः स हि समुद्रातु मथ्यमाने पुरावृते।**
**उत्पन्नः कलशात्पूर्व सर्वतश्च श्रिया वृतः।।**

इस प्रकार प्रथम धन्वन्तरि का अवतार अमृतोत्पति के समय हुआ। ऐसा सर्वमान्य है कि सर्वप्रथम धन्वन्तरि भगवान का



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अविर्भाव समुद्र मन्थन के परिणाम रत्नों की प्राप्ति से हुआ था।

**यथा : धन्वन्तरिर्नाम जातः मन्थने।** *(गरूड़पुराण)*

देवासुरों में रत्नों का विभाजन हुआ और धन्वन्तरि सूर्यदेव के साथ स्वर्ग चले गये।

**यथा : धन्वन्तरि च जग्राह लोकोरोग्य प्रवर्तकम्।** *(मत्स्य पुराण)*

धन्वन्तरि विष्णु के रूप में माने जाते है। अतएवं इनकी चतुभुर्ज मूर्ति का विशेष प्रचलन है। किन्तु यह स्पष्ट उल्लेख न होने से मानव रुप में द्विभुज मूर्ति की कल्पना करना भी स्वाभाविक है। खैर जो भी हो, आयुर्वेदीय दृष्टि से विचार–विमर्श करने पर समुद्र मन्थन 'युक्ति' का उदाहरण है और धन्वन्तरि का अभिर्भाव रोग शोक विमुक्ति जनक दैवी शक्ति का विस्फार है।

किन्तु शास्त्रों में मतैक्य नहीं है और तीन धन्वन्तरि का विवरण वर्णित है।

**धन्वन्तरि (प्रथम)**अमृतकलश लिए हुए समुद्रमन्थन से आविर्भूत धन्वन्तरि प्रथम धन्वन्तरि को मानना श्रेयस्कर है।

**धन्वन्तरि (द्वितीय)**काशी के चन्द्रवंशी राजकुल में सुनहोत्र की वंशावलि में चौथी या पांचवी पीढ़ी में जन्म ग्रहण किया था जैसा कि हरिवंश तथा अन्य पुराणों में वर्णित वंशावली से स्पष्ट होता है। यथा :

| सुहोत्र (हरिवंश 1/32/18/22-28) | सुनहोत्र हरिवंश 1\29\5\10 | सुनहोत्र (ब्रह्माण्ड पुराण) 3/66/3 | सुनहोत्र (वायु) 92/18 |
|---|---|---|---|
| काशिक | काश | काश | प्रकाशिराट |
| दीर्घतपा | दीर्घतपा | दीर्घतपा | — |
| धन्वन्तर (द्वितीय) | धन्व | धन्वन्तरि | धन्वन्तरि |
| केतुमान | धन्वन्तरि | केतुमान | केतुमान |
| भीमरथ | भीमरथ | — | भीमरथ–दिवोदास |
| दिवोदास धन्वन्तरि (तृतीय) | दिवोदास | — | — |
| प्रतर्दन | | प्रतर्दन | प्रतर्दन |

उपरोक्त वंशावलियों के सिंहावलोकन करने से थोड़ा सा भेद प्रदर्शित होता है अर्थात् किसी ने दीर्घतपा के पुत्र को धन्व और धन्व के पुत्र को धन्वन्तरि तथा किसी ने धन्वन्तरि को सीधे दीर्घतपा का पुत्र माना है।

**धन्वन्तरि (तृतीय) काशीराज दिवोदास :** एक समय देवताओं के राजा इन्द्र ने मनुष्यों को रोगों से पीड़ित देखकर द्रवित हो धन्वन्तरि से कहा–"देवताओं में श्रेष्ठ धन्वन्तरि आप प्राणियों के उपकारार्थ तैयार होवें अतः आप पृथ्वी तल पर जावें और काशीपुर में वहाँ के राजा होवें एवं रोगों को दूर करने के लिए आयुर्वेद का प्रकाश करें। तब धन्वन्तरि ने क्षत्रीय कुल में जन्म लिया और काशीराज दिवोदास कहलाये।

भाव प्रकाश मतानुसार दिवोदास ने पहले कई वर्षो तक तपस्या की थी। बाद में ब्रह्मा ने उनको राजा बना दिया था। उपरोक्त तथ्यों का उल्लेख श्री सवाई प्रताप सिंह जी प्रणित 'नूतनामृतसागर' में वर्णित है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ऋषि विश्वामित्र ने जब ज्ञान दृष्टि से यह देखा कि काशीराज दिवोदास साक्षात् धन्वन्तरि भगवान हैं, तो उन्होनें अपने पुत्र सुश्रुत से कहा–वत्स तुम वाराणसी जाओ। वहाँ दिवोदास नाम के जो सुप्रसिद्ध राजा हैं वे आयुर्वेदज्ञ साक्षात् धन्वन्तरि भगवान है। लोगों के उपकारार्थ तुम उनसे आयुर्वेद पढ़ो, क्योंकि प्राणियों पर दया रखना ही तीर्थ तथा उनका उपकार करना ही महान यज्ञ है।

अतः पिता के उपदेश को आज्ञा मानकर सुश्रुत काशी गये, उनके साथ अन्य ऋषियों के सौ पुत्र भी गए।

**यथा : विश्वामित्रो मुनिस्तेषु पुत्रं सुश्रुतमुक्तवान्।**

**वत्स ! वाराणसी गच्छत्वं विश्वेश्वर बल्लभाम्।** *(भावप्रकाशः)*

आगमन का कारण सुनकर काशीराज दिवोदास प्रशन्नतापूर्वक अष्टांग आयुर्वेद का उपदेश किया जिसे सुश्रुत एवं ऋषियों ने पूर्ण मनोयोग के साथ ग्रहण किया। सुश्रुत एवं अन्य ऋषियों ने अपने–अपने घर पहुंचकर विभिन्न संहिताओं का निर्माण किया।

सुश्रुत संहिता मतानुसार–दिवोदास के शिष्यों में सुश्रुत के अतिरिक्त औपधेनव, वैतरण, औरभ्र, पौष्कालवत, करवीर्य और गोपुरक्षित भोज का नाम भी उल्लेख है।

**यथा : अद्य खलु भगवन्तममरवरऋषिगणपरिवृतमाश्रमस्थं काशिराजं दिवोदास धन्वन्तरि।**

**मौपधेनववैतरणौरभ्रपौष्क-लावतक रवीर्यगोपुररक्षितसुश्रुतप्रभृतय ऊचः।** *(सु०सू० 1/3)*

धन्वन्तरि को सुश्रुत संहिता (चि० 2/3) में धर्माचरण युक्त, वाग्विंशारद् निदान स्थान (1/3) में राजर्षि, कल्पस्थान (4/3) में महाप्राज्ञ, सर्वशास्त्र विशारद, उत्तरतन्त्र (18/3) में तपोदृष्टि तथा मुनि कहा गया है।

इन विशेषणों से यह सिद्ध होता है कि दिवोदास धन्वन्तरि परम्तपस्वी, शास्त्रों का मर्मज्ञ विद्वान, धर्मात्मा और उदार मनोवृति का व्यक्ति था। सुश्रुत उत्तर तन्त्र (66/3) में दिवोदास धन्वन्तरि के कुछ विशिष्ट विशेषण दिये गये है। इन्हें अष्टांग आयुर्वेद का विद्वान, महा ओजस्वी शास्त्रों के अर्थ विषयक संदेह को दूर करने का तथा अनेक सूक्ष्म शास्त्रों के ज्ञाता के रूप में कहा गया है।

**अष्टांग वेद विद्वांसं दिवोदासं महौजसम्।**

**छिन्नशास्त्रार्थ सन्देहं सुक्ष्मागाधागमोदधिम्।।**

यह पूर्व में देववैद्य थे और इन्होंने देवताओं की जंरा, रूजा और मृत्यु को दूरकर, उन्हें अजर अमर तथा निःरोग किया। मर्त्यलोक मे शल्यप्रधान आयुर्वेद के लिए इनका मानवरूप में अवतरण हुआ। जैसा कि वे स्वयं अपना परिचय देते हुए पाये जाते हैं :–

**अहं हि धन्वन्तरिरादिदेवौ जरारूजामृत्युहरोऽमराणाम्।**

**शल्या ङ्गमङै रपरैरूपेतं प्राप्तोऽस्मि गां भूय इहोपदेष्टुम्।** *(सु० सू० 1/17)*

इन्होंने (धन्वन्तरि) स्वयं कहा है, कि मैंने इन्द्र से आयुर्वेद की शिक्षा ग्रहण की और मैं प्रजा के कल्याण के लिए शिष्यों को विद्यादान करूंगा :–

**इन्द्रादहं, मया त्विह प्रदेयमार्थिभ्यः प्रजाहितहेतोः।** *(सू० सू० 1/20)*

**काश्यप संहिता मतानुसार :** काश्यप, वशिष्ठ, अत्रि और भृगु महर्षि ने इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया। फिर अपने पुत्रों और शिष्यों को पढ़ाया।

(निरोग, से साभार उद्धत पृ० 20 से 34 तक–प्रकाशक आयुर्वेद विद्याभवन रांठी, मधुबनी, बिहार)



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

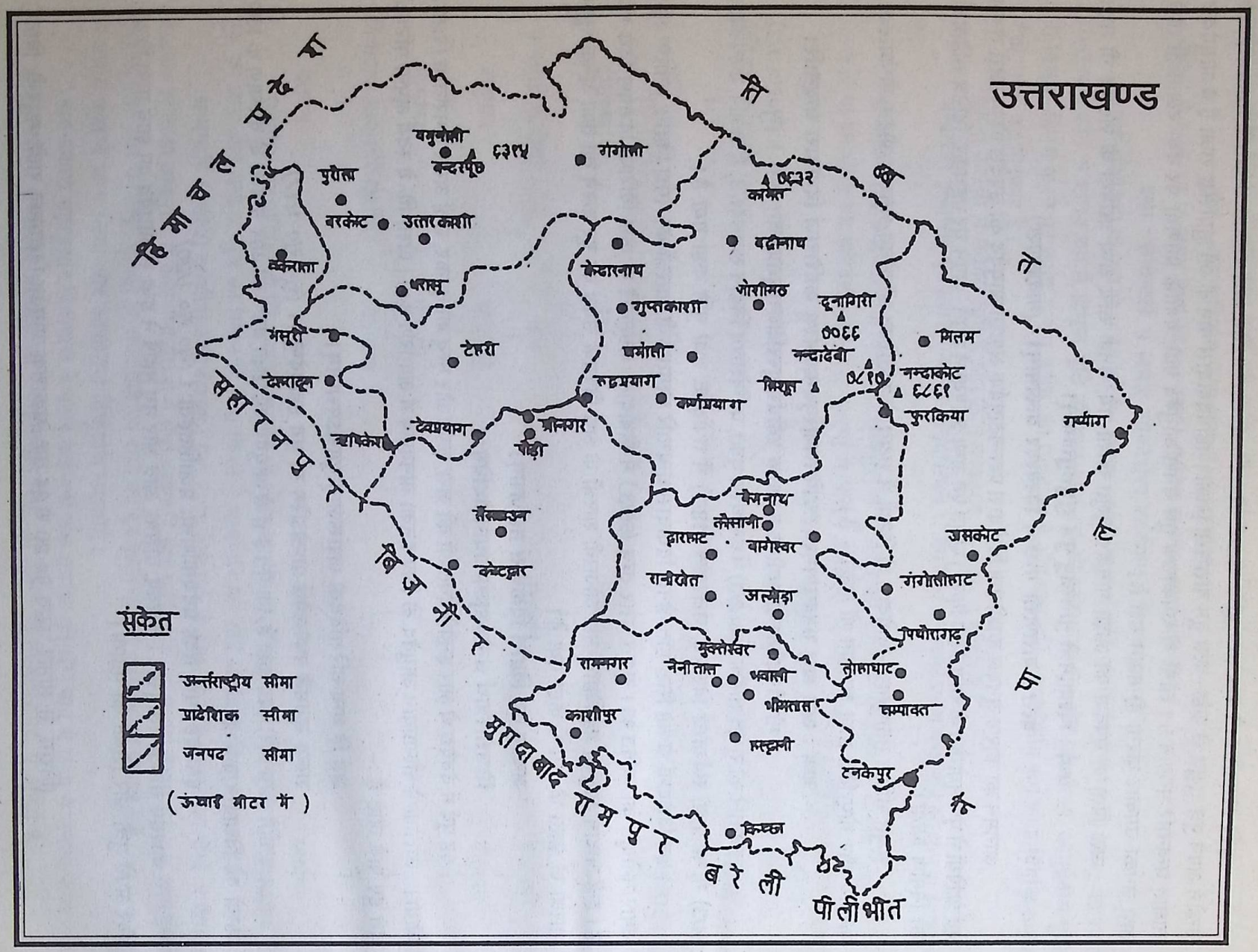




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# उत्तराखण्ड हिमालय के प्रमुख स्थान एवं प्राकृतिक सौन्दर्य स्थल

प्राकृतिक सौन्दर्य एवं धार्मिक दृष्टि से भी उत्तराखण्ड बैदिककाल से लेकर आज भी सभी तीर्थो से आगे है। इस उत्तराखण्ड की पावन धरती पर यमनोत्री, गंगोतरी, पंचकेदार, बद्रिनाथ, केदारनाथ, तुंगनाथ, हेमकुण्ड, त्रिजुगीनारायण, रुद्रनाथ, मदमहेश्वर, सहस्त्रताल, रूपकुण्ड, हरकीदून, विरहीताल, डोडीताल, नैनीताल, खतलिगं, हिमानी, शक्तिपीठ, कालीमठ, सुरकण्डा, चन्द्रवदनी, मुखेम, बागेशवर, जागेश्वर, अल्मोड़ा, मुक्तेश्वर, रानीखेत, बेरीनाग, पिथौरागढ़, मुनस्यारी, पिंडारी, चम्पावत, लोहाघाट आदि कतिपय धार्मिक स्थान एवं हिमालय की प्रसिद्ध चोंटियां व इन चोटियाँ से प्रवाहित होने वाली पावन नदियाँ विधमान है। पाठकों की जानकारी के लिये संक्षिप्त वर्णन यहाँ पर दिया जा रहा है।

**हरिद्वार से यमनोत्री प्रमुख स्थान :** शास्त्रों में हरिद्वार को कपिलस्थान या मायापुरी के नाम से जाना जाता है। हरिद्वार चिरकाल से उत्तराखण्ड का प्रवेश द्वार रहा है। हरिद्वार शिव एवं हरि का द्वार होने से हरिद्वार का सार्थक नाम पड़ा है क्योंकि उत्तराखण्ड में शिव एवं विष्णु के कई मन्दिर हैं। इनमें केदारनाथ में शिव की एवं बद्रिनाथ में विष्णु की पूजा होती है। ऋषिकेश से यमनोत्री 222 किलोमीटर ।

| क्र. सं. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दुरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | ऋषिकेश | 340 | ... | ... |
| 2. | नरेन्द्रनगर | 1067 | 16 | 16 |
| 3. | चम्बा | 1524 | 46 | 62 |
| 4. | दोबाटा | 770 | 17 | 79 |
| 5. | टेहरी | 770 | 4 | 83 |
| 6. | धरासू | 1036 | 37 | 120 |
| 7. | ब्रह्मखाल | 1158 | 15 | 135 |
| 8. | बडकोट | 1828 | 40 | 175 |
| 9. | सयानाचट्टी | 1982 | 29 | 204 |
| 10. | हनुमानचट्टी | 2134 | 5 | 209 |
| 11. | फूलचट्टी | 2561 | 5 | 214 |
| 12. | जानकीबाईचट्टी | 2576 | 2 | 216 |
| 13. | यमनोत्री | 3323 | 6 | 222 |

**नोट :** हनुमानचट्टी ये यमनोत्री 13 कि. मी. पैदल मार्ग है।

**मौसम :** यमनोत्री नवम्बर से अप्रैल तक हिमाच्छदित।

**यात्रा का उचित समय :** मई से लेकर अक्टूबर तक।

ब्रह्मखाल से आगे का मार्ग अत्यन्त रमणीक हैं। पूरा मार्ग वनों से आच्छादित है। पहले चीड़ (विरोजा) के लम्बे सधन पंक्तिबद्ध वृक्षों की शोभा देखने को मिलती है। इन वृक्षों से काफी मात्रा में लीसा (विरोजा) निकाला जाता है। आर्थिक स्त्रोत का यह महान् उपयोगी वृक्ष है। चीड़ (पाईन) के बाद बांझा (क्वरकस) बुरांस (रोडोडेन्ड्रोन), काफल (माइरिका), अंयार (पेयरिस) एवं मेहल (प्रुनस) के जंगल मार्ग में आते है। 2200 मीटर के बाद कैल, सुरई एवं देवदार थुनेर के सदाहरित वृक्षावली के दृश्य नजर आते है। इन वृक्षों के नीचे दारूहरिद्रा, सुमंया (तगर) बन्पशा, ब्राह्मी, शेल्डू (कपूरकचरी) पाषाणभेद, तेजपत्ता, आदि कतिपय उपयोगी वनस्पतियाँ देखने को मिलती हैं बडकोट से यमनोत्री मार्ग



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

में कतिपय गाँव मार्ग में आते हैं। बड़कोट से एक रास्ता चकराता, कालसी एवं विकासनगर होते हुये देहरादून को चला गया है। यमनोत्री नामक स्थान से यमुना का मुख्य उद्गम स्थान यमनोत्री से लगभग 4-5 कि०मी० ऊपर कालिन्द पर्वत से है जोकि 4421 मी० ऊँचाई पर स्थित है। कालिन्द पर्वत के पास ही कालिन्द झील है जहाँ से यमुना जी निकलती है। मन्दिर के पास ही उबलते हुए पानी के चश्मे (कुण्ड) है।

**यमनोत्री से गंगोत्री-225 कि०मी० की दूरी**

| क्रम | स्थान | ऊँचाई (मी०) | दूरी कि०मी० | कुलदूरी कि०मी० |
|---|---|---|---|---|
| 1. | यमनोत्री | 3323 | ..... | ..... |
| 2. | हनुमाचट्टी | 2134, | 13 | 13 |
| 3. | बड़कोट | 1828 | 34 | 45 |
| 4. | घरासू | 1036 | 55 | 102 |
| 5. | उत्तरकार्श | 1158 | 26 | 128 |
| 6. | मनेरी | 1372 | 10 | 138 |
| 7. | भटवारी | 1677 | 19 | 157 |
| 8. | गंगनानी | 1982 | 14 | 171 |
| 9. | सुखी | 2744 | 18 | 189 |
| 10. | झाला | 2429 | 7 | 196 |
| 11. | हरसिल | 2591 | 6 | 202 |
| 12. | लंका | 2652 | 13 | 215 |
| 13. | गंगोत्री | 3140 | 10 | 225 |

**मौसम :** गंगोत्री नवम्बर–अप्रैल हिमाच्छादित।

**नोट :** देहरादून से भी दूनघाटी होते हुये यमनोत्री एवं गंगोत्री मोटरमार्ग है। मसूरी, नौगांव, बड़कोट होते हुये यमनोत्री जा सकते है।

उत्तरकाशी का प्राचीन नाम बाड़ाहाट था जोकि अब जनपद नाम से प्रसिद्ध है। यह जनपद भागीरथी नदी के दांहिने तट पर बसा हुआ है। यह शिव की नगरी भी कहलाती है। गंगोत्री से भागीरथी का उद्गम होने से यह भागीरथी घाटी कहलाती है। भटवाड़ी से गंगोत्री मार्ग तक सुन्दर प्राकृतिक दृश्य एवं चीड़, कैल देवदार, राई, रौसंली, बाँझ, बुरांस के सदाहरित वृक्षावली देखने को मिलती है। चारों ओर देवदार के घने जंगल एवं बर्फ से चम–चमाती हुई चोटियों का मनोहारी दृश्य देखने को मिलता है। गंगोत्री मार्ग में लंका नामक पड़ाव आता है। जिसकी ऊँचाई 2658 मीटर है। लंका से एक मार्ग नीलंग हिमानी को चला गया है। यहीं पर जान्हवी नदी (जाडगंगा) भागीरथी से संगम करती है। जाह्नवी नदी पर गंगोत्री जाने के लिये 1985 में बहुत ऊँचा पुल बनाया गया है। इस पुल के तैयार होने से भैरो घाटी से पैदल गंगोत्री नहीं जाना पड़ता है। पर्यटक सीधे मोटर मार्ग से गंगोत्री जा सकते हैं।

**गंगोत्री में गोमुख :** गंगोत्री जितना सुन्दरधाम हैं उतना मनमोहक एवं प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर है। राजा भगीरथ के अथक तपस्या के फलस्वरूप भागीरथी का उद्गम गंगोत्री गोमुख हिमनद है। गंगोत्री से गोमुख करीब 18 किलोमीटर पैदल मार्ग तय कर जाना पड़ता है। मार्ग में 8 कि.मी. दूरी पर चीड़वासा है यहाँ से 4 कि.मी. दूरी पर भोजवासा है एवं भोजवास से 6 कि.मी. दूरी पर गोमुख गंगोत्री ग्लेशियर है। मार्ग नदी के किनारे–2 ऊँचा–नीचा चढ़ाई वाला है। मार्ग में देवदार, भोजपत्र, खरसू, सिमरू ( रोडोडैन्ड्रान ), जुनिपर के वृक्ष एवं झाड़ियाँ मिलती हैं। गोमुख हिमनद



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

से आगे नारायण पर्वत एवं नन्दनवन (वुग्याल) है। नारायण पर्वत के दूसरी ओर से अलकनन्दा के उद्‌गम स्थल है जोकि वासुकी ताल माना, बद्रिनाथ होते हुये देवप्रयाग में भागीरथी से संगम करती हुई गंगानदी के नाम से प्रवाहित होती है। गंगावतरण महातम् में कहा गया है कि नगाधिराज शिवजी की जटा से उतरकर गंगा गन्धमादन पर्वत पर उतरी और अनेक धाराओं का रूप धारण कर भूभाग मे बंट गई।

**गंगोत्री की महिमा :** हिन्दू धर्म का सारा रहस्य इन पावन नदियों पर आधारित है। उत्तराखण्ड से भागीरथी, अलकनन्दा, सरस्वती, यमुना, मंदाकिनी, गंगा, आदि कतिपय पावन नदियाँ निकलती है। लेकिन गंगा के लिये सर्वश्रेष्ठ पवित्र भावना भारतीयों में है। गंगा को जननी माना गया है इस का जल शुद्ध और अमृततुल्य है। समुद्र मन्थन के समय जब देवासुर संग्राम के अवसर पर समुद्र से 14 रत्नों की उपलब्धी पर विष को कहां रखा जाय यह समस्या देवताओं के सामने आई तो शिवजी ने विषपान किया और उसे अपने कंठ में रोक दिया। इसी से शिव जी नीलकंठ कहलाये। इस विषाग्नि की शान्ति हेतु शिव जी को गंगाजल चढ़ाने का महातम्य है। इसी पवित्र भावना से आज भी गंगोत्री का जल लेकर रामेश्वरम् में शिव जी को श्रद्धालूजन चढ़ाते है। इसी पवित्र भावना से आदि गुरू शकंराचार्य ने गंगोत्री हिमालय से कन्याकुमारी रामेश्वरम् तक सभी को एक सूत्र में बांधा जा सके इस परम्परा का सुत्रपात किया। गंगावतरण की अनेक पौराणिक मान्यतायें हैं विस्तारमय से यहाँ पर देना सम्भव नहीं है तथापि आज भी गंगाजल मे जो औषधीय गुण विद्यमान है। इस पवित्र गंगाजल को बोतलों मे भरकर देश–विदेशों में ले जाया जाता है। लेकिन इस जल में कोई प्रदूषण नहीं आता हैं। आधुनिक वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि गंगा के जल में ऐसे रसायन धुल कर आते हैं जो पानी को सड़ने से बचाते है और इसे हमेशा स्वच्छ रखते है। सम्भवतः औषधिराज हिमालय में अनेक किस्म की जड़ी बूटियां होने के कारण गंगा जी का जल प्रदूषित नहीं होता है। लेकिन आज इन पावन नदियाँ में बढ़ती हुई आबादी, विषैले रसायन उद्योग धन्धों के प्रदुषित जल के कारण तथा बनों कें भीषण विनाश एवं विदोहन के फलस्वरूप गंगा जैसी पावन नदियाँ प्रदूषण के चपेट में आ गई।

**टिप्पणी :** ऋषिकेश से यदि सीधे गंगोत्री ज़ाना हो तो मोटर मार्ग की दूरी 245 कि. मीटर है। मार्ग में नरेन्द्रनगर, टिहरी उत्तरकाशी, भटवारी, हरसिल आदि स्थानों से होते हुये गंगोत्री पड़ाव आता है।

उत्तराखण्ड की चारों धामों की यात्रा का अपना विशेष महत्व है। धार्मिक मान्यताओं के आधार पर यात्री एवं पर्यटक यमनोत्री, गंगोत्री धाम होते हुये केदारनाथ के दर्शन कर बद्रिनाथ धाम पहुँचते है। पर्यटकों एवं वनौषधि अन्वेषकों की सुविधा हेतु इन स्थानों पर पहुँचने कि मार्ग दर्शिका (लोकेशन) इस प्रकार से हैं।

**गंगोत्री से केदारनाथ मार्ग (धनशाली होकर)**

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई मीटर | दूरी किलोमीटर | कुलदूरी किलोमीटर |
|---|---|---|---|---|
| 1. | गंगोत्री | 3140 मी० | – | – |
| 2. | उत्तरकाशी | 1150 मी० | 97 कि०मी० | 97 कि०मी० |
| 3. | दोबाटा (एकमार्ग ऋषिकेश को तथा एक मार्ग टिहरी को) | | | |
| 4. | टिहरी | 770 मी० | 4 कि०मी० | 162 कि०मी० |
| 5. | गडोलिया | 770 मी० | 17 कि०मी० | 179 कि०मी० |

(गडोलिया से एक मार्ग डांगचौरा, श्रीनगर होते हुये केदारनाथ को तथा दूसरा मार्ग धनशाली तिलवाड़ा होते हुये केदारनाथ को।)

**धनशाली वाला मार्ग :**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 6. | धनशाली | 976 मी० | 18 कि०मी० | 197 कि० मी० |
| 7. | चिरवीटिया | 2134 मी० | 31 कि०मी० | 228 कि० मी० |
| 8. | तिलवाड़ा | 671 मी० | 42 कि०मी० | 270 कि० मी० |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

धनशाली से मोटर मार्ग वूड़ाकेदार वालगंगा घाटी होते हुये घुत्तू पड़ाव आता है एवं धुत्तू से पैदल मार्ग पंवाली कांठा, ताली, मग्गूचट्टी त्रिजुगीनारायण, गौरीकुण्ड होते हुये केदारनाथ आता है। घुत्तू से गौरीकुण्ड मार्ग लगभग 50 कि० मी० पैदल मार्ग है। जो कि प्राकृतिक रंग–बिरंगे सुगंधित पुष्पों एवं जड़ी–बूटियों से भरपूर रमणीय स्थल हैं। मार्ग में काफी कठिन बर्फीले वुग्यांलो की चढ़ाई–उत्तराई पार कर केदारनाथ के दर्शन होते है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| 9. अगस्त्यमुनी | 706 मी० | 10 कि० मी० | 280 कि० मी० |
| 10. कुण्ड | 976 मी० | 15 कि० मी० | 295 कि० मी० |
| 11. गुप्तकाशी | 1479 मी० | 5 कि० मी० | 300 कि० मी० |
| 12. नारायणकोटी | 1490 मी० | 3 कि० मी० | 303 कि० मी० |
| 13. फाटा | 1601 मी० | 11 कि० मी० | 314 कि० मी० |
| 14. रामपुर | 1646 मी० | 9 कि० मी० | 323 कि० मी० |
| 15. सोनप्रयाग | 1829 मी० | 3 कि० मी० | 326 कि० मी० |
| 16. गौरीकुण्ड | 1982 मी० | 5 कि० मी० | 331 कि० मी० |
| 17. रामवाड़ा | 2591 मी० | 7 कि० मी० | 338 कि० मी० |
| 18. गरूड़चट्टी | 3262 मी० | 4 कि० मी० | 342 कि० मी० |
| 19. श्री केदारनाथ | 3528 मी० | 3 कि० मी० | 345 कि० मी० |

गोरीकुण्ड से केदारनाथ 14 कि० मी० पैदल मार्ग है। केदारनाथ के पास चोराबाड़ीताल, बासुकीताल आदि कतिपय रमणीक स्थान है। इन स्थानों में औषधीय उपयोग के कतिपय सुगन्ध पादप पाये जाते है। टिहरी गंगोत्री से केदारनाथ मार्ग पर पड़ता है।

स्वतंत्रता से पूर्व टेहरी नगर महाराजा टिहरी गढ़वाल की राजधानी थी। टिहरी–डाम (जलाशय) के कारण नई टिहरी 1500 मीटर की ऊँचाई पर बुराड़ी गाँव के पास बसाई गई है। भिलंगना धूतु, धनशाली से प्रवाहित होकर टिहरी में भागीरथी से संगम करती है। ऋषिकेश से भी सीधे देवप्रयाग, श्रीनगर, रूद्रप्रयाग, तिलवाड़ा, कुण्ड, गुप्तकाशी, नारायणकोटी, फाटा, सोनप्रयाग, गौरीकुण्ड, रामवाड़ा होते हुये केदारनाथ सीधा गौरीकुण्ड तक मोटर मार्ग से जाया जा सकता कुल दूरी 223 कि० मीटर है। मार्ग में सर्वप्रथम धार्मिक स्थान देवप्रयाग 610 मीटर की ऊँचाई पर है। इस स्थान पर भागीरथी टिहरी से होते हुये अलकनन्दा से संगम कर गंगानदी कहलाती है। श्रीनगर अलकनंदा के दांये तट पर बसा हुआ है। श्रीनगर की स्थापना चौंदवीं शताब्दी में टिहरी गढ़वाल के महाराजा अजयपाल द्वारा की गई थी। 1803 में सिंगोली संधि मे जब गढ़वाल का आधा हिस्सा अंग्रेजों को दिया गया तो श्रीनगर भी ब्रिटिश गढ़वाल में आ गया। श्रीनगर में हैमवती नन्दन बहुगुणा विश्वविद्यालय एवं स्नातकोत्तर संस्थान तथा अन्य कतिपय शिक्षण संस्थायें है। अलकनन्दा के तट पर प्राचीन कमलेश्वर महादेव का प्राचीन मन्दिर है। श्रीनगर गढ़वाल संस्कृति का केन्द्र है। रुद्रप्रयाग से एक मार्ग तिलवाड़ा होते हुए केदारनाथ को चला गया है एवं दूसरा मार्ग अलकनन्दा के किनारे–2 बद्रिनाथ को चला गया है। रुद्रप्रयाग से गुप्तकाशी करीब 44 कि० मीटर की दूरी पर है। धार्मिक दृष्टिकोण से गुप्तकाशी का अपना महत्व है। गुप्तकाशी में प्राचीन चन्द्रशेखर महादेव का मन्दिर है। जो विश्वनाथ मन्दिर भी कहलाता है। गुप्तकाशी से सिद्धपीठ कालीमठ एवं मदमहेश्वर को रास्ता जाता है। तथा एक रास्ता कुण्ड से उखीमढ होते हुये तुंगनाथ एवं गोपेश्वर, चमोली को जाता है। मदमहेश्वर में भगवान शिव का मन्दिर है। गुप्तकाशी से नारायणकोटी फाटा रामपुर होते हुये सोनप्रयाग सुन्दर प्राकृतिक सुषमा से भरपूर स्थान है। गुप्तकाशी से सोनप्रयाग की दूरी लगभग 30 कि० मीटर मोटर मार्ग से है। सोनप्रयाग में सोनगंगा/मन्दाकिनी से संगम करती है यही से त्रिजुगीनारायण को भी रास्ता जाता है। त्रिजुगी नारायण में भगवान नारायण का प्राचीन मन्दिर है। सोनप्रयाग से गौरीकुण्ड लगभग पांच किलोमीटर है। मन्दाकिनी घाटी बड़ी



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रमणीक एवं हरियाली से भरपूर है। देवदारू, कैल, खरसू, वांझ, बुरांस, राई, मुरेण्डा के सदाहरित वृक्षावलियाँ इस घाटी में है। यहाँ पर गौरी जी का प्राचीन मन्दिर है। कहा जाता है कि पार्वती ने यहीं पर शिव की प्राप्ति के लिये तपस्या की थी। शिव और पार्वती जो सृष्टि के रचियता है का विवाह संस्कार त्रिजुगीनारायण में हुआ था ऐसी मान्यता है। गौरी कुण्ड में गौरी मन्दिर के पास गरम पानी का कुण्ड है। खौलता हुआ पानी कुण्ड में गिरता है। श्री केदारनाथ की पैदल यात्रा 14 किलोमीटर की यही से प्रारम्भ होती है। केदारनाथ 3600 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। केदारनाथ जी का मन्दिर भव्य एवं बड़ी–बड़ी शिलाओं का बना हुआ है। ऐसा अनुमान है कि यह मन्दिर बारवीं सदी से पहले का बना हुआ है। मन्दिर का निर्माण बड़ी शिलाओं को काटकर किया गया है। मन्दिर दक्षिण भारत की उच्चकोटी के कुशल शिल्पियों द्वारा बनाया गया ऐसा प्रतीत होता है। ऐसी पौराणिक कथायें हैं कि भगवान शंकर जब श्रीकेदारनाथ में अन्तार्धान हुये तो उनके अंग विभिन्न स्थानों पर प्रकट हुये। उनके धड़ से उपर का हिस्सा पशुपतिनाथ काठमाण्डु नेपाल में प्रकट हुआ। भुजायें तुंगनाथ में मुख रूद्रनाथ में नाभि मदमहेश्वर में और जटा कल्पेश्वर में प्रकट हुई। पशुपतीनाथ को छोड़ कर शेष पंचकेदार उत्तराखण्ड में विद्यमान है। सभी शैव तीर्थ माने जाते है। केदारनाथ की हिमश्रृंखला बहुत रमणीक है एवं मन्दाकिनी का हिमनद (ग्लेशियर) से दो धारायें निकलती हैं। यहाँ पर स्थित एक को दूध गंगा कहते हैं एवं दूसरे को मन्दाकिनी। चोरावाड़ी ताल को अब गांधी सरोवर कहा जाता है। केदारनाथ से 7-8 किलोमीटर की दूरी पर वासुकीताल है। इन हिमनदों में ब्रह्मकमल (सूरजकौंल), जटामांसी, कुटकी धूप, मठोसल, आकाशमांसी, मूरामांसी, अतीस, चोरा, गन्धायण आदि कतिपय दीव्यौषधियाँ पाई जाती हैं। जिनका विस्तार से उल्लेख आगे किया जायेगा।

**केदारनाथ से बद्रिनाथ मार्ग**

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई मीटर | दूरी कि.मी. | कुलदुरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | श्री केदारनाथ | 3520 | ..... | ..... |
| 2. | गौरीकुण्ड | 1982 | 14 | 14 |
| 3. | गुप्तकाशी | 1479 | 31 | 45 |
| 4. | कुण्ड | 976 | 5 | 50 |
| (कुण्ड से एक मार्ग उखीमढ़, चौपता तुंगनाथ, गोपेश्वर एवं चमोली होते हुये बद्रिनाथ को चला गया हैं। कुण्ड चमोली की दूरी लगभग 98 किलोमीटर हैं। गोपेश्वर जिला कार्यालय है।) | | | | |
| 5. | अगस्तमुनी | 762 | 15 | 65 |
| 6. | रुद्रप्रयाग | 610 | 19 | 84 |
| 7. | धोलतीर | 645 | 10 | 94 |
| 8. | गोचर | 790 | ..... | .... |
| 9. | कर्णप्रयाग | 795 | 11 | 115 |
| 10. | नन्दप्रयाग | 914 | 22 | 137 |
| 11. | चमोली (जनपद) | 1069 | 10 | 147 |
| (तुगंनाथ, गोपेश्वर होते हुये चमोली आ सकते हैं।) | | | | |
| 12. | विरही | 1100 | 8 | 155 |
| 13. | पीपलकोटी | 1311 | 9 | 164 |
| 14. | गरूड़गंगा | 1372 | 5 | 169 |
| 15. | टंगणी | 1677 | 6 | 175 |
| 16. | जोशीमठ | 1890 | 14 | 195 |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

(यहाँ से एक मार्ग नीती पास धौली धाटी को चला गया है।)

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 17. | विष्णुप्रयाग | 1372 | 10 | 205 |
| 18. | गोविन्द धाट | 1829 | 10 | 215 |
| (यहाँ से एक पैदल मार्ग फूलों की धाटी एवं हेम कुण्ड को चला गया हैं।) | | | | |
| 19. | पाण्डुकेश्वर | 1829 | 4 | 219 |
| 20. | हनुमानचट्टी | 2286 | 9 | 228 |
| 21. | देवदर्शनी | 3101 | 13 | 241 |
| 22. | श्रीबद्रिनाथ | 3120 | 2 | 243 |

**कर्णप्रयाग** : कर्णप्रयाग अलकनन्दा और पिंडर के संगम पर बसा हुआ है। पिंडर नदी पिंडारी ग्लेशियर से निकलती है। संगम पर उमादेवी का पावन मन्दिर है। महाभारत के महायोद्धा कर्ण ने इसी स्थान पर तपस्या कर सूर्य भगवान् को प्रसन्न किया था। नैनीताल–अल्मोड़ा जाने का मोटर मार्ग भी यहाँ से निकलता है। इसी स्थान से रूपकुण्ड, बेदनी बुग्याल एवं पिंडारी ग्लेशियर को जाया जाता है।

**नन्दप्रयाग :** नन्दप्रयाग नन्दाकिनी एवं अलकनन्दा के संगम स्थान पर बसा हुआ है। नन्दाकिनी नन्दादेवी पर्वत के पृष्ठभाग से निकलती है। यहाँ से एक मार्ग घाट को जाता है। जहाँ से धोनी, रामणी आदि कतिपय प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर रमणीक स्थान है। ये क्षेत्र ट्रेकिंग के लिये प्रसिद्ध है।

**चमोली** : चमोली जनपद का पुराना मुख्यालय है, नया मुख्यालय गोपेश्वर बन गया है। चमोली से गोपेश्वर की दूरी 10 किलो मीटर है। गोपेश्वर से मोटर मार्ग मण्डल चौपता, उखीमठ, कुण्ड गुप्तकाशी होते हुये केदारनाथ को चला गया है। चमोली से 8 किलो मीटर की दूरी पर पीपलकोटी मार्ग पर विरही में विरहीगंगा विरहीताल से निकल कर अलकनन्दा में संगम करती है।

**गरुड़गंगा** : यहाँ पर गरुड़गंगा नाम की छोटी नदी के किनारे पर गरुड़ भगवान की पूजा होती है। लोकमान्यता के आधार पर गरुड़ भगवान का आवास होने के कारण इस नदी के कंकड़–पत्थर को सर्पविष नाशक मानते हैं। इसी स्थान से हाथीपर्वत, घोड़ीपर्वत का सुन्दर दृश्य देखने को मिलता है। टंगणी में रिंगाल की खूबसूरत टोकरियाँ और पेटियाँ बनती हैं। यह लघुउद्योग धन्धों को बढ़ावा देने का अच्छा साधन है। हेंलग से पैदल मार्ग पर कल्पेश्वर महादेव जी का प्राचीन मन्दिर है। यह मन्दिर दुर्गम घाटी में स्थापित है। कल्पेश्वर महादेव पंचकेदारों में से एक है।

**जोशीमठ** : यह स्थान 1890 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। चमोली जनपद का यह धार्मिक, ऐतिहासिक महत्व का प्रमुख नगर है आदिगुरू शंकराचार्य ने अपनी तपस्या के फलस्वरूप जोशीमठ में प्रथम मठ की स्थापना की जिसका नाम ज्योतिर्मठ रखा गया। इसी अपभ्रंश से इसका नाम जोशीमठ पड़ा। इस तपस्थली में स्थित शहतूत का विशाल वृक्ष ही कल्पवृक्ष कहलाता है। ऐसी मान्यता है कि इस वृक्ष की आयु लगभग 2400 वर्ष की है। इस वृक्ष की जड़ की गोलाई 36 मीटर है। इसी वृक्ष के नीचे प्राचीन शंकराचार्य की तपस्थली गुफा स्मारक रूप में बनी हुई है। ज्योतिर्मठ स्थापना के पश्चात् आदि गुरू शंकराचार्य श्री बद्रिनाथ धाम चले गये और वहाँ पर उन्होंने बद्रिनाथ जी कि मूर्ति को प्राण प्रतिष्ठा कर पुनः स्थापित किया। तत्पश्चात् देश की तीन दिशाओं में तीन मठ और तीन धामों की स्थापना आदिगुरू शंकराचार्य जी ने किया। आज भी ये चार धाम बद्रिनाथ जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम् और द्वारकापुरी हिन्दु धर्म और भारतवर्ष के गौरव के अमिट स्मारक एवं प्राणसंचारक हैं। जोशीमठ में नवदुर्गा का बहुत प्राचीन मन्दिर है। जोशीमठ से एक मार्ग नीतीपास एवं तपोवन की घाटी को चला गया है। जोशीमठ के पास औलीट्रेकिंग सेन्टर बहुत रमणीक स्थान है। यहाँ से हिमालय की कतिपय प्रसिद्ध हिमाच्छादित चोटियाँ नीलकंठपर्वत एवं दूनागिरी आदि दिखाई देती हैं। तपोवन मार्ग से नन्दादेवी का भव्य दृश्य देखने को मिलता है। नन्दादेवी सेंचुरी जाने वाले पर्वतारोही जोशीमठ से कुलो आदि की



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

व्यवस्था कर पर्वतारोहण के लिये प्रस्थान करते हैं। जोशीमठ से 9 कि.मी. दूरी पर औलीबुग्याल है। यहाँ से हिमालय का अनोखा दृश्य देखने को मिलता है जोशीमठ से औली तक रज्जू मार्ग निर्माण कार्य चल रहा है।

**विष्णुप्रयाग :** अलकनन्दा और धौली नदी के संगम पर विष्णुप्रयाग है। धौली नीतीपास से प्रवाहित होकर विष्णुप्रयाग में अलकनन्दा से मिल जाती है। विष्णुप्रयाग से आगे गोविन्दघाट आता है। इसी स्थान से अलकनन्दा का पुल पार करके फूलों की घाटी एवं हेमकुण्ड के लिये पैदल मार्ग चला गया है। पर्यटक इसी स्थान से हेमकुण्ड साहिब गुरुद्वारे की पैदल यात्रा प्रारम्भ करते हैं। इस स्थान का नाम सिखों के दसवें गुरु गोविन्दसिंह के नाम पर गोविन्दघाट रखा गया है।

**पाण्डुकेश्वर-हनुमान चट्टी :** गोविन्दघाट से चार कि. मी. की दूरी पर पाण्डुकेश्वर नाम का छोटा गांव है। ऐसी मान्यता है कि पाण्डवों के पिता पाण्डु ने अपने जीवन के आखिरी दिन इसी स्थान पर निवास कर मोक्ष को प्राप्त किया। यहाँ प्राचीन मन्दिरों में योगध्यानवद्रि का मन्दिर है जो पञ्चवद्रि में से एक है। पाण्डुकेश्वर से आगे हनुमान चट्टी आती है। अलकनन्दा का नैसर्गिक स्वरूप हनुमान चट्टी से देखने को मिलता है। हनुमान चट्टी की समुद्रतल से ऊँचाई 2400 मीटर के करीब है। रंग–बिरगें सुगन्धित पुष्पों की सुन्दरता दृष्टिगत होती रहती है। यहाँ पर हनुमान जी का भी मन्दिर है। इसी स्थान पर हनुमान जी ने तपस्या कर बद्रिविशाल से महाबली का वरदान प्राप्त किया था।

**देवर्दशनी :** हनुमानचट्टी से आगे की प्राकृतिक सौन्दर्य की विशेषता अलग रूप में देखने को मिलती है। जगह–जगह हिमानी (ग्लेशियर) देखने को मिलते है। बर्फिले हिमशैल गिर कर अलकनन्दा में आ जाते है। अलकनन्दा कतिपय स्थानों पर बर्फ से ढकी मिलती हैं। देवदर्शनी से बद्रिविशाल के दर्शन होने लगते है। देव दर्शनी 3100 मीटर से भी ऊँचाई पर है। रंग–बिरंगे सुगन्धित औषधीय क्षुप एवं भूर्ज़ (भोज के वृक्ष) इन बुग्यालों में देखने को मिलते है। देवदर्शनी के बाद पवित्रधाम बद्रिनाथ हैं।

**श्री बद्रिनाथ :** नर और नारायण पर्वतों के बीच में अलकनन्दा के पवित्र तट पर समुद्र की सतह से 3600 मीटर की ऊँचाई पर बद्रिनाथ धाम है। नारायण पर्वत की ओर में नीलकंठ हिमालय का चमकता हुआ हिमश्रृग एवं ऋषिगंगा का उद्‌गम स्थल है। स्कन्दपुराण में बद्रिनाथ धाम का उल्लेख विस्तृत रूप में मिलता है। यहाँ पर बौद्ध देवी देवताओं के मन्दिर भी है। तिब्बत सीमान्त क्षेत्र होने के कारण बुद्ध मतावलम्बी भोटिया जनजातियाँ का इन स्थानों में निवास होने के कारण बौद्ध संस्कृति भी देखने को मिलती है। बदरीवन के विषय में स्कन्ध पुराण में कहा गया है। कि यह उत्तराखण्ड हिमालय धार्मिक दृष्टि से जितना महत्वपूर्ण है उससे अधिक हिमालय की हिमनदों एवं इन घाटियों में पैदा होने वाली दिव्यौषधियों का विशेष महत्व है। गन्धमादन पर्वत एवं बद्रिवन क्षेत्र जड़ी–बूटियों के लिये विशेष उपयोगी है ऐसा उल्लेख मिलता है।

**यथा : सा गन्धमादन लता कुसुमौऽध लक्ष्मी।**
**सा दिव्यतुङ्ग हिमवन्नब श्रृंगपंक्ति।**
**गंगा च पुण्यसलिता किमुमन्नरम्यम्।**
**त्वामागतोऽस्मिशरंणं बदरी बनेडस्मीन्।।** *(स्कन्धपुराण)*

बद्रिनाथ धाम से वसुधारा एवं सरस्वती नदी के उद्‌गम मार्ग में थौलिंगमठ है। जो अब चीन के अधिकार क्षेत्र में है। ऐसी मान्यता हैं कि श्री बद्रिनाथ धाम पहले थौलिंगमठ में प्रतिष्ठापित थे। श्री बद्रिनाथ में भगवान् विष्णु का भव्य ऐतिहासिक एवं पौराणिक मन्दिर है। इसी स्थान पर गरम जल का तप्तकुण्ड है। काफी गरम पानी अलग स्त्रोतों से निकलता है। मन्दिर के आस पास नारद कुण्ड एवं पञ्चशिला है। जो कि नारद शिला, नरसिंघ शिला, वाराह शिला, गरूड़ शिला, मार्कण्डेय शिला के नाम से प्रसिद्ध हैं। अलकनन्दा के तट पर एक बड़े शिलाखण्ड पर ब्रह्मकपाल है। अनादिकाल से यहाँ पर पितरों का श्राद्ध एवं तर्पण किया जाता है।

**नारायण पर्वत :** नारायण पर्वत ही ऋषिगंगा का उद्‌गम स्थल हैं। इसी मार्ग में उर्वशी का मन्दिर है। नीलकंठ



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

शिखर की ऊँचाई 6597 मीटर है। अलकनन्दा एवं नीलकंठ हिमखण्ड के पीछे अलकापुरी है। बद्रिनाथ पुरी के आस पास से पांच धारायें निकलती है। सभी धारायें प्रायः नारायण पर्वत से निकलती है। उर्वशी धारा उर्वशी मन्दिर से निकल कर ऋषिगंगा में मिल जाती हैं। बाकी चार धारायें बद्रिनाथ पुरी के उत्तर की ओर नारायण पर्वत से निकल कर अलकनन्दा में मिल जाती है।

**मांणागांव** : अलकनन्दा की दूसरी तरफ 5 कि० मी० दूरी पर मांणा गांव है। पौराणिक आलेखों के आधार पर इसे मणिभद्रपुर या मणिभद्राश्रम कहा गया है। मांणा गांव की जन जातियो का रहन–सहन, खान–पान, रूप–रंग प्रायः तिब्बत के लोगों से मिलता है। इन्हें भोटिया के नाम से पहचाना जाता है। मांणा घाटी के समान दूसरी घाटी नीली धाटी है। दोनों धाटियों के मूल निवासियों को मार्छा (भोटिया) नाम से जाना जाता है। कुछ लेखकों का यह भी मानना हैं कि मरीचि के वंशजों को मार्च्छा बताया है जोकि हिमालय में बसे हैं। इन घाटियों का व्यापार पहले तिब्बत से सीधे होता था परन्तु तिब्बत पर चीन का अधिकार होने से यह कारोबार बन्द हो गया है। शासकीय अभिलेखों में भोटियों जनजातियों को पिछड़ी जनजाति आरक्षण हेतु घोषित किया गया है।

भोटिया (मार्छा) उत्तराखण्ड में जनजाति का विशेष स्थान है यह जनजाति गढवाल, कुमाऊं के उत्तरकाशी, चमोली तथा पिथौरागढ़ के सीमान्त भागों में कबीलेरूप में निवास करती है। मुख्यतया जांडगंग (जाहनवी) उत्तरकाशी जनपद, विष्णु गंगा, धोली, नीतीपास (चमोली जनपद) कटियागली, दारमा (पिथौरागढ़) आदि नदियों की घाटी में सदियों से रह रही है। तिब्बती भाषा में भोट पठार को कहते है। भोटान्तिक क्षेत्र ऐसे गांव है जिनकी ऊँचाई 4500 मीटर से भी अधिक है। जाड़ों में वे लोग निचली घाटियों में आ जाते हैं। जाड़गंगा एवं धौली घाटी में रहने वालों को मारछा, तोलछा तथा शौका या शड़का, गौरी घाटी में रहने वालों को तोलछा तथा जोहारी कहते हैं। दरमा पट्टी में रहने वालों को दरमी कहते हैं। अधिकतर मारछा एवं शौका जनजातियों के इतिहास में मतमतान्तर है। लेकिन अधिकतर शोधकर्ताओं का मत है कि भोटिया हिमालय के मूलनिवासी है। तथा भील, किरात, आखेटक़ एवं पशुचारको का उल्लेख पौराणिक ग्रन्थों, वैदिकग्रन्थों एवं संहिता ग्रथों में हिमालय की जड़ी बूटियों के साथ उल्लेख मिलता है। भील–किरात जनजाति के लोग पशिचम हिमालय की पहाड़ियों में पशुचारण (वकरवाल) का काम करते थे। तथा धीरे–धीरे तिब्बतियों के सम्पर्क में आगये और उनके साथ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। भोटान्तिक प्रदेश भागीरथी से जाड़गंगा, विष्णुगंगा (धौली) घाटी के मारछा (नीति–माणा) केदार देवघाट शिखरपुंज, गन्धमादन शिखरपुंजो, में ये योग बसे हुये है। इनके जीवन एवं रहन–सहन में अनेक भिन्नता पाई जाती हैं। इनका मुख्याव्यवसाय भेड–बकरी पालन एवं ऊन उद्योग है। मारछा जाती के लोगो का प्रमुख देवता घण्टाकर्ण है। इस देवता की उपासना के लिये ऊँचे खम्बों में घण्टें लटकाये जाते है। तोलछाओं में घण्टाकर्ण के साथ–साथ धमसाली देवता व वम्पा नाग की पूजा भी की जाती है। वनों गिरिद्वारों के रक्षकों के रूप में यक्षों जिसमें मणीभद्र प्रमुख है कि पूजा की जाती है। भोटिया लोगों में बौद्ध धर्म का अधिक प्रभाव है। तोरदन (गुम्पा) की परिक्रमा कर ॐ मणी पदेम हुँम् के साथ मणी चक्र घुमाते है। अपने घरो के आगे ध्वज लगाते है।

**ब्यास गुफा** : मांणा गांव के आस–पास कई बड़ी–बड़ी गुफायें है। प्राचीन काल में ये गुफा ऋषि–मुनियों की तपस्थली रही है। कहा जाता है कि वेदव्यास ने महाभारत की रचना इसी गुफा से की थी। मांण गांव से 3 कि०मी० की दूरी पर हिमानी से सरस्वती नदी निकलती है। यहाँ पर अलकनन्दा से सरस्वती नदी संगम करती है। इस स्थान को केशव प्रयाग कहते हैं।

**बसुधारा** : इसी संगम से पुल पार कर बसुधारा को रास्ता चला गया है। मांणा गांव से बसुधारा 4 कि०मी० की दूरी पर है। इस क्षेत्र का सबसे बड़ा जलप्रताप वसुधारा है। इस प्रताप की धारा 125 मी० की ऊँचाई से गिरती है। बसुधारा का चारों ओर का दृश्य अत्यन्त रमणीक है। यहाँ पर भोजपत्र के वन एवं सिमरू, धूपलकड़ी (जुनिपर) की झाड़ियाँ हिमानी के समीप दिखाई देती है। बसुधारा से अलकापुरी साफ दिखाई देती है। यही से सतोपन्थ एवं चौखम्बा



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

की सनातन हिमाच्छादित शैलों के दर्शन होते हैं। नीलकंठ पर्वत का पृष्ठ भाग समीप से स्पष्ट दिखाई देता है।

**लक्ष्मीवन-अलकापुरी** : बसुधारा से लगभग 4 कि०मी० भोजपत्र के घने जंगल हैं। भूर्ज (भोज) के वृक्ष 3,900 मी० की ऊँचाई तक चले गये है। भूर्जपत्र धार्मिक कार्यो तान्त्रिक कार्यो एवं घरेलू कार्यो में प्रयोग किया जाता है। छाल का उपयोग कागज के रुप में भी किया जाता है। लक्ष्मीवन के बुग्यालों को पार करने पर 3-4 कि०मी० की दूरी पर अलकापुरी हैं। यहाँ पर छोटे–छोटे हिमनदों की कई धारायें इन ग्लेशियरों से प्रवाहित होती है। यही कालिदास के मेघदूत में वर्णित अलकापुरी है। यही शिवजटा है जहाँ से पवित्र हिमानियों की कतिपय धाराये निकल कर अलग घाटियों में प्रवाहित होती है। केदार खण्ड में वर्णित औषधिप्रस्थनगर, गन्धमादन, अलकापुरी, सतोपन्थ, कैलास, नन्दाघुण्टी, मानसरोवर, इन्हीं हिमशेलों में स्थित हैं।

**यथा : नन्दापर्वत मारभ्य यावत्काष्ठगिरिर्भवेत्।**
**तावत्केदारजं क्षेत्र, शिबमन्दिरमुत्तमम्।।** *(केदारखण्ड)*

यह औषधि प्रस्थनगर हिमवान् का वह भाग हैं जोकि चौखम्बा हिमालय के नीचे खामण्डना या रणमण्डना के सौम्य स्थान हैं, तथा इसके दोनों ओर केदारनाथ तथा बद्रिनाथ हैं। इस क्षेत्र में पञ्चकेदार, त्रिजुगीनारायण, शैलपवांलीकांठा, खतलिंग हिमानी, सहस्त्रुताल, महस्त्रताल, बन्दरपुच्छ, तपोवन, नन्दनवन, गोमुख, गंगा यमुना, मन्दाकिनी, अलकनन्दा, काली आदि पावन नदियों का उद्‌गम स्त्रोत है। ये सभी स्थान प्राचीन कालीन औषधिप्रस्थनगर कहलाते हैं।

**सतोपन्थ** : चक्रतीर्थ से 3-4 कि०मी० की दूरी पर त्रिभुजाकार सरोवर (ताल) 4500 मी० ऊँचाई पर स्थित है। चारों ओर हिमानी की अनूठी सुन्दरता देखने को मिलती हैं। सतोपन्थ ताल क्षीर सागर का दूसरा स्वरूप है। तीनों कोण ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की तपस्थली कही जाती है। बद्रिनाथधाम से सतोपन्थ–स्वर्गारोहण की दूरी एवं उँचाई निम्न तालिका में स्पष्ट की गई है। यथा :

**श्री बद्रिनाथ धाम से सतोपन्थ मार्ग**

| क्र. सं. | स्थान | ऊँचाई मी० | दूरी कि०मी० | कुल दूरी कि०मी० |
|---|---|---|---|---|
| 1. | बद्रिनाथ | 3110 | ..... | ..... |
| 2. | मांणा | 3200 | 5 | 5 |
| 3. | बसुधारा | 3400 | 3 | 8 |
| 4. | लक्ष्मीबन | 3350 | 4 | 12 |
| 5. | अलकापुरी (चक्रतीर्थ) | 4000 | 9 | 21 |
| 6. | सतोपन्थ | 4500 | 4 | 25 |
| 7. | स्वर्गारोहण | 6000 | 10 | 35 |

ऋषिकेश से सीधे बद्रिनाथ देवप्रयाग, श्रीनगर, रूद्रप्रयाग, जोशीमठ, मार्ग से 300 कि. मीटर की दूरी पर स्थित है। कोटद्वार एवं नैनीताल, रानीरवेत से भी बद्रिनाथ मोटर मार्ग है। ये सभी स्थान जड़ी–बूटियों के लिये भी महत्वपूर्ण है। संक्षिप्त जानकारी यहाँ पर उत्तराखण्ड के भौगोलिक एवं प्रमुख स्थानों के प्रसंग में दी जा रही है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## कोटद्वार से श्री केदारनाथ मार्ग

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई मी० | दूरी कि० मी० | कुल दूरी कि०मी० |
|---|---|---|---|---|
| 1. | कोटद्वार | 397 | ..... | ..... |
| 2. | दोगड्डा | 610 | 16 | 16 |
| 3. | गुमखाल | 1811 | 19 | 35 |
| 4. | सतपुली | 680 | 21 | 56 |
| 5. | पौड़ी | 1772 | 52 | 108 |
| 6. | श्रीनगर | 579 | 29 | 137 |
| 7. | रूद्रप्रयाग | 610 | 34 | 171 |
| 8. | श्री केदार नाथ | 3600 | 84 | 255 |

(श्री बद्रिनाथ केदारनाथ से बद्रिनाथ सतपुली, श्रीनगर होते हुये 330 कि०मी० है।)

नैनीताल से श्री केदारनाथ एवं श्री बद्रिनाथ जाने के दो रास्ते हैं। एक मार्ग रानीखेत, द्वारहाट से गैरसैण कर्णप्रयाग होकर जाता है। तथा दूसरा रास्ता अल्मोड़ा, कोसानी से चला गया है।

## नैनीताल से केदारनाथ एवं बद्रिनाथ

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई मी० | दूरी कि०मी० | कुल दूरी कि०मी० |
|---|---|---|---|---|
| 1. | नैनीताल | 1829 | ..... | ..... |
| 2. | भुवाली | 1800 | 11 | 11 |
| 3. | रानीरवेत | 1830 | 48 | 59 |
| 4. | द्वारहाट | 1313 | 38 | 97 |
| 5. | चौरवुटिया | 1002 | 21 | 118 |
| 6. | पांण्डुरवाल | 1750 | 20 | 138 |
| 7. | गैरसैणं | 1313 | 18 | 156 |
| 8. | कर्णप्रयाग | 795 | 56 | 212 |
| | (कर्णप्रयाग से सीधा मोटर मार्ग जोशीमठ से होते हुये बद्रिनाथ को चला गया है। कर्णप्रयाग से बद्रिनाथ की दूरी 125 कि०मी० है।) | | | |
| 9. | रूद्रप्रयाग | 610 | 31 | 243 |
| 10. | श्री केदारनाथ | 3600 | 84 | 327 |

नैनीताल उत्तरी भारत का प्रमुख पर्यटक स्थल है। नैनी झील 1434 मीटर लम्बी 463 मीटर चौड़ी है। यहाँ पर नैनी देवी का प्रमुख मन्दिर है। रानीरवेत भी अल्मोड़ा जनपद का पर्यटक केन्द्र है। यहाँ से हिमालय की भव्य कतारबद्ध दृश्यावली देखने को मिलती है। रानीरवेत से 38 कि. मी. दूरी पर द्वारहाट पड़ता है। द्वारहाट से एक मार्ग दूनागिरी को चला गया है। दुनागिरी 2400 मीटर की ऊँचाई पर है। कुछ समय तक कत्यूरी राजाओं की यहां पर राजधानी रही है। बाद में द्वारहाट चन्द राजाओं की राजधानी बन गई। द्वारहाट से 21 कि. मी. दूरी पर चौखुटिया गांव है। यहाँ पर रामनगर से कर्णप्रयाग जाने वाली सड़क मिल जाती है। पाण्डुखाल के बाद गैरसैण है। चारों ओर सुन्दर पहाड़ियाँ समतल स्थान है। यह स्थान चमोली जनपद में पड़ता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कर्णप्रयाग** : गैरसैण से 48 कि. मी. दूरी पर कर्णप्रयाग है। यहाँ पर अल्मोड़ा, कोसानी, ग्वालदम, ऋषिकेश, से आने वाली सड़के मिलती है। यहाँ से केदारनाथ जाने के लिये रूद्रप्रयाग या गोपेश्वर जाना पड़ता है तथा बद्रिनाथ जाने के लिए पीपलकोटी एवं जोशीमठ जाना पड़ता है। एक अन्य मार्ग नैनीताल, भुवाली, अल्मोड़ा, कौसानी, वैजनाथ, ग्वालदम कर्णप्रयाग होते हुये केदारनाथ एवं बद्रीनाथ चला गया है। नैनीताल से कर्णप्रयाग की दूरी करीब 250 कि. मी. है। मार्ग में अल्मोड़ा से कोसानी लगभग 50 कि.मी. है। 14वीं शताब्दी तक चन्द राजाओं ने चम्पावत से अल्मोड़ा तक शासन किया। 1560 में राजा भिष्मचन्द ने अल्मोड़ा को अपनी राजधानी बनाया। अल्मोड़ा के पास कटारमल, विन्दसर आदि पर्यटक स्थान है। अल्मोड़ा से 38 कि.मी. पर जागेश्वर का सुप्रसिद्ध मन्दिर है। जागेश्वर में देवदार के घने वन है। अधिकांश मन्दिर तेरहवीं सदी के बताये जाते है। कोसानी अल्मोड़ा से 51 कि.मी. की दूरी पर है। यह स्थान 1900 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। चारों ओर वुरांस, (रोडोडेन्ड्रोन) बांझ (ओक), देवदार (सिड्रस), कैल (पाईन) आदि के हरे–भरे वन एवं हिमालय का भव्य दृश्य दिखाई देता है। कोसानी से 20 कि.मी. की दूरी पर वैजनाथ है। वैजनाथ गरूड़ घाटी में गोमती तट पर बसा हैं। यह घाटी बहुत रमणीक एवं समतल है। यहाँ के मन्दिर भी तेरहवीं सदी के बने हुये है ऐसा विश्वास हैं। इन मन्दिरों में पार्वती, गणेश, सूर्य, ब्रह्मा एवं चण्डिका की ऐतिहासिक एवं पुरातत्व महत्व की आकर्षक मूर्तियाँ हैं। यह कविवर सुमिन्त्रानन्दन पन्त की जन्मस्थली है। वैजनाथ भी कभी कत्यूरी वंश की राजधानी रही है। वांगनाथ मन्दिर गोमती और सरयू नदी कें संगम पर बसा हुआ है। वांगनाथ मन्दिर प्राचीन एवं ऐतिहासिक महत्व का है। पिंडारी और सुन्दर डूंगा ग्लेशियर सैलानियों के लिये महत्वपूर्ण आकर्षण है। वेरीनाग चाय बगानों के लिये प्रसिद्ध है। महरूड़ी (धरमधर) में केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसन्धान परिषद् (भारत सरकार) नई दिल्ली का कस्तूरा प्रजनन अनुसन्धान केन्द्र है। चम्पावत, लोहा घाट, मुनस्यारी और गणनाथ आदि अनेक ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थल हैं।

**ग्वालदम** : बैजनाथ से एक मार्ग वागेश्वर ।पडारा ग्लेसियर को चला गया है तथा 3 कि. मी. दूरी पर से एक मार्ग ग्वालदम, कर्णप्रयाग को चला गया है। ग्वालदम तक 11 कि. मी. की चढ़ाई का मार्ग है। ग्वालदम 2100 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ से त्रिशूल हिमालय की चोटियाँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। ग्वालदम से ही मार्ग रूपकुण्ड को चला गया है। रूपकुण्ड 4800 मीटर की ऊँचाई पर त्रिशूल हिमालय की गोद में स्थित है। जून जुलाई में कुण्ड के कुछ भाग का बर्फ पिघलता है अन्यथा यह बर्फ से ढका रहता है। यही से हिमानी मार्ग होमकुण्डी एवं नन्दाघुण्टी को जाता है। रूपकुण्ड के लिये थराली से भी जाया जाता है। थराली से देवाल 12 कि.मी. है। तथा देवाल से रूपकुण्ड 62 कि.मी. पैदल मार्ग है। इन पैदल मार्गो के रास्ते में अनेक किस्मों की जड़ी बूटियाँ पाई जाती है। यह एलपाईन जोन कहलाता है। जो कि 3,300 मीटर से लेकर 6000 मीटर की ऊँचाई तक चला जाता है। इन बुग्यालों में वृक्ष नहीं के बराबर होते है केवल भूर्ज (वेटुला), सिमरू (रोडोडेन्ड्रोन), ढेलू (जुनिपर), की झाडियां पाई जाती है। विस्तृत विवरण उत्तराखण्ड की भौगोलिक जलवायु एवं वन के सन्दर्भ में स्पष्ट किया जा सकेगा। यहाँ पर उत्तराखण्ड के एलपाईन एवं सवएलपाईन हिमालय के जो जोन (क्षेत्र) हैं उनका ट्रेकिंग के साथ जड़ी–बूटियों के सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान कार्य हेतु वनौषधिदर्शिका (गाईड) के रूप में विशेष महत्व है। इन ट्रेकिंग मार्गो (पैदल मार्गो) का विवरण निम्न प्रकार से है।

## देवाल से रूपकुण्ड पैदल मार्ग

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | देवाल | 1220 | 0 | 0 |
| 2. | फालदियागांव | 1354 | 8 | 8 |
| 3. | मुन्दोली | 2134 | 9 | 17 |
| 4. | वाण | 2439 | 14 | 31 |
| 5. | गैरोलीपातकी | 3049 | 9 | 40 |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 6. | पातरनचौनी | 3650 | 11 | 51 |
| 7. | रूपकुण्ड | 4790 | 10 | 61 |

एक दूसरा पैदल मार्ग देवाल से रूपकुण्ड को जाता है। यह स्थान भी जड़ी–बूटियों के सर्वेक्षण के लिये उपयोगी है।

## द्वितीय मार्ग देवाल से रूपकुण्ड

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | देवाल | 1218 | 0 | 0 |
| 2. | वागरीगाढ | 2000 | 5 | 5 |
| 3. | मुंडोली | 2244 | 5 | 8 |
| 4. | लोहाजंग | 2300 | 2 | 10 |
| 5. | बेदनी बुग्याल | 3600 | 10 | 20 |
| 6. | विरूतोला | 4600 | 8 | 28 |
| 7. | रूपकुण्ड | 4700 | 5 | 33 |

इसी प्रकार कर्णप्रयाग से जाकर नन्दप्रयाग के पास से वापिस लौट सकते है। रूपकुण्ड से वापिस नन्दप्रयाग आने का मार्ग भी निम्न प्रकार से है।

## रूपकुण्ड से नन्दप्रयाग पैदल मार्ग

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी. कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | रूपकुण्ड | 4700 | 0 | 0 |
| 2. | ज्यूरियाघाट | 5335 | 5 | 5 |
| 3. | होमकुण्डी | 4061 | 8 | 13 |
| 4. | सुतोल | 2192 | 18 | 31 |
| 5. | घाट | 1331 | 26 | 57 |
| 6. | नन्दप्रयाग | 914 | 19 | 76 |

गंगोत्री से श्री केदारनाथ पैदल मार्ग से जाने से अनेक प्रकार के नदी, नाले, चढ़ाई उतराई, गांव मार्ग में पड़ते है। इन स्थानों पर विभिन्न जलवायु के अनुसार पैदा होने वाली जड़ी–बूटियाँ मिलती है। जड़ी–बूटि अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण हेतु इन मार्गो द्वारा ही यात्रा करनी चाहिये। तभी उत्तराखण्ड की वनौषधियों का पता लगाया जा सकता है।

## गंगोत्री से केदारनाथ पैदल मार्ग विवरण

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | गंगोत्री | 3200 | – | – |
| 2. | भटवारी | 1680 | 71 | 71 मोटरमार्ग |
| 3. | मालाचट्टी | 1478 | 28 | 8 पैदलमार्ग |
| 4. | सौर की गाठ | 1218 | 5 | 12 पैदलमार्ग |
| 5. | फुयालु | 2286 | 5 | 17 पैदलमार्ग |
| 6. | घूणाचट्टी | 1500 | 3 | 20 पैदलमार्ग |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 7. | वेलाक (कूशकल्याणी) | 2500 | 5 | 25 पैदलमार्ग |
| 8. | पंगराणा | 2100 | 5 | 30 पैदलमार्ग |
| 9. | झालाचट्टी | 2500 | 4 | 34 पैदलमार्ग |
| 10. | अंगूठा | 2000 | 3 | 37 पैदलमार्ग |
| 11. | थातीकठूर (वूंठाकेदार) | 1500 | 3 | 40 पैदलमार्ग |
| 12. | सोताचट्टी | 1300 | 4 | 44 पैदलमार्ग |
| 13. | भैरोघाटी | 2439 | 3 | 47 पैदलमार्ग |
| 14. | घुत्तू | 1524 | 9 | 56 पैदलमार्ग |
| 15. | गवांनाचट्टी | 1600 | 1 | 57 पैदलमार्ग |
| 16. | दो फन्द | 2896 | 5 | 61 पैदलमार्ग |
| 17. | पंवालीकांठा | 3900 | 4 | 65 पैदलमार्ग |
| 18. | किनकोलियाखाल | 3700 | 4 | 69 पैदलमार्ग |
| 19. | मग्गूचट्टी | 3049 | 2 | 71 पैदलमार्ग |
| 20. | त्रिजुगीनारायण | 2000 | 5 | 76 पैदलमार्ग |
| 21. | सोनप्रयाग | 1900 | 3 | 79 पैदलमार्ग |
| 22. | गौरीकुण्ड | 2000 | 5 | 84 पैदलमार्ग |
| 23. | केदारनाथ | 3600 | 14. | 98 पैदलमार्ग |

टिहरी, धनशाली घुत्तू, से भी भिलंगना घाटी से होकर श्री केदारनाथ जाया जाता है। गंगोत्री से भटवारी, भटवारी से कूशकल्याण, बूठाकेदार होते हुये पैदल मार्ग से घुत्तू पहुँच जाता है। यहीं से पंवाली कांठ, किनाकोलियारवाल, त्रिजुगीनारायण होते मन्दाकिनी घाटी केदारनाथ पैदल मार्ग है। त्रिजुगीनारायण होते मन्दाकिनी–घाटी केदारनाथ पैदल मार्ग है।

भिलंगना घाटी का खतलिंग हिमानी जड़ी–बूटियों एवं प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर होने के वनौषधि सर्वेक्षण एवं वन सम्पदा के लिये यह घाटी प्रसिद्ध है। संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है।

## ऋषिकेश से खतलिंग मार्ग

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी. कि.मी. | कुल दूरी कि. मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | ऋषिकेश | 340 | – | – |
| 2. | टिहरी | 770 | 83 | 83 |
| 3. | घनशाली | 990 | 35 | 118 |
| 4. | घुत्तू | 1530 | 31 | 149 मोटरमार्ग है |

घुत्तू से एक पैदल मार्ग पंवाली कांठा होते हुये त्रिजुगीनारायण को चला गया है। तथा दूसरा मार्ग गंगी होते हुये खतलिंग एवं सहस्त्रताल को चला गया है।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 5. | गंगी | 2600 | 20 | 20 पैदल मार्ग |
| 6. | कल्याणी | 2700 | 6 | 26 " |
| 7. | विरादा | 2900 | 3 | 29 " |

यहाँ से एक मार्ग तड़ीउडयार (गुफा) होते हुये सहस्त्रताल को चला गया है तथा दूसरा मार्ग भिलंगना के उद्‌गम स्थल हिमानी ग्लेशियर को चला गया है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# मानचित्र भागीरथी एवं जमुनाधाटी

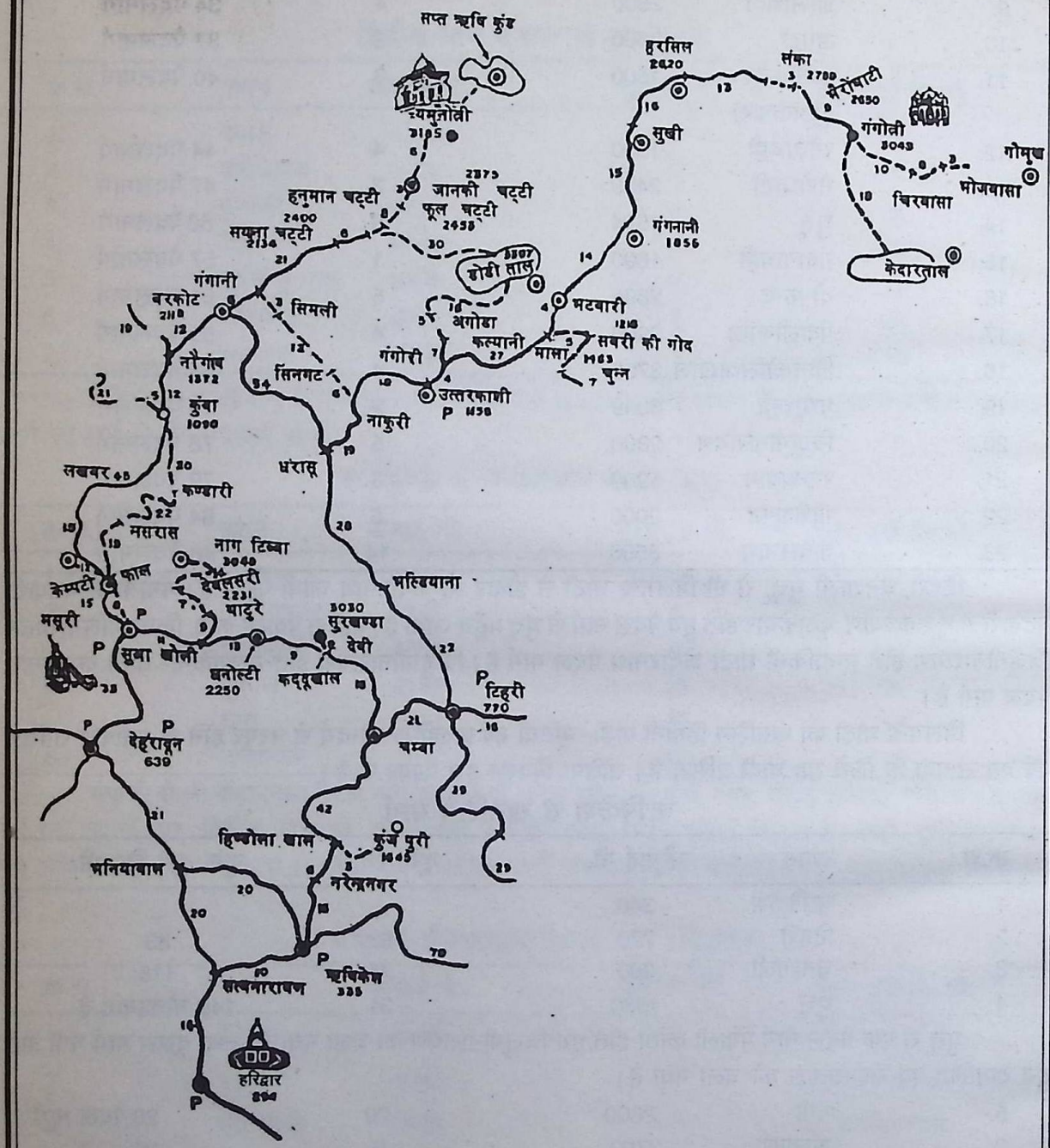




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 8. | खारसोली | 2900 | 7 | 36 | " |
| 9. | पाचरी सैंण | 2900 | 2 | 38 | " |
| 10. | भेलवागी | 3200 | 3 | 41 | " |
| 11. | तामाकुण्ड | 3500 | 4 | 45 | " |
| 12. | खतलिंग | 3700 | 3 | 48 | " |

खतलिंग ग्लेशियर जाने के लिये गंगी अन्तिम आबादी वाला गांव है। यहाँ पर भील सरोवर है जो कि कुन्याली बुग्याल से प्रारम्भ होता है। खतलिगं से भिलंगना घाटी प्रारम्भ होती है जो कि टिहरी तक चली गई है। टिहरी में भिलंगना नदी भागीरथी से संगम करती है। बूठाकेदार से वालखिल्ल नदी आती है जो कि पिलखी (वौंर) के पास भिलंगना से संगम करती है। इस घाटी की प्रमुख नदियाँ है जिसे वालगंगा (वालखिल्ल) एंव भिलंगना कहते हैं। बालगंगा सहस्त्रताल के पूर्वी सिरे से निकल कर बूठाकेदार थातीकठूर एवं केमर से होती हुई वौर (पिलखी) में भिलंगना से संगम करती है। इस प्रकार भिलंगना खतलिंग से टिहरी तक लगभग 140 कि.मी. की दूरी तय कर अन्त में भागीरथी में संगम करती है। आज एशिया का सबसे बड़ा डाम टिहरी बांध का निर्माण इसी स्थान में किया जा रहा है। पौराणिक गाथा के अनुसार भृगु एवं वालखिल ऋषियों नें इन हिमशैलों के समीप बैठकर तपस्या की इसीलिये इन हिमशैलों से प्रवाहित होने वाली नदियों का नाम वालखिल एवं भिलंगना है। यह घाटी 7000 मीटर की ऊँचाई से प्रारम्भ होकर 600 मी. की ऊँचाई तक टिहरी में समाप्त हो जाती है। भिलंगना के उद्‌गम स्थल पर सतेश्वर लिंग एवं कोटेश्वरलिंग (खतलिंग) नाम की दो चोटियाँ हैं। जिसे स्फटिकलिंग (फटिंग पिठान) कहते हैं। आक्रमण के बाद उत्तर भारत के मूल निवासी भिल्ल उत्तर की ओर पलायन किये और इस घाटी में बस गये। भृगु ऋषि की तपस्थली होने के कारण नदी का नाम भिलंगना पड़ा है, ऐसी लोक मान्यतायें हैं। केदारखण्ड में खतलिंग हिमानी शिव जी का क्रीडास्थल माना गया है।

**यथा : ''भिलंगना इतिख्यात पर्वतों तीव्र सुन्दरः''।।** *(केदारखण्ड)*

**भिलंगना घाटी का तीर्थ-खतलिंग-सहस्त्रताल :** गंगी से आगे प्राचीन गौरव गाथा सुनाते हुये भग्नावशेष भगवान शंकर की अर्धागिनी मां रूद्रा देवी का मन्दिर है। यह स्थान गंगी से खतलिंग जाते हुये 10 कि. मी. की दूरी पर विरोद नामक स्थान पर है। भारत–चीन सीमा विवाद से पूर्व खतलिंग ग्लेसियर मार्ग से तिब्बत से व्यापार किया जाता रहा है। इस स्थान पर तिब्बत जाने वाले व्यापारी देवी की पूजा कर आगे को प्रस्थान करते थे। अन्य स्थानों में सोमेश्वर, घण्टाकर्ण एवं शिव का प्राचीन अवशेष मन्दिर है। कल्याणी मार्ग जाते हुये वाम चोटी पर सहस्त्रताल है। जहाँ वृत्ताकार, त्रिभुजाकार, षष्ठभुज, अष्ठभुज आयात के अनेक महाताल, तलैया हैं। खतलिंग ग्लेशियर के दाहिनी ओर मसूरताल (महस्त्रताल) हैं जो कि दूधगंगा ग्लेशियर की दाहिनी ओर स्थित हैं। इस ताल की परिधि लगभग 4 कि.मी. की है। मसूरताल से 3 कि.मी. आगे हिमानी मार्ग से चलकर वासुकीताल है। वासुकीताल से केदारनाथ का मन्दिर दिखाई देता हैं। बूठाकेदार से पिन्स्वाड़ा, गंगी होते हुये खतलिंग को पैदल मार्ग चला गया है। मार्ग में क्यारीवुग्याल, कूशकल्याणी आदि रमणीक स्थान आते हैं। इन तालों के आस–पास अनेक किस्मों के रंग–बिरंगें सुगन्धित पुष्प ब्रह्मकमल, फेनकमल, सुगन्ध पादप जून से सितम्बर तक पुष्पित होते हैं। भिल्ल महादेव का भी मंदिर गंगी में है।

**यथा : भिल्ल रूपी महादेवः कालकम्बलबस्त्रकः।**
**वर्तते मध्यरान्त्रीतु नानाभिल्लगणैर्वृतः।।** *(केदारखण्ड)*

इस क्षेत्र में औषधीय उपयोगी माटयाबुग्याल, कन्याली वुग्याल आदि कतिपय बुग्याल हैं। इन सभी क्षेत्रों का विस्तृत रूप से वनौषधि सर्वेक्षण की आवश्यकता है। उत्तरकाशी जनपद का डोडीताल, चमोली जनपद, का विरहीताल, घने जंगलों से आच्छादित है।

**हरकी दून (घाटी) :** उत्तराखण्ड के पश्चिमी आंचल में स्थित हिमाचल प्रदेश इस घाटी की सीमा बनाती है। उत्तरकाशी के पश्चिम भाग से टौन्स नदी बहती है। जोकि विकासनगर के पास यमुना से संगम करती है। यह क्षेत्र भी जड़ी–बूटियाँ के लिये महत्वपूर्ण है। यहाँ के निवासी जौनसारी कहलाते हैं। ये आर्यवंशज माने जाते हैं। ये



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लोग कौरवों के सबसे बड़े भाई दुर्योधन की पूजा करते है। ऐसी मान्यता है कि कौरवों के महाभारत युद्ध में जो वीरयोद्धा था वह इसी क्षेत्र का था। पुरोला, जरमोला, नेटवार चारों ओर अच्छे किस्म के सेव, अखरोट, नासपाती, आड़ू, खुमानी प्रचुर मात्रा में मिलते है। चकराता, जौनपुर पोस्त, अदरख एवं आलू की खेती के लिये प्रसिद्ध हैं।

पुरोला से हरकीदून पैदल मार्ग है। सारा क्षेत्र सदाहरित वनों से आच्छादित है।

## देहरादून से हरकी दून घाटी

| क्र.स. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | देहरादून | 701 | | |
| 2. | मसूरी | 1922 | 36 | 36 मोटर मार्ग |
| 3. | पुरोला | 1524 | 97 | 133 |
| 4. | जरमोला | 1800 | 10 | 143 मोटर मार्ग |
| पैदल मार्ग है जो कि रमणीक एवं प्राकृतिक सुषुमा से भरपूर है । | | | | |
| 5. | नेटवाड़ | 1300 | 16 | 16 पैदल मार्ग |
| 6. | तालुका | 2000 | 19 | 35 |
| 7. | ओसला | 2100 | 11 | 46 |
| 8. | हरकीदून | 2415 | 8 | 54 |

**मदमहेश्वर घाटी :** मदमहेश्वर पांच केदारों में से एक है। गुप्तकाशी से तीन कि.मी. दूरी नालाचट्टी से मन्दाकिनी पार कर कालीमठ से मदमहेश्वर का पैदल मार्ग है। कालीमठ से रांसी, गौंडार एवं मदमहेश्वर 30 कि. मीटर की दूरी पर 3300 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यह घाटी भी जड़ी–बूटियाँ के सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान के लिये उपयुक्त है। गोंडार इस घाटी का अन्तिम गांव है।

**रूद्रनाथ घाटी :** गोपेश्वर से रूद्रनाथ पैदल मार्ग है। यह घाटी भी प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर है। यह स्थान भी पंचकेदारों में से एक है। उरगम इसी घाटी का अन्तिम गांव हैं।

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई मी. | दूरी कि.मी. | कुल दूरी कि.मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | गोपेश्वर | 1500 | - | - |
| 2. | गंगोलागांव | 1400 | 3 | 3 |
| 3. | पनार | 2286 | 8 | 8 पैदल मार्ग |
| 4. | नैल | 3354 | 5 | 13 |
| 5. | रूद्रनाथ | 2400 | 4 | 17 |
| 6. | डमुक | 2134 | 12 | 29 |
| 7. | कलगोंट | 2073 | 5 | 34 |
| 8. | किमांणा | 2973 | 8 | 42 |
| 9. | पल्ला | 2073 | 3 | 45 |
| 10. | उरगम | 2134 | 8 | 53 |
| 11. | हेलंग | 1524 | 9 | 62 |

गोपेश्वर रूद्रनाथ होते हुये हेलंग पैदल मार्ग आ जाता है। हेलंग से बद्रिनाथ को जाने के लिये मोटर मार्ग है। जड़ी–बूटियों एवं ट्रेकिंग के लिये कुंआरी पास बहुत उपयोगी स्थल है। दूसरी ओर नन्दादेवी एवं तपोवन की सुन्दर घाटी के दृश्य देखने को मिलते हैं। इनमें नन्दादेवी, दूनागिरी, बेथारतोली, चंगा, वंगा एवं हाथीपर्वत, डेलीसेरा आदि



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रमणीक स्थान हैं। यह घाटी जड़ी–बूटियों के अनुसन्धान के लिये उपयोगी है। कुंआरी पास ट्रेक नन्दप्रयाग,घाट, रांमणी, सरकोट, पातली, पाणाराणी, सांणातोली, डोभामीटी होते हुये कुवांरी पास नन्दप्रयाग से 50 किलोमीटर की दूरी पर है। कुंआरी पास की ऊँचाई 4300 मीटर है। कुआंरी पास से तपोवन की दूरी 21 कि. मीटर है। तपोवन से जोशीमठ आ सकते हैं। जोशीमठ से ओली, चित्रकांटा गैलगठ होते हुये कुंआरी पास जाने का भी मार्ग है। इस पैदल मार्ग की दूरी लगभग 32 कि॰ मीटर है।

**मध्य हिमालय का सौन्दर्य स्थल हेमकुण्ड (लोकपाल) एवं फूलों की घाटी जहाँ इन्द्रादि देवताओं का निवास है :** यों तो प्रकृति का सौन्दर्य जगह–जगह बिखरा पड़ा है, पर जहाँ नैसर्गिक सौन्दर्य के साथ धार्मिक आस्था भी जुड़ जाय वह स्थान निश्चित ही विशिष्ठ हो जाता है। ऐसा एक रमणीक स्थल हेमकुण्ड (लोकपाल) है, जहाँ पर चांदी से ढकी पर्वतमालायें एवं सरोवर विद्यमान हैं। झूलते एवं झूमते हिमनद (ग्लेसियर) हैं।

उत्तर प्रदेश के चमोली जनपद में स्थित भ्यूंडार घाटी जिसे फूलों की घाटी कहते हैं। इस घाटी के नैसर्गिक स्थलों में हेमकुण्ड (लोकपाल), फूलों की घाटी एवं काकभूषण्डी ताल प्रमुख हैं। इस घाटी के लिए बद्रीनाथ मार्ग में पाण्डुकेदार के समीप स्थित गोविन्द घाट से 7 किलोमीटर पैदलमार्ग तय करके भ्यूंडार नामक अन्तिम गांव पडता है। गांव के दाहिनी तरफ से एक सहायक नदी गौरी पर्वत के हिमश्रृंग से धिरे काकभूषण्डी ताल से निकल कर भ्यूंडार नदी में मिल जाती है। काकभूषण्डी तिकोनाताल 16 हजार फिट की ऊँचाई पर स्थित है। ताल का जल इतना स्वच्छ है कि ताल पर बिछी पत्थरों की स्लेटें साफ नजर आती है। इन तालों की विशेषता यह है कि यह अपना रंग बदलते रहते है। गहरा नील, श्वेत, हरा या पारदर्शी निर्मल जल स्वयं दृष्टिगोचर होता है। नन्दाष्टमी पर स्थानीय ग्रामीण लोग देवताओं की ढोली लेकर स्नान पूजा कर मनौती मांगते है। काकभूषण्डी ताल पहुँचने के लिए मार्ग में एक रात का पड़ाव आता है। ऐलपाईन टेंट एवं खाद्य साम्रगी साथ में रखकर इस स्थान के लिए प्रस्थान करना पड़ता हैं। फूलों की घाटी एवं हेमकुण्ड (लोकपाल) जाने के लिए घघरिया पड़ाव आता है जो कि भ्यूंडार गाँव से करीब 7 किलोमीटर की दूरी पर हैं। इस स्थान पर विश्राम के लिए गुरुद्वारा, वन विभाग का विश्राम भवन एवं गढ़वाल पर्यटक विभाग का विश्राम गृह है। घंघरियाँ के पास से एक रास्ता बांयी तरफ को पुष्पावती नामक हिमनद के साथ–साथ फूलों की घाटी एवं कामेत को चला गया है। दाहिनी तरफ से दूसरा रास्ता लोकपाल (हेमकुण्ड) को चला गया हैं। लोकपाल (हेमकुण्ड) ताल लगभग 14 हजार फिट की ऊँचाई पर स्थित है। इसी स्थान से टिप्रा ग्लेशियर प्रारम्भ होता है। भोटिया लोग कभी–कभी इस दर्रा (पास) को पार करके नीतीपास होते हुए जोशीमठ पहुँच जाते है। हेमकुण्ड से हेमगंगा का उद्‌गम होता हैं। जो कि घंगरिया में पुष्पावती नदी से संगम कर भ्यूंडारगंगा कहलाती है। यह स्थान चौदह हजार फिट की ऊँचाई पर स्थित होने के कारण प्रकृति की अनुपम दृश्यावली नजर आती है। इस स्थान पर पहुँच कर अभूतपूर्व आनन्द की अनुभुति होती है। इन तालों के चारों ओर रंग बिरंगें फूलों की प्राकृतिक छटा देखने को मिलती है।

पौराणिक ग्रन्थों में उत्तराखण्ड को देवलोक कहा गया है। जहाँ पर शिव पार्वती सहित इन्द्रादि देवताओं का निवास है। गन्धमादन पर्वतों का समूह जिसमें गौरी पर्वत, टिप्रा ग्लेशियर, नीलकंठ ग्लेशियर एवं बद्रीकाश्रम आदि हिमाच्छादित अनेकों पर्वत श्रृंखलायें विधमान है। इस क्षेत्र को इन्द्रलोक भी कहा जाता है इसी इन्द्रलोक में ऋषि भारद्वाज ने इन्द्र से आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की भृगु, अंगिरा, अत्रि, वशिष्ठ, काश्यप, अगस्त्य, वामदेव, गौतम आदि कतिपय महर्षियों ने देवराज इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान इसी हिमालय पर्वत पर प्राप्त किया था। यह हिमालय विशाल पवित्र, कल्याणदाता एवं उदार है। दिव्यतीर्थ और दिव्यौषधियों का उद्‌गम स्थान है। इस हिमालय पर गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध और देवता निवास करते है। इसी हिमालय के हिमश्रृंगों पर कैलाश पर्वत है। इस पर अलकापुरी के राजा कुबेर, गुह्यकों के साथ निवास करते है। कुबेर महादेव के मित्र थे। कैलाश के आस–पास ही पुनर्वसु आत्रेय का आश्रम था। पुनर्वसु से ऋषि अग्निवेश, पारासर, जतुकर्ण, ऋषि, सारपाणि, ऋषि भेल और ऋषि हरीस ने आयुर्वेद का अध्ययन किया था। संजीवनी विद्या के ज्ञाता भगवान शिव का निवास स्थान भी कैलाश है। संजीवनी विद्या के प्रभाव से भगवान शिव ने एक बार भार्गव परशुराम को जीवित किया था। आचार्य शुक्र ने संजीवनी विद्या को अपने पिता ऋषि भृगु से न सीखकर भगवान् शंकर से शिक्षा ग्रहण की।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**यथा : मृतसंजीवनी नाम विद्यादत्ता महाप्रभा।**

**तान्तुमाहेश्वरी विद्यां, महेश्वर मुखोग्दताम्।।** *(मत्स्यपुराण)*

कैलाश तथा मानसरोवर हिमालय शिवलोक के नाम से जाना जाता है। जैसा कि उल्लेख मत्स्यपुराण में मिलता है।

**मध्ये हिमवतः पृष्ठे कैलाशो नामपर्वतः।**

**तस्मिन्निवसति श्रीमान् सहः गुह्यकैः।।** *(मत्स्यपुराण)*

गुरूवाणी में भी इसी प्रकार से संकेत मिलता है।

**यथा : इन्द्रलोक शिवलोकहि जवो।**

**ओछे तपकरि वाहिरखो।।** *(गुरूवाणी)*

इन हिमालय पर्वतश्रृंगों में मेरू नामक पर्वत विश्व में विख्यात है। यह पाँच योजन (बीस कोश) से भी अधिक लम्बा है। जिसमें देवता निवास करते हैं । महाभारत के प्रथम पर्व के अनुसार पाण्डवराज ने उत्तराखण्ड के सतोपंथ हेमकुण्ड सपृश्रृंग पर्वत शिखर के नीचे शिला पर बैठकर तपस्या की थी। आज भी यह तपःशिला इस स्थान पर विध ामान है। महाभारत युद्ध के बाद पाँचों पांडव ने इसी ओर आकर हिमालय में समाधि ली थी। इन्होंने पाण्डुकेश्वर पहुँचकर अपने पूर्वज पाण्डुराज की स्मृति में मन्दिर का निर्माण किया जो कि पाण्डुराज केदार के नाम से यह मन्दिर आज भी विद्यमान है।

लोकपाल (हेमकुण्ड) से लगभग चार किलोमीटर की दूरी पर काकभूषण्डी ताल (सरोवर) है। ग्रामीणों की मान्यता है कि आज भी काकभूषण्डी इस स्थान पर निवास करते है। यह तिकोनाताल है जिसकी लम्बाई अधिक एवं चौड़ाई कम है। लोकपाल (हेमकुण्ड) में लक्ष्मण जी का प्राचीन ऐतिहासिक मन्दिर है। हेमकुण्ड में गुरू गोविन्द सिंह जी का पवित्र गुरूद्वारा है। सन् 1932 के आसपास सन्त सोहन सिंह जी हेमकुण्ड आये तो उनकी प्रेरणा से इस स्थान पर गुरूद्वारा का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया गया। इन गुरू भक्त की मान्यता है कि गुरूगोविन्द सिंह जी महाराज ने हेमकुण्ड में आकर तपस्या की थी जो कि आज सिखों का प्रमुख तीर्थ स्थान बन गया है। प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में सिख तीर्थ यात्री इस तीर्थ स्थान पर पहुँच कर सरोवर में स्नान करते है।

इस क्षेत्र में सीमान्त निवासियों का विश्वास है कि इन्द्रादि 33 देवतागण लोकपाल क्षेत्र में निवास करते हैं। और प्रतिदिन सरोवर में स्नान करने आते है। भाद्रपद की संक्रान्ती एवं नन्दाष्टमी के अवसर का भी स्थानीय ग्रामीण लोग इन तालों में स्नान पूजा करने आते हैं। इन सरोवरों में स्नान करने से सारी थकान दूर हो जाती है। सतोपंथ शील पर जब सर्पश्रृंग शिखरों की परछांई इस निर्मल झील पर पड़ती है तो इस अलोकिक दृश्यों को देखकर मानसिक शान्ति एवं शुद्ध चेतना जागृत हो जाती है। सूर्य की किरणें सरोवर पर जब पड़ती है तो सरोवर का दृश्य ऐसा दिखाई देता है कि मानो यह चाँदी की धवल परतों से आवृत हो गया है। अक्टूबर के बाद यह सरोवर हिमपात से आवृत होने लगता है। जो कि मई जून में पिघलने लगता है। बर्फ के पिघलने के बाद इन हिमनदों ग्लेशियर के दलानों एवं बूग्यालों में अनेक ढंग के पुष्प एवं सुगंधित जड़ी–बूटियाँ एवं ब्रह्मकमल अगस्त सितम्बर में खिलते हुए देखने को मिलते है।

प्रायः यह देखने में आया है कि अधिसंख्यक पर्यटक एवं तीर्थयात्री इन स्थानों पर पहुँच कर ब्रह्मकमल, फेनकमलों को तोड़ देते है जिसके कारण कतिपय सुगन्धित एवं सुन्दर पुष्पों की प्रजातियाँ दिन–प्रतिदिन लुप्त होती जा रही हैं।

**फूलों की घाटी (वैली आफ फ्लावर) :** यह घाटी दूर्लभ एवं सुन्दर रंग बिरंगे पुष्पों, सुगन्धित पादपों एवं जड़ी बूटी के लिए प्रसिद्ध है। जो कि वनस्पति प्रेमियों के लिए तीर्थस्थली है। रानीखेत के पादरी की पत्नी श्रीमती स्मिथा सन् 1932 में अपने साथियों के साथ कामेत चोटी से लौटते समय इस घाटी से गुजरी तो यहाँ का दृश्य देखकर मंत्रमुग्ध हो गयी और उन्होने इस घाटी का नाम वैली आफ फ्लावर रखा। इसी घाटी के नाम से दि वैली आफ फ्लावर नामक पुस्तक का भी प्रकाशन किया। श्रीमंती स्मिथ फूलों के बीजों का चयन करने हेतु प्रति वर्ष यहाँ आती थी। अन्त में कामेत से लौटने पर उनका पैर फिसल जाने पर श्रीमती स्मिथ ने इसी घाटी में अपना पार्थिव शरीर त्याग दिया।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

यहाँ पर इनकी स्मृति में कब्र बनी हुई है। प्रतिवर्ष सैकडों वनस्पति प्रेमी एवं पर्यटक जाकर उन्हे श्रद्वा सुमन अर्पित करते है। मुख्य रूप से घांघरिया से फूलों की घाटी जाते हुए भोजपत्र, तालीस (थुनेर), रांगा, कांचुला, बुरांस, अंयार, सिमरू आदि कतिपय सदाहरित वृक्षों के धने जंगल है। पर्वत श्रृंगों के ढलानों एवं बुग्यालों में प्रिमूला, केल्था, एपिलोवियम, व्लु–पौपी, एनिमोन, जिरेनियम सेक्सीफ्रेगा, सेलेनियम, रेननकुलस, आदि कतिपय रंगबिरंगे सुन्दर पुष्पों की प्रजातियाँ तथा जड़ी बूटियों में मीठा विष (एकोनाइट) अतिविषा, कुटकी जटामांसी, पाषाणभेद, चोरा, गन्ध्रायण, धूप भूतकेश, सालमपंजा, सालममिश्री आदि कतिपय आयुर्वेदिक औषधि उपयोग की जड़ी–बूटियाँ पाई जाती है। जूड़ी बूटी अनुसंधान एवं कस्तुरामृग के प्रजनन के लिए भी यह उपयोगी स्थान है। प्राकृतिक रूप से भी कस्तुरामृग इस घाटी के उपरी भाग में पाया जाता हैं। अवैध शिकार करने से कस्तुरामृग लुप्त होते जा रहें है। अतः इनके सम्वर्धन हेतु इस क्षेत्र को कस्तुरामृगविहार भी घोषित किया जा सकता है। लेखक को इस यात्रा का अवसर लखनऊ स्थित युवा वैज्ञानिकों की जड़ी बूटी यात्रा कार्यक्रम अभियान अगस्त, सितम्बर 90 को प्राप्त हुआ। दल का संचालन मेरे द्वारा किया गया। इस दल में भारत के विभिन्न प्रदेशों से आये हुए 16 युवा वैज्ञानिकों ने भाग लिया ।

## ऋषिकेश से फूलों की घाटी एवं हेमकुण्ड मार्ग

| क्र. सं. | स्थान | ऊँचाई मीटर | दूरी कि. मी. | कुल दूरी कि. मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | ऋषिकेश | 340 | ..... | ..... |
| 2. | जोशीमठ | 1890 | 250 | 250 |
| 3. | गोविन्दघाट | 1800 | 20 | 270 (मोटर मार्ग) |
| 4. | पुलना | 1900 | 3 | 3 पैदलमार्ग |
| 5. | घांघरिया | 3100 | 6 | 16 " |
| 6. | हेमकुण्ड | 4300 | 5 | 21 " |

घांघरियां से एक मार्ग फूलों की घाटी को चला गया है। यह घाटी 5 कि. मी. से शुरू होकर 15 कि.मी. की दूरी तक हैं।

**पिंडार घाटी :** पिंडार घाटी के लिये कफकोट से पैदल यात्रा प्रारम्भ करनी पड़ती है। कफकोट वागेश्वर तहसील मे पड़ता है। कफकोट से लोहारखेत 16 कि.मी. है। पैदल मार्ग की दूरी निम्न प्रकार से है।

| क्र. सं. | स्थान | ऊँचाई मीटर | दूरी कि. मी. | कुल दूरी कि. मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | कफकोट | 1082 | ..... | ..... |
| 2. | लोहारखेत | 2753 | 16 | 16 |
| 3. | ठाकुरी | 2621 | 10 | 26 |
| 4. | खाती | 3210 | 10 | 36 |
| 5. | छाली | 2576 | 11 | 47 |
| 6. | फुरकिया | 3261 | 5 | 52 |
| 7. | पिंडारी | 3600 | 8 | 60 |

इस घाटी मे सरजुघाटी, कफनिघाटी, सुन्दरडांगघाटी, खरघाटी ये सभी घाटियाँ नन्दाकोट के दाहिनी तरफ से शुरू होती है। सुन्दरडांग नदी मृगथुनी से प्रारम्भ होती है। ये सभी घाटियाँ कुमाऊं क्षेत्र में जड़ी–बूटियों के सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान के योग्य है। इसके अतिरिक्त पिथौरागढ़ सीमान्त जनपद भी औषधोपयोगी कई किस्मों की जड़ी–बूटियों के लिये प्रसिद्ध है। इसमें पंचूली बन क्षेत्र मुख्य है। इसके अतिरिक्त धारचूला विकासखण्ड, गंगोलीहाट विकासखण्ड, मुन्स्यारी विकासखण्ड (ब्लाक) प्रमुख है। इस क्षेत्र में दारमाघाटी, कालीघाटी, कुंथिघाटी, गौरीघाटी आदि प्रमुख हैं। इन स्थानों से कालीनदी एवं कुंथिनदी प्रवाहित होती है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# TREKKING ROUTES IN KUMAON

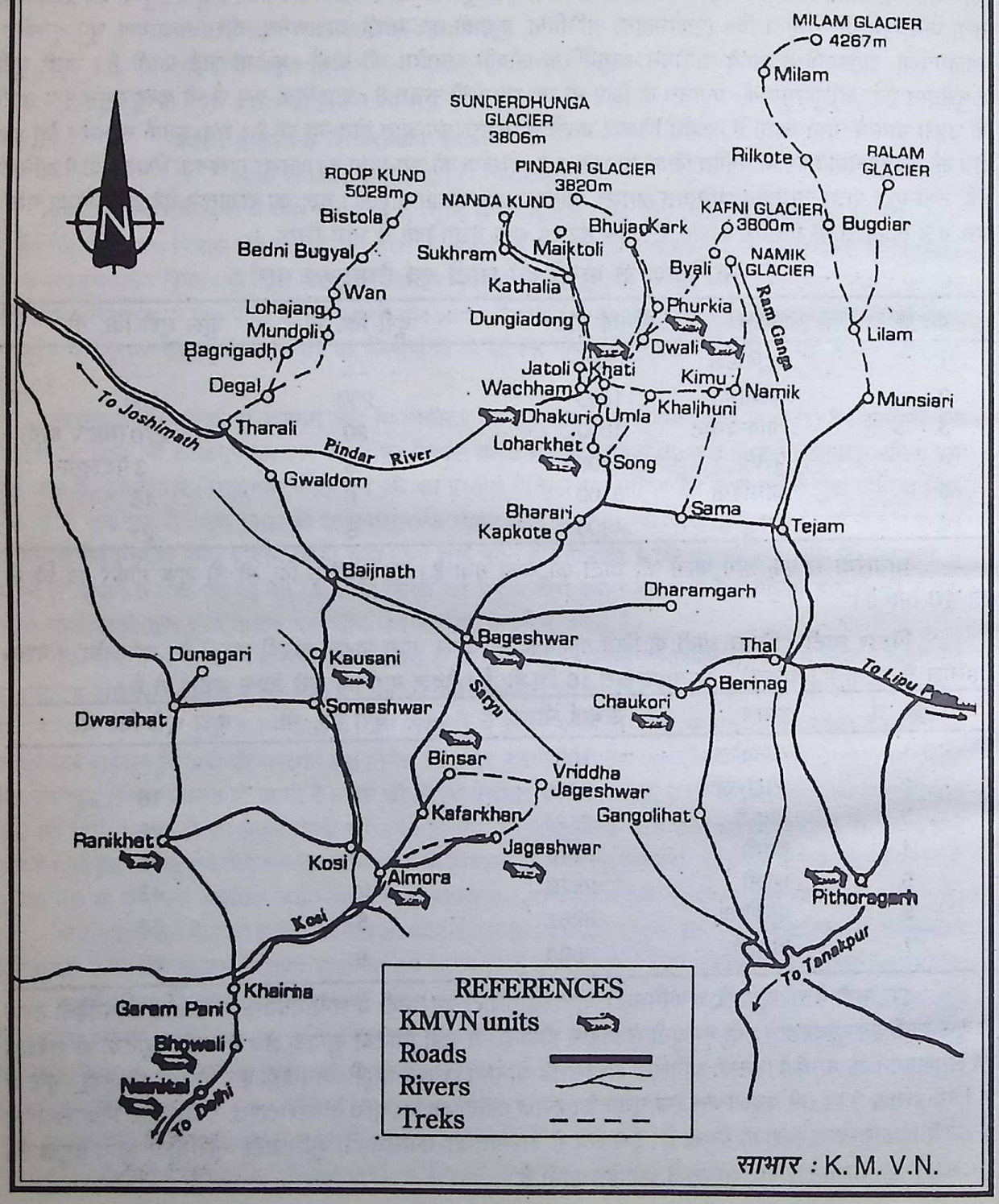


साभार : K. M. V.N.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कैलाश मानसरोवर के लिये भी दिल्ली टनकपुर, तवाघाट, कालापानी, नाविडांग, लिपुलेख एवं तकलाकोट होते हुये चीन के अधिकार क्षेत्र मे मानसरोवर जाने का मार्ग है। लिपुलेख लगभग 1800 फीट की ऊँचाई पर है। तवाघाट से लिपुलेख का पैदल मार्ग है। कालापानी से पंगु, गुंजी 72 कि.मी. पैदल मार्ग तय कर लिपुलेख पहुँचना पड़ता है। कालापानी से नाविडांग की यात्रा काफी जोखिम भरी है। नाविडांग पहुँचने पर लिपुलेख एक दिन का रास्ता है।

तकलाकोट पहुँचने के बाद चीन की कस्टम चौकी आती है। तथा रात्री पड़ाव के बाद अगले दिन चीन के अधिकारियों की देख रेख में मानसरोवर के दर्शन होते है। यह स्थान 1500 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। झील की परिधि 88 कि.मी. है तथा गहराई लगभग 300 फुट हैं। इसी झील के कुछ दूरी पर राक्षसताल है। राक्षसताल का पानी देखने में गहरानीला है। मानसरोवर की उत्तरी दिशा में कैलाश पर्वत हैं। महाभारत एवं अन्य पौराणिक ग्रन्थों में कैलाश एवं मानसरोवर का विस्तृत रूप से वर्णन मिलता है।

**नन्दादेवी सेंकचुरी :** विश्व की सुन्दरता में उत्तराखण्ड हिमालय का पावन धाम नन्दा सेंकचुरी की अपनी पौराणिक एवं नैसर्गिक सुन्दरता है। पूरा क्षेत्र कतिपय हिमानियों के मध्य में स्थित एक गोलाकार भू भाग है। पश्चिम में गोमुख और पूर्व में नीलम हिमानियों के बीच में स्थित यह क्षेत्र है। इसका कुल क्षेत्रफल लगभग 640 वर्ग किलो मीटर है। इनमें नन्दादेवी, दूना–गिरी, त्रिशूल, चंग–वंग, हनुमानखुण्टा, नन्दाकोट, मृगथूनी, नागताल, कैलाश आदि प्रमुख हिम शैल है। कहीं घने देवदार, भूर्ज, खरसू, सिमरू, जुनिपर के घने जंगल तथा अधिकाशं भाग बुग्यालों (मेडोज) का है। यहाँ पर कस्तूरामृग (मश्कडियर) बराल, थार, आदि जंगली जानवरों का अभयारण्य है । पक्षियों में मुनाल, स्नोकाक तथा पर्वतीय चीते व भालू मिलते है। जोशीमठ से लाता होकर पैदलमार्ग से इस क्षेत्र में पहुँच सकते हैं। लाता से आगे कोई गांव नहीं है। लाता से सारी भोजन सामग्री एवं तम्बू आदि की पूर्ण व्यवस्था कर इस हिमानी की यात्रा स्थानिक गाईडों की सहायता से ही करनी चाहिये। ट्रेंकिग के लिये यह क्षेत्र उपयोगी है।

## नन्दादेवी सेंकचुरी मार्ग दर्शिका

| क्र.सं. | स्थान | ऊँचाई कि. मी. | दूरी कि. मी. | कुल दूरी कि. मी. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | जोशीमठ | 1890 | – | – |
| 2. | लाता | 2400 | 15 | 15 मोटर मार्ग |
| 3. | लाता | 2400 | – | – पैदल मार्ग |
| 4. | लाता रवड़क | 3690 | 6 | 6 " |
| 5. | धरांसी | 4142 | 10 | 16 " |
| 6. | डिवरूगैटा | 3500 | 4 | 20 " |
| 7. | डयोटी | 3400 | 9 | 29 " |
| 8. | रामनी | 3600 | 8 | 37 " |
| 9. | भुजगड़ा | 4050 | 6 | 43 " |
| 10. | तिलचौनी | 4200 | 8 | 51 " |

यह क्षेत्र नन्दादेवी सेंकचुरी कहलाता हैं। जोकि कई सौ वर्ग मील क्षेत्र में हैं। तिलचौनी सबसे बड़ा वुग्याल (मिड़ोज) है। अनेक किस्म की जड़ी–बूटियाँ जटामांसी, कुटकी, अतीस, बत्सनाभ, व्लुपौपी, रेवन्दचीनी (ढोलू–आर्चा) ब्रह्मकमल, शालमपंजा एवं कतिपय दिव्यौषधियाँ इन हिमनदों में पाई जाती है। देखिये विस्तृत विवरण "जड़ी–बूटियाँ के प्रंसग में।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## उत्तराखण्ड की प्रमुख चोटियाँ

| क्र. सं. | प्रमुख चोटियाँ | ऊँचाई (मीटर) | आधार स्थान (जनपद) |
|---|---|---|---|
| 1. | नन्दादेवी | 7818 | जोशीमठ–चमोली |
| 2. | कामेतपर्वत | 7758 | जोशीमठ–चमोली |
| 3. | मानापर्वत | 7274 | जोशीमठ–चमोली |
| 4. | चौखम्बा | 7140 | जाशीमठ–चमोली |
| 5. | त्रिशूल | 7122 | जोशीमठ–चमोली |
| 6. | मुकुटपर्वत | 7120 | जोशीमठ–चमोली |
| 7. | दूनागिरी | 7068 | जोशीमठ–चमोली |
| 8. | सतोपन्थ | 7075 | जोशीमठ–चमोली |
| 9. | देवबन | 6879 | जोशीमठ–चमोली |
| 10. | कलंका | 6933 | जोशीमठ–चमोली |
| 11. | केदारनाथश्रृंग | 6940 | चमोली–जनपद |
| 12. | पंचाचूली | 6905 | कफकोट–पिथौरागढ़ |
| 13. | स्फटिंक पिठान | 6908 | धनसाली–घुत्तू (टिहरी) |
| 14. | चंगवंग | 6883 | जोशीमठ–चमोली |
| 15. | नन्दाकोट | 6883 | जोशीमठ–चमोली |
| 16. | मृगथूनी | 6857 | जोशीमठ–चमोली |
| 17. | गंगोत्रीश्रृगं | 6672 | उत्तरकाशी जनपद |
| 18. | भागीरथीश्रृंग | 6856 | उत्तरकाशी जनपद |
| 19. | जौली | 6632 | उत्तरकाशी जनपद |
| 20. | बन्दरपुंछ | 6317 | उत्तरकाशी जनपद |
| 21. | कीर्तिस्तम्भ | 6270 | उत्तरकाशी जनपद |
| 22. | भृगुपंथ | 6792 | उत्तरकाशी जनपद |
| 23. | मेरूपर्वत | 6660 | उत्तरकाशी जनपद |
| 24. | जोगिन | 6466 | धनसाली–घुत्तू (टिहरी) |
| 25. | शिवलिंग | 6544 | उत्तरकाशी जनपद |
| 26. | भृतकांठा | 6580 | धनशाली–घुत्तू (टिहरी) |
| 27. | नीलकंठ | 6590 | बद्रिनाथ–जोशीमठ |
| 28. | नन्दाघुंटी | 6390 | जोशीमठ–चमोली |
| 29. | स्वर्गारोहिणी | 6254 | बद्रिनाथ–चमोली |
| 30. | त्रिभुज | 5057 | जोशीमठ–चमोली |
| 31. | कागभुषण्डी | – | जोशीमठ–चमोली |
| 32. | नारायण पर्वत | – | जोशीमठ–चमोली |

पिथौरागढ़ जनपद में भी कतिपय प्रसिद्ध हिम शैल है। जो कि नेपाल सीमा से लगते है। पर्वतारोहण के लिये उत्तराखण्ड में ये चोटियां प्रमुख है। इन चोटियों के हिमनदों (ग्लेशियरों) एवं इन हिमनदों से उद्‌गम होने वाली नदियों की घाटियों में अपार वन सम्पदा है। इसलिये वनौषधि सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान की विशेष सम्भावनाये हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# उत्तराखण्ड हिमालय की जलवायु एवं वन क्षेत्र

यह सर्व विदित है कि करोड़ों वर्षों बाद पृथ्वी एक आग के गोले से बदलकर मनुष्य के रहने के योग्य बन पाई, और धीरे–धीरे अनेक प्रकार के प्राणियों तथा वनस्पतियों का विकास होता गया। डायनासौर युग में अत्यन्त विशाल प्राणी जिनका अस्तित्व अब पृथ्वी पर नहीं हैं, का जन्म हुआ। आज के युग में मनुष्य उन प्राणियों का राजा माना गया है। प्रारम्भ में वनस्पतियों का विकास एक कोशीय प्राणी से हुआ बाद में एक जीव की कोशिकाओं की संख्या बढ़ने लगी। सर्वप्रथम विभाजन पद्धति से जीवाणु का विकास हुआ। हजारों बीजाणुओं में से कुछ बीजाणु जमकर नयें पौधों के रूप में बनें। आजकल यह प्रक्रिया कुकुरमुत्ता, काई तथा पर्णाग में देखी जाती है। इसी आधार पर पृथ्वी पर अण्डज, स्वेदज एवं औद्भिज सृष्ठी का विकास हुआ। अतः जान्तव और औद्भिज द्रब्यों के विकास से प्राकृतिक सन्तुलन एक महत्वपूर्ण नियम है। इस प्राकृतिक सन्तुलन की विषमता से पर्यावरण प्रदूषण हो जाता है।

इन सारे वनों के विकास का आधार मिट्टी एवं प्राकृतिक जलस्त्रोत हैं। प्रकृति के सन्तुलन हेतु विभिन्न जाति के पशु–पक्षी, हिरण, शेर, भालू, सरीसृप एवं विभिन्न जलवायु में उगने वाले बन उपवन एवं हिमशैल हैं। जिनसे प्रकृति का सन्तुलन बना रहता है। प्रकृति सन्तुलन में निम्न 6 आवश्यक नियमों की आवश्यकता देखी गई है। यथा : 1. स्थायित्व, 2. स्थामित्व लाने हेतु संरक्षण, 3. बिविधता, 4. सभी अवशेषों को जमीन में लौटाना, 5. सन्तुलन, 6. सहयोग। प्रकृति के साथ सहकार और सहयोग के साथ रहना चाहिये तभी बनों का विकास और सहयोग हो सकता है। जीवन का आधार सन्तुलन है। बनों का विकास तभी सम्भव है। यदि वनों की सुरक्षा सम्वर्घन, रोपण एवं समन्वय की भावना से वृक्षों को काटना व जड़ी–बूटियों का विदोहन करना सन्तुलन की भावना से किया जाया तो पर्यावरण की सुरक्षा की जा सकती है। किसी भी देश की संस्कृति समझने के लिये पहले उस देश के पर्यावरण को समझने की आवश्यकता होती है। मनुष्य का जीवन रहन–सहन का स्तर मिटी, पानी (आव–हवा) एवं जलवायु पर निर्भर करती है। जब तक पर्यावरण का सन्तुलन है तब तक देश दैविक विपदाओं (जनपदोध्वंस) से बचा रहता है और देश समृद्धि के साथ पनपता है तथा उसकी संस्कृति का विकास होता रहता है। पर्यावरण की उपेक्षा करने पर संस्कृति, सभ्यता तथा स्वरूप का ह्रास होने लगता है।

पुराणों में भी इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि सैकड़ों वर्ष पहले सारा देश सघन वनाच्छादित रहा होगा, बनों का सधन होना इसका मुख्य कारण यह भी हो सकता है कि प्राचीन काल से ही भारत में वृक्षारोपण एवं वनों के विकास की परम्परा रही है। जिसका सीधा सम्बन्ध धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से है। पौराणिक एवं संहिताग्रन्थों में स्पष्ट प्रमाण मिलते है कि अपुत्रवान व्यक्ति को परलोक ऐंषणा हेतु मार्ग में वृक्षों का रोपण करना चाहिये। इसी काल में हिमालय की आदि जनजाति किरात, पुलिन्द, तगण और ऋषि–मुनि वनों में निवास कर इस वनसम्पदा के संरक्षण में सदैव तत्पर रहते थे। विद्वानों ने सिद्व किया है कि अलकनन्दा की उपरी घाटी के निवासियों को तंगणा कहते थे। आज भी तंगणी नाम की एक बस्ती बद्रिनाथ क्षेत्र में स्मृतिरूप में विद्यमान है। पुलिन्द नाम की जनजातियों का उल्लेख उत्तराखण्ड में निवासी के रूप में मिलता है। प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान ग्रियर्सन का मत है कि गढ़वाल तथा कुमाऊं के प्राचीन निवासी किरात थे। पौराणिक ग्रन्थों में भी पार्वती एवं दुर्गा को भी किराती नाम से सम्बोन्धित किया गया है। चौथी सदी ईसवी से पूर्व के प्रसिद्ध यूनानी राजदूत मेगस्थनीज जिन्होंने भारत में काफी समय तक निवास कर उत्तराखण्ड के इतिहास के विषय में लिखा है कि उत्तराखण्ड में किरात जाति के लोग निवास करते थे। पौराणिक ग्रन्थों महाभारत, मार्कण्डेय पुराण, मत्स्यपुराण, वाणभट्ट कृत ग्रन्थ कादम्बरी, कालिदास रचित रघुवंश महाकाव्य आदि ग्रन्थों में किरात जनजातियों का उत्तराखण्ड में निवास का प्रमाण मिलता है।

**यथा : यह किरात तंगण कीर्ण पुलिन्द शत सकुलम्।**

**हिमवत्य वरे जुष्ठ, पिकाश्चर्य समाकुलम्।।** *(वाराही संहिता)*

उपरोक्त प्रमाणों से यह स्पष्ट होता है कि मध्यहिमालय के शिल्पकार किरात तंगण आदि जनजातियों में से



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

है जिन्हें ओड़, लोहार, टमटा, औजी, हुडक्या, आदि नामों से जाना जाता है। ये सभी जनजातियां इन्हीं नैसर्गिक वनों से अपनी अजीविका करते थे। संक्षिप्त में भौगोलिक आघार पर उत्तराखण्ड हिमालय के वनक्षेत्र को निम्न भागों में विभक्त किया जा सकता है।

हिमालय के वनक्षेत्र ऊँचाई के आघार पर निम्न तालिका के आधार पर बांटा जा सकता है।

## ऊँचाई के आधार पर वनों का प्रतिशत क्षेत्रफल

| क्रम सं. | ऊँचाई मीटर में | प्रतिशत क्षेत्रफल |
|---|---|---|
| 1. | 300 से कम | 10.0 |
| 2. | 300-600 | 9.8 |
| 3. | 600-900 | 6.3 |
| 4. | 1200-1500 | 6.7 |
| 5. | 1500-1800 | 9.4 |
| 6. | 1800-2100 | 7.8 |
| 7. | 2100-3000 | 7.8 |
| 8. | 3000-3450 | 5.9 |
| 9. | 3450 से अधिक ऊँचाई क्षेत्र | 20.0 |

वन विभाग के सांख्यिकि अनुभाग के आंकड़ों के आधार पर उत्तराखण्ड के कुल वन क्षेत्रफल का क्षेत्रफल 34.248.57 वर्ग कि. मी. है। आंकड़े निम्न प्रकार से है।

## वन सांख्यिकी तालिका

| | |
|---|---|
| **कुलवन क्षेत्र कि.मी.** | **34,248,57 वर्ग** |
| 1. आरक्षित वन विभाग अधीन वनक्षेत्र | 23,512,14 |
| 2. संरक्षित वन | 8,159 |
| 3. अवर्गीकृतत्य निहितवन | 7,549 |
| **योग** | **23,669,22** |
| वनक्षेत्र जो वनविभाग के नियन्त्रण में नहीं है। | |
| अ. सिविल सोयम | 8,013,63 |
| ब. पंचायती वन | 2,368,00 |
| निजी केन्टोनमेंट तथा नगरपालिका | 197,72 |
| **योग** | **10,579,35** |

वर्ष 1990-91 के आंकड़ों के अनुसार भूमि उपयोगिता के आंकड़े इस प्रकार से है।

| भूमि उपयोगिता | हे. क्षेत्रफल | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल | 5358595 | 100.00 |
| 2. वन | 3424857 | 63.91 |
| 3. उसर एवं खेती के अयोग्य भूमि | 3424857 | 5.51 |
| 4. खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोगी | 135497 | 5.92 |
| 5. कृषि बेकार भूमि | 317014 | — |
| 6. चराई की भूमि | 227393 | 4.24 |
| 7. अन्य वृक्षों एवं झाड़ियों आदि की भूमि | 216588 | 4.04 |
| 8. वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल | 669107 | 12.49 |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्ष 90-91 के आधार पर मुख्य फसलों का कुल उत्पादन एवं औसत उपज :

| क्रम सं. | औसतन उपज वर्ष 90-91 | कुल क्षे. हेक्टेयर | सिंचित क्षे० हे० | उत्पादन मी.टन | औसत उपज क्वि० हे. |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | धान | 267646 | 148233 | 539117 | 20.14 |
| 2. | गेहूँ | 359013 | 152111 | 608141 | 16.94 |
| 3. | जौ | 27367 | 884 | 35512 | 12.98 |
| 4. | मक्का (मुगंरी) | 29892 | 482 | 40911 | 13.69 |
| 5. | सांवा (झंगोरा कौणी) | 74958 | 82 | 90054 | 12.01 |
| 6. | मंडवा (कोदो) | 138999 | 54 | 169055 | 12.16 |
| 7. | अन्य फसलें कुलत्थ | | | | |
| | गथ, तोर, उड़द, मसूर, भट्ट, सुट्टा (लोभिया) राजमा (सेमी) आलू | | | | |

संक्षिप्त जानकारी हेतु उत्तराखण्ड में राष्ट्रीय पार्क, वन्यजीव विहार एवं बायोस्फियर के अन्तर्गत संरक्षित वन क्षेत्रों के आँकड़े निम्न प्रकार से अंकित किये गये हैं :

| क्रम सं. | नाम | वर्ष | क्षे० वर्ग कि. मीटर |
|---|---|---|---|
| 1. | गोविन्द राष्ट्रीय उद्यान | 1990 | 472 |
| 2. | गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान | 1987 | 2390 |
| 3. | राजाजी राष्ट्रीय उद्यान | 1983 | 820 |
| 4. | फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान | 1982 | 87.5 |
| 5. | नन्दादेवी राष्ट्रीय उद्यान | 1982 | 630 |
| 6. | कार्वेट नेशनल पार्क | 1936 | 521 |
| 7. | गोविन्द वन्य जीव विहार | 1955 | 481 |
| 8. | केदारनाथ वन्यजीव विहार | 1972 | 987 |
| 9. | असकोट वन्यजीव विहार | 1986 | 600 |
| 10. | सोनानदी वन्यजीव विहार | 1987 | 301 |
| 11. | विन्सर वन्यजीव विहार | 1988 | 40 |
| 12. | बायोस्फियर रिजर्व (नन्दादेवी) | 1988 | 1606 |

भौगोलिक जलवायु के अनुसार हिमालय क्षेत्र के वनों को निम्न भागों में बांटा जा सकता है।

**1. अर्द्ध उष्ण कटिबन्धीय वनक्षेत्र** : इसमें चौड़ी पत्ती वाले वन, सदाबहार वन, चीड़ वृक्ष वाले वन आदि आते हैं। इसे ट्रोपिकल एवं सब–ट्रोपिकल जोन भी कहते हैं। जो कि 1200 मीटर की ऊँचाई तक चले गये है।

क. नमतापीय पर्वतीय वन

ख. आर्द्रतापीय पर्वतीय वन

ग. शुष्कतापीय पर्वतीय वन

घ. अर्धपर्वतीय वन

ङ. शुष्कपर्वतीय वन

**2. शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेश (टेम्प्रेटजोन)** : ये वन क्षेत्र 3000 मीटर की ऊँचाई तक चले गये हैं।

**3. एलपाईन एवं सब-एलपाईन जोन** : 3000 मीटर से 4500 मीटर की ऊँचाई तक।

**1. ट्रोपिकल एवं सवट्रोपिकल जोन** (उष्ण कटिबन्धीय वाले वनक्षेत्र) : यह भाग ऋषिकेश, देहरादून शिवालिक वनखण्ड से प्रारम्भ होकर तराई भावर तक चला गया है। जिसमें मैदानी, पर्वतीय वनस्पतियाँ एवं वन्य जन्तु पाये जाते



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

है। इन जीव जन्तु एवं वनों की प्राकृतिक सुन्दरता में भारतवर्ष का कोई भाग शायद ऐसा होगा जो शिवालिक एवं तराई भावर के समतुल्य हो। इन वनों में शाल, भिलावा, कचनार, सीसम, तुन, मालझन, धन्व, धामिंन, प्रियाल (चिरौजी) शिरीष, विल्व (वेल), धव (धौ), करौन्दा, कम्पील्लक, (कमीला), वहेड़ा, आंवला, साखिना, वासा (अडूसा), मालकांगनी, विदारीकन्द, असन, हारसिंगार, पलाश (ठाक) मरोड़फली, कवीरा, धातकी, (धाय) जंगलीवेर, बला (रवरेन्टी) गम्भारी, श्योनाक, बेर, (वदर) खैर, इरिमेद, बबूल आदि कण्टकित झाड़ीदार पर्णपाती एवं सदाहरित वृक्ष तथा गुल्म, लता तथा शाकीय पादप पाये जाते है। 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः तेजवल, (टिम्वरु) हिसंर, किनगौड़, अंयार, अखोड़िया, चीड़, करोन्दा, मदनफल, आंवला, हरड़, मालू, धौलू, हारसिंगार, गूस्याल, कंणदी काफल, तुंगलो, बांझ, बुरांस, पदमकाष्ठ, वन्पशा, ब्राह्मी, पाषाणभेद गुल्म आदि वृक्ष शाकीय पादप होते हैं।

**2. टेम्प्रेट जोन** (शीतोष्ण कटिबन्धीय वन क्षेत्र) : यह वन क्षेत्र 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर की ऊँचाई तक चला गया है। इसमें चीड़ के घने वन 2,100 मीटर की ऊँचाई तक हैं। इसके साथ–साथ सदाहरित वृक्ष बांझ (ओक), बुरांस (रोडोडन्ड्रोन), कटफल, देवदार, कैल, रौंसली, तेजपात, रिंगाल, मोरू, खरसू, पांगर, तेजबल, दारूहरिद्रा की कई किस्में ब्राह्मी, पाषाणभेद, भमोरी, तगर (सुमंयाँ), शटी (शेल्डू), तालीस (एवीज), थुनेर (टैक्सस), वच (वज), हिसांलू आदि कतिपय औषधीय शाकीय वनस्पतियां पाई जाती हैं। वन्य जन्तुओं में भालू (रीच), बाघ, बारहसिगां, घोल्ड, काखड़, खरगोश, जंगली मुर्गी, सियार आदि वन्यजन्तु इन वनों में निवास करते हैं। 2,100 मीटर की ऊँचाई तक देवदारू के सघन वृक्षावली हिमालय में मिलती है। इसके साथ–साथ बुरांस (रोडोड्रेन्ड्रोन) वांझ (क्वरकस) खरसू (क्वरकस), मोरू (क्वरकस) वाईवरनम की प्रजातियाँ एवं अयांर आदि के सदाहरित वृक्ष पाये जाते हैं। नदियों के किनारों पर आमील (हिफोपी सेलिसिफोलिया) के गुल्म पाये जाते हैं।

**3. एल्पाईन एवं सब-एलपाईन जोन :** एलपाईन वनक्षेत्र वुग्यालों (मेडोज) के नाम से जाना जाता है। यह भाग 3,300 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4500 मीटर की ऊँचाई चला गया है। सब–एलपाइन वाले वन 3,300 मीटर की ऊँचाई तक माने जाते हैं। इन वनों में कस्तूरी मृग एवं बाहरसिगां, मुनाल, भालू आदि वन्य जन्तु पाये जाते हैं। एलपाईन जोन में प्रायः वृक्ष समाप्त हो जाते है। मात्र हिमनदों में भूर्ज (वेटुला), ठेलू (जुनिपर) सिमरू (रोडोडेन्ड्रोन) की कतिपय प्रजातियाँ इफेड्रा आदि झाड़ीदार पादप मिलते है। वुग्यालों में नाना प्रकार के सुगन्धित पादप जून से लेकर अगस्त तक पुष्पित होते हैं। कतिपय औषधीय पादप जटामांसी (मांसी), कुटकी (कडू), पोटेन्टीला, वज्रदन्ती अतिविषा (अतीस), वत्सनाभ (विरव), रेवन्दचीनी (आर्चा, ठोलू), जिरेनियम, प्रिमूला, कैल्था, रैननकुलस, बर्जीनिया, सेक्सीफ्रेगा, धूप (गोगल) पालेगोनम, ब्लुपौपी, एलियम, माईक्रोटोमियाँ, सौनकस, सैनीसियों, सलेनियम, आर्टिमीसिया, प्रुनिला आदि कतिपय प्रजातियाँ पाई जाती हैं। हिमनदों एवं सरोवरों के आसपास ब्रह्मकमल (ससूरिया आवोलाटा) केनकौंल (ससूरिया गोसोफिफोरा), जोगीपादशाह (ससूरियासेक्रा) आदि कतिपय दिव्यौषधियाँ इन हिमनदों में पाई जाती हैं। 5,200 मीटर की ऊँचाई के बाद आगे प्रायः सनातन हिमश्रृंगों के अगम्य हिमशैल हैं। जिनका विस्तृत रूप से उल्लेख पूर्व प्रंसग में किया गया हैं।

उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध वृक्षों ने विश्व में अपने कीर्तिमान स्थापित किये हैं। उदाहरणार्थ टिहरी गढ़वाल जनपद में 704 वर्ष पुराना देवदार (सिंड्रस देवदार) चकराता में 327 वर्ष पुराना चीड़ (पाईनस रौक्सवरघाई) टौंन्सप्रखण्ड में 64.9 मीटर ऊँचाई एवं 808 से.मी. मोटा शालवृक्ष (शोरिया रोवस्टा) एवं गढ़वाल में 64 मीटर ऊँचाई तथा 732 से.मी. मोटा स्प्रुस आदि वृक्षों का कीर्तिमान है। परन्तु यदि इन वनों का निरन्तर कटना जारी रहा तो ये कीर्तिमान वृक्ष एवं जीवन दायिनी जड़ी–बूटियाँ एवं हिमालय की पावन घाटियाँ में पुष्पित विभिन्न रंगों के सुगन्धपादप एवं औषधीय पादप लुप्त हो जायेगें या लुप्तप्रायः की श्रेणी में आ जायेंगे। इसलिये इन वनों के सम्बर्धन की दिशा में ध्यान देना अनिवार्य है। वन किसी भी देश या प्रदेश की अत्यन्त बहुमूल्य प्राकृतिक सम्पदा है तथा ये वन अनादि काल से मानव एवं प्राणिमात्र के साथ अविच्छिन्नरूप से जुड़े हुये हैं। इससे मानव के लिये भोजन, वस्त्र, ईन्धन, औषधियाँ आदि दैनिक जीवन की मूलभूत आवश्यकतायें ही नहीं पूरी होती हैं। अपितु पर्यावरण सन्तुलन को सन्तुलित रखकर ये वन इस धरती के अस्तित्व को बनाये हुये हैं। अतः ये वन हमारे जीवन के आधार हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**जलवायु :** जलवायु के आधार पर इस प्रदेश को तीन भागों में बांटा जा सकता हैं।

1. गर्मी का मौसम,
2. चौमासा (वर्षा ऋतु),
3. शीतकाल (शीत ऋतु)

सितम्बर से मार्च तक बर्फ—पड़ने के कारण इन स्थानों पर अधिक शीत रहती हैं। पर्वतीय भागों में प्रतिवर्ष अधिक वर्षा होती हैं। वर्षा का औसत 25'' से 45'' तक है किन्तु कभी अधिक वर्षा होने के कारण रेनगेज बढ़ जाता हैं। बर्फ गिरने (हिमपात) का कोई रवास पैमाना नहीं हैं। इन घाटियों की भूमि प्रायः पठारी, ढलवा, व पहाड़ी सीढ़ीनुमा रवेत हैं। जिनमें विशेष रूप से सांवा (झंगोरा) कोदो (मंडवा) धान, गेहूँ, कोटू, चौलाई, (मारछा ) आलू, सोयाबीन (भट्ट) आदि की खेती एवं फलोंद्यान हैं। संक्षिप्त रूप में उत्तराखण्ड हिमालय में भूमि उपयोग एवं नियोजन के सन्दर्भ में **डा. मोहन लाल डबराल** द्वारा प्रकाशित हिमालयी पर्यावरण एवं नियोजन के कुछ अंश साभार उद्धृत हैं। जोकि इस प्रकार से हैं।

## उत्तराखण्ड हिमालय : भूमि उपयोग नियोजन

उत्तराखण्ड हिमालय ऊँची चोटियां (नन्दादेवी, त्रिशूल, कामेत, गंगोत्री, केदारनाथ, बंदरपुंछ—सभी 7,000 मी॰ से अधिक), विस्तीर्ण घास ढ़ालों/पठारों उपजाऊ नदी घाटियों/वेदिकाओं और कोणधारी वनों का प्रदेश हैं। समस्त उत्तराखण्ड हिमालय के आठ जिलों का कुल क्षेत्रफल 50,234 वर्ग किलोमीटर है। 58.90% भूमि, वनों, जंगलों, चरागाहों तथा पाख—भेलों से ढ़की है एवं मात्र 16.80% भूमि कृषि के अन्तर्गत हैं। शेष उच्च हिमालयी बर्फीले प्रदेशों के अन्तर्गत है जिसे राष्ट्रीय सम्पति के रूप में प्राकृतिक सौन्दर्य एवं जड़ी—बूटी उत्पादन भूमि वन की तरह प्रयोग किया जा सकता है। आठ जिलों में चमोली (केदारनाथ—बद्रीनाथ—नन्दादेवी प्रदेश) क्षेत्रफल में सबसे बड़ा है। जो 9,125 वर्ग किलोमीटर है इसके बाद उत्तरकाशी (8,016 वर्ग किलोमीटर), नैनीताल (7,692 वर्ग किलोमीटर), पिथौरागढ़ (7,217 वर्ग किलोमीटर अल्मोड़ा (7,023 वर्ग किलोमीटर) टेहरी गढ़वाल (4,421 वर्ग किलोमीटर) एवं देहरादून (3,088 वर्ग किलोमीटर) आते है। वनभूमि, कृषिभूमि, चरागाह व उच्च पर्वतीय हिम प्रदेश इस क्षेत्र के प्रमुख भूमि उपयोग के आधार तत्व हैं जिन पर हिमालय की भौगोलिक अभिलक्षणों का गहरा प्रभाव है तथा जिनमें पर्यावरणीय कारक तत्व निरन्तर परिवर्तन करते हैं। उच्चावच परिवेश, जलवायु, जन सांख्यिकीय तथा अधिवास तंत्रीय प्रणाली, कृषि अर्थव्यवस्था व गमनागमन संचार की प्रकियात्मक स्थितियाँ भूमि उपयोग नियोजन के अनेक संदर्भ निर्धारित करती हैं।

यहाँ विकास के आधार तत्व भौगोलिक वातावरण के सम्पूर्ण परिवेश के संदर्भ में देखे गये हैं। इन तत्वों की आधारभूत क्षमता क्या है अर्थात् विकास को सही ढंग से चलाने पर ये किस तरह उत्तराखण्ड के विभिन्न उप प्रदेशों के आर्थिक दृष्टि से विभिन्न श्रेणियां प्रदान करेंगे। इसका निर्धारण यहाँ पर एक सामान्य तरह के गणितात्मक आधार पर किया गया है। इसके आधार पर जो श्रेणियां बनी हैं उन्होंने विकास विभवता के आधार क्षेत्रों का निर्धारण किया है। भौगोलिक एवं मानव वातावरण के आधार तत्व को मूल रूप में प्रयोग किया गया है और फिर विकास विभवता के क्षेत्रों का श्रेणीकरण, तहसीलों के आधार पर किया गया। ये आधार तत्व निम्न है :

1. तहसील के आकार/क्षेत्र का सूचकांक
2. कुल भौगोलिक क्षेत्र में वनों का प्रतिशत क्षेत्र
3. कृषि भूमि का प्रतिशत, कुल भौगोलिक क्षेत्र के संदर्भ में
4. घास व चरागाह भूमि का प्रतिशत
5. 400 मीटर से निम्न उच्चावच रेखीय भूमि का प्रतिशत
6. कृषि—गहनता का सूचकांक



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

7. भूमि/कृषि प्रणाली का सूचकांक
8. भूमि विभवता का सूचकांक
9. कृषि क्षमता का कोटि अंक
10. कुल कृषि भूमि में सिंचित भूमि का प्रतिशत
11. कुल कृषि श्रमिकों का प्रतिशत
12. कुल कृषि श्रमिकों का, कुल श्रमिकों से प्रतिशत
13. प्रति घर, कृषि भूमि का औसत
14. प्रति व्यक्ति, कुल कृषि आय

सारे (1 से 14) आधारतत्वों की गणना तहसील स्तर पर की गई है। सभी तत्वों को विभिन्न विधियों के माध्यम से अंतिम रूप देकर विकास नियोजन के संदर्भो में जांचा–परखा गया। आकार/क्षेत्र का सूचकांक तहसील व भौगोलिक/नियोजन इकाई के क्षेत्रफल के संदर्भ को स्पष्ट करता हैं। संतुलित और ठोस आकार, क्षेत्रफल के संदर्भ में नियोजन के लिए एक सुविधापूर्ण आधार होता है। सूचकांक का उच्च होना भौगोलिक विभवता व भूमि उपयोग की संभावनाओं का द्योतक तो है ही किन्तु नियोजन के विभिधायामी होने का संकेत भी करता है। इस संदर्भ में जोशीमठ तहसील का आकार/क्षेत्र सूचकांक सबसे उच्च है जो 25.3 है। इसके बाद भटवारी (24.4) नैनीताल–पुरौला (21.0) आदि है (सभी आधारतत्वों के आधार पर जो कौटि अकों की सरिणी बनी है इन सूचकांको की कोटि अंक 1,2,3,4 आदि तहसीलों के संदर्भ में दिए गए हैं यहाँ जोशीमठ (1) भटवारी (2) नैनीताल (3) कोटि क्रम में आते हैं । ऊखीमठ तहसील तथा अल्मोड़ा तहसील, आकार क्षेत्र के सूचकांक की दृष्टि से सारे उत्तराखण्ड हिमालय में 17.5 के कोटे अंक से पहचानी जाती है। वैसे दोनों का सूचकांक एक ही है। इसी तरह अन्य आधार तत्वों पर, तहसीलों के कोटि अंक ज्ञात किए। अब कोटि अंको को जोड़कर किसी खास तहसील का औसतं विकास नियोजन अंक निकाल लिया। इस औसत विकास नियोजन अंक से हर आधार तत्व के कोटि अंक का अन्तर ज्ञात किया। इन सभी (अन्तरों) को जोड़कर, आधार तत्वों की संख्या (जो चौदह है) से भाग दिया। अब जो औसत आया वह उस तहसील का नियोजन अंक है। इसे भूमि उपयोग नियोजन के संदर्भ में विभवता को कोटि अंक कहेंगे। इस तरह का कोटि अंक देहरादून के लिए ज्ञात किया जो 8.90 आया। इसी तरह अन्य तहसीलों का कोटि अंक भी ज्ञात किया।

विभिन्न आधार तत्वों की गणना प्रतिशतों तथा अन्य सहज और सीधे भूमि माप के संदर्भो से यहाँ की गई है फिर भी कुछ गणनायें अपेक्षाकृत जटिल प्रक्रिया से जुड़ी है जिनसे उत्तराखण्ड हिमालय के पर्यावरणगत तत्वों का विश्लेषण सूक्ष्म स्तर पर होता है। इनमें कृषि गहनता का कोटि अंक, कृषि प्रणाली का सूचकांक कृषि विभवता घनत्व के सूचकांक महत्वपूर्ण है।

कृषि गहनता का कोटि अंक भूमि उपयोग नियोजन के संदर्भो में उत्तराखण्ड हिमालय में विशेष रेखांकनीय है। उच्च कृषि गहनता की इकाइयां देहरादून (175.50) कोटद्वार (160.30) काशीपुर (155.50) हल्द्वानी (140.50) किच्छा (132.30) नैनीताल (160.30) चकराता (127.00) हैं। कृषि गहनता का अंक कुल जोते गये क्षेत्र तथा असल में बोये गये क्षेत्रों का अनुपात है। जहां एक ही साल में दो–दो, तीन–तीन फसलें उगती हैं, वहां कृषि गहनता हमेशा 100 से ऊपर होती है। यहाँ पर उस गहनता को कृषि आयामों (विभिन्न फसलों का अधिक से अधिक उत्पादन) के संदर्भो में विवेचित किया गया हैं। कृषि–आयाम तहसील विशेष में अधिकतर बोई जाने वाली फसलों के आधार पर निश्चित होता है। इसकी गणना एक सारिणी से की जाती है। जिसे कृषि आयाम की सारिणी कहा जाता है। पहले नम्बर पर सबसे अधिक क्षेत्रफल में बोई जाने वाली फसल का प्रतिशत रखा जाता हैं। उसके बाद उससे कम और इसी क्रम में अन्य फसलों का। किन्तु यह क्रम भूमि उपयोग नियोजन के संदर्भ में एक बिन्दु पर आकर रूक जाता है। यह वह बिन्दु है जहां पर अंकित फसल (कोई भी) सही योजना की दृष्टि से उस क्षेत्र में उगाई जाने वाली आखिरी फसल



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

होनी चाहिए। जैसे कि कोटद्वार तहसील के भाबर क्षेत्र में चावल गेहूं, सब्जियों के अतिरिक्त अन्य कोई भी फसल नियोजन संदर्भो में कम तार्किक है। जोशीमठ तहसील में जौ/गेहूं/मकई/कौंणी/झंगोरा व दालें सभी उगाई जा सकती है। किन्तु भूमि उपयोग नियोजन में इनका संतुलन ढूंढ़ना आवश्यक है क्योंकि कृषि आयाम विस्तीर्ण है। स्पष्ट है मध्य हिमालय कृषि आयामों की दृष्टि से जटिल क्षेत्र है जहाँ पाँच फसलें तक, एक इकाई में उगाई जाती हैं। प्रतापनगर, नरेन्द्र नगर, पौड़ी, अल्मोड़ा, चंपावत, चकराता इस तरह पाँच फसलों के क्षेत्र है। देहरादून, किच्छा, काशीपुर प्रमुखतः चावल–गेहूं–गन्ने के क्षेत्र है। एवं कम जटिल आधारों का निर्माण करते है। लैन्सडाउन, थलीसैण, रानीखेत, डुंडा, राजगढ़ी, दाईहाट, प्रमुखतः चार फसलों के क्षेत्र हैं। उच्च हिमालयी धाटियाँ व ढ़ाल जिनमें भटवाड़ी, ऊखीमठ, जोशीमठ, चमोली, धारचूला, मुनसियारी, पुरौला आते हैं झंगोरा, कौंणी, जौ फसलों के क्षेत्र हैं।

भूमि उपयोग नियोजन के विश्लेषण परिप्रेक्ष्यों में कृषि प्रणाली विभवकता का विशेष महत्व है। इस प्रणाली के माध्यम से कृषि की वास्तविकता व प्रवृति को नापा जा सकता हैं। किस भूमि पर कितनी फसलें उगाई जाती है। और उनका समय कितना है (एक फसली समय, एक वर्ष, दो वर्ष आदि) इनके आपसी अनुपात से कृषि की क्षमता नापी जाती है। प्रति इकाई उत्पादन ज्ञात किया जाता है। एवं इकाईयों के सदर्भ में कुल उत्पादन ज्ञात कर उसे उनके (इकाइयों के) क्षेत्रफल से विभाजित कर कृषि प्रणाली विभवता का सूचकांक ज्ञात किया जाता है। विभवता की दृष्टि से भावर/शिवालिक पेटी में सबसे अनुकूल कृषि क्षेत्र हैं। काशीपुर (58.90) एवं देहरादून (55.00) विशिष्ट इकाइयां उत्तराखण्ड हिमालय में हैं। हलद्वानी (40.50) लैन्सडॉन (44.00) कोटद्वार (50.10) प्रमुख पर्वत/पहाड़ पर्यावरणगत कृषि प्रणाली की विभवता इकाइयाँ हैं। मध्य हिमालय कृषि प्रणाली विभवता के संदर्भो में अपेक्षाकृत कमजोर क्षेत्र हैं। शिवालिक और मध्य हिमालय के पर्यावरण के मध्य प्रतापनगर (12.50) और चम्पावत (24.50) की पश्चिम पूर्व पेटी एक विशिष्ट संक्रांति क्षेत्र का निर्माण करती है। उत्तर के पर्वत क्षेत्र निम्न विभवता के प्रदेश है।

उत्तराखण्ड हिमालय का सामान्य कृषि पर्यावरण स्पष्टतः कृषि विभवता के घनत्व द्वारा प्रादेशिक विकासाधारित प्रारूपों में आँका जा सकता है। इन प्रादेशिक प्रारूपों की संरचना अनेक संदर्भो में कृषि के अभिलक्षणों से जुड़ी है। इसके धनत्व का सूचकांक जनसंख्या के धनत्व व कृषि भूमि के क्षेत्र के आपसी सम्बन्धों को विश्लेषित करता है। इस सदर्भ में कृषि तथा जनसंख्या के आपसी सम्बन्धों का गहन ज्ञान होना आवश्यक है। उत्तराखण्ड हिमालय में प्रवास की प्रवृति के कारण यह सूचकांक दो तरह के परिणाम प्रस्तुत करता हैं। घाटियों तथा उपजाऊ सिचित क्षेत्रों में धनात्मक विभवता दिखाता है तो मध्य हिमालयी ढ़ालों व अन्य क्षेत्रों में ऋणात्मक घनत्व की स्थिति प्रस्तुत करता है। दूसरी स्थिति उत्तराखण्ड हिमालय में भूमि नियोजनविदों के लिए चुनौती है। जनसंख्या तथा कृषि भूमि के संबंधों में किस तरह का संतुलन हो यहां यक एक बात अधिक महत्पूर्ण है। योजनाओं का आधार ढूंढ़ा जाना चाहिए। मात्र आँकड़ों और कागजी शहतीरों से हिमालयी विकास को नहीं फुसलाया जा सकता है। इस घनत्व के अनुपात को निम्न सूत्र से समझता जा सकता है।

कृषि योग्य भूमि की मात्रा प्रति इकाई जनसंख्या फसलों के उगाये जाने की कुल अवधि 1 (स्थिरांक)। इस विधि से सभी तहसीलों के घनत्व विभवांक ज्ञात किए। अधिक घनत्व के विभवांक कृषि के लिए अनुकूल पर्यावरण के सूचक हैं। कोटद्वार, किच्छा, काशीपुर, देहरादून तहसीलें सबसे उच्च विभवांकों वाली हैं। मध्य हिमालय के ढाल अपेक्षाकृत कम विभवता की ओर संकेत करते हैं। उच्च हिमालयी प्रदेशों में कृषि की विभवता सबसे कम हैं।

विभिन्न इकाइयों के सूचकांकों की गणना के बाद प्रतिशत अंकों के साथ ही तहसीलों के तत्वगत कारकांक ज्ञात किए। विभिन्न इकाइयों/भूप्रदेशों के सूचकांकों को कोटिगत संदर्भ दिए गए। विश्लेषणात्मक परिप्रेक्ष्य में उत्तराखण्ड के विभिन्न भूमि उपयोग नियोजन प्रदेशों का निर्धारण किया गया।

समस्त उत्तराखण्ड हिमालय के विभवगत नियोजन सूचकांक गणना द्वारा प्राप्त किए जो ऊपर के कोटि अंको पर निर्भर करते हैं। विभिन्न कारकों/तत्वों का उत्तराखण्ड के पर्वत पर्यावरण के संदर्भ में जो इकाईगत वैशिष्ट है वह नियोजन के पर्वतगत परिप्रेक्ष्यों में विश्लेषित होता हैं। तहसीलों के विभवगत योजना सूचकांक निम्न हैं :



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**विभवगत योजना सूचकांक :**

| तहसील | सूचकांक | तहसील | सूचकांक |
|---|---|---|---|
| 1. चकराता | 5.92 | 15. थलीसैण | 6.15 |
| 2. देहरादून | 9.60 | 16. लैन्सडॉन | 6.20 |
| 3. पुरौला | 5.25 | 17. कोटद्वार | 8.40 |
| 4. राजगढ़ी | 5.70 | 18. मुनसियारी | 4.10 |
| 5. भटवाड़ी | 6.10 | 19. धरचूला | 4.30 |
| 6. डुन्डा | 4.50 | 20. द्वारहाट | 4.00 |
| 7. प्रतापनगर | 6.10 | 21. पिथौरागढ़ | 4.50 |
| 8. नरेन्द्रनगर | 5.30 | 22. अल्मोड़ा | 5.60 |
| 9. देव प्रयाग | 5.30 | 23. चम्पावत | 5.60 |
| 10. ऊखीमठ | 4.80 | 24. नैनीताल | 6.90 |
| 11. जोशीमठ | 4.10 | 25. काशीपुर | 7.20 |
| 12. चमोली | 5.25 | 26. हलद्वानी | 7.15 |
| 13. कर्ण प्रयाण | 5.60 | 27. किच्छा | 6.00 |
| 14. पौड़ी | 6.15 | 28. रानीखेत | 6.12 |

भूमि उपयोग परिघटना के विभिन्न आयामों को विश्लेषित करने वाले ये नियोजन विभवांक उत्तराखण्ड हिमालय के भौगोलिक संदर्भो को विवेचित करते हैं। नियोजन सूचकांकों की उच्च संख्या किसी भी इकाई पर्यावरणगत विभवता की ओर संकेत करती है और भूमि उपयोग के तत्वों की बहु आयामी योजनागत विभवता को स्पष्ट करती हैं निम्न नियोजन सूचकांक पर्यावरण में सीमित विकास तत्वों की ओर संकेत करते हैं। सूचकांकों की भौगोलिक विभवता के आधार पर, उत्तराखण्ड हिमालय को निम्न विकास योजना प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है :

**1. दून और भाबर का नियोजन प्रदेश :**

आठ के सूचकांक से अधिक के हिमालयी प्रदेश नियोजन संदर्भो में विभिन्न विकासायामों के क्षेत्र हैं। कोटद्वार (8.40) एवं देहरादून (9.60) दोनों तहसीलें इस दृष्टि से विशिष्ट हैं। इन दोनों तहसीलों में उपजाऊ भूमि जो 400 मीटर से नीचे है। 90% से अधिक है। इन तहसीलों का भौगोलिक क्षेत्रफल नियोजन के संदर्भो में कम है किन्तु इनकी विकास–क्षमता अधिक है। विभिन्न कृषि सम्बन्धी उद्योगों तथा वनाधारित उद्योगों के लिए यह प्रदेश अनुकूल विभवता क्षेत्र को प्रस्तुत करता है।

**2. भूमि उपयोग नियोजन का पर्वत ढाल प्रदेश :**

सात से आठ के नियोजन सूचकांकों का यह पर्वत प्रदेश आर्थिक विकास की दृष्टि से विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाओं के लिए अनुकूल भूमि प्रस्तुत करता है। काशीपुर (7.20) हलद्वानी (7.15) एवं थलीसैण (6.15) तीन तहसीलें इस पर्वत ढाल क्षेत्र में आती है। मध्य पूर्व का यह उत्तराखण्ड हिमालय विभिन्न वनों कृषि भूमियों तथा जल संसाधनों के कारण विकास का उत्तम आधार प्रस्तुत करता है। इस भौगोलिक प्रदेश में ढाल एवं श्रेणियां वनाच्छादित हैं या चरागाहों के लिए आर्थिक रूप में प्रयुक्त होती हैं। काशीपुर, हलद्वानी में भूमि कृषि के अन्तर्गत है तथा प्रति इकाई उत्पादन विभवंता उच्च है। आकार एवं क्षेत्र सूचकांक की दृष्टि से तीनों इकाइयां बड़ी है तथा विकास क्षमता का उच्च आधार बनाती हैं। 16.8 का आकार–क्षेत्र सूचकांक थलीसैण/हलद्वानी को भौगोलिक क्षेत्रीय आधारों पर अनुकूल विकास क्षमता का क्षेत्र बताता है। दुग्ध उद्योग, कृषि एवं कृषि आधारित उद्योग, विद्युत शक्ति का विकास व सिंचाई की अनेकायामी योजनायें इस क्षेत्र में कार्यान्वित की जा सकती हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**3. स्थानिक जटिलता का भूमि उपयोग विकास क्षेत्र :**

नैनीताल (6.90) पौड़ी (6.92) रानीखेत (6.12) लैन्सीडान (6.22) भटवाड़ी (6.10) प्रतापनगर (6.11) एवं किच्छा (6.00) आदि ये सात तहसीलें भू स्थानिक संदर्भो में जटिल संसाधन प्रदेश का निर्माण करती हैं। विभिन्न तत्वों के माध्यम से इस प्रदेश की विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की प्रादेशिक पहचान की जा सकती है। अधिकांश विकास के आधार तत्व, प्रादेशिक संसाधन पर्यावरण की अन्तः भूमि उपयोग विभवता को स्पष्ट करते है। विकासांकों के आधार पर यह आश्चर्यजनक है कि नैनीताल–रानीखेत के दक्षिणवर्ती ढाल भटवाड़ी–प्रतापनगर के उच्च हिमालय पर्यावरण के साथ जुड़े गए हैं। यह समानता विकास के आधार तत्वों की स्थानिक विभेदनगत विशिष्टता के आधार पर है न कि स्थिति के संदर्भ में। जहां दक्षिण के ढाल कृषि प्रधान संसाधनों के आधार पर पहचाने जाते हैं वहां उत्तर में पर्वत प्रदेश ( प्रतापनगर/भटवाड़ी) कृषि पशुचारण के पर्यावरणगत तत्वों पर निर्भर करते हैं। घाटियाँ ढाल वेदिकायें उच्च पर्वत क्षेत्र एवं श्रेणियां सब मिलकर एक जटिल भू–स्थानिक परिवेश का निर्माण करते हैं । दुग्ध/पशुपालन, घरेलू उद्योगों तथा रसायन व दवाइयों के उद्योगों के लिए क्षेत्र अनुकूल है। बागवानी/पर्यटन कुछ नयें आयामों की ओर संकेत करते हैं।

**4. मध्य उत्तराखण्ड हिमालय की घाटियां व ढाल :**

उत्तराखण्ड हिमालय के इस भौगोलिक पर्यावरण में नौ तहसीलें सम्मिलित है। ये तहसीलें चकराता से चम्पावत तक मध्य हिमालय में पश्चिम–पूर्व एक पेटी का निमार्ण करती हैं। भूमि उपयोग नियोजन की विकास क्षमता में ये मध्यम प्रकार के भौगोलिक क्षेत्रों का रूप स्पष्ट करती है। चकराता (5.92) चम्पावत (5.60) अल्मोड़ा (5.60) कर्णप्रयाग (5.60) राजगढ़ी (5.70) नरेन्द्र नगर (5.30) पुरोला (5.25) देवप्रयाग (5.30) चमोली (5.25) अपने विभिन्न सूचकांकों की विभवता से, हिमालय प्रदेश के इस क्षेत्र की विकास क्षमताओं को उभारती हैं। चमोली, अल्मोड़ा तथा कर्णप्रयाग तहसीलों की भूमि उपयोग/संसाधन विभवता चकराता/पुरोला/राजगढ़ी की अपेक्षा अधिक है क्योंकि संसाधनों के भूमि संदर्भित उपयोगों की भिन्नता यहाँ अधिक है। वनों का कुल क्षेत्र से सम्बन्ध कर्णप्रयाग (46.5%) चम्पावत (43.3%) अल्मोड़ा (48.90%) चमोली (48.90%) नरेन्द्रनगर (48.90%) चकराता (45.00%) व देवप्रयाग (42.45%) में विकास तत्वों के स्तर पर पर्याप्त अनुकूल है। कृषि भूमि का अनुपात इस हिमालयी पेटी में उच्च है फलतः विकास क्षमता तो अधिक है किन्तु सिंचाई आदि अनुकूल नियोजन संदर्भो के अभाव में वर्तमान प्रतिइकाई उत्पादन विभवता कम है। क्षेत्रीय परिपेक्ष्य में नरेन्द्र नगर (20.30%) अल्मोड़ा (19.50%) चम्पावत (17.20%) देहरादून (17.60%) चकराता (17.00%) एवं देवप्रयाग (15.60%) कृषि की दृष्टि से उत्तम क्षेत्र हैं। भूमि उपयोग विभवता भटवाड़ी जैसे उत्तर के हिमालयी उच्च भागों में घास के क्षेत्र तथा विभिन्न भौगोलिक परिदृश्य/प्रादेशिक प्रारूपों के साथ बदलती रहती है। फलतः इस क्षेत्र में स्थानिक विभेदनात्मक स्तरों पर भूमि उपयोग के नियोजन संदर्भो को जांचा परखा जा सकता है । गम्यता/कृषि विभवता व पर्यावरण अनुकूलताओं के कारण नैनीताल/किच्छा तहसीलों का भूदृश्य भविष्य में नगरीय/औद्योगिक रूपों में उभर सकता है। दूसरी ओर मध्यम विभवता के इस क्षेत्र में, नैनीताल, किच्छा की अपेक्षा पर्यटन, वन संपदा व चारागाहों के आधारों पर भूमि उपयोग के नये रूपों की प्रबलता है। रातगढ़, पुरौला या चम्पावत, भागीरथी, काली के परिवेशगत संदर्भो में विकसित किये जा सकते है।

**5. निम्न विकासांकों/विभवांकों का प्रदेश --उत्तराखण्ड का पर्वतीय क्षेत्र :**

1300 मी. की उच्चावच रेखा से ऊपर का समस्त उत्तराखण्ड हिमालय निम्न विभावकों का क्षेत्र है। इसमें पर्वत प्रदेश की तहसीलें–ऊखीमठ (4.80) डुन्डा (4.50) पिथौरागढ़ (8.50) धाचूला (4.30) जोशीमठ (4.90) मुनस्यारी (4.90) एवं द्वारहाट (4.00) है। भूमि उपयोग विभनताओं की दृष्टि से यह प्रदेश अपेक्षाकृत निम्न क्षमता के है। सभी के विभावांक 4.00 एवं 4.80 के मध्य है जो ये संकेत करते है। कि यह क्षेत्र विकास के सीमित आयामों के आधार तत्वों तक सीमित है। पर्यटन भूदृश्य तथा घास क्षेत्र इसके प्रमुख भू–संसाधन है तथा धाटियों की कृषि भूमि कुछांशों में प्रादेशिक विकास/नियोजन को प्रभावित करती है। घास क्षेत्रों में ऊखीमठ, पिथौरागढ़, धारचूला का क्षेत्र विशेष महत्वपूर्ण है।

विभवता व नियोजन सदर्भो में यहाँ जो विश्लेषण दिया गया है वह सामान्यतः सांख्यकीय सूत्र प्रादेशिक/भौगोलिक



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इकाइयों की अभिलक्षणाओं तथा सर्वेक्षण के आधार पर टिकी है। विश्लेषण का मौलिक आधार मूलतः लेखक के भ्रमण/सर्वेक्षण व मानचित्रांकन के अनेक विस्तृत विवेचनों पर निर्भर है। फलतः विभवता के नियोजन प्रदेशों का जो खाका यहाँ प्रस्तुत किया है उसके प्राधारों में आपस में गहरा आंतरिक सम्बन्ध है तथा जो परिकल्पनात्मक/विचारात्मक मॉडल **डा. डवरवाल** ने पुस्तक में उभारें हैं। उनसे इनका घनिष्ट रिश्ता है।

**6. सलाण ढाल उप प्रदेश --संक्रमण का पहाड़ी पर्यावरण :**

हिमालय पर्वत में शिवालिक पहाड़ियों के साथ लगी पहाड़ी ढालों को सलाण (ढलवां ) भूमि कहते है। यह 800 मीटर 2500 मीटर तक की हिमालयी ढालों में फैली है। उत्तराखड हिमालय में गंगाासलाण (गंगा नदी की ढलवां भूमि) मल्लासलाण (उपर की ढलवां भूमि ) तल्लासलाण (नीचे की ढलवां भूमि) नाम के परगने इसी ओर संकेत करते है। वास्तव में हलद्वानी, नैनीताल, लैन्सडॉन, थलीसैण, रानीखेत, चकरात नरेनद्रनगर तहसीलों की भौगोलिक अभिलक्षणायें सलाण क्षेत्रों को स्पष्ट परिभाषित करती है। हिमाचल हिमालय में कांगडा, ऊना, हमीरपुर, महासू की ढलवां भूमि सलाण प्रकार के प्रादेशिक प्रारूपों को स्पष्ट करती है।

प्रस्तुत उप प्रादेशिक अध्ययन में **डा. डवरवाल ने** उत्तराखण्ड के एक छोटे भाग को अध्ययन हेतु लिया जो पर्यावरणीय परिवर्तनों को स्पष्ट करता है–ऐसे परिवर्तनों को जो कांलिक स्थानिक सदर्भो में नयी परिघटनाओं के साथ उभारें हैं। लैन्सडॉन तहसील का यह सलांण पहाड़ी ढाल अन्य सभी सलांण ढालों के समान प्रमुख 2000 मीटर से नीचे है। भौगोलिक क्षेत्र की दृष्टि से यह गंगा से लेकर रामगंगा तक फैला है। 1977 मे इस क्षेत्र की जनसंख्या 131.251 एवं भौगोलिक क्षेत्रफल (अनुमानित) 35.25 वर्ग कि. मी. है। इस क्षेत्र के डाडु (श्रेणियां) ढाल व घाटियॉ समस्त बहारी भाग में आर्थिक/सामाजिक परिवंर्तन की अनेक परिघटनाओं से जुड़े है। मैदानों एवं पर्वतों के संक्रमण क्षेत्र में होने के कारण इस उप–प्रदेश की पर्यावरणगत विभवतायें, गत्यांत्मक अनेक परिधटनाओं से गहरे में जुड़ी है। भाबर/दून उपप्रदेश की कृषिगत अभिलक्षणाओं तथा दूधातोली, पिंडर घाटी की मध्य हिमालयों कृषि चरवाही समष्टि के मध्य, सलाण ढाल अपनी अलग विशिष्टतायें निर्मित करता है। सबसे उच्च भूमि–श्रेणी डांगू इस उपप्रदेश में 1700–2000 मी. की ऊँचाई के हैं जिनमें अमोला/किमसार (गंगाके हरिद्वार क्षेत्र से लगा) हरसू–नाथूखाल (मध्य क्षेत्र), वणचूरी/जुआ (उत्तरी गगां सलाण–हिंवल क्षेत्र), कोट/माला विजगी (गंगा के साथ) दीपा का डांडा विनसरधार (रामगंगा नयार के उच्च क्षेत्र) सिलोगी–चेलसैण/गुमखाल कालो डांडा (लैन्सडॉन नयार क्षेत्र) प्रमुख पर्यावरणगत प्रादेशिक रूप हैं।

सलांण उपप्रदेश का आधारभूत पर्यावरण/वनों/जंगलों/कृषि ढालों/वेदकिओं तथा घाटियों से निर्मित हुआ हैं। भूमि उपयोग के विभिन्न परिदृश्य खुले जंगलों झाड़ियों, ऋतु सन्दर्भित चरागाहों एवं डाँड के अनेक चीड़, बुरांस वनों से परिभाषित होते हैं। दूसरी ओर छोटी–छोटी नदी घाटियां व उनके ढाल घने बसे हैं तथा जनसंख्या 300 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर तक हैं। ऐसी सलांण ढाली नदियों में रवासण, विदासंण, सतेड़ी, हिंवल, मालन, मंदाल, मैदगाड खोह प्रमुख हैं। इन नदियों की उपरली धारों पर वन जंगल है। मन्दाल घाटी में जहाँ घने वन हैं वहाँ उपजाऊ कृषि वेदिकायें भी हैं। हिवंल, जंगल/वनों और सलांणी ढालों की पर्यावरण परिघटना की घाटी हैं। रवासण/विदासण ढालें जंगल/कृषि की ढालें है। इन सभी के डांगू/श्रेणी क्षेत्र विभिन्न भूदृश्यों की भौगिलिक अभिलक्षण को परिघटनात्मक स्तरों पर परिभाषित करते हैं।

सलांण ढाल का उच्चवचन क्षेत्र 400 मीटर से लेकर 2000 मीटर तक के अनेक भौगोलिक परिदृश्यों में फैला हैं। गम्यता जाल के साथ, यातायात की सुविधाओं में वृद्धि हुई तथा सम्पर्क संचार की परिघाटनायें अनेक रूपों में बदली फलतः सलाण उपप्रदेश आर्थिक सामाजिक स्तर पर संक्रमण की पेटी के रूप में उभरा। यह पर्यावरणगत परिवर्तन सामाजिक आर्थिक प्राधारों को भौगोलिक/स्थानिक संदर्भो में नये ढंग से व्याख्यायित करता हैं। जनसंख्या का प्रवास व सम्पर्क–संचार का प्रकार्यात्मक परिवेंश इस दृष्टि से सलांण ढालों के परिवर्तित पर्यावरण को नये नये आयाम देता हैं। ग्रामीण अधिवासों तथा नगरीय उभरते परिवेशों की जनसांख्यिकीय/ आर्थिक प्राधारिकायें इन नये आयामों द्वारा



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

निर्मित होती/बदलती हैं। सलाण उपप्रदेश के परिवर्तित पर्यावरण को विश्लेषित करने हेतु हम तीन प्रकार्यात्मक वेसिनों का आधार ले सकते हैं। (1) हरिद्वार–ऋषिकेश का आर्थिक/सामाजिक पर्यावरण उदयपुर, ढांगू पठार, वेसिन व ढालः (2) कोटद्वार का उपप्रदेश जिसमें दोगडा–सतपूली यातायात केन्द्र एवं अजमेर, लंगूर, सीला व चमेठा का क्षेत्र आता हैं। (3) मंदाल/रामनगर का पूर्वी ढाल। इन तीनों सम्पर्क–संचार के प्रकार्यात्मक क्षेत्रों में जनसंख्या निरन्तर प्रवासित हो रही हैं तथा ग्रामीण अधिवासों की कृषि व्यवस्था में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। भाबर की कोटद्वार पेटी तथा रामनगर के गम्यता बेसिन के निम्न क्षेत्रों को छोड़कर सारे सलाण क्षेत्र में ग्रामीण जनसंख्या में कार्य कुशल श्रमिकों का अनुपात निरंतर घट रहा है। 15 से 50 की आयु के अधिकांश नर एवं नारी प्रवास में हैं या प्रवास में रहने वाले परिवार के सदस्य की आय पर निर्भर हैं। कृषि की प्रति इकाई उत्पादन क्षमता निरन्तर घट रही है। गाँवों पर नगरीय प्रकार की आवश्यकताओं का बोझ फैशन या अन्य संदर्भो में बढ़ता जा रहा हैं एवं समस्त सलाण ढाल आर्थिक/सामाजिक स्तर पर, प्रादेशिक व्यक्तित्व को सुरक्षित रखने में असमर्थ हैं। सड़कों को छोड़कर, सभी दिशाओं में विकास विभवता के बावजूद भी, हलद्वानी–रामनगर, मुक्तेश्वर–नैनीताल, कोटद्वार–सतपूली, ऋषिकेश–देवप्रयाग/टेहरी, सलाण/ढाल उपप्रदेश आर्थिक दृष्टि से निरन्तर कमजोर होते जा रहे हैं। वास्तविक आय पिछले बीस वर्षो में 31% घटी है भले ही रुपयों के आँकड़ों में कुल आय 7.3% बढ़ी हो। यह अन्तः-रूपों में विघटित होती आर्थिक स्थिति सलाण ढालों के पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन ला रही है। प्रवास और निरन्तर प्रवास, इस हिमालयी उपप्रदेश की दुर्दान्त नियति है। आर्थिक नियोजन का अविवेक इस तरह हिमालय के एक भाग को दुर्गति के कटीलें रास्तों पर भटका रहा हैं। आँकड़ों का धोखा/झूठ की अनेक रंगीन फिजाओं के साथ, विकास खण्डों से जिला कार्यालयों और प्रान्तीय/राष्ट्रीय राजधानियों तक फैला हैं। एकेश्वर एवं देवलगढ़ ब्लॉक में कुएँ तक खोदे जा चुके हैं। पिछले बीस वर्षो में कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार 30% से अधिक बढ़ा है किन्तु कृषि उत्पादन औसतन 28% घटा हैं। इस विसंगति ने श्रमिक शक्ति को सलांण प्रदेश से निर्वासित कर दिया है। अतः 15-55 वर्ष की श्रेणी में, कम कुशल नर–नारियों की संख्या का अनुपात बढ़ा हैं कुशल श्रम शक्ति प्रवासित हो गयी है पूरी जनसंख्या में बूढ़ों और बच्चों का अनुपात अधिक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवास की स्थिति निम्न परिवेश से स्पष्ट है।

**प्रवास गति (1975-77)**

| उप–प्रदेशीय परिवेश | ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत जो प्रवास पर है | |
|---|---|---|
| कोटला–पर्वत पादप्रदेशीय गाँव | स्थायी/अस्थायी | स्थायी प्रवास |
| (600 मीटर ऊँचाई) | 28.30 | 4.50 |
| मथाणा–ढाल प्रदेशीय गांव (1000 मीटर ऊँचाई) | 39.40 | 8.20 |
| सौड़–सलाण घाटी गांव (800 मीटर ऊँचाई) | 29.20 | 5.50 |
| तिमली–सलाण डाँडू गांव (1500 मीटर ऊँचाई) | 82.00 | 62.90 |

सलांण उपप्रदेश परिवेश में किस तरह सामाजिक/आर्थिक संरचनाओं में अन्तर आ रहा है यह उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है। सन् 1950–60 के दशक में जहां स्थायी प्रवास 5% से कम था वहां अब अधिकांश परिवेशों में यह 5% से अधिक हो गया है। अस्थायी प्रवास की तो बात ही क्या है–हर गांव का हर परिवार का एक सदस्य तो किसी न किसी रूप में प्रवास पर रहता ही है। इस आर्थिक प्रक्रिया ने कृषि भूमि पर गहरा प्रभाव डाला है फलतः सलाण ढाल प्रदेश के हर गांव में 20% से 35% तक कृषि भूमि बरसों बिना बोये रह जाती है और श्रमिकों का एक बड़ा भाग निरन्तर मैदानों की और निकल पड़ता है। इस प्रक्रिया ने हिमालय के इस पहाड़ प्रदेश में व्यावसायिक–संरचना के स्वरूपों को बदला है और बहुत सारी भूमि अनुपयोगी, वनहीन, फसलहीन पड़ी रह जाती है। क्षरण की तीव्र गति ने भूमि उपयोग



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

के संदर्भो को बदल डाला है। सरकारी नियोजन इस संदर्भ में ठोस कार्य करने की अपेक्षा बजट के आंकड़ों को अखबारों मे फैला कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेता हैं। नियोजन के संदर्भ इस तरह तीव्रता से बदलने होंगे 1955—60 में 80% ग्रामीण श्रमशक्ति कृषि में व्यस्त थी पर 1977—78 में मात्र 53% है। कुल आर्थिक उपलब्धि का 65% भाग 47% प्रवास पर गयी जनसंख्या द्वारा, प्रदेश को प्राप्त होता है। इस तरह कृषक तथा नौकरी पेशा जनसंख्या का अनुपात निरंतर बदल रहा है जिसमें प्रवासित नौकरी पेशा जनसंख्या प्रमुख होती जा रही हैं। 1950—60 के दशक में पशुपालन तथा पशुओं द्वारा प्राप्त गोबर एक महत्पूर्ण आर्थिक परिघटना थी किन्तु अब यह बहुत छोटे पैमाने पर रह गयी है फलतः कृषि की स्थिति विकठ तथा दूध—घी की मात्रा लगभग समाप्त होने पर है। प्रति सौ व्यक्तियों पर 1950—60 में घरेलू पशुओं का अनुपात सलाण प्रदेश के क्षेत्र में 110 से 175 तक था परन्तु 1970—77 के वर्षो में यह 40 से 80 के मध्य रह गया हैं। इन परिवर्तनों का प्रभाव ग्रामों के अतिरिक्त सलाण उप—प्रदेश के नगरों/ग्रामीण बाजारों पर भी पड़ा हैं एवं वहाँ भूमि के उपयोग की प्रवृति तथा आर्थिक प्रक्रियाओं में नये समीकरण उभरे हैं। इस संदर्भ में कोटद्वार, दोगड़ा, लैन्सडॉन के परिवेश को जांचा परखा जा सकता हैं।

## पर्यावरण सन्तुलन एवं भारतीय संस्कृति में वन

संसार में जो भी प्राकृतिक एवं मनुष्य द्वारा प्रदत वस्तुयें हैं, वे सभी मिलकर पर्यावरण बनाती हैं। परिभाषिक रूप में पर्यावरण से, अभिप्राय—जीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त भौतिक, रासायनिक तथा जैविक परिस्थितियों का योग है। प्रकृति अनादिकाल से ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती आ रही है, परन्तु आज विश्व की अबाध गति से बढ़ती हुई जनसंख्या एवं भौतिकवादी प्रवृति से आज प्रकृति द्वारा प्रदत्त व्यवस्था में अवांछित विदोहन के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण विश्वव्यापी समस्या बन गई है। यह पर्यावरण दो कारणों से मिलकर बना है :

**1. जैविक कारक :** (अ) पेड़—पौधे, (ब) जीव—जन्तु, (स) मनुष्य।

**2. अजैविक कारक :** (अ) वायु, (ब) जल, (स) मिट्टी।

जब दोनों कारक वातावरण में सन्तुलित रहते हैं तो पर्यावरण स्वच्छ एवं नियन्त्रित रहता है। परन्तु जब वातावरण असन्तुलित हो जाता है तो यही प्रदूषण कहलाता है। वर्तमान जगत में यह समस्या आज जटिल हो गई है जो कि भयावह रूप में मानव सभ्यता को निगल जाने के लिये अपने पञ्जे बढ़ा रही है परिणाम स्वरूप प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। जब कोई भी कारक इन सीमाओं कर अतिक्रमण कर जाता है तो जनपदोंध्वस होने का खतरा रहता है।

**वर्तमान में पर्यावरण :** मुख्य रूप से प्रदूषित हो रहा है जिसका मुख्य कारण प्रज्ञापराध हैं। प्रज्ञापराध के कारण (1) जल प्रदूषण, (2) वायु प्रदूषण, (3) भूमि प्रदूषण, (4) ध्वनि प्रदूषण (5) ताप प्रदूषण की जटिल समस्या विश्व के समक्ष है। यदि हम गंभीरता से विचार करे तो उपरोक्त सभी पर्यावरण प्रदूषण मुख्य कारक चरक संहिता में विमान अध्याय 8 में वर्णित है। जनपदोंध्वस के मुख्य कारकों पर विचार करना होगा। चरक में भगवान आत्रेय ने अग्निवेश से कहा, हे अग्निवेश ! प्रकृति स्थित भावों के भिन्न होते हुये भी मनुष्यों के अन्य भाव सामान्य है। प्रकृति स्थित जल, वायु, मिट्टी आदि भावों के विकृत होने से एक ही समय में एक ही समान लक्षण वाले रोग उत्पन्न होकर जनपदोंध्वस में वायु, जल, देश, काल समान्य रूप से विकृत होते है :

**यथा : तमुवाच भगवानात्रेयः एवमसामान्यानेमिटप्यग्निवेशः।**
**प्रकृत्यादिमिभाष्वै मनुष्याणां येऽन्यभावाः।।**
**सामान्यास्त द्वैगुण्यात् समानकालाः।**
**समान लिङ्गाश्च व्याधयोऽभिर्निवर्तमाना जनपद मुद्ध्वंत्सयन्तिः।।**
**ये ते खल्विपे भावा सामान्या जनपदेषु भवन्तिजः।**
**तद्य-वायुः रूदकं देशः कालइति।।** *(चरक बि. अ. 3/8 (प्र. स.)*

**विकृत वायु प्रदूषण के लक्षण :** आयुर्वेद में सामान्य एवं विशेष के सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुये उपरोक्त



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अजैविक कारकों—वायु, जल एवं देश (भूमि) में असन्तुलन होने से क्रमशः ऋतुविपरीत वायु चलने के कारण अत्यन्त वेग वाली वायु (हवा) अतिकर्कश, अतिशीत, अतिऊष्ण, अतिरूक्ष, अभिष्यन्दी, अतिशब्द करने वाली हवा आपस में टक्कर खाती हुई कुण्डली युक्त (भौरों के रूप में) बुरी दुर्गन्ध युक्त वाष्प, दूषित हो जाती है। वायुमंडल में पायी जाने वाली समस्त गैस एक निश्चित अनुपात में होती हैं एवं उपरोक्त कारणों से इस अनुपात में असंतुलन आ जाता हैं। जिसके फलस्वरूप वायु प्रदूषित होकर जीवधारियों के लिये घातक हो जाती है। हवा को प्रदूषित करने वाले पदार्थ कार्बन, विषैली गैस एवं खनिज लवण आदि कतिपय किस्मों के औद्योगिक कारखानों से निकलने वाला धुआं जिसमें सल्फर डाई आक्साइड, ओजोन आदि मुख्य विषैली गैस एवं खनिज लवण आदि हैं। इसके अतिरिक्त मानव के दैनिक उपयोग की वस्तुयें संचालितयान, आदि से भी वायु प्रदूषित होती रहती हैं। इस प्रकार की वायु के शरीर में प्रवेश करने पर दमा, खांसी, फेफड़े के रोग, श्वास सम्बन्धी रोग एवं त्वचा के रोग हो जाते हैं। इस प्रकार दिन प्रतिदिन वातावरण में कार्बन डाई आक्साईड की मात्रा विश्व में बढ़ती जा रही हैं जिसके फलस्वरूप औसतन तापमान भी बढ़ता जा रहा हैं।

**यथा : तत्र वातमेवं विविध मनारोग्य करं विद्यात्।।** *(च.वि.अ. 3)*

इस औद्योगीकरण युग के कारण जहाँ एक ओर मानव के लिये अनेक प्रकार की सुविधायें उपलब्ध हैं। वहीं दूसरी ओर औद्योगीकरण प्रदूषण एवं अन्य व्यावसायिक रोगों की समस्या बढ़ती जा रही हैं। विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उद्योगीकरण के कारण आज ऊर्जा का संकट उत्पन हो गया हैं। पेट्रोलियम पदार्थ पृथ्वी में एक सीमित मात्रा में हैं। आज सभी राष्ट्रों के सामने यह प्रश्नचिन्ह लगा हुआ हैं कि इस प्रकार के प्रकृति विदोहन से एक दिन ऐसा आ सकता हैं। कि जीवकाश्म ईंधन (पेट्रोलियम, कोयला) आदि पदार्थ पृथ्वी में समाप्त होने लगेंगे जिससे मानव का जीवन अति संकटमय हो जाएगा। इस प्रकार वायु से बढ़ती हुई कार्बन डाई आक्साईड की मात्रा के कारण 2030 तक धरती का तापमान 45 से 50 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच सकता है। समुद्र का जल स्तर 1.4 से 2.2 मीटर ऊपर उठ जायेगा और फलस्वरूप जनपदोध्वंस एवं महाप्रलय हो सकता है जिसका ज्वलन्त उदाहरण बंगलादेश एवं सोवियत संघ है।

**जल प्रदूषण** : औद्योगिक कारणों एवं बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप जल के विकृत होने पर जल का स्वरूप गन्ध, वर्ण, रस, एवं स्पर्श क्लेदयुक्त होने से जलचर (पानी में रहने वाले जीवधारी मछली आदि) व जलाशयों के विकृत होने पर जलीय पक्षी या तो मर जाते है या जलाशयों को छोड़कर भाग जाते है। जलाशयों का स्तर घट जाने के कारण या प्राकृतिक जलस्त्रोतों में पानी कम होने के कारण पानी पीने युक्त नहीं रहता जो कि कतिपय घातक रोगों का कारण होता है। आज देश को जल प्रदूषण का सबसे बड़ा खतरा है। भारत की कतिपय पावन नदियों एवं जलाशय गंगा, जमुना, काबेरी, नर्मदा आदि नदियों का जल प्रदूषण के कारण पीने योग्य नहीं समझा जाता है। हमारे देश में पानी के मुख्य साधन कुऐं, तालाब, झरने और नदियां हैं। गंगा—जमुना, गोदावरी, सरस्वती आदि नदियां धार्मिक रूप से पवित्र मानी गयी है। इन नदियों में स्नान करने एवं जल सेवन से शारीरिक एवं मानसिक कष्ट दूर होते है। ऐसी हमारी मान्यता है। यही कारण है कि विशाल कुम्भ पर्व इन पावन नदियों के संगम स्थलों पर होता है।

**यथा : नर्मदा सिन्धु सावित्री पवित्र कुरू में सदा।**

महर्षि चरक ने जनपदोध्वंस में जलप्रदूषण को मुख्यकारण लिखा है जैसा कि उपरोक्त प्रंसग में निदिष्ट किया गया है।

**यथा : उदकंतु खलु अत्यर्थ विकृति गन्ध वर्ण रसस्पर्श व क्लदेवहुल।**
**मनक्रान्त जलचरविहङ्गमुपक्षीण जलाशयमप्रीतिकर गुणंविद्यात्।।** *(च.वि.अ. 8)*

जल को प्राण कहा गया है, परन्तु आज 70% इन पवित्र नदियों, झरनों, तालाबों एवं कुओं का पानी दिन प्रतिदिन विकृत हो रहा है जो कि स्वास्थ्य के लिये घातक है। इस दूषित जल के कारण पेचिस, मोतीझरा, हैजा, अतिसार, मलेरिया, आन्त्रशोथ, कोलाईटिस, गैस्टाईटिस एवं वृक्क रोग होते जा रहे है। अनुमानतः इन बिमारियों से प्रति वर्ष लाखों की संख्या में अकाल मृत्यु होती है। जल में ये अशुद्धियां, विभिन्न लवणों जैसे सोडियम, पोटेशियम, कैल्सियम, मैग्नेशीयम, कार्बोनेट, बायोकार्बोनेट तथा सल्फेट आदि से होती है। कभी—कभी जीवधारियों के द्वारा विसर्जित मल, मूत्र, शवदाह, उद्योगों



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

द्वारा विसर्जित पदार्थो को नदियों में बहाने से जल प्रदूषित हो जाता है। इस प्रकार वायु एवं जल प्रदूषण के कारण अम्लीयवर्षा का भय रहता है। इसमें सल्फर–डाई–आक्साईड एवं नाईट्रोजन पर आक्साईड की वृद्धि बढ़ जाती है। इन दोनों गैसों का जब आक्सीकरण होता है। तब अम्ल एवं नाईट्रिक एसिड बनता है। दोनों गैसों के नर्म हवा के सम्पर्क में आने पर अम्लीयवर्षा होती है तथा तालाबों, झीलों में रहने वाले जीव–जन्तु मुख्य रूप से मरने लगते है। दिन प्रतिदिन हमारे देश में जल प्रदूषण की एक भयावह स्थिति पैदा होती जा रही है। पर्यावरणविद आज इसके निदान खोजने एवं हल करने के उपायों के लिये चिन्तित हैं। हमें इसके निराकरण हेतु धरती पर मिट्टी और जल के स्तर को विकसित करना होगा। इसके लिये वनों को विनाश से बचाना होगा। सघन वनों की सुरक्षा एवं वृक्षारोपण कार्यक्रमों में तेजी लानी होगी पर्वतीय भूभाग में जलस्रोतों की व्यवस्था पर जोर देना होगा।

**भूमि प्रदूषण** : औद्योगीकरण के कारण एवं खानों की खुदाई के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में सड़क निर्माण में डायनामाईट का अत्यधिक प्रयोग के कारण, बड़े–बड़े सागर (बांध) निर्माण के कारण, भूकम्प, अति–वृष्टि एवं अनावृष्टि के कारण भूमि प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। जिसके फलस्वरूप मृदा–क्षरण व सदकों का बनना, भूमि का रासायनिक प्रदूषण एवं उसरभूमि का निर्माण होना औद्योगिक कचरे द्वारा भूमि की उत्पादकता का नष्ट होना स्वभाविक है, लकड़ी, चारा एवं टिम्बर आदि की पूर्ति के लिये वनों का अवैध रूप से कटान करने के कारण पहाड़ों के ढलान अस्थिर हो जाने से मिट्टी का कटाव व बहाव बढ़ जाने के कारण करोड़ों टन उपजाऊ मिट्टी पानी के साथ बह जाती है। बंजर तथा ऊसर भूमि का वर्ण, गन्ध, स्पर्श, विकृत होता जा रहा है। सभी थल–चर जीव जन्तु दिखाई देने लगते है। मृग, पक्षी घबराकर भागने लगते है कुत्ते चिल्लाने लगते है जो कि जनपदोध्वंस के सूचक है। हमें इन सभी दूरगामी विषयों पर विचार करना होगा।

**यथा : देश पुनः विकृत गन्धं रसस्पर्श क्लेदबहुल एवं**
**क्रन्ति शब्दबहुलं चऽहितं विद्यात्।** *(च.वि.अ.8)*

पर्यावरणविद् सुन्दरलाल बहुगुणा का कहना है कि पर्यावरण सन्तुलन के लिये धरती पर जब मिट्टी और पानी बढ़ेगा तभी सही विकास कहा जायेगा। इसके लिये पृथ्वी को वनों से आच्छादित करना होगा। पूरे क्षेत्र में वनस्पतियाँ उगाकर शस्यश्यामला हरित क्रान्ति लानी होगी। जल के स्रोतों को पुर्नजीवित कर एवं मिट्टी के क्षरण को रोककर उपजाऊ भूमि को बढ़ावा देना होगा। आयुर्वेद में वर्णित जंगल, आनूप, एवं साधारण भूमि के अनुसार जंगल देश के विकास पर ध्यान देना होगा। जिस देश में छोटे–छोटे वृक्ष हो, वनस्पतियों का प्राचुर्य हो छोटी–छोटी पहाडियाँ हो, जल स्वच्छ, निर्वाध रूप से बहने वाली नदियाँ हो, सूर्य की धूप प्रचुर मात्रा में पड़ती हो, स्वच्छ, सुगन्धित वायु निर्वाध गति से बहती हो वह जांगल देश कहलाता है।

**यथा : देशोऽल्पवारि दुर्गमनो, जांगला अल्परोगदः।**
**आनूपोविपरीतोदस्मात् समः साधारणः यतः।।** *(अ.हृ.)*
**प्रचुरोदक वृक्षों यो निवासो दुर्लभातपाः।**
**आनूपो वहुदोषस्य, समा साधारणोमतः।।** *(च.वि.अ. 8)*

**ध्वनि प्रदूषण** : ध्वनि प्रदूषण जीवन के लिये निकट भविष्य में मानव का सबसे बड़ा शत्रु है। सारा विश्व इस ध्वनि प्रदूषण से चिन्तित एवं रोगग्रस्त होता जा रहा है। बढ़ता हुआ शोर विषैले रसायनों से भी सबसे ज्यादा घातक है। ध्वनि प्रदूषण से बचने के लिये ठोस उपाय करने होंगे। कल–कारखानों में कार्यरत कर्मचारियों के लिये उचित उपाय करने होगें। मोटरवाहनों के लिये आधुनिक साइलैनसरों की व्यवस्था पर जोर देना होगा।

**ताप प्रदूषण** : दिन प्रतिदिन विषैली गैसों के कारण एवं वायु प्रदूषित होने के कारण ऋतुओं में परिवर्तन एवं तापमान की धुरी में अन्तर आना ताप प्रदूषण के कारण हैं। इसके अतिरिक्त निम्न प्रकार से पर्यावरण प्रदूषण देखा गया है।

1. वनों का विनाश।
2. कतिपय पेड़–पौधों की प्रजातियों का समाप्त होना।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

3. प्रलयकारी बाढ़ का आना या सूखा पड़ना।
4. गन्दी बस्तियों के कारण।
5. बंजर भूमि के प्रसार के कारण उत्पादकता में कमी आना।

**भारतीय संस्कृति एवं वन सम्पदा :** प्रकृति स्थित सजीव एवं निर्जीव किसी भी इकाई की कमी एवं वृद्धि से सम्पूर्ण पर्यावरण के स्वरूप में विषमता आ जाती है। भारतीय संस्कृति का प्रादुर्भाव उत्तुंग पर्वत श्रेणियों के प्रान्तों, हरित हिमाच्छादित घाटियों, सुरभ्य नदियों के स्वच्छ तटों एवं विशाल सागर के वनाच्छादित प्रदेशों से हुआ है। मन्त्रदृष्ठा ऋषियों एवं साधु–सन्तों ने अपने जीवनोत्कर्ष एवं जनकल्याण की कामना से सतत चिन्तन एवं मनन कर लोक कल्याण की कामना की है। प्रकृति को ईश्वर मानकर इसकी पूजा, अर्चना एवं स्तुति का विधान बनाया है। इस प्रकार के कतिपय मंत्र वेदों, उपनिषदों एवं धर्म ग्रथों में मिलते है।

**यथा : अहोएषां वरं जन्म, सर्वप्राण्युजीवनम्।**
**धन्या मही सहायेम्यो निराशायान्तिनार्थिनः।।**
**ओं द्योः शान्तिः पृथ्वी शान्तिः औषधयः।**
**शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः सर्वारिष्ठः शान्ति हिः।।** *(अर्थववेद)*
**धत्ते कुसम पत्र फलावनीनां, धर्म व्यथा बहति शीत मथांसज च।**
**यो देहमथयति चान्यसुखस्यहेतो, तस्मैवदान्य गुरूवे तरूवे नमस्ते।।** *(भवभूतिः)*

ये चेतनावान् मूकपूण्या वनस्पतियां सभी प्राणियों का जीवन हैं। भारतीय संस्कृति में वट (वड़), नीम, अश्वत्थ (पीपल), बिल्व (बेल), बृन्दा (तुलसी), अपराजिता, पद्म (कमल), कदली (केला), देवदारू, दूर्व्वा (दूब), कुश, शमी, अरणी, आम्र (आम) आदि वृक्षों एवं पादपों को देव संज्ञा प्रदान की गई है। धार्मिक उत्सवों पूजा–पाठ में ये वनस्पतियाँ हमारे जीवन की अंग है। तुलसी का पौधा भारत में ही नहीं पश्चिमी देशों में भी प्रसिद्ध है। ईसाई लोग तुलसी को देवस्वरूप मानते हैं। ऐसी मान्यता है कि ईसा की कब्र पर यह पौधा उगा था। वृक्षों की महिमा को ध्यान में रखते हुये हमारे ऋषि–मुनियों ने कतिपय सुरभ्य काननों, उद्यानों एवं वनों, पर्वत शैलों का उल्लेख किया है जिनके नाम इस प्रकार है। 1. अंगिरावन, 2. नैभिषारण्यवन, 3. तपोवन, 4. गन्धमादन, 5. पंचनदवन, 6. कंटकवन, 7. दण्डकारण्यवन, 8. सौराष्ट्रवन, 9. कलिंगवन आदि कतिपय वनों का उल्लेख वर्णित है। इन वनों–उपवनों के कटान एवं विदोहन करने पर अनावृष्टि एवं अकाल पड़ने की अधिक सम्भावना बनी रहती हैं। अग्निपुराण में ऐसा उल्लेख आया है कि वृक्षों के अनैतिक रूप कटान करने पर अतिवृष्टि एवं अनावृष्टि होकर अकाल पड़ जाता है।

**यथा : क्रियते पत्र विच्छेदः सपुष्प फलनिस्तये।**
**अनावृष्टि भयं घोरं, तस्मिन्देशे प्रजायते।।** *(अग्निपुराणः)*

भौगोलिक एवं जलवायु के आधार पर हम इनको सदाहरित वन, पर्णपाती वन, उष्णकटिबन्धीय कण्टकितवन कह सकते है। कतिपय वनस्पतियों के नाम देश विशेष के आधार पर रखे गये है। जैसे कलिंग (कुटज), मागधी (पिप्पली), वाह्लीक (केसर), यवानी (अजवायन), सौराष्ट्री (फिटकरी), मलयज (चन्दन), केदारज (पद्माख), चीनाक (कर्पूर) आदि वनस्पतियों के नाम से है। वनस्पतियों का जीवधारियों से गहरा एवं अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

ये वनस्पतियां मानव द्वारा किये गये प्रदूषण को अपनी श्वसन क्रिया से शोषण कर शुद्ध आक्सीजन प्रदान करती है। जब हम इन पेड़–पौधों को काटते है तो तब हम नहीं सोचते कि हम अपना जीवन नष्ट कर रहे हैं। उन असंख्य प्राणियों का जीवन नष्ट कर रहे है जिन पर स्वयं हमारा जीवन निर्भर करता है। पेड़–पौधे नष्ट हो गये तो जंगली जानवर और पक्षी भी नष्ट हो जाते है। हमारे पालतू पशु, गाय, भैंस, बैल, बकरी सभी चारे पर निर्भर करते हैं और ये जीव–जन्तु भी प्रकृति के सन्तुलन को बनाये रखने में सहायक होते हैं। आज मानव को यह सोचना होगा कि अपनी सुख सुविधा के लिये प्रकृति को विनाश से बचाना है। प्रकृति में एक–एक जीव, अणु, एक–एक वनस्पति प्रकृति तन्त्र के आवश्यक पुर्जे है। एक भी पुर्जा यदि बिगड़ गया तो पर्यावरण का सन्तुलन बिगड़ जाता है। प्राकृतिक



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वनस्पतियों के नष्ट कर देने से हवा पानी, भूमि एवं नदियों का सन्तुलन बिगड़ जाता है। भूमि के क्षरण से बाढ़, आंधी, भूचांल आदि कतिपय समस्यायें उत्पन्न हो जाती है।

इसलिये वनों का हमारे जीवन से शाश्वत सम्बन्ध है। मनुंष्य के आगमन से पूर्व ये वनस्पतियां विश्व के धरातल पर विद्यमान थी यह भी कहा जाता है कि पादप के जीवन का प्रारम्भ समुद्र से हुआ। सम्भवतः हजारों वर्ष पहले ये पौधे समुद्र में रहे होगें। बाद में जब पृथ्वी का धरातल उनके लायक बन गया तो पौधे जमीन की ओर अग्रसर हुये जैसी मृदा रही वे मौसम और जमीन के अनुरूप घास, पेड़–पौधे और वनस्पतियों ने अपना स्थान ग्रहण किया इसी कारण इस औद्भिज सृष्टि मानव जीवन के धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में पूर्ण सहायक है। इतना ही नहीं वनस्पति विश्व में उस निराकार प्रभु का साकार रूप भी है। ये पेड़–पौधे ही मनुष्यत्व एवं देवत्व के मध्य सम्बन्धों का प्रमुख माध्यम रहा है। हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने वनस्पतियों के बीच बैठकर ईश्वर का साक्षात्कार किया। हमारे सभी धार्मिक कार्यक्रम यज्ञ, पूजा–विवाह, जन्म–मरण आदि कार्यो में तुलसी, बेल, बड़, पीपल, आम, चन्दन आदि कतिपय वृक्षों की महिमा वर्णित है। यही कारण है कि शश्यश्यामल हरियाली सुख एवं समृद्वि का द्योतक है। वैदिक काल से ही भारतीय लोकोपचार एवं सांस्कृतिक परम्पराओं को मूर्तरूप देने में नदियों एवं वनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है ऋग्वेद में बारम्बार मौसम के नियत्रण पाने, भूमि को उपजाऊ बनाने तथा मानव जीवन की एकसत्ता बढ़ाने में वन सम्पदा व वन्य जन्तुओं का महत्व दर्शाया गया है। धार्मिक ग्रन्थों में भी कतिपय ऋषि–मुनियों के आश्रमों में इस प्रकार सुरभ्य प्रकृति संरक्षण एवं वन सम्बर्धन के उदाहरण मिलते है। वैदिक भारत में अधिक वृक्ष रोपण करना एक नारा ही नहीं, अपितु धर्म द्वारा अनुमति प्राप्त करना जीने की उत्तम पद्धति है, वेदों के अनुसार जो व्यंक्ति वृक्ष लगाता है वह सीधा स्वर्ग जाता है उपनिषदों में भी वृक्ष को मनुष्य के तुल्य माना गया है। इसी कारण उपनिषदों में देव स्थान, जलस्रोतों के समीप, नगर एवं वनों से पेड़ों के काटने पर दण्ड देने का विधान बताया है। वनों के विकास एवं रोपण सम्बंधी विस्तृत उल्लेख वृक्षायुर्वेद में वर्णित है। आयुर्वेदिक संहिता ग्रंथों एवं पुराणों में वन सम्पदा को एक दूसरे का पूरक और सहायक माना गया है। मनुष्य जीवन पर्यन्त स्वास्थ्य की रक्षा, रोगों की चिकित्सा, खाद्य सामग्री, रेशे, लकड़ी, पेट्रोलियम पदार्थ, काष्ठकला, वाद्यसामग्री, कृषि उपकरणों, भवन निर्माण, सेतुनिर्माण, रेल–यातायात आदि विविध रूप में इन वनस्पतियों का उपयोग करता है, आज विज्ञान इन प्राकृतिक ऊर्जा के अन्य स्रोतों की खोज में लगा हुआ है जिसके फलस्वरूप उपयोगी सामग्री इन पौधों से प्राप्त की जा रही है। नवीन उर्जा के स्रोतों की खोज में विश्व का ध्यान आकृष्ट हुआ है ब्राजील कुछ समयपूर्व से अपने वाहनों में पेट्रोल के स्थान पर एलकोहल का प्रयोग करने लगा है, वहॉ पर गन्ना और कसावा की खेती बड़े पैमाने पर होती है। इन पौधों के किण्वन द्वारा इथेनोल बनाया जा रहा है जिससे वाहन चलते है। गन्ना, चुकन्दर, मक्का, ज्वार, गेहूँ एवं समस्त प्रकार के जैव कचरा (और्गेनिकवेस्ट) का उपयोग इथेनोल बनाने में हो सकता है। आस्ट्रेलिया के मैनवाल्ट विश्वविद्यालय में भी इस दिशा में अनुसन्धान चल रहा है। वहाँ के वैज्ञानिकों का ध्यान यूफोर्विया लेथा, यानि जो सेहुएड नामक पौधे के सदृश हैं जिसके काण्ड से सफेद दूध सदृश तरल निकलता है। इस पौधे का हाईड्रोकार्बन अंश कच्चे तेल की तरह होता है। दुनियां भर में यूफोर्विया की 5000 प्रजातियॉ पाई जाती है । इन पौघों से ईधन के अलावा लुब्रिकेन्ट के रूप में तेल बनाया जा सकता है। इसलिये भारत में इस प्रकार नवीन उर्जा के स्रोतों की खोज में इस वन सम्पदा का उपयोग किया जा सकता है। अतः प्रत्येक नागरिक का पुनीत कर्तव्य है कि गांवों, नगरों, स्कूलों, घर, आंगन में जीवनदायिनी वनस्पतियों को लगाना चाहिये तथा स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से वनों के महत्व के विषय में प्रत्येक नागरिक को जानकारी देनी चाहिये। इन वनस्पतियों का हमारे एवं प्राकृतिक जीवन में विशेष स्थान है। पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण की रोक–थाम के लिए इन उपयोगी वृक्षों की तालिका दी जा रही है।

**वनस्पतियों का दैनिक एवं प्राकृतिक उपयोग :**

**दैनिक उपयोग :**

1. वनस्पतियों द्वारा शुद्ध एवं स्वच्छ जलवायु प्रदान करना।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

2. प्रदूषण को रोके रखना, हवा, पानी एवं भूमि के पर्यावरण को संतुलित रखना।
3. जलस्रोतों की प्रचुरता और निरन्तरता को बनाए रखना।
4. भूमि के क्षरण मरूस्थल व बंजर से बचाये रखना।
5. वर्ष एवं ऋतुओं का प्राकृतिक संतुलन बनाये रखना।
6. वन्यजीवों की प्राणरक्षा व वंश वृद्धि को बनाये रखना।
7. वन उपवन, नदी, तालाब, सरोवर के सुन्दर दृश्यों को स्थायी रखना।
8. प्रकृति संतुलन को बनाये रखना।

**प्राकृतिक उपयोग :**

1. जीवन के लिए खाद्यान, फल–शाक और पौष्टिक पदार्थ प्रदान करना।
2. अर्क, मशालें, इत्र व स्वादमय पदार्थ को प्रदान करना।
3. औषधि, विटामिन्स (जीवनीयतत्व) प्रदान करना।
4. कार्बोहाइड्रेट एवं प्राणवायु (आक्सीजन) प्रदान करना।
5. खाद्य, तेल, ईधन सुगंधित तेल, धृत, वसा आदि प्रदान करना।
6. मादक, उत्तेजक, वेदनाशामक पदार्थो को प्रदान करना पूजापाठ–हवन, यज्ञ एवं कृषि के साधनों को प्रदान करना।
7. गृह निर्माण सामग्री व वस्तु–निर्माण के साधनों को प्रदान करना।
8. कुटीर उद्योग सामग्री, पटसन, रेशम आदि वस्तुओं का सुलभ कराना।

उपरोक्त विषयों पर पर्यावरण असंतुलन एवं प्रदूषण के कुप्रभावों का अध्ययन तथा उपायों का पता लगाया जाना है।

**प्रदूषण की रोक-थाम में उपयोगी वनस्पतियाँ :**

1. शुद्ध हवा प्रदान करने वाले वृक्ष :

(क) बट, पीपल, नीम, पाखर, जामुन, मौलसरी एवं पञ्चक्षीरी वृक्ष।

(ख) नीम पत्र, सफेद सरसों एवं साल के गोद का धूपन देने से वातावरण स्वच्छ होता है।

2. प्रदूषण को रोकने वाले पादप नीम, फरहद, मौलसरी, कपूर, तुलसी, मरवा, गन्धतृण, सीतावनी, नैरपत्ती, इनके रोपण एवं धूपन से लाभ होता है।

3. सर्वौषधि द्रव्य :

(क) जटामांसी, तगर, मुरामांसी, वचा कूठ, गुग्गुलू, सर्ज, (लोवान) नागरमोथा, कर्पूर, तुलसी, आदि।

(ख) पत्तियाँ वायु में मिले प्रदूषण पदार्थो के सूक्ष्मकणों को सोख लेती हैं। इसलिए वृक्षारोपण का महत्व है।

(ग) पत्थर के कोयले से उत्पन्न प्रदूषण को रोकने के लिये जंगल जलेवी नामक वृक्षों का रोपण लाभदायक हैं।

## उत्तराखण्ड में जलवायु के अनुसार जड़ी-बूटी उत्पादन (कृषि) :

वर्तमान में आयुर्वेद औषधि द्रव्यों एवं निर्मित औषधियों की देश एवं विदेशों में बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखते हुये तथा वर्तमान में वनों के विनाश एवं पर्यावरण के दूषित होने की समस्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, जिसके कारण जड़ी–बूटियों का भी अभाव होता जा रहा है। प्रमाणिक एवं उचित मात्रा में औषधि द्रव्य सुलभ नहीं हैं। विगत् दो–तीन वर्षो से केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय भारत सरकार की स्वदेशी चिकित्सा पद्धति आई.एस. एम. के निदेशक की देख–रेख में भारत के सभी प्रदेशों में जड़ी–बूटियों पर सेमिनारों का आयोजन किया गया था।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## हिमालय पर्यावरण : पारिस्थितिक मॉडल

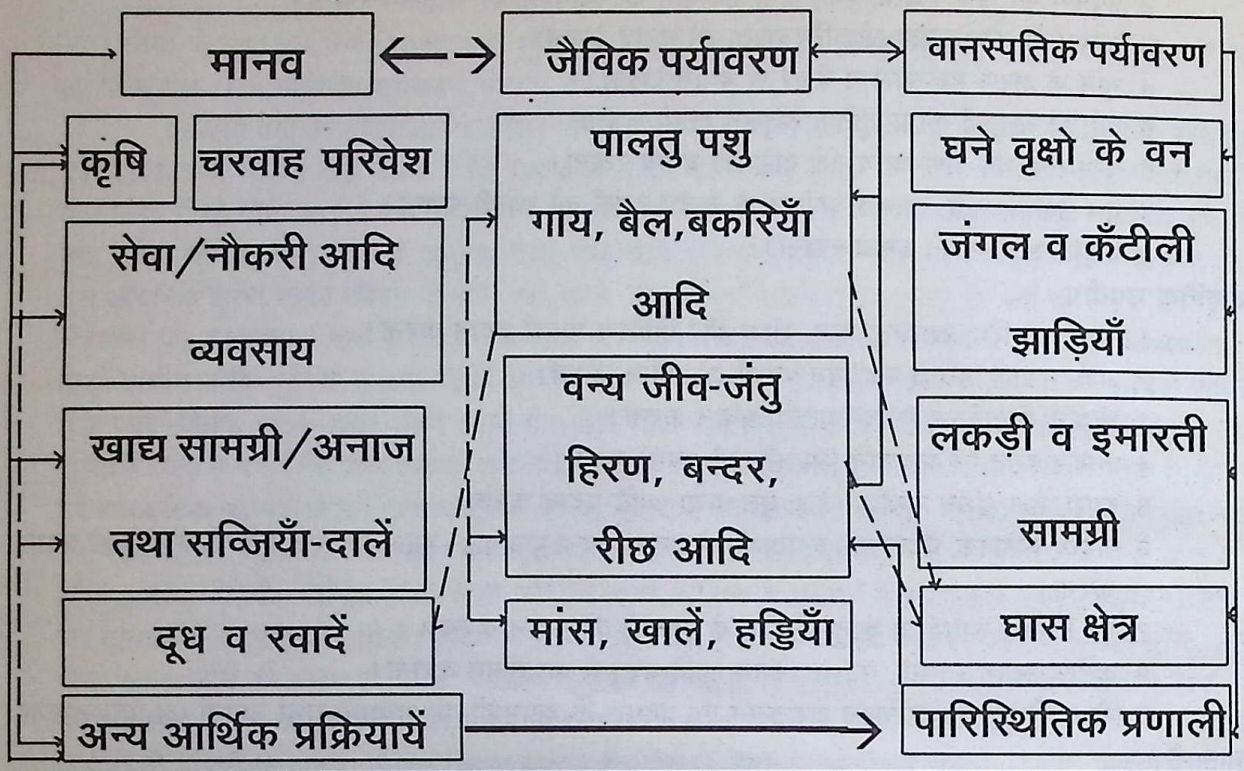


जिसका मुख्य उद्देश्य वनौषधि क्षेत्र में कार्यरत कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों, वन–विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों, पर्यावरण विभाग के शोध शास्त्रीयों एवं जड़ी–बूटियों पर कार्यरत कतिपय परिषदों के निदेशकों, उपकुलपतियों एवं विभागाध्यक्षों को आमंत्रित कर इस व्यवहारिक समस्या के समाधान हेतु गोष्ठियों का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि जड़ी–बूटियों की पौधशाला (नर्सरी) एवं बड़े पैमाने पर खेती करने हेतु क्षेत्रीय जलवायु के अनुसार ब्लाक स्तर पर कार्य प्रारम्भ किया जाय। इसके साथ–साथ यह भी सुझाया गया कि सीमान्त क्षेत्रों, ग्रामीण क्षेत्रों, आदिवासी क्षेत्रों के वनों का सम्वर्धन एवं भूमि को औषधि रोपण हेतु उचित दामों पर काश्तकारों एवं जड़ी–बूटियों की खेती में रूचि रखने वाले लोगों में भूमि का आवंटन किया जाय। वर्तमान में जड़ी–बूटियों की आवश्यकता देखते हुये यह अनिवार्य हो गया है।

प्राचीन काल से ही आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति ही निरापद स्वास्थ्य रक्षा का एक मात्र साधन रही है। नवीन ऐलोपैथी औषधियों के घातक दुष्परिणामों पर सभी विद्वानों ने गहराई से विचार किया है और वे इसी निष्कर्ष पर पहुंचे है कि प्राकृतिक रूप से उत्पन्न जड़ी–बूटियों द्वारा की जाने वाली चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ है।

राष्ट्रीय घोषित कार्यक्रम के अनुसार सन् 2000 ई. तक सबको आरोग्य स्वास्थ्य पहुंचाना है। यह तभी सम्भव है कि सरकार अविलम्ब वनौषधि रोपण एवं बड़े पैमाने पर जड़ी–बूटियों की खेती तथा पौधशालाओं की स्थापना कराने में जनता को प्रोत्साहित कर सहयोग प्रदान करे। क्योंकि आयुर्वेदिक औषधि निर्माण के लिये प्रचुर मात्रा में जड़ी–बूटियों की जरूरत है। सुगन्ध व्यवसाय (एरोमेटिक) में भी जड़ी–बूटियों का उपयोग होने लगा है।

1. देश–विदेश में जड़ी–बूटियों की मांग बढ़ती जा रही है।

2. एक हजार एकड़ भूमि का आंवटन पौधशाला (नर्सरी) एवं औषधीय पादपों की खेती करने हेतु स्वीकृति प्रदान की जाय।

3. तराई एवं भावर के क्षेत्र में पांच सौ एकड़ एवं हिमालय की घाटी में पांच सौ एकड़ भूमि उचित दर पर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इस योजना को तथा जनहित को ध्यान में रखते हुए स्वीकृत की जाय, जिसमें अलग–अलग जलवायु में पैदा होने वाली वनौषधि पादपों की सफल खेती एवं पौधशाला तैयार की जा सके वनौषधि पादपों की सफल खेती एवं उत्पादन के साथ–साथ वन प्रबंध के विशेष नियमों का ध्यान रखना अनिवार्य है। हिमालय की घाटियों से लेकर तराई भावर के वनों में गौणवन उपज एवं संरक्षण के विकास हेतु वनमन्त्रालय द्वारा नीति निर्धारण करना एवं वनराजी अधिकारियों को प्रशिक्षण देने की योजना तैयार करनी होगी। जड़ी–बूटि उत्पादन हेतु निम्न उद्देश्यों के क्रियात्मक एवं व्यवहारिक पहलुओं के क्रियान्वयन हेतु जड़ी–बूटी संस्थान (हर्बल इन्स्टिच्यूट) की स्थापना स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा की जाय। उद्देश्य इस प्रकार हैं :

1. जड़ी–बूटी संरक्षण एवं उत्पादन की वैज्ञानिक विधियों को विकसित करना।

2. पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्र के सभी जिलों में उपलब्ध जड़ी–बूटियों का विस्तार से सर्वेक्षण करना तथा प्रत्येक जड़ी–बूटी के संग्रहण की क्षमता का निर्धारण करना।

3. जड़ी–बूटी की कृषितकनिकी का शोध व उसे व्यावहारिक बनाने हेतु हर्बलफार्म की स्थापना कर कृषकों को खेती व्यवसाय हेतु प्रशिक्षण देना।

4. जड़ी–बूटी विज्ञान क्षेत्र (हर्बोनामि) के विभिन्न पक्षों जैसे पहिचान, प्रयोज्यअंग, संग्रहविधि, पुनरूत्पादन, संरक्षण आदि के सम्बंध में कृषितकनीकी, बुवाई, सुरक्षा, फसल एकत्रीकरण, भण्डारण आदि का तकनिकी प्रशिक्षण।

5. प्राथमिक चिकित्सा के लिये घरेलू उपचार एवं पारम्परिक चिकित्सा को बढ़ावा देने के लिये विशेष कार्य करना।

6. जड़ी–बूटी विज्ञान (हर्वोनामी) तथा इससे सम्बन्धित चिकित्सा के समस्त पहलुओं पर अनुसंधान की दिशा निर्धारण कर कार्य करना।

7. पर्वतीय अंचलों में आयुर्वेद की चिकित्सा, लोक परम्परागत चिकित्सा एवं स्वास्थ्य संरक्षण से सम्बन्धित विशिष्ठ चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराना एवं आरोग्य सदनों की स्थापना करना अनिवार्य है।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उ.प्र. सरकार द्वारा गोपेश्वर में जड़ी–बूटी संस्थान की स्थापना की घोषणा चमोली जनपद के जिलाधिकारी महोदय ने वर्ष 1990 में की है। तथा वर्ष 1992 में श्री एन. सी. शाह ने इस जड़ी–बूटी संस्थान के निदेशक का कार्यभार अधिग्रहण कर लिया है। कार्य की प्रगति के दिशा में पर्वतीय विकास परिषद विचार करे एवं कार्यप्रगति की समीक्षा हेतु उ.प्र. सरकार से जानकारी प्राप्त करे। जड़ी–बूटी संस्थान की स्थापना हेतु वर्ष 1989 में विशेषज्ञ समिति द्वारा उत्तराखण्ड के जनपदों का सर्वक्षण किया गया उसकी रिपोर्ट लेखक द्वारा तैयार की गई। उन सभी पहलुओं पर विचार कर कार्य प्रगति के विषय में उ.प्र. सरकार को समीक्षा करनी जरूरी है। प्रगति निराशाजनक है।

**प्रबन्ध के विशेष उद्देश्य :** वन प्रबंध के सामान्य उद्देश्यों के प्रतिकूल न जाते हुए प्रबंध के विशेष उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. गौण वन उपज का संरक्षण एवं विकास

2. विदोहन योग्य गौण वन उपज का यथासम्भव वैज्ञानिक एवं क्षतिमुक्त समुपयोजन कर स्थानीय निवासियों की वनौषधि, चारा, रेशे तथा अन्य मांगों की यथासम्भव पूर्ति।

3. महत्वपूर्ण एवं लुप्तप्राय गौण वन उपज प्रजातियों का अधिकाधिक सम्भव खेती एवं पुनर्जनन।

**कार्य श्रेणियां :** निम्न कार्य श्रेणियों पर विचार किया जाय।

क. वनौषधि कार्य श्रेणी।

ख. चारण कार्य श्रेणी।

ग. विविध कार्य श्रेणी।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**(क) वनोषधि कार्य श्रेणी वितरण :**

वनों में पायी जाने वाली प्रत्येक प्रजाति का किसी न किसी रूप में औषधि के लिये महत्व है, परन्तु प्रत्येक प्रजाति का वाणिज्यक रूप में विदोहन नहीं किया जाता है। वनौषधि पौधों का, जिनका वर्तमान समय में बहुत अधिक महत्व है, वैज्ञानिक तौर पर विदोहन नहीं हुआ है और अत्यधिक व लगातार विदोहन से कुछ जड़ी बूटियां लुप्त प्राय हैं। अधिकांश प्रजातियां सम–शीतोष्ण तथा उपहिमाद्रि क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

**कार्य ऋतु :** अधिकतर जड़ी–बूटियों के वार्षिक होने के कारण इनका विदोहन सितम्बर से दिसम्बर की अवधि में किया जाता है।

**वर्तमान दशा :** प्रायः वन क्षेत्रों में प्रतिवर्ष आग लगने, पशुओं के द्वारा अधिक चराई होने तथा अवैज्ञानिक ढंग से विदोहन के कारण जड़ी–बूटियों के सम्बंध में जानकारी की कमी है। बहुधा पौधों की जडों में औषधीय गुण विद्यमान रहते हैं, जिन्हे खोदकर निकालने के कारण पुनरोत्पादन नहीं हो पाता है।

**लुप्तप्राय प्रजातियां :** वन विभाग के आंकड़ों के अनुसार निम्नलिखित नौ जड़ी–बूटियां लुप्तप्राय धोषित की गयी हैं तथा इनके विदोहन पर उ.प्र. सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया गया है । सारणी निम्न है ।

**सारणी**

| क्र. सं. | स्थानिक नाम | वानस्पतिक नाम |
|---|---|---|
| 1. | अतीस | एकोनिटम हेटरोफाइलम |
| 2. | जटामांसी | नाडोस्टेकिस जटामांसी |
| 3. | सालम मिश्री | औरकिस लैटीफोलिया |
| 4. | सोमलता (प्रचलितनाम) | इफैड्रा जिरारडियाना |
| 5. | डोलू, आर्चा | रूयूम वेवीयाना |
| 6. | मिरग | पोलीइगेला (कांटा) |
| 7. | महामेदा | पोलीगोनेटम वर्टिसिलेटम |
| 8. | सालप | यूलोफिया कैम्पेस्ट्रिस |
| 9. | पत्थर लॉग | डिडोनोकार्पूस पैडीसिलेटा |

अवैज्ञानिक एवं अनियंत्रित विदोहन को रोकने के लिये किल्मोड़ा की जड़ों के खुदान पर वन संरक्षक कुमाऊं वृत्त के पत्रांक ख–1080/29-2-1 दिनांक 7 सितम्बर, 73 से प्रतिबंध लगा दिया गया। अखरोट की छाल (दन्दासा) निकालने पर भी पहले ही प्रतिबंध लगा दिया गया था दिनांक 5.6 व 13 दिसम्बर 1980 को सहकारी समितियों द्वारा जड़ी–बूटियों के विदोहन के सम्बंध में आयुक्त कुमाऊं मण्डल की अध्यक्षता में सम्पन्न बैठक में भी आरक्षित एवं सिविल वनों के अखरोट के वृक्षों से दन्दासा निकालने पर लगें प्रतिबंध को जारी रखने का निर्णय लिया था।

**प्रबन्ध प्रणाली :** पहले जड़ी–बूटियों का विदोहन ठेकेदारी प्रथा से किया जाता था, जिसमें ठेकेदार निर्धारित अवधि के लिये रॉयल्टी के रूप में एक मुश्त धनराशि वन विभाग को भुगतान करता था। ठेकेदार द्वारा एकत्र करायी गयी जड़ी–बूटियों की प्रजातियों एवं मात्रा पर वन विभाग का कोई प्रभावी नियन्त्रण नहीं था।

वर्ष 1973–74 से यह प्रथा बन्द कर दी गई व उसके बाद स्थानीय लोग स्वयं जड़ी–बूटी एकत्र कर स्थानीय व्यापारियों को बेच देते थे, जो कुमाऊं क्षेत्र से इन्हें बाहर ले जाने से पूर्व वन विभाग को निर्धारित रॉयल्टी का भुगतान करते थे। वर्ष 1976 में जड़ी–बूटियों के विदोहन का कार्य जड़ी–बूटियों के विकास, विदोहन, क्रय–विक्रय एवं मूल्य (रॉयल्टी) निर्धारण हेतु गठित समिति द्वारा लिये गये निर्णय के अनुसार सहकारिता विभाग को सौंपा गया, परन्तु उन्होंने यह कार्य केवल पिथौरागढ़ जनपद में ही किया सिविल एवं पंचायती वनों की जड़ी–बूटियों के समुपयोजन व निकासी का एकाधिकार कुमाऊं मण्डल विकास निगम को इस प्रतिबन्ध के साथ दिया गया कि हकधारियों के अधिकारों पर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसका कुप्रभाव न पड़े तथा उनको कोई आपत्ति न हो। कुमाऊं मण्डल विकास निगम ने कार्य प्रारम्भ किया व उन्हें 1985–86 तक एकाधिकार प्राप्त था इस अवधि में भेषज सहकारी विकास एवं क्रय–विक्रय संघ ने कुमाऊं मण्डल विकास निगम का एक प्रतिनिधि (एजेंट मात्र) रहा भेषज संघ ने कुमाऊँ मण्डल विकास निगम की ओर से कार्य किया, परन्तु वन विभाग को रॉयल्टी भुगतान करने का उत्तरदायित्व निगम का ही था। जड़ी–बूटियों के वैज्ञानिक विदोहन, मूल संग्रहकर्ताओं को सही व उचित मूल्य दिलाने, जड़ी–बूटियों के सही व उचित वर्गीकरण होने के पश्चात मंडियों में निर्यात किये जाने, दुर्लभ व लुप्तप्राय प्रजातियों के विशेष रूप से तथा सभी प्रजातियों के सामान्यतः पुनरोत्पादन को सुनिश्चित करने के लिये कुमाऊं मण्डल विकास निगम को जड़ी–बूटियों के समुपयोजन तथा निकासी का एकाधिकार दिया गया था, परन्तु निगम द्वारा किया जा रहा समुपयोजन श्रेष्ठ सिद्ध नहीं हुआ। ग्रामवासी जड़ी–बूटियां एकत्र करते थे व निगम के प्रतिनिधि भेषज संघ उनसे खरीद लेते थे। यह उल्लेखनीय है कि चमोली, गढ़वाल, नैनीताल एवं अल्मोड़ा जनपदों के प्रत्येक स्थानीय निवासी को अपने निजी उपयोग हेतु निःशुल्क जड़ी–बूटी निकालने का अधिकार प्राप्त है।

कुमाऊं मण्डल विकास निगम को स्वतंत्र रूप से पृथक–पृथक अपने प्रशिक्षित संग्रहणकर्ताओं के माध्यम से जड़ी–बूटियों के संग्रहण एवं विपणन हेतु अधिकृत किया गया। दोनों संस्थायें वन विभाग को निर्धारित वन चौकियों पर राजस्व अदायगी के उपरांत रवन्ना तथा निकासी प्रपत्र अपने–अपने संग्रहणकर्ताओं को जारी करने में सक्षम हैं। इस शासनदेश के परिप्रेक्ष्यों में अब जिला भेषज सहकारी विकास संघ एवं कुमाऊं मण्डल विकास निगम द्वारा स्वतंत्र रूप से जड़ी–बूटियों के संग्रह एवं वितरण का कार्य किया जा रहा है।

शासनादेश के अनुसार वन विभाग को दिये जाने वाले अधिकार शुल्क (रोयल्टी) की दर का निर्धारण इस शासनादेश के साथ संलग्न कार्य वृत्त के प्रस्तर 5(3) में गठित दर निर्धारण समिति द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अधीन किया जाता है।

शासनदेश के अनुसार संग्रहण व निर्यात की जाने वाली जड़ी–बूटियों के नाम, स्थान, अवधि व मात्रा का निर्धारण शासनादेश के साथ कार्य वृत्त के प्रस्तर 4(2) में गठित समिति द्वारा कार्य वृत्त में उल्लिखित निर्देशों के अधीन किया जाता है।

शासनादेश संख्या 542/28–1–86–3(6)83 दिनांक 17 मार्च, 1986 परिशिष्ट 8 (ख), कृषि उत्पादन आयुक्त, उत्तर प्रदेश की अध्यक्षता में दि. 10-10-85 को सम्पन्न हुई जड़ी–बूटी एवं भेषज विकास योजना समिति की बैठक में लिये गये निर्णयों को क्रम में प्रसारित किया गया है। बैठक में श्री अख्तर हुसेन, निदेशक सीमैप की अध्यक्षता में भेषज योजना के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु उत्पादन एवं भेषज उप समिति की संस्तुतियों को अंगीकार (एडोप्ट) कर प्रमुख रूप से निम्न संस्तुतियां की गई है।

**1. संस्तुति 4(1) :** पर्वतीय क्षेत्रों में न्यून मात्रा में उपलब्ध होने वाली तथा विलुप्त होने वाली जड़ी–बूटियों को संरक्षण प्रदान करने हेतु बायोंस्फेयर रिजर्व की स्थापना 10 बर्षो के लिये मटकोट (अल्मोड़ा) तुंगनाथ व मदमहेश्वर (चमोली) में की जाय।

**2. संस्तुति संख्या 4(2) :** समिति ने एक उप समिति के गठन का प्रस्ताव रखा है यह निश्चय करेगी कि किस स्थान पर किस जड़ी–बूटी का, किस समय तक व किस मात्रा में विदोहन किया जाए।

**3. संस्तुति संख्या 4(3) :** (क) सभी 8 पर्वतीय जनपदों में निम्न प्रजाति के समुपयोजन पर 5 वर्षो के लिए पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाय।

| क्र. सं. | स्थानिक नाम | वैज्ञानिक नाम |
|---|---|---|
| 1. | किल्मोड़ा | बरबेरिस की प्रजाति |

(ख) हिमाद्रि जनपदों अर्थात् उत्तरकाशी, टिहरी, चमोली, पिथौरागढ़ व अल्मोड़ा में प्रजातियों के 3 वर्ष तक समुपयोजन में पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया जाय :

| | | |
|---|---|---|
| 2. | वत्सनाभ विष, मीठा | एकोनाइटम एट्रोक्स |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| क्र. सं. | स्थानिक नाम | वैज्ञानिक नाम |
|---|---|---|
| 3. | वत्सनाभ विष, मीठा | एकोनाइटम डायनोराइजम |
| 4. | वत्सनाभ मीठा, विष | एकोनाइटम फाल्कोनेरी |
| 5. | अतिविषा अतीस | एकोनाइटम हिटिरोफाइलम |
| 6. | हथ्थाजड़ी, सालम पंजा | औरकिस हेबरनिऔइडिस, औरकिस लेटीफोलिया |
| 7. | कड़ू, कुटकी | पिकक्रोराइंजा करूआ |
| 8. | क्षीर–काकोली (अष्टवर्ग) | लिलियम पोलीफाइलम |
| 9. | ककोली (अष्टवर्ग) | फ्रीइटिलेरिया रोयलाई |
| 10. | जटामांसी | नारडोस्टेकिस जटामांसी |
| 11. | वन ककड़ी, वन्यक्र्कटी | पोडोफाइलम हेक्जेनडम |
| 12. | गन्धायण, चोरक | एन्जेलिका ग्लौका |
| 13. | सतवा, मीठीवच | पेरिस पौलीफायला |
| 14. | रतन जोत (लालजड़ी) | आरनेबिया बेन्थामाई |

(ग) सभी 8 पर्वतीय जनपदों में 3 वर्षो के लिये निम्नांकित प्रजातियों के समुपयोजन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया जाय :

| | | |
|---|---|---|
| 15. | पत्थर लौंग | डिडाइमोकारपस पेडिसेलाटा |
| 16. | पत्थर लौंग | डिडाइमोकारपस एरोमेटिका |
| 17. | डायस्कोरिया (सिंगली–मिगली) | डायोस्कोरिया डेल्टीडडिया |

(घ) निम्न प्रजातियों का क्रमिक समुपयोजन 3 वर्षो के लिये हिमाद्रि जनपदों में किया जाय :
प्रथम चक्र – उत्तरकाशी, चमोली व टिहरी, द्वितीय चक्र – पिथौरागढ़ व अल्मोड़ा।

| | | |
|---|---|---|
| 18. | कुटकी | पिकक्रोराइजा कुरुआ |
| 19. | डोलु, रेवन्द चीनी | रयूम इमोडी |
| 20. | डोलु | रयूम वैबियनम |
| 21. | गुगुल–धूप | ज्यूरिनिया मेक्रोसेफाला |

(च) निम्न प्रजातियों का क्रमिक समुपयोजन 3 वर्षो के लिये किया जाय :
प्रथम चक्र–उत्तरकाशी, टिहरी, चमोली एवं देहरादून। द्वितीय चक्र–पिथौरागढ़, अल्मोड़ा, नैनीताल एवं पौड़ी।

| | | |
|---|---|---|
| 22. | सुम्यों, सुगन्धबाला, तगर | वैलीरायना वेलिचियाई |
| 23. | सालप | यूलोफिया केम्पेस्टिस |
| 24. | ऋद्वि (अष्टवर्ग) | हेविनेरिया |
| 25. | वृद्धि (अष्टवर्ग) | हेविनेरिया इन्टरमिडिया |
| 26. | बनप्शा | वायोला सरपैन्स |
| 27. | ममीरा, पीतमूला | थेलिक्ट्रम फोलियोलोजम |
| 28. | नैर, केदारपाती | स्कीमिया लौरियोला |

(छ) निम्न प्रजातियों का क्रमिक समुपयोजन 3 वर्षो के लिये किया जाय :
प्रथम चक्र–पिथौरागढ़, अल्मोड़ा, नैनीताल, पौड़ी।
द्वितिय चक्र–उत्तरकाशी, टिहरी, चमोली व देहरादून।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| क्र. सं. | स्थानिक नाम | वैज्ञानिक नाम |
|---|---|---|
| 29. | बच, घोड़ बच | एकोरस कैलेमस |
| 30. | लसोनिया | मैलेक्सिस मस्क्फिरा, |
| 31. | जीवक ऋषभक (अष्ठवर्ग) | माइक्रोस्टाइलिस बैलीचाई, |
| 32. | गिन्दा, गिदाडूं | स्टेफेनिया ग्लेवरा |
| 33. | चिरेतु, चिरायता, किराततिक्त | स्वेरसिया चिरायता |
| 34. | सिलफोड़ा (पाषाण–भेद) | बर्जिनिया लिगुलाटा |
| 35. | पाषाणभेद | बर्जिनिया सिलियेटा, वर्जिनिया स्ट्रेचियार्ड |
| 36. | दन्दासा, अखरोट छाल | जुगलान्स रीजिया |
| 37. | कडू, त्रायमाण | जेन्सियाना करुआ |
| 38. | केशर (कुंकुम) | क्रोकस सटाईवस |

**4. संस्तुति संख्या 4(4):** कम मात्रा में अथवा विलुप्त प्राय जड़ी–बूटियों की पौधशालायें भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये वन विभाग विश्राम गृहों, डाक बगंलों तथा अन्य उपलब्ध नर्सरियों के समीप लगाये जाने का निर्णय किया जाय। इसके लिये विभिन्न ऊंचाइयों में स्थित 42 नर्सरियों में कार्य किया जा सकता है। वर्तमान में उद्यान विभाग के पास 8 सहकारिता विभाग के पास 28 तथा खादी ग्रामोद्योग विभाग के पास 5 फार्म हैं। वन विभाग भी 10 उपयुक्त पौधशालाओं की सूची प्रस्तुत करेगा। केन्द्रीय एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद की ताड़ीखेत रानीखेत वनौषधि वाटिका पौधशाला के माध्यम से कार्य प्रारम्भ है।

**5. संस्तुति संख्या 4(5) :** किस पौधशाला में किन–किन जड़ी बूटियों की प्रजातियों का कृषिकरण किया जाय, यह निर्णय उप समिति द्वारा प्रस्तावित एक अन्य उप समिति भ्रमण करने के उपरान्त भौगोलिक परिस्थितियों (ऊँचाई, भूमि, जलवायु आदि) को ध्यान में रखते हुये करेगी। वन संरक्षक, वन उपयोग वृत्त उप समिति के अध्यक्ष एवं सदस्य नियुक्त किये जाये। केशर की सफल खेती के प्रयास अविलम्ब प्रारम्भ किये जाये।

कृषिकरण हेतु जड़ी–बूटियों की सूची निदेशक, केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद तथा सी–मैप से उपलब्ध कराने में सहयोग लिया जाय। कृषिकरण एवं शोध कार्य हेतु तकनीक विकसित करने के लिय संयुक्त निदेशक, उद्यान पन्त नगर कृषि विश्वविद्यालय एवं सी.सी.आर.ए.एस. से सहयोग मांगा जाय। इस कार्य में सी–मैप से भी बराबर सम्पर्क रखा जाय। जड़ी–बूटी संग्रहण कार्य प्रशिक्षित श्रमिकों द्वारा किया जाना चाहिये। इन श्रमिकों को जड़ी–बूटियों की समुचित पहचान, विदोहन की वैज्ञानिक विधि तथा पौधे के किस भाग का विदोहन करना है, आदि का ज्ञान अनिवार्यतः होना चाहिये।

संग्रहकर्ताओं एवं कर्मचारियों को प्रशिक्षण पूर्ववत सहकारिता विभाग द्वारा ही दिया जायेगा प्रशिक्षण हेतु सी. सी.आर.ए.एस., ताडीखेत (रानीखेत) सी–मैप आयुर्वेद एवं एफ.आर.आई. देहरादून से सहयोग मांगा जाय। पर्वतीय विकास विभाग के वित्तीय सहयोग से रानीखेत में सहकारिता विभाग द्वारा दी जाने वाली प्रशिक्षण इकाई के इन्फ्रास्ट्रक्चर में विस्तार किया जाय तथा प्रशिक्षार्थियों को शैक्षिक डिप्लोमा/प्रमाण पत्र प्रदान किये जायें। उ. प्र. सरकार द्वारा स्थापित जड़ी–बूटी शोध एवं विकास संस्थान के प्रोजेक्ट के उद्देश्यों की विस्तृत जानकारी प्राप्त की जाय।

**वैज्ञानिक विदोहन के सम्बन्ध में प्रमुख ध्यान देने योग्य बातें :**

1. कुमाऊं मण्डल विकास निगम तथा जिला सहकारी भेषज विकास एवं क्रय–विक्रय संघ दोनों के द्वारा रानीखेत स्थित ड्रग फैक्टरी की प्रशिक्षण इकाई के माध्यम से अपने–अपने संग्रहण–कर्ताओं को जो जड़ी–बूटियों का संग्रहण करते है, जड़ी–बूटियों की पहचान, वैज्ञानिक विदोहन की रीति, सफाई, वर्गीकरण, भण्डारण आदि के सम्बंध में प्रशिक्षण दिलाया जाना चाहिये। वर्तमान में इस प्रशिक्षण इकाई में सहकारिता व कृषि विभाग के फील्ड स्तर के कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

2. वन विभाग के कर्मचारियों को भी उपरोक्त प्रशिक्षण इंकाई के माध्यम से जड़ी बूटियों की पहचान, वैज्ञानिक विदोहन रीति वर्गीकरण व उनके कृत्रिम पुनरोत्पादन के सम्बंध में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

3. केवल प्रशिक्षित व्यक्तियों को ही, जिनके पास निर्धारित प्रमाण–पत्र हों, जड़ी–बूटियों का विदोहन करने की अनुमति दी जानी चाहिये। आरक्षित वन में प्रवेश हेतु रेंज अधिकारी का हस्ताक्षरयुक्त परिचय–पत्र होना चाहिये तथा संग्रहकर्ताओं को प्रतिबंधित जड़ी–बूटियों की सूची दी जानी चाहिये।

4. जड़ी–बूटी के उसी भाग को निकाला जाना चाहिये जो औषधि बनाने में प्रयुक्त होता हो व अनावश्यक रूप से पूरे पौधे को न उखाड़ा जाय।

5. प्रतिबन्धित प्रजातियों का विदोहन नहीं किया जाना चाहिये।

**जड़ी-बूटी उत्पादन :**

जड़ी–बूटियों के निरन्तर एवं निरंकुश विदोहन तथा प्रतिवर्ष लगने वाली आग से विभिन्न जड़ी–बूटी प्रजातियों की उपलब्धता में कमी होने लगी है। विगत वर्षों में वन प्रभाग में इनके कृत्रिम पुनरोत्पादन के लिये विशेष प्रयास नहीं किया गया है। इन प्रजातियों के पौधरोपण योग्य क्षेत्र दूर–दूर स्थित हैं। जहां कार्य की व्यवस्था एवं समुचित पर्यवेक्षण दुष्कर एवं समस्यापूर्ण है, तथापि कम से कम आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाइयों के बनाने में काम आने वाली प्रजातियों के रोपण का प्रयास तो निश्चय ही किया जाना चाहिये। प्रतिवर्ष नये क्षेत्रों में रोपण करने की अपेक्षा उत्तम यह होगा कि रोपण हेतु पूर्ण जानकारी प्राप्त करके सीमित संख्या में अच्छे पौधालय स्थापित किये जायें ताकि उन्हें कालान्तर में फार्मो के रूप में विकसित किया जा सके। पौधालय क्षेत्र में ही तीन वर्ष तक रोपण करने के उपरान्त प्रथम वर्ष लगायी गई जड़ी–बूटियों को खोदा जाय तथा उसी क्षेत्र में पुनः रोपित किया जाय। एक बार यह क्रम निर्धारित हो जाने पर फिर कार्य में सुविधा होगी और इसे तब धीरे–धीरे वनों में छोट–छोटे क्षेत्रों में रोपण बढ़ाया जा सकता है। कार्य की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये जड़ी–बूटियों के रोपण का लक्ष्य निर्धारित नहीं किया जाता है।

**वनौषधि रोपण हेतु प्रस्तावित प्रजातियां :**

| | |
|---|---|
| 1. मधुयष्ठी (मुलैठी) | Glycyrrhiza glabra Linn. |
| 2. शुण्ठी (सोंठ) | Zingiber officinale Rose. |
| 3. काली मिर्च | Piper nigrum Linn. |
| 4. पिप्पली | Piper longum Linn. |
| 5. अकर–करा | Anacyclus pyrethrum DC. |
| 6. प्रियंगु | Callicarpa macrophylla Vahl |
| 7. लताकस्तूरी | Hibiscus abelmoschus Linn. |
| 8. सर्पगंधा | Rouwolfia serpentina Benth |
| 9. उलटकम्बल | Abroma augusta Linn. F. |
| 10. पारसीक (यवानी) | Hyoscyamus niger Linn. |
| 11. आत्मगुप्ता | Mucuna prurita Hook Tress. |
| 12. नागकेशर | Mesua ferrea Linn. |
| 13. गम्भारी | Gmelina arborea Linn. |
| 14. असन (विजयसार) | Ptrocarpus marsupim Roxb |
| 15. रक्त चंदन | Ptrocarpus santalinus Linn. F. |
| 16. श्योनाक | Oroxylum indica Linn. |
| 17. पाटला | Steroospermum suaveolens DC. |
| 18. अशोक | Saraca indica Linn |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | |
|---|---|
| 19. आमलकी | Emblica officinalis Gaerth. |
| 20. विडंग | Embelica ribes Brum. f. |
| 21. गुग्गुलु | Comifora mukul |

6000 फीट से लेकर 8000 फीट की ऊँचाई तक हिमालय की घाटी में खेती की जाने हेतु पौधशाला एवं औषधि रोपण ।

| | |
|---|---|
| 22. कुष्ठ | Saussurea lappa C. B. Clarke. |
| 23. पुष्करमूल | Inula racemosa Hook F. |
| 24. केशर (कंकुंम) | Crocus sativus Linn. |
| 25. तगर | Valeriana vallichii. DC. |
| 26. कृष्णजीरक | Carum carvi Linn. |
| 27. मंजीष्ठा (मंजीठ) | Rubia cordifolia Linn |
| 28. कुटकी | Picrorhiza kurroa Royle. Ex. Benth. |
| 29. अतिविषा (अतीस) | Aconitum heterophyllum Wall. |
| 30. पद्मकाष्ठ | Prauns cerasoides D. Don. |
| 31. कटःफल | Myrca nagi Thumb. |
| 32. जटामांसी | Nardostachys jatamansi. DC. |
| 33. तालीस | Taxus baccata. Linn. |

**जड़ी-बूटियों की सफल खेती के उपाय :** यदि यथार्थ रूप से देखा जाये तो समस्त चिकित्सा पद्धतियों में रोगों की चिकित्सा का मूलाधार वनौषधियां ही हैं। आयुर्वेद जो चिकित्सा का जन्मदाता है, में अनन्त काल से इन वनौषधियों का उपयोग होता आ रहा है। यदि हम आयुर्वेद के प्राचीन साहित्य का अध्ययन करते है तो पाते है कि तब प्रकृति में इन औषधि द्रव्यों का अपार भण्डार था। जनसंख्या के आधार पर तब इन वनौषधि द्रव्यों की आवश्यकता भी कम थी। परन्तु धीरे–धीरे जनसंख्या की वृद्धि हुई और अनेक प्रकार की व्याधियां दिन–प्रतिदिन उत्पन्न होने लगी। इनके उपचार हेतु इन वनौषधियों की आवश्यकता बढ़ती गयी। कालान्तर में औषधियों की बढ़ती हुई आवश्यकता को देखते हुए अनेक औषधि निर्माणशालायें स्थापित होने लगी। इन निर्माणशालाओं की आपूर्ति हेतु जंगलों से इन औषधि द्रव्यों का संग्रहण शुरू हुआ। फलस्वरूप धीरे–धीरे ये दुर्लभ वनस्पतियां नष्ट होने लगी। वनस्पतियों के विनाश से प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ा, पर्यावरण दूषित हुआ और अनेक वनस्पतिक प्रजातियां तो पूर्ण रूप से लुप्त हो गयीं।

आज भी देश की अधिकतर जनता इन वनौषधि द्रव्यों पर निर्भर करती है। आधुनिक औषधियों में दुष्प्रभाव के कारण अब पुनः औषध वनस्पतियों (वनौषधियों) की ओर झुकाव बढ़ता जा रहा है। आज देश एवं विदेश में आयुर्वेदिक औषध द्रव्यों एवं निर्मित औषधियों की मांग बढ़ती जा रही है। परन्तु दुःख है कि ये अमूल्य वनौषधियां अब आम आदमी की पहुंच से बाहर होती जा रही है। प्रामाणिक एवं उचित मात्रा में औषध द्रव्य सुलभ नहीं है। साथ ही इन वनौषधि द्रव्यों की कमी से औषधि निर्माणशालाओं में इनसें बनने वाली औषधियों के मूल्य भी बढ़ते जा रहे।

उपरोक्त समस्याओं को मध्यनजर रखते हुए आज की परिस्थितियों में यह आवश्यक हो गया है कि इन वनौषधियों का उन क्षेत्रों में जहां की मिट्टी, जलवायु, ऊंचाई आदि इनके लिये उचित हो, और जहां ये स्वतः–उग रही हों, में इनका व्यापक तौर पर वैज्ञानिक तरीके (विधि) से कृषिकरण किया जाय ताकि इनकी उपज बढ़ सके और ये आम जनता को उपलब्ध हो सके तथा औषध निर्माणशालाओं की बढ़ती हुई मांग पूरी हो सके। साथ–ही–साथ वनों में लगातार अनियमित संग्रह के दुष्प्रभाव को कम किया जा सके। वनौषधियों के कृषिकरण से जहां एक और वानस्पतिक प्रजातियां विनाश से बचेगीं वहीं दूसरी ओर इससे पर्यावरण का सन्तुलन सुधरेगा एवं वनौषधियों की खेती करने वालों को आर्थिक लाभ भी पहुंचेगा।

सामान्य फसलों जैसे गेहूं, धान, मक्का, आलू, सेब आदि की तुलना में वनौषधियों की खेती एक कठिन एवं जटिल कार्य है, क्योंकि आदि काल से इन दुर्लभ वनौषधियों का प्राप्तिस्रोत वन/जगंल ही रहे है। फलस्वरूप इनके



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कृषिकरण से सम्बन्धित ज्ञान का पर्याप्त अभाव रहा है। विगत कुछ दशकों से इस ओर अनेक संस्थाओं द्वारा कार्य किया जा रहा है। परन्तु अब भी अधिकाशं वनौषधियों के कृषिकरण से सम्बन्धित ज्ञान साहित्य का अभाव ही है।

अन्य फसलों की भांति वनौषधियों के कृषिकरण के लिए मृदा, जलवायु जमीन की तैयारी, बीज बोने/रोपण करने का समय, रोपण/प्रतिरोपण की विधि, बीज बोने के बाद रख, रखाव, सिंचाई, खाद एवं उर्वरक, कीट एवं बीमारियों का आक्रमण एवं उनका उपचार फसल काटने, सूखाने एवं उसके रखने की समुचित विधियों का ज्ञान होना आवश्यक है। परन्तु बहुत कम वनौषधियों के पौधों के बारे में इस प्रकार की तकनीकी जानकारी है। उन पौधों/ वनौषधियों जिनके बारे में कोई भी सहित्य नहीं है के विकास के लिए हमें इनसे मिलते जुलते दूसरे पौधौं/सामान्य फसलों आदि का उदाहरण लेकर आगे बढ़ना होगा। प्रस्तुत सामग्री में इन्हीं कुछ मुख्य–मुख्य विषयों का सामान्यरूप से संक्षिप्त में वर्णन किया जा रहा है ताकि वनौषधियों की खेती करने वालों के लिए यह कुछ सहायक हो सके।

**मृदा :** कृषिकरण में मिट्टी का अपना महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट स्थान है। किसी भी पौधे के लिए मिट्टी का चयन करने से पूर्व उस पौधें से सम्बन्धित साहित्य का भलीभांति अध्ययन करना जरूरी है, और तत्पश्चात उसके आधार पर ही मिट्टी का चयन करना चाहिए। जैसा कि आयुर्वेद में प्रयुक्त होने वाले बहुत कम वनौषधियों के पौधौं के कृषिकरण के बारे में साहित्य उपलब्ध है परन्तु आज अनेक शोध संस्थायें इस क्षेत्र में कार्य कर रही है, हमें चाहिए कि हम इन शोध संस्थानों से सम्पर्क करें ताकि आवश्यक जानकारी उपलब्ध हो सके। उन वनौषधीय पौधों जिनके बारे में कोई भी तकनीकी साहित्य उपलब्ध नहीं हो सके, हमें चाहिए कि हम उन संस्थानों से मिट्टी के नमूने एकत्र करें जहां पर ये पौधे, प्राकृतिक दशा में अपने आप उग रहे हों। इन एकत्रित मिट्टी के नमूनों का मृदा परिक्षण प्रयोगशालाओं में विश्लेषण करवाकर प्राप्त जानकारी के आधार पर भूमि का चयन करना चाहिए।

**जलवायु :** मृदा की भांति जलवायु के लिए विशेषज्ञों की राय अति आवश्यक है। उस स्थिति में जब किसी प्रकार का साहित्य या अन्य सहायता न मिले तो उस स्थानों का जहां पर ये पौधे प्रकृति में स्वतः उग रहे हों और फल, फूल रहे हों का व्यापक भ्रमण किया जाय और वहां के बावत आंकड़े जैसे कि उस स्थान की उगने वाली अन्य वनस्पतियां, स्थान की स्थिति का ढाल, धूप की स्थिति, वर्षा, गर्मी, ठड आदि एकत्रित करने चाहिए । तत्पश्चात इन के आधार पर इनसे मिलते हुए जलवायु वाले स्थान कि मृदा भी इसके लिए उपयुक्त हो, में वनौषधि कृषिकरण करना चाहिए। साथ–ही–साथ चयन एरिया के बारे में यदि कोई भौगोलिक, अन्य वन से सम्बन्धित या अन्य कोई आख्या मिले तो उनसे अध्ययन करना चाहिए जो इस कार्य हेतु काफी सिद्ध हो सकता है।

**जमीन की तैयारी :** साधारण फसलों की भांति वनौषधियों के लिए भी जमीन की भलीभांति तैयारी करनी चाहिए ध्यान रहे जमीन जितनी अच्छी तैयार होगी फसलें भी उतनी ही अच्छी पैदा होगी। पौधे या बीज लगाने से कम से कम एक माह पूर्व जमीन में खाद आदि का मिला देना लाभदायक सिद्ध होता है। जमीन में बीमारी, कीटों की आशंका की स्थिति में सम्बन्धित कीटनाशक दवाइयों, नीमपत्र, अर्क (आंख) आदि का प्रयोग आवश्यक है। सही दवा आदि के लिए विद्यमान कृषि इकाइयों, कृषि विशेषज्ञों की राय लेनी चाहिए। जिन पौधों जिनके बारे में कृषिकरण से साहित्य मिल सके, साहित्य में वर्णित विधि के अनुसार तैयारी की जाय।

**बीज का चुनाव :** अच्छी उपज के लिए सही बीज का होना अति आवश्यक है। बीज बीमारियों, कीट आदि से युक्त न हो इसकी भलीं भांति जांच कर लेनी चाहिए, किसी प्रकार की शंका होने पर विशेषज्ञों से जांच करवा लेनी चाहिए और राय के आधार पर कीटनाशक दवाओं आदि का प्रयोग करना चाहिए।

**बीज/पौधे लगाने की विधि :** अच्छी उपज एवं पौधें के अच्छे वानस्पतिक वृद्धि के लिए उन्हें उचित दूरी पर लगाना चाहिए । पौधों एवं पौधों की लाइनों के बीच पर्याप्त फासलों का होना आवश्यक होता है। इसके लिए हमें पौधों की ऊंचाई, फैलाव आदि को ध्यान में रखना चाहिए। यह जरूरी हो जाता है कि वे पौधे जिनकी वानस्पतिक वृद्धि एवं फैलाव अत्यधिक हो उनके सही विकास आदि के लिए पौधों के बीच पर्याप्त मात्रा में जगह हो, उन वनौषधीय पौधे जिनके बारे में तकनीकी जानकारी हो तो उसके आधार पर रोपण आदि करना चाहिए।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**बीज बोने/रोपण के बाद रख-रखाव :** अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए जमीन का सही ढंग से रख–रखाव नालियों की सही निकासी, निराई, गुडाई करना आवश्यक है। साथ–ही–साथ कीट, बीमारियों आदि के आक्रमण का भी ध्यान रखना जरूरी होता है। किसी प्रकार की बीमारी, कीट आदि का आक्रमण होने पर कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए किसी कृषि/कीट विशेषज्ञ की राय लेनी चाहिए।

**सिचांई :** कृषिकरण सम्बन्धी साहित्य उपलब्ध होने पर उसके आधार से सिचांई की जाय। यदि कोई साहित्य या अन्य सहायता उपलब्ध न हो पाये तो मौसम को देखते हुए सिचांई करनी चाहिए, यदि मौसम शुष्क हो और वातावरण में नमी कम हो तो पौधे को पानी देना आवश्यक हो जाता है। ध्यान रहे कि पौधे को पानी प्रातः या सांय जब जमीन ज्यादा गरम न हो दिया जाय।

**खाद एवं उर्वरक :** पौधे की अच्छी वृद्धि एवं पैदावर को बढ़ाने के लिए नाइट्रोजन, फासफोरस एवं पोटास की सप्लाई बहुत आवश्यक है। मृदा की जांच के उपरान्त बताई गयी मात्रा के अनुसार ही इनका जमीन में मिश्रण करना चाहिए, पौधे को समय–समय पर गोबर की खाद भी देते रहना आवश्यक होता है। खाद एवं रासायनिक खादों का प्रयोग सही रूप में होना नितान्त आवश्यक है। इसके लिए हमें उत्पन्न होने वाली पैदावर एवं उसकी किस्म पर पूर्ण ध्यान देना चाहिए उस खाद–उर्वरक का प्रयोग न किया जाय जिससे पौधे के उन तत्वों का ह्रास होता हो जो हमारे लिए आवश्यक है।

अन्य पौधों की भांति वनौषधियों के पौधे भी बीमारियों–कीट आदि के प्रकोप से मुक्त नहीं होते। बीमारियों, कीट आदि का आक्रमण होने पर इनकी संबधित विशेषज्ञों से जांच, पहचान करवा कर तदनुसार उपचार करना चाहिए। परन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि किसी भी दशा में प्रयुक्त होने वाले रसायनों का पैदावार एवं पौधे में विद्यमान तत्वों पर विपरीत प्रभाव न हो। विपरीत प्रभाव होने पर किसी विकल्प का प्रयोग करना चाहिए।

**फसल एकत्रित करना :** यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है कि वनौषधियों के पौधों का जो भी भाग औषधियों के रूप में उपयोग में लाया जाता है, जैसे फल, फूल, पत्ती, तना, जड़, छाल आदि उसे कब तोड़ा जाय एकत्रित किया जाय एवं कैसे सुखाया जाय। इस सम्बन्ध में जिन औषधियों के बारे में साहित्य मिल पाये उसका अध्यन करने के बाद ही प्रक्रिया आरम्भ करनी चाहिए। उन पौधों का जिनके बारे में कोई साहित्य तकनीक जानकारी उपलब्ध न हो से वांछित पौधों के भागों को समय के अन्तराल से उठाना चाहिए। एकत्रित किये गये प्रत्येक नमूने को अलग–अलग विधि से सुखाना चाहिए। तदुपरान्त इनका गुणात्मक विश्लेषण करवाया जाय और जिस स्थिति, विधि में ज्यादा तत्व मिले और द्रव्य गुणयुक्त हों उस विधि को अपनाना चाहिए। वातावरण, धूप, पानी, नमी आदि का पौधे के विभिन्न भागों में विद्यमान तत्वों पर प्रभाव पड़ता है। इन्हीं के आधार पर इन तत्वों की प्रतिशत मात्रा घटती एवं बढ़ती है। कुछ औषधीय द्रव्यों को धूप में सुखाया जा सकता है। तो कुछ को छाया में सुखाया जाना आवश्यक है। अतः उस पौधे (वनौषधि) जिसकी हम खेती कर रहे हों, के सम्बन्ध में किसी विशेषज्ञ की राय लेनी चाहिए। साथ–ही–साथ समय–समय पर किये गये नमूनों का विश्लेषण भी करवाना चाहिए ताकि आवश्यक जानकारी उपलब्ध हो सके।

**उपज की सुरक्षा :** पौधों (वनौषधियों) के बीज, जड़, पत्तों, छाल फल जो भी भाग औषधिरूप में प्रयोग में लाये जाते हों को संग्रहण करने के बाद भलीभांति सूखा लेना चाहिए। सूखाने के बाद इन्हें बन्द डिब्बों या थैलों में रखा जाय। ध्यान रहे कि रखने की जगह नमी वाली न हो। बीच–बीच में इसकी देख–रेख भी करते रहना आवश्यक होता है। एकत्रित द्रव्यों को ज्यादा समय अपने पास रखना उचित नहीं। उचित मूल्य मिलने पर इनका तुरन्त विक्रय कर देना चाहिए।

आज आवश्यकता है कि हम इन वनौषधियों के लिए केवल वनों पर ही निर्भर न रहें अपितु इनका उन क्षेत्रों में जहां की मृदा, जलवायु आदि इनके लिए उचित है, में इनका व्यापक प्रचार एवं प्रसार करे ताकि ये, महत्वपूर्ण वनौषधियां हमें सतत् रूप से प्राप्त होती रहें। यह प्रक्रिया जहां एक ओर हमारे पर्यावरण के सन्तुलन को बनाने में सहायक सिद्ध होगी वहीं दूसरी और हमारी अपनी परम्पराओं से जुड़ी चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद के बहुमुखी विकास में सार्थक



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

सिद्ध होगी। भारत की जलवायु के अनुसार हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक की धरेलू औषध उपयोग की जड़ी बूटियों की खेती में प्राथमिकता देनी चाहिए।

## उत्तराखण्ड प्रचुर प्राकृतिक सम्पदा के बावजूद विकास की दृष्टि से पिछड़ा क्यों ?

**समस्या एवं समाधान :**

उत्तर प्रदेश के पर्वतीय जिलों में टिहरी, उत्तरकाशी, चमोली, पौड़ी, देहरादून, अल्मोड़ा, नैनीताल एवं पिथौरागढ़ ये आठ जनपद आते है। जिनका क्षेत्रफल 51,100 वर्ग किलोमीटर है। इस भू–भाग की 40 लाख जनता प्राय– गांवों में निवास करती है। ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक एंव सांस्कृतिक दृष्टि से इन जनपदों की एक सी समस्याएं हैं। उत्तराखण्ड का 50 प्रतिशत भू–भाग वनों से आवृत है जब कि उत्तर प्रदेश मैदानीय भू–भाग के 5% भाग में वन हैं। उत्तर प्रदेश के अन्य भागों में प्रति व्यक्ति औसतन जो राजस्व सरकार को मिलता है वह एक रु० है जबकि उत्तराखंड के प्रति व्यक्ति से औसतन 2 रूपये मिलता है इतना होने पर भी कुल आय का एक छोटा हिस्सा ही उत्तराखंड के विकास में लगता है।

उत्तराखंड हिमालय में मनोरम शिखर, गहरी घाटियां, वेगवान झरने एवं कलकल निनाद करती हुई नदियां हैं। हिमालय के इस स्वरूप पर मनन एवं वैज्ञानिक विश्लेषण से हमें यह पता चलता है कि यहां हमारी अपार सम्पदा निहित है। इसकी पर्वत श्रेणियां या तो जंगलों की हरियाली ओढ़े हुए मिलती है या बर्फ से ढकी रहती है। जंगलों में अनेक किस्म की जड़ी बूटियां इसकी वन–संपदा परिलक्षित करती है। इन वेगवती नदियों के प्रवाह में अपार जल, शक्ति एवं सम्पदा छिपी हुई है। गर्म पानी के झरनों में भू–ऊर्जा के भण्डारों की अच्छी संभावनाएं है। इस क्षेत्र में जड़ी बूटियां खनिज व जल शक्ति का प्रचुर भण्डार मात्र जनसाधारण में पनचक्की तक सीमित है। इसी प्रकार प्रकार भू–ऊर्जा का उपयोग अभी तक क्षेत्र में कुछ हुआ ही नहीं है। बद्रीनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ आदि कतिपय स्थानों पर गर्म पानी के स्रोत हैं, लेकिन उपयोग के नाम पर इनमें चावल,आलू उबालते हैं। यह तीर्थ स्थान का प्रसाद माना जाता है। इन सभी संपदाओं के विस्तृत संवर्धन अनुसंधान एवं विकास के नाम पर आज भी प्रश्न चिन्ह लगा हुआ है। जिसके फलस्वरूप उत्तराखंड प्रचुर प्राकृतिक वन संपदा के बावजूद विकास की दृष्टि से आज भी पिछड़ा हुआ हैं। इन सभी कारणों का निराकरण व समाधान के उपायों पर विचार करना सभी पर्वतीय प्रवासियों का कर्तव्य है।

अब तक यह समझा जाता रहा है कि आर्थिक दृष्टिकोण से हिमालय की सम्पदा की स्थिति शोचनीय है, किन्तु पिछले दशक में हिमालय में उपलब्ध खनिज, वन और जल संपदा पर सर्वेक्षण और अन्वेषण कार्य हुए हैं और इनसे यह सिद्ध हो गया है कि इस क्षेत्र में विकास की अधिक संभावनाएं हैं। इसी आधार पर हिमालय में जल शक्ति बढ़ाने के लिए बहुत सी बॉध परियोजनाएं प्रारम्भ हो गयी हैं। जिनमें मनेरी बांध योजना, जमुना बांध परियोजना, टोन्स बांध परियोजना, टिहरी बांध परियोजना एवं श्री नगर अलकनन्दा बांध परियोजना प्रमुख हैं। हिमालय की खनिज सम्पदा में प्रमुख खनिज लोहा, तांबा, मेग्नेसाइट, फास्फोराईट, जिप्सम आदि हैं। इन सबका लाभ उत्तराखंड से बाहर जहां बड़े–बड़े कारखाने खुले हुए हैं, वहां के लोगों को है। उत्तराखण्ड के मूल निवासियों को किसी प्रकार का लाभ नहीं मिल पाता है। करोड़ो रूपयों का लीसा (राल) सस्ते दामों पर मैदानी भागों में पहुंचता है जबकि इसका कारखाना इसी क्षेत्र में होना चाहिए था। मैदानी क्षेत्र के स्टार पेपर मिल को करोडो रुपयों की लकड़ी, चारा इस क्षेत्र से आता हैं और जिसका लाभांश इस क्षेत्र को नही मिलता है। बड़े–बड़े प्रोजेक्ट सरकार द्वारा स्वीकृत किए जाते है और नाम मात्र के लिए भी पर्वतीय क्षेत्र में उद्योग धन्धों का विकास नहीं किया गया है। यही कारण है कि प्रचुर प्राकृतिक सम्पदा के बावजूद इस क्षेत्र में आर्थिक, शैक्षणिक विकास के अभाव से गरीबी ज्यों की त्यों बनी हुई है। इसका मुख्य कारण है कि पंचवर्षीय योजनाओं में जो भी योजना आयोग द्वारा तैयार की जाती है उसमें इस क्षेत्र के पिछड़ेपन के विकास के लिए कोई भी सक्रिय अध्ययन दल नहीं बनाया जाता है जो उत्तराखंड के जन–जीवन की आधारभूत परमावश्यक समस्याओं पर विचार कर सकें।

आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राकृतिक जड़ी–बूटियों का महत्व स्वीकार किया जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

में विश्व में उपलब्ध लोक–परम्परागत उपयोगी जड़ी बूटियों की सूची तैयार की है, किन्तु हमारे देश में आम आदमी को आज भी ऐसी अनेक दवायें खिलाई जा रही है जो कि विकसित देशों में हानिप्रद घोषित हैं। प्राकृतिक जड़ी बूटियों का खजाना हिमालय पर्वत की श्रृखंलाओं से एकत्र कर बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियों को कूड़े के भाव से विदेशों को निर्यात किया जा रहा है, जहाँ उनसे जीवनदायिनी दवा बनाकर उन्हें पुनः मंहगे दामों पर भारत में बिकने भेजा जाता है, इन जड़ी बूटियों से अनभिज्ञ स्थानीय जनता जिस प्रकार से इनका संग्रह करती है उसे देखते हुये यह निश्चित है कि आने वाले कुछ ही वर्षों में यह अमूल्य वनसम्पदा पूरी तरह नष्ट हो जायेगी। अनेक जीवनदायनी वनस्पतियाँ अकुशल लोगों के द्वारा किये गये संग्रह के कारण पूर्णतः समाप्त हो ही चुकी है, यदि इस दिशा में कोई कारगर योजना नहीं तैयार की गयी तो इस क्षेत्र की प्राकृतिक वनसम्पदा ही नहीं अपितु फूलों की घाटी, सहस्ताल, तपोवन, वासुकी ताल आदि स्थानों का नैसर्गिक सौन्दर्य भी नष्ट हो जायेगा। खेद है कि सरकार का दृष्टिकोण भी इस दिशा में सार्थक प्रतीत नहीं होता।

उत्तराखड की अधिकांश वनस्पतियों का उपयोग आयुर्वेदिक दवायें बनाने में हो सकता है स्थानीय लोग जिन्हें आयुर्वेद का थोड़ा बहुत ही ज्ञान है गम्भीर बीमारियों में भी स्थानीय परम्परागत जड़ी बूटियों का ही उपयोग करते हैं समय आ गया है कि हमें पुनः इस ज्ञान के खज़ाने को खोज कर संजोना है, स्थानीय शोध शास्त्रियों, जो इस क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों से सुविज्ञ है , द्वारा इन विषम स्थानों का सर्वेक्षण कराकर तथा नवीन खोजों के माध्यम से इस दिशा में अग्रसर हुआ जा सकता है एक नियोजित आर्थिक व्यापारिक प्रबन्ध के अन्तर्गत जड़ी बूटी विकास एवं दोहन का लाभ भी हिमालय निवासियों को हो सकता है।

मेरे विचार से यदि हिमालय क्षेत्र का गहन अध्ययन करना है तो इस क्षेत्र में आयुर्वेदिक महाविद्यालय एवं जड़ी–बूटी शोध संस्थानों की स्थापना की जानी चाहिये ताकि यहाँ के लोग अलकापुरी औषधिप्रस्थनगर, कैलाश, मानसरोवर, मध्य–हिमालय, सिक्किम, भूटान, नेपाल नेफा लद्दाख, आसाम, अरूणाचल प्रदेश आदि विशाल हिमालय में मिलने वाली इन वन संपदाओं की खोज के साथ–साथ औषधीय पादपों की खेती करने में सफल हो सकें। अन्यथा प्रचुर प्राकृतिक संपदा के बाद भी उत्तराखंड गरीबी की रेखा से ऊपर नहीं उठ सकता। इसी विहंगम दृष्टि को ध्यान में रखते हुए कुछ सुझाव बुद्धिजीवियों एवं विचारकों के समक्ष प्रस्तुत करना अपना पुनीत कर्तव्य मानता हूँ :

1. उत्तराखंड क्षेत्र में अविलंब स्थानीय विश्वविद्यालयों के अंतर्गत आयुर्वेदिक फैकल्टी की स्थापना की जाय।

2. औषधीय पादपों की खेती के लिए पर्वतीय परिसर में बीजों के भण्डार हेतु औषधीय नर्सरी स्थापित की जाए।

3. ग्रामीणों को जड़ी–बूटी की खेती, संग्रह एवं संवर्धन की तकनीकी जानकारी देने हेतु जिला स्तर पर इस विषय के जानकारों की नियुक्ति की जाए।

4. वनौषधि एवं खनिजों के सर्वेक्षण हेतु शोध संस्थान स्थापित किये जाये।

5. जनपद स्तर पर वनौषधि उद्यान स्थापित किये जाय एवं वनों के संवर्धन हेतु वृक्षारोपण अभियान जन आंदोलन के रूप में चलाया जाये।

6. सीमांत क्षेत्रों की जन–जातियों के सहयोग से लुप्त एवं दिव्यौषधियों की खोज की जाए। खनिजों एवं भू–ऊर्जा संबंधी उद्योगों की स्थापना की जाए।

7. बहुमूल्य एवं अंतराष्ट्रीय महत्व की वनस्पतियों की खेती को प्रोत्साहन देने हेतु पूर्ण स्वतंत्र विभाग अनुभवी एवं उद्यमी विशेषज्ञों की देखरेख में स्थापित किए जाय तथा आर्थिक अनुदान की व्यवस्था की जाय।

8. आयुर्वेदिक औषध उपयोग की जड़ी बूटियाँ, कुटकी, जटामांसी, अतीस, सालमपंजा, केसर, सालममिश्री विख, गुग्गुलधूप, आर्चा, कालाजीरा, कूठ, पुष्करमूल, तगर, पोडोफिलम, वचा आदि उपयोगी जड़ी बूटियों की कृषिकरण हेतु तकनीकी विधियां स्थापित कर ग्रामीणों में इस अभियान को लोकप्रिय बनाने हेतु वन विभाग के सहयोग से कार्यक्रम चलाये जायें।

9. हिमाद्रि वनों को आरक्षित कर प्राकृतिक रूप से पैदा होने वाली जड़ी–बूटियों का फैलाव एवं विस्तार किया जाये।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# LOCATION MAP OF MEDICINAL PLANTS IN KUMAON AND GARHWAL (UTTARAKHAND)

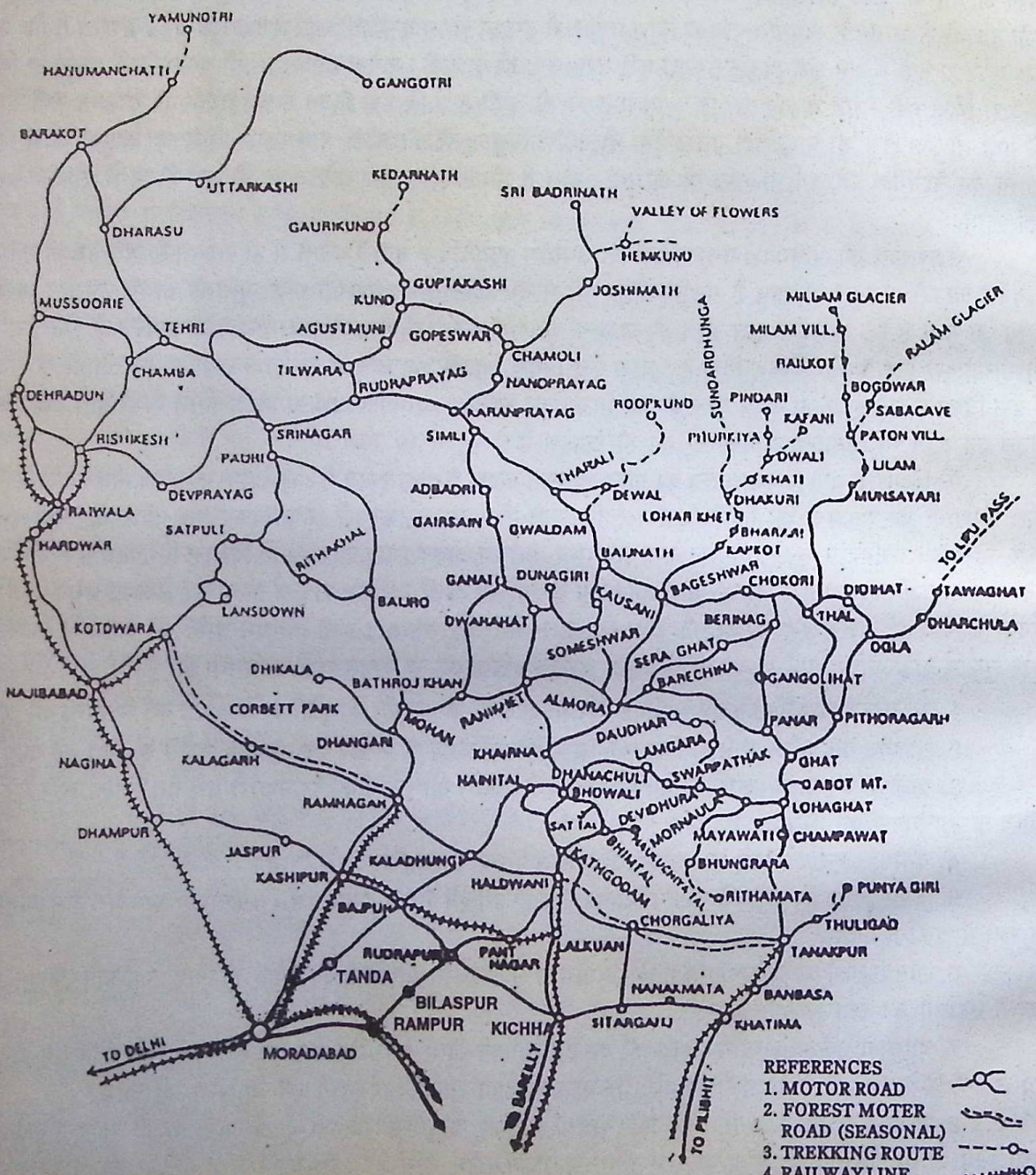




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अतीस (अतिविषा) Aconitum heterophyllum

मीठा विष (वत्सनाभ) Aconitum atrox

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## द्वितीय भाग

# औद्भिज द्रव्यों का वानस्पतिक स्वरूप एवं पहिचान
## (Vegetable Kingdom)

**विभाग-आवृतबीजी (Angiosperms)**
**उपविभाग-द्विबीजपत्री (Dicotyledons)**
**कुल-वत्सनाभादिवर्ग RANUNCULACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में औषधोपयोगी मुख्य द्रव्य अतिविषा (अतीस) प्रतिविषा, वत्सनाभ, निर्विषी, ममीरा, पीतमूला, उपकुञ्चिका, काण्डीर, उदसलीव (मेमेक) आदि कतिपय वनौषधियां महत्वपूर्ण है। इस कुल में वनस्पति शास्त्र के आधार पर लगभग 1300 जातियों एवं 35 कुटम्बों का समूह विभिन्न जलवायु में उपलब्ध है। इस वर्ग (कुल) में एक वर्षायु, द्विवर्षायु, बहुवर्षायु शाकीय पादप एवं आरोही लतायें पाई जाती हैं। पर्ण विन्यास प्रायः मूलोद्भव एकान्तर, पर्ण बड़े, चौड़े खण्डित या अखण्डित होते हैं पुष्प–द्विदल, विभक्त दल, पुंकेशर संख्या में अनियमित पुष्प बाह्यदल संख्या में पांच रंगीन, स्त्रीकेशर प्रायः अनेक, एवं अंसयुक्त होते हैं। पुष्प के सभी भाग गर्भाशय स्थित होते है। फलः प्राय अनेक बीज युक्त, बीज चपटे–धारीदार एवं कोष पांच खंडों में विभक्त होता हैं। मूल प्रायः मूलिकाकार, कन्दसद्यश एवं कुछ सूत्र सद्यश होते हैं। इस कुल के पुष्प पीत, नील, बैंगनी एवं श्वेत वर्ण के देखने में सुन्दर होते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अतिविषा; हिन्दी–अतीस; स्थानिक–अतीस, पतीस, भोटिया–पौंकर।

लैटिन–Aconitum heterophyllum Wall.

**संहितोक्तगण :** चरक सूत्रस्थान अध्याय 4–लेखनीय महाकषाय एवं अर्शोध्न महाकषाय। सुश्रुत सूत्रस्थान अध्याय 38, पिप्पल्यादिगण, वचादिगण एवं मुस्तादिगण।

**वानस्पतिक स्वरूप :** द्विवर्षायु शाकीय पादप, दो कन्द वाला, स्वाद में कड़वा तथा तोड़ने पर श्वेत वर्ण का काण्ड 30 से. मी. 100 से. मी. लम्बा उर्ध्वसंश्रित, पत्र सरल, एकान्तर कभी–कभी खण्डित, पुष्प पीताभ बैंगनी रंग के फणाकार, फल पच्चकोष्ठीय बीज पकने पर काले चपटे एवं संख्या में 10 से 15 तक मूलकन्द श्वेत चखने पर तिक्त होता है। संहिताकारों ने शुक्लकन्दा, धुर्णप्रिया शिशु भैषज्य, विश्वा, प्रतिविषा आदि पर्यायों से इसकी पहिचान और उल्लेख किया है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–अगस्त–सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द; संग्रहकाल–सितम्बर, अक्टुबर।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में यह वनस्पति 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः निम्न घाटियों के बुग्यालों (मेडोज) एवं ढलानों में पाई जाती है। यथा–भिलंगनाघाटी–पंवाली, दुफन्द, गंगी, खतलिगं, सहस्त्रताल, पिनंस्वाड, बालगंगाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, अलकनन्दाघाटी, केदारनाथ, भागीरथीघाटी, फूलों की घाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, रूद्रगंगाघाटी, पिडांरीघाटी, रूपकुण्ड, पिथौरागढ़ के पञ्चूलीरेंज, अल्मोड़ा जनपद के कफकोट ब्लाक एवं कालीघाटी आदि स्थानों पर यह उपलब्ध है। इन घाटियों का विस्तृत विवरण प्रथम भाग में दिया गया है (*देखिये प्रथम भाग में*)।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**औषध संग्रहकाल :** यह द्विवर्षायु कन्द है जिसमें एक पुराने वर्ष का तथा दूसरा नये वर्ष का, नयाकन्द पुराने कन्द की अपेक्षा श्वेतवर्ण का एवं गठा हुआ होता है। प्रयोज्य अंगों में दोनों का उपयोग होता हैं। नयाकन्द ज्यादा अच्छा और गठा हुआ एवं गुणों की दृष्टि से विशेष उपयोगी है। इन कन्दों को संग्रह करने के बाद पुराने एवं नवीन कन्दों को अलग सुखाकर रखना चाहिये। बीज पकने के बाद ही सितम्बर एवं अक्टुबर में संग्रह करना चाहिए, बीजों को आसपास छोड़ देना चाहिये सूखे कन्दों को बन्द डिब्बों में चूने का चूर्ण या नीला थोथा मिलाकर रखना चाहिये। इस उपचार से कन्दों में घुन नहीं लगते है। उत्तराखण्ड हिमालय से अतिविषा का क्वीन्टलों में संग्रह होता रहा हैं। परन्तु अनैतिक विदोहन के कारण यह वनस्पति लुप्त प्राय की श्रेणी में आ गई है।

**वीर्यकाल अवधि :** एक वर्ष तक, मात्रा 2 से 4 माशा।

**मिलावट :** आजकल व्यापारी लोग अतीस के साथ चिरोफिलम एक्युनेटम एवं चिरोफिलम विलोसम के मूल कन्दों की मिलावट करते हैं। बाजार में ये कन्द मीठा अतीस के नाम से भी विक्रय किये जाते हैं। उत्तराखण्ड हिमालय से अवैज्ञानिक विधि से इस वनस्पति का विदोहन होने के कारण यह लुप्त प्राय की श्रेणी में आ गई है। अतः यह आवश्यक है कि बढ़ती हुई खपत को ध्यान में रखते हुये हिमालय क्षेत्र में अतीस की खेती कार्यक्रम को विशेष प्रोत्साहन दिया जाय। व्यापारिक रूप से अतीस का संग्रह उत्तराखण्ड हिमालय से किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** (अ) बच्चों के उल्टी, दस्त एवं ज्वर में अतीस उत्तम औषधि है।

(आ) बच्चों की खांसी, ज्वर एवं कास में अतीस मधु के साथ चटाने से लाभ होता है।

(इ) प्रवाहिका (आंव–पेचिस) में अतीस का प्रयोग किया जाता है।

**मुख्ययोग :** अतिविषाचूर्ण, वालचातुर्भद्रचूर्ण, महासुदर्शनचूर्ण, गंगाधर रस, चन्द्रप्रभावटी, अमृतारिष्ट, वत्सनादि क्वाथ।

**वक्तव्य :** अष्ठासंग्रहकार ने विषाद्वय कहकर दो प्रकार का उल्लेख किया है। श्वेत एवं कृष्ण निघण्टुकारों ने वर्णभेद से श्वेत, कृष्ण एवं अरूण भेद से उल्लेख किया है। कृष्णाकन्दा सम्भवतः एकोनाईटम पामेटम निर्विष किस्म है जिसे विखमा बूटी कहते हैं एकोनाइट की अन्य किस्में विषैली होती है जिनका कि उल्लेख मारकविषों में हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अतिविषा शुक्लकन्दाऽपराप्रतिविषा।**
**घुणप्रिया घुणामाद्री श्यामकन्दा सिताऽरूणा।।**
**भंगुरोपविषो विश्वश्रृंगी चोपविषाणिका।।** *(कै.नि.)*
**विषा सोष्णा लधुस्तिक्ता, दीपनी पाचनी जयेत्।**
**कफ पिन्तातिसाराम विष कास वमिकृमीन्।।** *(कै.नि.)*
**अतिविषा दीपनीय, पाचनीय संग्राहक सर्वदोष।**
**हराणां श्रेष्ठम्।।** *(च.सू.अ. 25)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वत्सनाभ; हिन्दी–विष, वछनाग; स्थानिक–मीठाविख, मोहरू, भोटिया–चैन्दुक, वुआंनगपो। लैटिन–Aconitum falconeri Stapf, Aconitum ferox Wall.

**संहितोक्तगण :** चरकसंहिता के पचास महाकषायों एवं सुश्रुतसंहिता के 37 गणों में वत्सनाभ का उल्लेख नहीं हैं। सुश्रुत के कल्पस्थान एवं रसग्रन्थों, निघण्टुग्रंथों में विष–उपविषों में श्रृंगीक, वत्सनाभ, हालहल, हारिद्र, आदि कतिपय कन्दज विषों का उल्लेख है।

**वानस्पतिक स्वरूप :** मूलकन्द बहुवर्षायु, काण्ड–एक वर्षायु 60 से.मी. से लेकर 1 मीटर लम्बा, मूलकन्द दो कन्दोंवाला, लम्बाई में 4 से. मी. से 8 से. मी. तक वछड़े की नाभी सद्यश, गोस्तनाकार, कन्द तोड़ने पर पीताभ–श्वेत, सूखने पर चमकदार एवं स्वाद में कुछ मधुर एवं जीभ पर झनझनाहट, रगड़ने पर सून्नता पैदा करता है। यह तीव्र विष है। काण्ड–सीधा, गोल, तलोत्थ, शाखा–मसृण, हरिताभ, पर्ण परस्पराभिमुख, वृक्काकार, खण्डित, (Lobed) आधार हृदयाकार पुष्प मंज्जरी सद्यश गहरे–नीले रंग के सुन्दर एवं फनाकार होते है। फल कोष पांचखण्डों में विभक्त एवं कोषों में चपटे कृष्ण वर्ण के बीज होते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–सितम्बर, अक्टुबर ; संग्रहकाल–अक्टुबर।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में 3000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक खरसू, मोरू एवं सिमरू के छायादार ढलानों में सुलभ है। भिलंगनाघाटी में राजखर्क ताली, पंवाली कांठा, खतलिंग, वालगंगाघाटी, भागीरथीघाटी, दयारा, रैथल, सुक्की, चमोली जनपद के मन्दाकिनीघाटी, जोशीमठ व्लाक, देवाल व्लाक, पिंडारीघाटी, पिथौरागढ़ जनपद के धारचुला व्लाक, मुनस्यारी व्लाक एवं दारमाघाटी आदि स्थानों पर सुलभ है। व्यापारिक रूप से इन घाटियों से इसके मूलकन्द का संग्रह किया जाता है। इसकी अन्य किस्में भी (Spicies) इन घाटियों में पाई जाती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–श्रृंगी विष; हिन्दी–बछनाग; स्थानिक–मोहरी, विष, चैन्दुक (भोटिया)।

लैटिन–Aconitum chasmanthum Stapf.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय शाकीय वनस्पति, मूल–कन्दिल द्विवर्षायु, द्वि संयुक्त, उपर से गोलाई लिये हुए गोस्तनाकार, विषैला, काण्ड 60 से. मी. से 90 से.मी. लम्बा, उर्ध्वसंश्रित, पर्ण–वृक्काकार वर्तुल सवृन्त, पुष्प मज्जरी में नीलवर्ण के फल–पञ्चकोष्ठीय, बीज पकने पर काले रंग एवं चपटे होते है।

**वक्तव्य :** उत्तराखण्ड हिमालय में अन्य विषैली किस्में पाई जाती हैं। जिनके नाम इस प्रकार है : विख–Aconitum deinorrhium Stapf, Aconitum balfourii Stapf, Aconitum atrox Mukheriee, Aconitum leave. आदि किस्में हैं। प्रायः व्यापारी इन सभी किस्मों का संग्रह इन घाटियों से करते हैं। बाजार में दो प्रकार का सफेद और काला वछनाग मिलता है। काले रंग का वछनाग गोमूत्रशोधित होता है। गोमूत्र में उबालकर एवं धूप में सूखाने पर इन कन्दों में घुन या कीड़ा नहीं लगता है।

*श्रृंगी विष (Aconitum chasmanthum Stapf.)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में ये किस्में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक बुग्यालों के ढलानों एवं सिमरू (रोडोडेन्ड्रोन) तथा भूर्ज (वेटुला) की छायादार स्थानों में पाया जाता है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द ; संग्रहकाल–सितम्बर, अक्टुबर।

वीर्यकाल–1 से 1½ वर्ष तक, मात्रा शु. 250 मि. ग्राम।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसके मूल व बाह्य प्रयोग सन्धि शूल, आमवात में उबलते हुये घी में मूलकन्द को डालकर इस कन्द से घुटनों आदि स्थानों पर दहन कर्म करते हैं जो कि उपयोगी माना जाता है। स्थानिक ग्रामीण वैद्य शिरःशूल में वेदनाशामक के रूप में शु. वत्सनाम चूर्ण 250 मि. ग्राम से 500 मि. ग्रा. की मात्रा में दिन में दो बार प्रयोग करते है। ज्वर में पसीना लाने के लिये भी शुद्ध वत्सनाभ के मूल चूर्ण का मात्रानुसार प्रयोग करते है। पक्षाघात, गठियावात आदि रोगों में ग्रामीण वैद्य प्रयोग करते हैं।

**मुख्ययोग :** संजीवनीवटी, मृत्युज्जयरस, हिंगुलेश्वर रस, जयावटी आनन्दभैरव रस, कफकेतुरस, विषगर्भतैल, अमृत रसायन। अतिमात्रा में वछनाग के सेवन करने से विषैला प्रभाव होता है। विष के शमन हेतु शुद्ध सुहाग (टंकण) मधु (शहद ) के साथ चटाना चाहिए। मधु–धृत के साथ अर्जुनचूर्ण देने से लाभ होता है। सुश्रुत आदि ग्रन्थों में 8 प्रकार के मूलकन्दों का उल्लेख है। सम्भवतः ये कन्द Aconitum की किस्मों में हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**यथा : मूलादिविषाणां यत्नपरैरपि ज्ञातुमशक्यत्वात् तानिहिमवत्प्रदेशे।**
**किरात शवरादिम्यों ज्ञेयानिः डल्हणः।।**

अर्थात् मूलकन्दादिविषों की पहिचान हिमालय प्रदेश के आदिवासी किरात, तगण आदि आदिवनेचरों से की जानी चाहिये।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : य कन्दो गोस्तनाकारो न दीर्धपञ्चमांगुलात्।**
**न स्थूलो गोस्तदूर्ध्व वत्सनाभ सपाण्डुरम्।** *(र.र.सा.)*
**विषं रसायने वल्ये, वातश्लेष्म विकारनुत्।**
**कटु तिक्त कषायं च, मदकारी सुखप्रदम्।।**
**व्यवायी शीतनुद् ग्राही कुष्ठ वातास्त्रनाशनम्।**
**विषं विशेषतो वात वेदनाहर मुन्तमम्।।** *(भा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–दुधिया अतीस, पतीस।

लैटिन–Aconitum violaceum Jacy.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकल कन्दिल, शाकीय क्षुप, मूल कन्दिल, स्वाद में कुछ मधुर, तिक्त, काण्ड उर्ध्वसंश्रित, पर्णवृत्त–वृक्काकार खण्डित, पुष्प नीले–बैंगनी रंग के होते है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर; फलकाल–सितम्बर, अक्टुबर; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में वत्सनाभ की प्रजातियों के आस पास बुग्यालों में प्राय 3300 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4000 मीटर की ऊँचाई तक घासवाले ढलानों पर (कहीं–कहीं यह वनस्पति) धौलीघाटी, फूलों की घाटी, मन्दाकिनीघाटी, भागीरथी घाटी आदि स्थानों में पाई जाती है। इसके कन्द गोलाई लिये हुये लम्ब–गोल होते हैं। स्वाद में कुछ मघुर तिक्त ग्रामीणों का कहना है कि मूलकन्द विषैला नहीं होता है। व्यापारी लोग इन कन्दों को निर्विषी के नाम से बाजार में विक्रय करते हैं। चोपड़ा ने भी ग्लासरी आफ इंडियन मेडिसिनल प्लान्ट्स नामक पुस्तक में इसके विषाक्तता के विषय में संदिग्धता व्यक्त की है।

**वक्तव्य :** संहिता एवं रससार संग्रह आदि ग्रन्थों में विषों का विशेष रूप से उल्लेख मिलता है। सुश्रुत ने कल्पस्थान में चत्वारिवत्सना भानि से चार प्रकार के वत्सनाभ का उल्लेख किया है। स्थावर विषों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है। (1) मूलविष–8, (2) पत्रविष–5, (3) फल विष–12, (4) पुष्पविष–5, (6) त्वक्–सार, निर्यास विष–7, (7) क्षीरविष–3, (8) धातु विष–2, (9) कन्दविष–13, कन्दविष अधिक उग्रवीर्य एवं तीव्रमारक होते हैं । रससिद्धों ने 18 प्रकार के स्थावरकन्दज विषों का उल्लेख किया है । इनका उल्लेख रसेन्द्रचूणामणी एवं रसमज्जरी आदि ग्रन्थों में मिलता है। चरक एवं सुश्रुत संहिता में कन्दज विषों की संख्या 13 के करीब हैं। यथा कन्दज–विष (महाविष) 1. हालाहल, 2. कालकूट, 3. वत्सनाभ , 4. श्रृंगी, 5. सार्षप, 6. जालक, 7. कर्दमक, 8. वैराटक, 9. मुस्तक, 10. मुष्कक, 11. संक्तुक, 12. क्रौञ्च, 13. हारीद्रक, 14. पुण्डरीक, 15. करवीरक, 16. संकोचक, 17. कुशपुष्पक, 18. इन्द्रायुध आदि विष हैं। अधिकतर कन्दज विष हिमालय में मिलने का संकेत सुश्रुत के टीकाकार डल्हण ने किया है। इसलिये Aconite की किस्मों के अतिरिक्त अन्य विषप्रधान कन्द हिमालय में पाये जाते हैं। इन विषैले कन्दों के नामरूप अध्ययन हेतु विस्तृत रूप से वनौषधि सर्वेक्षण और अनुसन्धान की आवश्यकता हैं। संहितोक्त स्थावर कन्दज विषों का वर्गीकरण प्रकाशित शोधपरक लेख की विस्तृत जानकारी निम्न प्रकार से है।

## संहितोक्त, स्थावर-कन्दज विषों का वर्गीकरण एवं वत्सनाभ-श्रृंगी विष का गुण-कर्मात्मक परिज्ञान

आयुर्वेदिक संहिता ग्रन्थों में कन्दज विषों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। सुश्रुत कल्प स्थान अध्याय 2 में 'त्रयोदश कन्द विषाणी' ऐसा वर्णन है। जिसमें कालकूट, वत्सनाभ, मुस्तक, श्रृंगी एवं हालाहल आदि कन्दज विष हैं। इसी प्रकार



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

विषों का उल्लेख करते सुश्रुत ने कल्पस्थान अध्याय 2 में स्पष्ट किया है कि वत्सनाभ के चार भेद, मुस्तक के दो भेद एवं सर्षप के छः भेद तथा अन्य विषों का एक–एक भेद का उल्लेख है। आयुर्वेद में "विषभेदा अमीनव" नौ प्रकार के विषों का भी उल्लेख मिलता है। इन कन्दज विषों की पहचान के सन्दर्भ में डल्हण एवं चक्रपाणी दोनों टीकाकारों का कहना है कि हिमालय के प्रदेशों मे रहने वाले वनचरों के माध्यम से कन्दज विषों की पहचान की जा सकती है। वनस्पतिशास्त्र के आधार पर अब तक पृथ्वी पर लगभग 110 जातियां पाई जाती है इनमें लगभग Acontium की 25 किस्में (Sps.) भारत में पाई जाती है। इन किस्मों में Aconitum hetrophyllum अतीस विषैली नहीं है। शास्त्रकारों ने इसे निर्विषा कहा है।

चरकसंहिता, वाग्भट्ट, निघण्टुग्रन्थों एवं रसग्रन्थों में कन्दज विषों का वर्णन है। रससिद्धों ने पारद के संस्कार करने एवं रसौषधियों में विषों एवं उपविषों का उल्लेख किया है। इन कन्दविषों में वत्सनाभ एवं श्रृंगिक आदि विषों को गोमूत्र अजादुग्ध गोदुग्ध में दोलायन्त्र विधि से 3 दिन से 7 दिन तक भावना एवं शोधन कर चिकित्सा में उपयोग किया जाता है। शुद्ध विष व्यवायी एवं योगवाही होता है। इसलिए तत्–तत् रोगनाशक औषधियों के साथ वत्सनाभ मिलाकर देने से सभी प्रकार के रोगों में उपयोगी माना गया है–विशेषकर वातजन्य वेदनाओं को शान्त करने के लिए यह उत्तम औषधि है।

आठवीं शदी में अरब वालों ने जब सुश्रुत का अनुवाद अपनी भाषा में किया तो उन्होंने अपने फार्मेकोपिया में इस द्रव्य का जेनेरिक नाम विष (वत्सनाभ) अंकित किया है। जिसका कि मध्य हिमालय से संग्रह करने का उल्लेख है। जब ब्रिटिश इण्डिया कम्पनी का प्रवेश भारत में हुआ, तो उन लोगों ने हिमालय क्षेत्र की जनजातियों से सम्पर्क किया एवं विष नामक औषधि द्रव्य को संग्रह कर सन् 1818 में Aconitum atrox से नामकरण किया सन् 1830 में Aconitum ferox के नाम से इसका नामकरण किया। महर्षि सुश्रुत ने जिन चार प्रकार के वत्सनाभ का निर्देश किया है, उनकी पहचान, प्राप्तिस्थान, गुणधर्म एवं नामरूप परिचय की सम्भावनाओं पर विचार किया गया तथा यह स्पष्ट किया गया है कि मध्य हिमालय में उपलब्ध Aconitum की विषैली किस्मों में मीठाविष (श्वेतवत्सनाभ), वत्सनाभ (हालाहल) कृष्णवत्सनाभ, रक्तवत्सनाभ एवं श्रृंगी विषभेद से पांच प्रकार के विषों की उपादेयता है।

**विष की उत्पत्ति :**

वैदिक एवं पौराणिक सन्दर्भो के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जब अमृत की खोज के लिए समुद्र मन्थन किया गया तो उस समय विषाक्त द्रव्य हालहल विष की उत्पत्ति हुई जिसकी कल्पना घोर भयंकर पुरुष से की गई, जिसका कि तेज दिप्तीमान था, मारक होने के कारण उसके भयंकर जबड़ों की कल्पना की गई एवं हरितवर्ण का होने से वह लोगों को आकर्षित करता था। ऐसे घोरदर्शी मूर्ति को देखकर सारा जगत विषाद को प्राप्त हुआ, इसलिए इसका नाम विष पड़ा। आरम्भ में पृथ्वी पर ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की सो कैटभ नामक दैत्य विध्न पैदा करने लगा तो ब्रह्मा जी को क्रोध उत्पन्न हुआ तो स्थावर एवं जंगम योनियों में स्थित विष की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने विष की दो योनि, अष्ठवेग, दशगुण और चौबीस प्रकार की चिकित्सा निर्धारित की है। इस प्रकार समुद्र मन्थन के समय उत्पन्न हालाहल विषपान की प्रार्थना भगवान शंकर से करने पर जो बूंदे जमीन पर गिरी तो उससे स्थावर एवं जंगम विष पैदा हुए। इन कतिपय आख्यानों के आधार पर स्थावर विषों में अम्बुसम्भवता (जलयोनि), पावकोपता, द्विविधता, अमृतसाद्यश्यता आदि विशिष्ट गुणकार्मुकता देखी गई है।

1. **अम्बुसम्भवता :** विष की उत्पत्ति समुद्र से मानी गई है। इसलिए विष की योनि जल मानी गई है।
2. **पावकोपता :** यह अग्निसदृश उष्ण वीर्य वाला द्रव्य है।
3. **द्विविधिता :** स्थावर एवं जंगम अधिष्ठान भेद से विष दो प्रकार के होते है।
4. **अमृत की सहचरता :** अमृत एवं विष की उत्पत्ति जल से मानी गई है इसलिए समान योनियां होने से विष का पर्याय वाची अमृत माना गया है। विषों का रस अव्यक्त होने से वह जिस द्रव्य में प्रतिष्ठित होते है वह उसके स्वाभाविक रस वाला हो जाता है। इसी कारण विष को योगवाही कहा गया है। यह उष्ण, रूक्ष, सूक्ष्म, तीक्ष्ण, आशु व्यवायी, विकाशी और लघुगुणों वाला होता है। विषों के वेगों (लहरों) का उल्लेख संहिताग्रन्थों में उपलब्ध है। महर्षि



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

चरक ने सपृम वेग के बाद अष्ठवेग को मृत्युवेग माना है। ये वेग शरीर के रस रक्त, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा, शुक्र इन सपृधातुओं एवं आशयों को प्रभावित करने वाले होते हैं। विषों की योनि जल होने से यह वर्षा ऋतु में उत्पन्न होकर फैलता है एवं शरद ऋतु में अगस्त्य नक्षत्र के उदय होने पर विष मन्द वीर्य हो जाते है। इसलिए विषों की चिकित्सा में जल का प्रयोग सूझ–बूझ के साथ करना चाहिए। विष चिकित्सा में स्थावर एवं जंगम विषों के विपरीत चिकित्सा उपक्रम का निर्देश आयुर्वेद में मिलता है।

आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथी एवं ऐलोपैथी आदि सभी चिकित्सा प्रणालियों में वत्सनाभ, श्रृंगी आदि विषों का ज्वरध्न, वेदनाशामक वातध्न एवं रसायन के रूप में विशेष प्रयोग होता है। विषों के सन्दर्भ में "प्वायजनस प्लान्ट्स आफ इण्डिया" नामक पुस्तक में डॉ. रामनाथ चोपड़ा ने लगभग 700 किस्मों के विषैले गुणधर्मो का उल्लेख किया है। ये किस्में रैननकुलेसी, यूफोर्वियेसी, लेग्यूमिनेसी, सोलेनेसी, कम्पोजिटी, एपोसाईनेसी, ऐस्क्लिपिडियेसी, इरिकेसी, एरेलियेसी, लिलियेसी, एनाकार्डियेसी, थाईमिलेसी, रोजेसी, रूबियेसी, ग्रेमिनी आदि 90 कुलों में से हैं। इनका उल्लेख आयुर्वेदिक ग्रन्थों में विष एवं उपविष भेदों में मिलता है, जिनका कि अधिष्ठान भेद से निम्न प्रकार से वर्णन है :

इस प्रकार प्रयोज्य अंगों के आधार पर इन विषों की संख्या 55 है। महर्षि चरक ने स्थावर विषों की संख्या 21 निर्दिष्ट की है एवं मूल विषों की प्रधानता के कारण इन विषों को मूलज कहा है। चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, अष्ठांगसंग्रह, धन्वन्तरिनिघण्टु, भावप्रकाश निघण्टु एवं रस ग्रन्थकारों ने स्थावर कन्दज विषों की संख्या भिन्न–भिन्न अंकित की है। पाठकों की सुविधा हेतु स्थावर विषों का वर्गीकरण तालिका संख्या 3 में स्पष्ट किया गया है जो कि निम्न प्रकार से है :

**तालिका संख्या-1**

**स्थावर विषों का अधिष्ठान**

| क्रम संख्या | अधिष्ठान | संख्या |
|---|---|---|
| 1. मूलविष | मूल (जड़) | 8 |
| 2. पत्रविष | पत्र (पत्ते) | 5 |
| 3. फलविष | फल | 12 |
| 4. पुष्पविष | पुष्प (फूल) | 5 |
| 5. त्वक् सार निर्यास | छाल, गोंद | 7 |
| 6. क्षीरीविष | दुग्ध (दूध) | 3 |
| 7. धातुविष | खनिज | 2 |
| 8. कन्दविष | कन्दमूल | 13 |
| | | कुल संख्या=55 |

**तालिका संख्या-2**

**हिमालय में उपलब्ध विषों के भेद**

| क्र. सं. संस्कृत/स्थानिक नाम | प्राप्तिस्थान | वोटेनिकल नाम |
|---|---|---|
| 1. मीठा विष/विख (मूल–श्वेत वर्ण का) | उत्तराखंड गढ़वाल हिमालय 3,300 मी. से 3,900 मी. | Aconitum flaconeri Stapf |
| 2. विख, विष, भोटिया (चैन्दुक) (मूल–कृष्णा–पीत वर्ण) | सिक्किम, नेपाल भुटान 3,000 मी. से. 3,800 मी. सिक्किम, नेपाल भुटान | Aconitum spicatum Stapf. |
| 3. भोटिया–चैन्दुक कृष्णवत्सनाभ | 3,000 मी. से 3,800 मी. सिक्किम, नेपाल भुटान | Aconitum laciniatum Stapf. |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## तालिका नं॰ 3

### स्थावर एवं कन्दज विषों का वर्गीकरण

| क्र.सं. | संस्कृत नाम | सु. संहिता | च. संहिता | अ. संग्रह | ध. नि. | भा.प्र.नि. | रसग्रन्थ | स्वरूप एवं गुण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| 1. | अंजनाभक | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 2. | इन्द्रायुध | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 3. | कटक | – | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 4. | कर्कटक (कर्कटम्) | + | + | – | + | – | – | कर्कटं कपिवर्णस्यात्. काकचंजुनिभपुनः।। विचारणीय |
| 5. | करवीरक | – | + | + | – | – | – | सम्भवतः यह करवीर (कनेर) का पर्यायवाची हो सकता है। स्पष्ट नहीं हैं। |
| 6. | कुशपुष्पक | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 7. | केशरंजन | – | – | – | + | + | + | विचारणीय |
| 8. | कालकूट | + | + | + | + | + | + | निर्यासो कालकूटोस्य मुनिभिः परिकीर्तितः सोंऽहि क्षेत्रे श्रृंगवेरे, कोंकणे मलये भवेत्।। विचारणीय। |
| 9. | क्रोंच | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 10. | कद्रमक | + | – | + | – | – | – | कर्दमं कर्दयौपम् |
| 11. | कौर्म | – | – | – | – | – | + | विचारणीय |
| 12. | ग्रन्थिक | – | – | – | + | + | – | विचारणीय |
| 13. | गालव | – | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 14. | जालक | – | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 15. | तैलविष (तैलेय) | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 16. | दार्वी | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 17. | प्रपुण्डरीक | + | – | – | – | – | – | विचारणीय |
| 18. | दर्दुर | – | – | – | – | + | + | विचारणीय |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 19. | पालक | + | + | – | – | – | – | विचारणीय |
| 20. | प्रदीपक | – | - | – | + | + | – | विचारणीय |
| 21. | प्रदीपन | – | – | – | + | + | – | विचारणीय |
| 22. | पुण्डरीक | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 23. | पुष्पक | – | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 24. | पौष्कर | – | + | – | – | – | – | रक्तवर्ण महाविषम् |
| 25. | महाविष | + | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 26. | मूलक | + | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 27. | मुस्तक | + | + | + | + | + | + | मुस्ताभं सुस्तकं प्रोक्तम् |
| 28. | मुष्कक | – | – | + | – | – | – | विचारणीय। अज्ञात कन्दों के नामरूप परिचय की दिशा में शोध कार्य अपेक्षित हैं। |
| 29. | मेचक | – | + | – | – | – | – | विचारणीय |
| 30. | मर्कट | – | + | + | + | – | – | विचारणीय |
| 31. | मेषश्रृंगी | – | – | – | + | + | + | विचारणीय |
| 32. | बलाहक | – | + | – | – | – | – | विचारणीय |
| 33. | यमदष्ट्रा | – | – | – | + | + | + | विचारणीय |
| 34. | वत्सनाभ | + | + | + | + | + | + | नीलपुष्प कन्द विशेषो क्षुपों हस्त द्वयोच्छ्रित गढपाले च काश्मीरे नेपालादौ च जायते । |
| 35. | वालक | – | – | + | – | – | + | वालुक वालकाभं च। |
| 36. | वैराटक | + | – | + | – | – | + | विचारणीय |
| 37. | ब्रह्मपुत्र | – | – | – | + | + | + | व्रणत कपिलो य स्यात् तथा भवति सारतः ब्रह्मपुत्र स विज्ञेयों जायते मलयाचले।। |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 38. | रोहिष | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 39. | लांगलक | – | + | + | – | – | – | सम्भवत लाँगली कलिहारी के लिए प्रयुक्त किया गया हो। |
| 40. | संकोच | – | + | + | – | – | – | विचारणीय |
| 41. | सक्तुक | – | – | – | + | + | + | यद् ग्रन्थि : सक्तुकेनेव पुर्णमध्य स सक्तुकः। सक्तकं श्वेतवर्ण स्यात् शुक्लकन्दं तु मूलजम्।। |
| 42. | साक्तुक | – | – | + | – | – | – | विचारणीय |
| 43. | सैकतम् | – | – | – | – | – | + | विचारणीय |
| 44. | सौराष्ट्रिक | – | – | – | + | + | – | सुराष्ट्र विषये य स्यात् स सौराष्ट्रिक उच्यते। |
| 45. | सर्षप | + | – | – | – | – | + | सर्षपंपीत वर्ण स्यात्। |
| 46. | श्रृंगीविष | + | + | + | + | + | + | यस्मिन् गो श्रृंगके वद्धे दुग्धं भवतिलोहितम् स श्रृगिक इतिप्रोक्तो श्रृगिंकं कृष्ण पिंगलम् |
| 47. | हालाहल | + | + | + | + | + | + | भंगुरा कन्दवंदबी, नीलवर्ण हलाहलम् । गोस्तानाभ फलेगुच्छ तालपत्रच्छदस्तथा ।। |
| 48. | हारीद्र | – | – | – | + | + | + | असौ हालाहलं क्षेयं किस्कन्धायां हिमालयो। |
| | **संख्या=** | **13** | **21** | **28** | **18** | **9** | **18** | **कुल संख्या = 48** |

**टिप्पणी :-** कालकूट, मुस्तक वत्सनाभ, श्रृंगीविष, हालाहल नामक कन्दल विषों का उल्लेख सभी ग्रन्थकारों ने किया है। वत्सनाभ एवं श्रृंगीविष को छोड़कर अभी तक अन्य कन्दज विष अज्ञात एवं संदिग्ध तथा विचारणीय हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | |
|---|---|---|
| 4. वत्सनाभ (हालाहल) (मूल–श्वेत पीत वर्ण का) | 3,000 मी. से 3,800 मी. नेपाल, सिंगरेला रेंज, आसाम | Aconitum ferox Wall. |
| 5. विष | काश्मीर, वुशैर क्षेत्र | Aconitum deinorrhizum. |
| 6. मोहरी विष (रक्ताभ वर्ण का) | गढ़वाल, नेपाल, आसाम, भुटान | Aconitum balfaurii Stapf. |
| 7. श्रृंगीविष | अरुणाचलप्रदेश, सिक्किम | Aconitum chasmanthum Stapf. |
| 8. श्वेतोविखमा | लद्दाख, सिक्किम, कुमायुं | Aconitum violaceum Stapf. |
| 9. विख | नेपाल, भुटान | Aconitum luridum Hook. f. & Thoms. |
| 10. विष | सिक्किम, नागाहिल | Aconitum elwesii. |

इसके अतिरिक्त निम्न अन्य किस्में भी हिमालय क्षेत्र में पाई जाती है :

A. Aconitum palmatum B. Aconitum naviaculare C. Aconitum hetrophylloides.

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अष्ठादश विधं ज्ञेयं, विषकन्द भवंवुधैः** *(च.चि.अ. 23-10-12 ।।)*

**वत्सनाभ स हारीद्रः सक्तुकश्चप्रदीपनः।**
**सौराष्ठिक श्रृडिंगकश्च, कालकूट स्तथैवच।**
**हालाहलो व्रहमपुत्र विषभेदा अमीनव।।** *(भा.प्र.)*

उपर्युक्त निर्दिष्ट तालिका से स्पष्ट है कि ग्रन्थकारों में कन्दज विषों के सन्दर्भ में मतभेद है। सुश्रुत ने 13, चरक ने 21, अष्टांग संग्रहकार ने 28, धन्वन्तरिनिघण्टु में 18, भा. प्र. में 9 एवं रसेन्द्रसार संग्रह में 18 कन्दज विषों का उल्लेख है। हालाहल, वत्सनाभ श्रृंगिक, कालकूट एवं मुस्तक आदि कन्दज विषों का सभी ग्रन्थकारों ने समान रूप से वर्णन किया है। इस शीर्षक में महर्षि सुश्रुत द्वारा बताये गये चत्वारिवत्सनाभानि का विस्तृत ब्यौरा यहां पर दिया जा रहा है। मुख्य रूप से वत्सनाभ के चारों प्रकारों के नाम, रूपपरिचय, पहचान, वॉटनिकल नाम, प्राप्तिस्थान, स्थानिक प्रयोग एवं गुणधर्मो का सामान्य उल्लेख किया गया है। लेखक को भारत के हिमालय क्षेत्र में वनौषधि सर्वेक्षण कार्यकाल में जिन वत्सनाभ कुल की सविष किस्मों का पता चला है। उसकी तालिका भी यहां पर दी जा रही है। इन किस्मों का विभिन्न हिमालय क्षेत्र से विख, विष, मीठाविष (Aconite) के नाम से संग्रह किया जाता है।

इनमें कुछ किस्में विषरहित हैं जैसे अतिविषा, प्रतिविषा आदि। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि हिमालय क्षेत्र में लगभग 12 किस्मों के विष पाये जाते हैं, जिन के मूल कन्द पीत, श्वेत, रक्ताभ एवं पाण्डुवर्ण के होते हैं। तिब्बती चिकित्सा पद्धति में भी चार प्रकार के कन्दज विषों का चिकित्सा में प्रयोग किया जाता है, जिसे तिब्बती एवं लद्दाखी आमची श्वेताभपुष्प एवं मूलकन्द को रतुक (दुचीलोमा) पीताभपुष्प एवं मूलकन्द को चैन्दुक, कृष्णाभ विष को हालाहल कहते हैं। तिब्बती आमची कम धूप एवं छायादार वाले स्थानों पर उगने वाले विष को तीव्र गुणकारी मानते हैं। भोटिया लोग बुआंनगपो, सरपो एवं मारपों भेद से तीन प्रकार का वत्सनाभ मानते हैं। उपरोक्त आधारों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सुश्रुतोक्त चार प्रकार के वत्सनाभ हिमालय क्षेत्र से सुलभ है। व्यवहारिक रूप से इनका प्रचलन न होने से वत्सनाभ के एक ही नाम से लोक में प्रचलन रहा है। डॉ. मेहरा एवं उनके साथियों ने फार्मोकोग्नेस्टिक–इनवेस्टिगेशन औन एकोनाइट्स औफ फिरोक्स ग्रुप का विस्तृत रूप से अध्ययन किया है तथा बाजार में वत्सनाभ के नाम से उपलब्ध मूलकन्दों की भी पहचान की है। उसी आधार पर इनकी पहचान यहां पर दी जा रही है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–विष, वत्सनाभ, पर्याय, क्ष्वेड, गरल, अमृत; हिन्दी–विष, मौहरी, मीठाविष ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तिब्बती–चैन्दुक, हालाहल।

लैटिन– Aconitum ferox Wall. ex Ser.

**निरूक्ति : क्ष्वेड :** "क्ष्वेडते मोहयहि" अर्थात् यह मारक होने से मोह उत्पन्न करता है।

**गरल :** गिरति जीवनम् "गृत निगरणै" यह जीवन को निगल जाता है या समाप्त कर देता है। इसलिए इसे गरल कहते है।

**विष :** वेष्टिकायम् (विष्तृ व्याप्तो) विकाशि होने से सारे शरीर में व्याप्त हो जाता है। विषाद होने से विष कहते हैं। विष खाने पर जिस प्रकार की बेचैनी हो जाती है उस बेचैनी का नाम विषाद है।

**वत्सनाभ :** वत्सान्नभ्नाति (णभ् हिंसायाम) अर्थात इसे खाने से मवेशी मर जाते हैं या मूल का आकार बछड़े के नाभी सदृश होने से वत्सनाभ कहते हैं।

**अमृत :** जीवन रक्षक होने से विषकुल की वनस्पति होने पर भी इसे अमृत कहते है। Aconite एक ग्रीक शब्द से बना हुआ है जिसका अर्थ है कि Without Soil यूनानी में इसे अक्नीतुन कहते हैं।

**तालिका संख्या-4**

| क्र.सं. संस्कृत नाम | वोटेनिकल नाम | स्वरूप विवरण |
|---|---|---|
| 1. वत्सनाभ | Aconitum ferox Wall. ex Ser | मूल–गोस्तनाभ श्वेत पीताभ वर्ण का NaOH ड़ालने पर Alkaloid 1.84% मूलकंद 2.5 -7.5 सेंमी. लम्बा ¼" मोटा। |
| 2. श्वेतवत्सनाभ | Aconitum falconerii Stapf | मूलकंदिल, भालाकार, द्विवर्षायु तोड़नें पर श्वेतवर्ण का स्वाद में प्रथम मधुर, जिह्वा पर रखने के बाद चिमचिमाहट Alkaloid 1.00%. |
| 3. कृष्णवत्सनाभ | Aconitum laciniatum Stapf | मूलकंद बाहर से कृष्णाभवर्ण के, अन्दर से तोड़ने पर श्वेतवर्ण का, कंद द्विवर्षायु Alkaloid 1.06%. |
| 4. विख चैन्दुक | Aconitum spicatum Stapf<br>A. balfourii Stapf | मूलकंद गोस्तनाभ, तोड़ने पर रक्ताभ, तोड़ने पर रक्ताभ वर्ण के वजन में भारी Alkaloid 1.45%. |
| 5. श्रृंगिक विष | Aconitum chasmanthum Stapf | मूल द्विवर्षायु आकृति में श्रृंगाकार एवं कृष्ण–पिंगलवर्ण का तथा मूल चूर्ण को दुग्ध में मिलाने पर रक्ताभ। |

**वानस्पतिक स्वरूप :**

द्विवर्षायु कन्दिल, काण्ड तलोत्थ वर्ण ताल पात्र सद्यश, खण्डित, हृदयाकार एवं सिन्दुवार पत्र सद्यश, पुष्प गुच्छों में नीलाभवर्ण के मूल कन्दिल द्विवर्षायु गोस्तनाभ, तोड़ने पर श्वेत पीताभ वर्ण का NaOH के डालने पर हल्का धूसर वर्ण lightgray एवं सूखने पर पीताभ वर्ण का होता है। एलकेलाइड की मात्रा इसमें 1.84% पाई जाती है। भोटिया एवं लद्दाखी आमची इस किस्म को हालाहल नाम से प्रयोग करते है। ग्रन्थकारों ने वत्सनाभ एवं हालाहल के अलग–अलग भेद माने हैं। अधिकतर टीकाकारों ने वत्सनाभ का पर्याय हालाहल लिखा है। सुश्रुत मतानुसार जो चार प्रकार के वत्सनाभ है उनके पहिचान की तालिका निम्न प्रकार से है ।

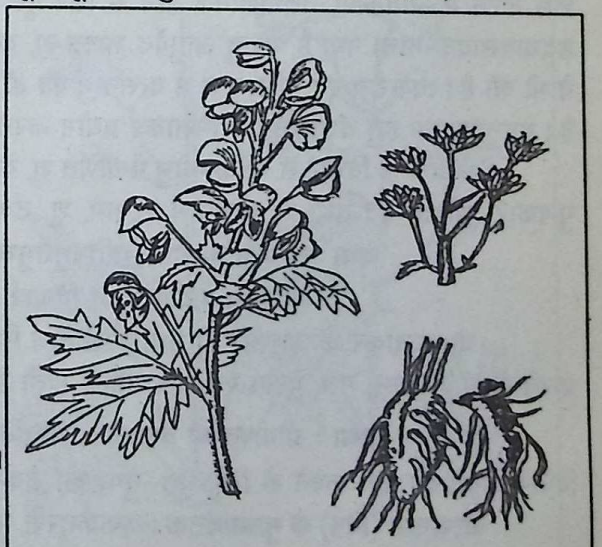

वत्सनाभ (Aconitum ferox Wall)

इसके अतिरिक्त अन्य उपयोगी किस्में हिमालय में



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पाई जाती है जिनका किं उल्लेख तालिका 4 में स्पष्ट किया गया है। शास्त्रकारों ने श्वेतवर्ण का विष ब्राह्मण जाति का रक्त वर्ण का क्षत्रिय जाति का, पीत वर्ण का वैश्य जाति का एवं कृष्णवर्ण का विष शुद्र जाति का माना गया है। द्विवर्षायु कन्द में पुराना कन्द नवीन कन्द के अपेक्षा आकार में छोटा सिकुड़ा हुआ होता है। यथा :–

**गोस्तनाभ फलोगुच्छो स्तालपत्रच्छदस्तथा।**
**तजेसा यस्म दहयन्ते समीपस्था द्रुमादयः।।** *(भा.नि.)*
**दीर्धमूल स्थूलकन्द वत्सनाम विषक्षुपम्।।** *(रसतरंगिणी)*

**वत्सनाभ (विष) का प्रयोग :**

रससिद्धों ने कृष्ण वर्ण के वत्सनाभ का प्रयोग मारने हेतु, रक्तवर्ण के वत्सनाभ का उपयोग रसौषधियों के निर्माण में, पीतवर्ण के वत्सनाभ एवं श्वेतवर्ण के वत्सनाभ का रसायन हेतु प्रयोग करना चाहिए ऐसा निर्देश शास्त्रों में मिलता है। विषों के व्यवायी, विकाशी आदि घातक गुणों को कम करने के लिए गोमूत्र में शोधन करने का विधान है। 7 दिन तक विष के टुकड़ों को गोमूत्र में शोधन किया जाता है। दोलायंत्र विधि से 3-4 घंटे तक विष का शोधन किया जाता है। डॉ. सैन एवं घोषाल ने 1968 शोधित विष और बिना शोधित विष के गुणकर्मात्मक अध्ययन से पता लगाया है कि विष में हृदय एवं बल्य गुणों की विशेषता पाई गई है। उनके विचार से जो (रेजिन) निर्यास भाग मूल में रहता है उसकी कमी शोधन करने से होती है तथा विषैला प्रभाव भी कम होता है। डॉ. म्हसकर का विचार है कि गोमूत्र से शोधित विष की अपेक्षा गोदुग्ध में शोधित वत्सनाभ अधिक गुणकारी होता है।

**गुण :** रस मधुर, वीर्य–उष्ण, विपाक–मधुर, वातकफध्न, रसायन, बल्य, बात–फक विकार नाशक, ज्वरध्न, योगवाही, वेदनाशामक, कुष्ठ, शोध, अग्निमांध, कण्ठ रोग एवं मधुमेह में उपयोगी है। बाह्यलेप में वत्सनाभ शोथ एवं पीड़ा को कम करता है।

**यथा : विष रसायन वल्यं वातश्लेष्म विकारनुत् ।**
**कटुतिक्त कषायं च मदकारी सुखप्रदम् ।।** *(आरोग्यप्रकाश)*

**कर्म :** वत्सनाभ स्वेदल, मूत्रल एवं ज्वरध्न है एवं वातजन्य वेदनाओं को शान्त करने हेतु उत्तम औषधि है। वत्सनाभ देने से अमाशय के ज्ञानतन्तु संज्ञाशून्य हो जाते हैं। जिसके कारण अमाशय का शोथ एवं वेदना शान्त होता है। शु. वत्सनाभ हृदय की गति को नियमित करता है। रक्तचाप की वृद्धि को कम करने में शु. वत्सनाभ का अच्छा प्रभाव देखा गया है। फुफ्फुसावरण शोथ, न्युमोनियां एवं शोथ में यह लाभ करता है। ऊर्ध्वजत्तुगामीवातनाड़ी शूल को कम करने में लाभकारी, वेदनाशामक होने से शिरःशूल में उपयोगी है। पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्र में वत्सनाभ को हृदयावसादक माना गया है, परन्तु आयुर्वेद शास्त्र शु. वत्सनाभ को हृदयवल्य मानता है जिसकी पुष्टि **डॉ. म्हसकर** ने भी की है। त्वक्रोग एवं गलित्कुष्ठ में वत्सनाभ को डॉ. वसु ने फार्मेकोपिया इन्डिका में इसे उपयोगी औषधि लिखा है। वेदनाशामक हेतु दंशागलेप में मिलाकर प्रयोग करने से लाभ होता है।

लेखक के विचार से रसकामधेनु में वर्णित शु. वत्सनाभ की औषध तैयार किया जाये तो शिरःशूल में यह आशु गुणकारी औषधि है। यथा शु. वत्सनाभ 2 भाग, शु. टंकण 2 भाग, काली मिर्च 2 भाग मिलाकर देनी चाहिए।

**यथा : समांशटंकणोपेतं तद्विषंमृतमुच्यते।**
**योजयेत् सर्वरोगेषु न विकारं करोतितत्।।** *(रसकामधेनु)*

योगरत्नाकर के अनुसार दो भाग कालीमिर्च मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। अधिक मात्रा में विष का प्रयोग करने से ग्रीवास्तम्भ, मूत्र, पुरीष एवं आंख पीली होती है।

**यथा : ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे, पीतविण्मूत्रनेत्ररक्तता।।** *(सुश्रुतः)*

विषैले प्रभाव को कम करने के लिए धृत–दुग्ध का सेवन हितावह है।

**वत्सनाभ (विष) के मुख्य घटक :** कफकेतुरस, मृत्युंजयरस, हिंगुलेश्वररस, पंचामृतरस, जयावटी, आनन्द भैरव रस, विष–रसायन, अमृत रसायन, शिवताण्डवरस, आदि कतिपय योग उपयोगी हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**निष्कर्ष :** उपरोक्त आलेख के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि मानव सृष्टि के साथ साथ विष की उत्पति हुई। यद्यपि स्थावर कन्दज विषों के संदर्भ में संहिता एवं निघण्टु ग्रन्थों में एकरूपता नहीं देखी गई है। कालकूट, हालाहल, मुस्तक, वत्सनाभ एवं श्रृंगी विष का सभी ग्रन्थकारों ने उल्लेख किया है। सुश्रुतोक्त "चत्वारिवत्सनाभानि" के नामरूप परिचय का प्रयास यहां पर किया गया है। हिमालय में मिलने वाले चार प्रकार की किस्में शास्त्रीय वत्सनाभ से उपयोग करना चाहिए जो कि इस प्रकार से है :

1. वत्सनाभ Aconitum ferox Wall. ex Ser.
2. श्वेतवत्सनाभ Aconitum falconerii Stapf.
3. कृष्णवत्सनाभ Aconitum laciniatum Stapf.
4. विख Aconitum spicatum Stapf.

इस प्रसंग में यह यह भी विचार व्यक्त किया गया है स्थावर विष युफोर्वियेसी, लेग्युमिनियोसी, इरीकेसी, ऐरेसी, ऐस्किलपिडियेसी, आदि कुलों में से है जो कि शोध का विषय है।

**Classification of poisonous tubers in literature and pharmacological study of Vatsnabh-shringi**

Aconite is one of the oldest medicines known to Indian Physicians. Two different kinds of Aconite i.e. Poisonous and Nonpoisonous were recognised by sushruta and Charaka. Poisonous Aconite includes Vatsanabha or Visha as mentioned in samhitas. Vatsanabha is one of the 13 tubers poisonous species and Sushruta has also described (Kalpasthan chapter 2 sloka No. 6) four kinds of Vastsanabha, a root called Halahala ( A. ferox), Mithavisha (A. falconerii), Krishnavisha (A. laciniatum), Raktavisha( A. spicatum or A. balfourii. Another poisonous plant A. chasmanthum is called shringivisha or Moharivisha in Punjab. Various species of "Ferox" group occurring in the Alpine Himalayas are used as Vatsanabha. The four kinds of Vatsanabha are described in this paper. they are freely used in the name of Vastsanabha. Morphological characters of these species are also described for their indentity.

It has been found that detailed screening of only non purified samples of aconites has been done till this period. The outhor suggests that detailed studies of purified samples of aconites and their comparison with non purified samples should be carried our because in Ayurveda only samples purified with cow urine, milk or Triphala decoction are used.

**द्रव्यनाम :** यूनानी–जदवार; संस्कृत–निविर्षी; स्थानिक–बुडींण।

लैटिन–Delphinium denudatum Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शाकीय पादप, 60 से. मी. से 80 से. मी. लम्बा, मूल–भौमिक काण्डसद्यश (राईजोमेटिक) स्वाद में कुछ कड़वा, पत्र–मूलज, वर्तुल, 5 से 9 विच्छेदों में, पुष्प–दल पुट युक्त गहरे–नीले रंग के, फल–तीन संयुक्त फलिकाओं में होते है। इसके अतिरिक्त गढ़वाल एवं कुमाऊं वनखण्डों में अन्य किस्में Delphinium vestitum Wall एवं Delphinium brunonianum Royle पाई जाती है।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–जून, जुलाई; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** जदवार गढ़वाल, कुमाऊं की पहाड़ियों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाया जाता है। उपरोक्त अन्य दो

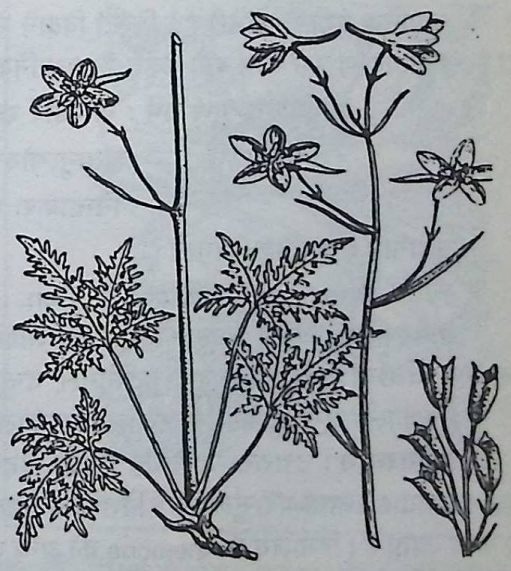

जदबार *(Delphinium denudatum Wall.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

किस्में भागीरथीघाटी, अलकनन्दाघाटी, पिंडारघाटी, नन्दादेवी, ग्लेसियर, हेमकुण्ड, रूपकुण्ड आदि स्थानों पर सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** उत्तराखण्ड हिमालय के ग्रामीण जदवार के मूल का प्रयोग दन्तशूल में करते हैं, अन्य किस्मों का कोई विषेश उपयोग नहीं है परन्तु इन लोगों को विश्वास है कि Delphinium bruninianum का पंचांग विषैला होता है। भोटिया लोग इसके फूलों एवं मूल का उपयोग चिकित्सा में करते हैं। कतिपय लेखकों ने इसके मूल को निर्विषी लिखा है। शास्त्रीय निर्विषी यह नहीं है।

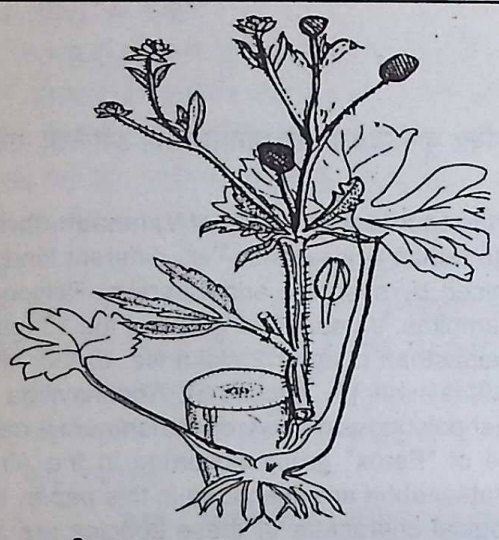

**काण्डीर *(Ranunculus scleratus Linn.)***

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काण्डीर; हिन्दी–जलधनियाँ (प्लेगबूटी); स्थानिक–अगलैंण।

लैटिन–Ranunculus sceleratus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षायु शाकीय पादप, काण्ड, हरित–पीताभ वर्ण का काण्ड का भीतरी भाग पोला होता है। पर्ण मूलोद्भव, धनियाँ के पर्णसद्यश 3 प्रपत्रों में विभक्त, पुष्प पीतवर्ण के, फल–आकृति में पिप्पली सदृश होते हैं। स्वरस बदन पर लगने पर छाले पड़ते हैं। इसी कारण इसे अगलैंण कहते हैं।

पुष्पकाल–जनवरी, मार्च; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पंचाग, स्वरस।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय के शितोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों के नमदार एवं जलीय स्थानों के आस पास 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है। हिमालय के ऊँचाई वाले बुग्यालों (एलपाईन मेडोज) में Ranunculus की कतिपय किस्में (स्पीसीज) औषधोपयोग की पाई जाती हैं। जिसमें निम्न मुख्य हैं।

(1) R. arvensis Linn, (2) R. diffusus DC. (3) R. hirtellus Royle आदि मुख्य हैं। ये किस्में विषैले प्रभाव की हैं। काण्डस्वरस स्फोटकर है।

**स्थानिक प्रयोग :** उभरी हुई गिल्टी बिठाने में इसका प्रयोग करते हैं। प्लेगजन्य गांठों में लेप करने से लाभ होता है। इसी कारण इसे प्लेग बूटी कहते हैं। स्थानिक वैद्य पारद एवं धातुमारण में पंचांग स्वरस का प्रयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : काण्डीर कटुतिक्तोष्णः सरो दुष्ठव्रणार्तिजित्।**

**लूतागुल्मोदरः पील्ह शूलमन्दाग्निाशनः।।**

**निन्द्राकरः शोफहर च सः स्मृतः।।** *(घ.नि.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–अगेली।

लैटिन–Anemone obtusiloba D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीयमूल का शाकीय पादप 30 से मी. से 60 से. मी. लम्बा, रोमिल, पत्र मूलज, बर्तुल, तीन विच्छेदों युक्त, दोनों पृष्ठ मृदुरोमिल, दन्तुर पुष्प नीलाभ श्वेतवर्ण के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में यह 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों छायादार स्थानों पर सुलभ है। विशेषकर देववन, चकराता, रानीखेत, नैनीताल, मसूरी आदि पर्वतीय स्थानों में पर पाया जाता है। हिमालय में Anemone की अन्य कतिपय किस्में बुग्यालों में पाई जाती है। जो A. vitifolia Buch-Ham, A. narcissifolia L., A. rivularis. आदि हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** मूल का उपयोग वाह्यरूप में शोथन के रूप के एवं पत्र का वामक के रूप में प्रयोग किया जाता है। बीजों का प्रयोग भोटिया मशालों के रूप में करते हैं। अगेली का मूलस्वरस बदन पर लग जाने पर छाले पड़ते हैं। पंचांग प्रायः विषैले प्रभाव वाला होता हैं।

**द्रव्यनाम :** लैटिन––Aquilegia pubiflora Wall ex Royle (Sy. A. vulagaris Linn.)

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षायु काण्डवाला मृदुरोमिल क्षुप, काण्ड–उर्ध्वसंश्रित 20 से 30 से. मी. लम्बा, पत्र पिच्छाकार, त्रिपत्रक एवं पत्रक विच्छिन्न, पुष्प नीचे की ओर झूके हुये नीले बैंगनी देखने में सुन्दर होते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल ।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक बुग्यालों (एलपाईन मेडोन) में भिलंगनाघाटी, पवांलीकांठा, दुफन्द, मन्दाकिनघाटी, मुनस्यारी, पिथौरागढ़ जनपद के धारचूला आदि स्थानों पर कहीं कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग विषैला मानते हैं। मवेशियों की चोट एवं कीड़े मारने में मूल का उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मनीरू।

लैटिन–Caltha palustris Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षायु मूल वाला शाकीय, काण्ड एकवर्षायु, 80 से.मी. तक लम्बा, पर्ण मूलोद्भव, अरोमिल मसृण, वर्तुल होते हैं। पुष्प शीर्षस्थ चमकीले पीत वर्ण के होते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं कुमांयु में 2,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक हिमनदों, पंवालीकाठा, केदारनाथ एवं जलीय स्थानों पर सर्वत्र सुलभ है।

मनीरू (Caltha palustris Linn)

**टिप्पणी :** स्थानिक लोगों की मान्यता है कि पत्र एवं मूल भेड़, बकरियों के लिये विषैला है।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–उदसलीव; स्थानिक–चन्द्रया, ममेक।

लैटिन–Paeonia emodi Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षायु मूल वाला अरोमिल शाकीय पादप काण्ड 60 से.मी. 100 से. मी. लम्बा मूल कन्दिल मांसल, गोपुच्छाकार, पत्र भालाकार, दीर्घायत, खण्डित पुष्प ब्यास में 3-4" श्वेतवर्ण के, फल रोमिल, वृक्काकार बीज काले रंग के तथा संख्या में 10 से 20 तक।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फलकाल–जून, जुलाई; संग्रहकाल–अगस्त, सितम्बर।

ममेक (उदसलीव) (Paeonia emodi Wall.)

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में यह 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी–गंवाण, घुत्तू, ऋषिधार, भागीरथीघाटी–हर्षिल, गंगनानी, मन्दाकिनीघाटी–फाटा, रामपुर, हरकीदून, पुरोला



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

चकराता, अलकनन्दाघाटी, पिथौरागढ़, के कालीघाटी आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूलचूर्ण का उपयोग रक्त विकार एवं व्रणरोपण में करते हैं। कच्चे फल एवं नवीन पत्तों का शाक के रूप में उपयोग किया जाता है। स्थानिक वैद्य मूल का उपयोग मानसिक विकारों में करते है। यूनानी हकीम विदेशी किस्म Paeonia officinalis का प्रयोग कम्पवात, पक्षाघात, अपस्मार एवं मानसिक विकारों में करते है। प्रतिनिधि के रूप में ममेक के मूल का उपयोग चिकित्सा में किया जा सकता है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मनीरू।

लैटिन–Actaea spicata Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाकीय पादप, काण्ड 30 से 100 से. मी. लम्बा, मूल ग्रन्थिल, तोड़ने पर हलका पीताभ, पर्णसंयुक्त, पिच्छाकार, पत्रक 1" से ½" लम्बे लटवाकार, भालाकार पत्रतट खण्डित, आरावत्, दन्तुर, पुष्प व्यास में एवं श्वेत रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में यह वनस्पति 2,400 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक भागीरथीघाटी, रैथल, गंगोत्री, मन्दाकिनीघाटी, मदमहेश्वर, मुन्स्यारी, सुन्दरडुंगाघाटी एवं कफनिघाटी आदि स्थानों में कहीं कहीं पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक लोग मूल का उपयोग सूरमा के बनाने के लिये करते हैं। मूल–वामक एवं वेदना शामक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

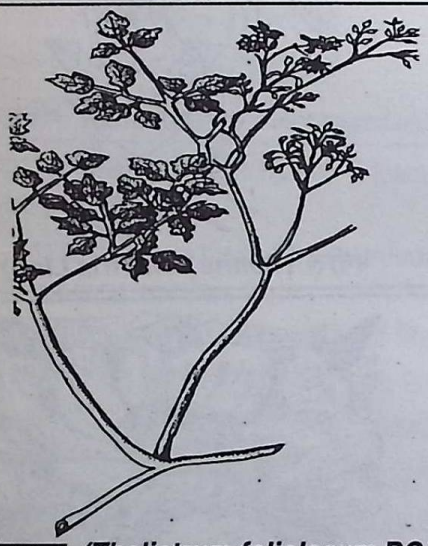

पीतमूला *(Thalictrum foliolosum DC.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पीतमूला; हिन्दी–पियारांगा; स्थानिक–ममीरी, पीलीजड़ी ;

लैटिन–Thalictrum foliosum DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मूलवहुवर्षी, काण्ड एकवर्षायु, शाक, उर्ध्वसंश्रित एवं 80 से. मी. से 100 से. मी. लम्बा, भौमिक काण्ड प्रकन्दी गांठदार एवं तोड़ने पर पीतवर्ण के पत्र एकान्तर, पत्रक पिच्छाकार क्रम, वृत्ताकार, लट्वाकार, पत्रतट खण्डित पुष्प छोटे श्वेताभ रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल।

औषध संग्रहकाल–अगस्त, सितम्बर।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,800 मीटर की ऊँचाई तक प्राय गढ़वाल एवं कुमांयू के सभी जनपदों में खेतों के आसपास एवं घास के ढलानों पर सर्वत्र सुलभ है। मूल का संग्रह यहां से किया जाता है। पीली जड़ी की अन्य कतिपय किस्में (स्पीसीज) बुग्यालों (एलपाईन मेडोज ) में पाई जाती हैं। जो कि निम्न प्रकार से है। यथा T. reniforme Wall, T. cultratum Wall, Spp. platycarpum Bruhl, T. elegans Wall. आदि किस्में इन घाटियों में उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक वैद्य ममीरी के मूल का उपयोग सूरमा बनाने एवं उदरशूल एवं उदरविकारों में करते हैं। मूल का प्रयोग मूत्रल एवं मृदु रेचक के रूप में भी किया जाता है। शास्त्रीय ममीरा Coptis teeta मिषमीबूटी को कहते हैं। प्रतिनिधी रूप में पीतमूला का उपयोग किया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**

1. नेत्राभिस्यन्द में मूल का लेप आंख में किया जाता है। ममीरे द्वारा निर्मित सूरमा, नेत्रबिन्दु आंख की फूली, लालिमा एवं जलन आदि में लाभ करता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

2. विषमज्वर, अजीर्ण, उदरशूल, आमवात, कामला आदि रोगों में मूल का उपयोग किया जाता है।

3. सारक एवं लेखन कर्मो के कारण यह श्वित्र (ल्यूकोडरमा) त्वचा के रोगों में बाह्य एवं आभ्यन्तरिक रूप में प्रयोग करने पर लाभ होता है।

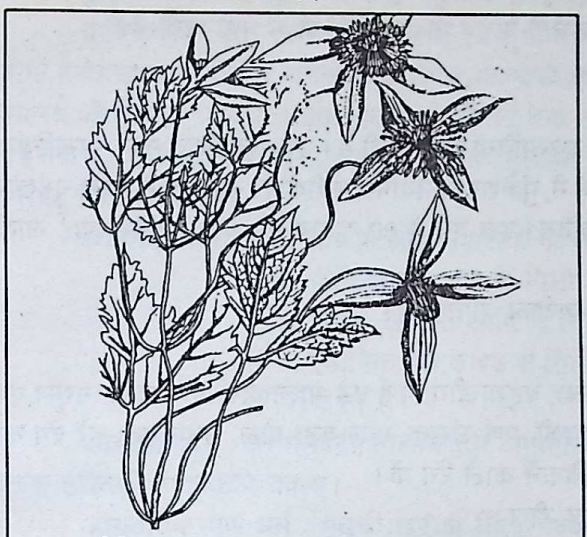

सवंई *(Clematis napaulensis Heyne.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक, संटाई, (वेलकुम) धनवती।

लैटिन–Clematis gouriana Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** अरोमिल, आरोही लता, मूल–कठोर, रेशेदार, पर्ण विपरीत, संयुक्त पिच्छाकार, पत्रक लट्वाकार, आयताकार एवं हृदयाकार, पत्रतट–सरल, पुष्प छोटे श्वेताभ वर्ण के इसके अतिरिक्त औषधोपयोगी निम्न किस्में भी उत्तराखण्ड में पाई जाती है। यथा :

(1) Clematis barbllata Edgew.

(2) C. buchaniana DC. (3) C. roylei Reher.

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमायुं हिमालय में यह 1,600 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर की ऊँचाई तक इसकी लतायें बांझ, बुरांस, खरसू आदि वृक्षों एवं झाड़ियों पर आरोही के रूप में सभी घाटियों में उपलब्ध है।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक ग्रामीण पंचांग को विषैला मानते है। पत्र का बाह्य प्रयोग कुष्ठ एवं त्वचा के विकारों में किया जाता है। कुछ लेखकों ने इस वनस्पति को मूर्वा लिखा है भोटिया लोग मूलक्वाथ का प्रयोग रक्तप्रदर में करते है। इसके अतिरिक्त वत्सनाभ कुल की अन्य कतिपय औषधोपयोगी प्रजातियाँ हिमालय के बुग्यालों (एलपाईन मेडोज) में पायी जाती हैं।

## कुल-चम्पकदिवर्ग MAGNOLIACEAE

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, लता एवं शाकीय वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। वृक्ष सदाहरित एवं पर्णपाती, पुष्पों की रचना अनियमित कभी–कभी एकाकी, शाखाओं के शिरों पर पुष्प गुच्छों में, इस वर्ग के पुष्प आकर्षक, सफेद, पीले, गुलाबी रंग एवं सुगन्धित होते हैं। पुष्प कोष 6-9 पंखड़ियों युक्त, तीन–तीन के दो चक्रों में व्यवस्थित सपुष्प द्विबीजपर्ण, विभक्तदक्त, अधः बीजस्थ कोष, पर्ण–एकान्तर नियमित, शाखा के अग्रभाग से या पत्रकोण से निकलते हैं। पुंकेशर अनियमित, फल–गुच्छों में एवं बीज आकार में बड़े होते हैं। इस वर्ग में लगभग 1,000 जातियाँ (जीनस) हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चम्पक, पीतपुष्पक; हिन्दी–चम्पा; स्थानिक–चम्पा।

लैटिन–Michelia champaca Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड–बहुशाखीय पर्ण–अरोमिल, भालाकार, तीक्ष्णाग्र, मसृण एवं चमकीले, पुष्प एकाकी, पर्णसंसक्त, हल्के पीताभ वर्ण के एवं सुगन्धित होते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; प्रयोज्यअंग–पुष्प, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमांऊ जनपद में चम्पा के वृक्ष देवस्थानों, मन्दिरों ग्रामीण क्षेत्रों के आस–पास रोपण किये मिलते हैं। इस क्षेत्र का यह स्वंयजात वन्य वृक्ष नहीं है। इस कुल में Schizandra grandiflora DC नाम की आरोही लता स्वयंजात हिमालय क्षेत्र में पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग छाल क्वाथ का उपयोग अनार्त्तव एवं कष्टार्त्तव में करते हैं। योनिदोष में पुष्पों का कल्क मधुयष्ठी चूर्ण एवं धृत के साथ पिचु योनि में रखने पर योनिदुर्गन्ध में उपयोगी मानते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चम्पकं कुसुमं शीतं चक्षुष्यं विशदंशुभम्।**
**चम्पकं कटुकं तिक्तं कषायं मधुरं हिमम्।।** *(क्षे.कु.)*
**निहन्ति कफ पित्तास्त्र, मूत्रकृच्छ्र विषंकृमीन्।।** *(कै.नि.)*

**टिप्पणी :** इसके अतिरिक्त इस कुल में अन्य उपयोगी पादप भी इन घाटियों में पाये जाते हैं।

## कुल-सीताफलादिवर्ग ANONACEAE

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में गुल्म एवं लता जाति की वनस्पतियाँ पाई जाती है। पर्ण–एकान्तर, सादे, अखण्डित, पुष्प–बाह्यकोष दलपत्र तीन, पुष्पाभ्यतर कोष द्विदल, दो चक्रों में, पुंकेशर अनियमित, स्त्रीकेशर नालिका में सूक्ष्म, गर्भकोष संख्या में कतिपय बीज एक या अधिक, आकार में बड़े, कठिन। इस वर्ग में 80 कुटम्ब की 180 जातियाँ पाई जाती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गण्डगात्र, सीताफल; हिन्दी–शरीफा, सीताफल।

लैटिन– Anona squamosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** गुल्म 2 से 5 मीटर तक लम्बा, बहुशाखीय, पर्ण बड़े भालाकार, अण्डाकार, मसृण एवं चमकीले होते हैं। पत्र को मसलने पर अप्रियगन्ध, पुष्प एकाकी, पर्ण संसक्त, फल बड़ा गोल, उभारयुक्त, हरे रंग का एवं पकने पर पीला गुलाबी रंग लिये स्वाद में मधुर बीज चिकने काले रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर। प्रयोज्यअंग–फल, पत्र, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के जनपदों में यह गुल्म देहरादून, ऋषीकेश लक्ष्मणझूला, टिहरी, श्रीनगर, अल्मोड़ा, शिवालिक एवं तराई वनक्षेत्रों में पाया जाता है। इसके गुल्म, उद्यानों एवं गांवों के आस–पास पाये जाते है। यह क्यूवा, जमायका आदि पश्चिम भारतीय द्विपों का आदिवासी पौधा है।

**स्थानिक प्रयोग :** पके हुये फल स्वाद में मधुर होते हैं। बीजकल्क को सिरोरोग या दुष्ठव्रण में लेप करने से जूं या कीड़े मर जाते हैं। फल मधुर, शीतल एवं रक्त पित्त में उपयोगी है भारत में यह वृक्ष 16वीं शताब्दी में पूर्तगालियों द्वारा लाया गया है। 19वीं शदी के निघण्टुकारों ने इसे गण्डगात्र के नाम से उल्लेख किया है।

## कुल-गुडूच्यादिवर्ग MENISPERMACEAE

गिलोय *(Tinospora cordifolia Mierr.)*

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में बहुधा लतायें एवं गुल्मीय पादप पाये जाते हैं। पर्ण–सवृन्त, एकान्तर, सादे– अखण्डित, करतलाकार एवं विभक्त होते हैं। पुष्प–विभाजित, गुच्छ सद्यश अथवा जुड़े हुये होते हैं। स्त्रीकेशर प्रायः तीन कोषवाला होता है। प्रत्येक कोष में एक बीज होता हैं। फल छोटे, पकने पर लाल जामुनी एवं काले रंग के होते हैं। इस वर्ग में गिलोय, पाठा, राजपाठा, छिलहिण्ट, तिलफारो आदि कतिपय औषधोपयोगी पौधे पाये जाते हैं। विशेष रूप से ये पादप मूत्रल, ज्वरध्न कृमिध्न, ग्राही एवं उत्तम कटु पौष्टिक होते हैं। कई विषैली वनस्पतियां भी इस कुल में पाई जाती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गुडूची, अमृता; हिन्दी–गिलोय, गुड़च।

लैटिन–Tinospora cordifolia Mierr.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षायु, मांसल आरोहीलता है। काण्ड हरिताभ, मांसल, काटने में अन्तर्भाग चक्राकार,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कार्कयुक्त अरोमिल, पर्ण–एकान्तर, वर्तुल हृदयाकार, अरोमिल, शिराओं युक्त। पुष्प–कक्षीय, गुच्छों में छोटे पीत वर्ण के एवं पर्ण–कोणोदभव, फल छोटे मटर सद्यश एक बीज वाला पकने पर रक्त वर्ण के मांसल।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–काण्ड (तना), सत्व।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के शिवालिक वनखण्ड, तराई भावर के प्रायः उष्ण भूभागों में देहरादून, ऋषीकेश, रामनगर, काशीपुर, अल्मोड़ा आदि स्थानों पर सर्वत्र सुलभ है। गिलोय की एक अन्यप्रजाती हिमालय की निचली घाटियों 1,800 मीटर की ऊँचाई तक पाई जाती है जिसे Tinospora malabarica Miers कहते हैं। इसके पत्र रोमिल, हृदयाकार एवं सवृन्त होते हैं। मूल कन्दिल सद्यश इसलिए इसे कन्दगुडूची कहते हैं। इन घाटियों से संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** 1. ग्रामीण लोग मवेशियों के उदरविकार में गिलोय का प्रयोग करते हैं।
2. पीलिया एवं ज्वर में गिलोय क्वाथ दिन में 3 बार देने से लाभ होता है।
3. कण्डू, खुजली आदि में गिलोय का क्वाथ दिन में तीन बार पिलाते हैं।
4. स्थानिक वैद्य काण्ड से गिलोयसत्व तैयार कर प्रमेह एवं धातुपुष्ठी में सत्व का उपयोग करते है।

**शास्त्रीय योग :** संशमनवटी, गिलोयसत्व, अमृतारिष्ठ, दशमूलारिष्ठ, संजीवनी बटी, चन्द्रप्रभावटी, च्यवनप्राश, चित्रक हरीतकी, गुडूच्यादि क्वाथ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : गुडूची कटुका तिक्ता, स्वादुपाका रसायनी।**
**संग्राहिणी कषायोक्ता, लध्वी बल्याग्निदीपनी।।** *(भा.प्र.)*
**गुडूची सत्वं सुस्वादु पथ्यं लधुदीपनम्।**
**चक्षूष्यं धातुकृन्मेध्यं, वयः स्थापनकारकम्।।** *(रा.नि.)*
**रसायने गुडूचीप्रयोगः।** *(चरक)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पाठा, अम्वष्ठा; हिन्दी–पाठा, पाड़वेल; स्थानिक–पाड़ी।

लैटिन–Cissamples pareira Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही लता जाति की वनस्पति पर्ण–लट्वाकार कभी–कभी वर्तुल वृक्काकार, 1.5" से 3.5" तक बड़े सवृन्त, अरोमिल पुष्प–छोटे अरोमिल एक लिंगीय श्वेताभ पीतवर्ण के, नर एवं मादा भेद से अलग–अलग पुष्प, मूल–ग्रन्थिल, स्वाद में कटु, फल– मांसल, पकने पर रक्त वर्ण के होते हैं।

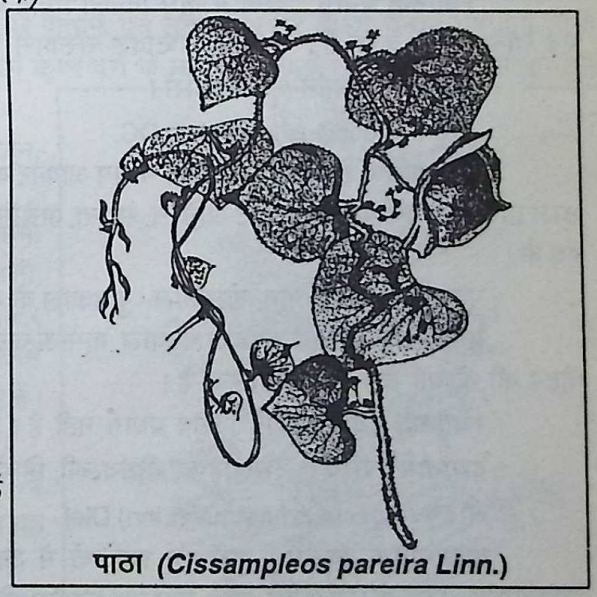
पाठा *(Cissampleos pareira Linn.)*

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं वनक्षेत्र के शिवालिक एवं तराई भावर के निचली उष्ण घाटियों में इसकी आरोही लता 1,200 मीटर की ऊँचाई तक पथरीली कांटेदार झाड़ियों में सर्वत्र सुलभ है। पंचांग का व्यापारिक रूप से संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** 1. ग्रामीण मूल चूर्ण एवं क्वाथ का प्रयोग उदरशूल में करते है।
2. स्थानिक वैद्य पाठापच्चांग का उपयोग मट्ठे के साथ दिन में तीन बार अतिसार में करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पाठा तिक्ता सरावृस्या विषध्नी कुष्ठ कण्डुनुत्।**
**पाठा अतिसार शूलध्नी, कफपित्त ज्वरापहा।।** *(ध.नि.)*
**अतिसारे महिषेण तु तक्रेण पाठापत्रं तथै वच।।** *(बंगसेन)*

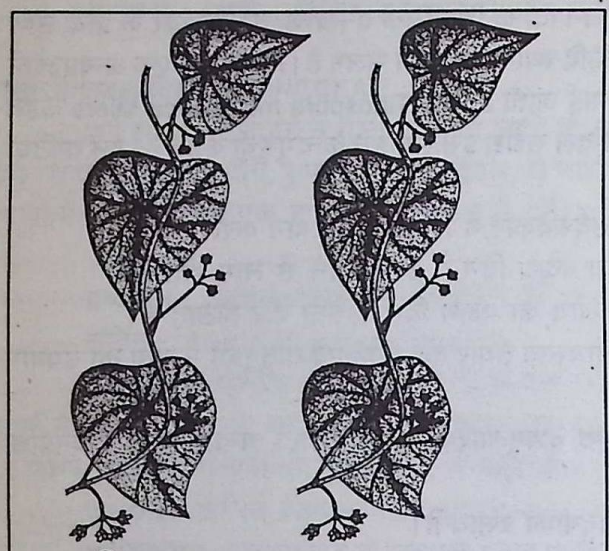
गिन्दाडू *(Stephania glabra Miers.)*

**शास्त्रीय योग :** गंगाधरचूर्ण, लोकनाथरस, सारिवाद्यारिष्ठ, महायोगराज गुग्गुलु, चन्दनासव, विडंगासव।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–राजपाठा; हिन्दी–आकनादी; स्थानिक–गिन्दाडू।

लैटिन–Stephania glabra Miers.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षायु आरोही लता, मूल कन्दिल अन्दर से पीताभवर्ण का, चिप–चिपा, पर्ण–पाठापत्र सद्यश, मसृण, अरोमिल, लट्वाकार, सवृन्त, पुष्प छोटे, कक्षीय एकलिंगी पीताभवर्ण के फल, मांसल, गुच्छों में पकने पर रक्तवर्ण के होते हैं। इसकी अन्य प्रजातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती हैं जिसे S. hernandifolia कहते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** यह लता उत्तराखण्ड के गढ़वाल कुमाऊं जनपद के सभी जिलों में 1,200 मीटर लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है। व्यापारिक रूप से मूल का संग्रह किया जा सकता है।

**स्थानिक प्रयोग :** कन्द में कुछ विषैला प्रभाव देखा गया है। मूलकन्द से साधित तैल का उपयोग आमवात एवं सन्धिवात में करते हैं। पारद के अष्टादश संस्कारों में इसका उपयोग किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक, तिलफारों।

लैटिन–Cocculus laurifoluis DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित मध्यम आकार का गुल्म, काण्ड 10 मीटर से 15 मीटर तक ऊँचा, बहुशाखीय, छाल हरितवर्ण, पर्ण भालाकार, तट अछिन्न, सवृन्त, अरोमिल, पुष्प छोटे–छोटे कक्षीय, पीले रंग के, फल पकने पर काले रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं जनपद के प्राय सभी जनपदों के उष्ण कटिबन्धीय भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** कोई विशेष प्रयोग नहीं है। छाल एवं पत्र को विषैला मानते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–छिलहिण्ट, दीर्घवल्ली; हिन्दी–जलजमनी, छिरेन्टा।

लैटिन–Cocculus hirsutus (Linn) Diel.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्षों एवं झाड़ियों में आवृत लता, पर्ण श्वेताभ रोमिल, अनियमित लट्वाकार एवं आयाताकार, ऊपर के पर्ण क्रमशः छोटे, पुष्प एक लिंगीय, पीताभ–हरित वर्ण के फल पकने पर काले बैंगनी रंग के रसदार, एक बीज वाले होते हैं। मूल जड़े लम्बी गहराई तक इसी कारण इसे पाताल गरूड़ी कहते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनक्षेत्रों देहरादून, ऋषिकेश, शिवालिक तराई भावर वनक्षेत्रों में सर्वत्र इसकी आरोही लता पाई जाती है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** 1. आमवात एवं सन्धिशोथ (जोड़ों के दर्द) में ग्रामीण लोग मूलक्वाथ का सेवन दिन में तीन बार करते हैं।

2. पत्तों का लेप गुमचोट और शोथ में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : छिलहिण्ट परं वृष्यं, कफध्नः पवनापहः।**
**वृष्या सन्तर्पणी रूच्या, विषदोष विनाशिनी।।** *(रा.नि.)*

**कुल-दारूहरिद्रादिकुल BERBERIDACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग (कुल) में 12 जीनस की लगभग 210 स्पीसीज (किस्में) पाई जाती हैं। इसमें बहुवर्षायु गुल्म एवं पादप पाये जाते हैं। पुष्पनियमित, गर्भाशय स्थित, दो या अधिक चक्रों में बीज कोष एक, फल मांसल बीज सख्यां में अनेक होते हैं। इस वर्ग के पादपों में बर्बेरीन नामक एल्केलाईड होता है। मूल एवं छाल तिक्त, बल्य, ज्वरध्न एवं चक्षुष्य होती है। इस कुल में दारूहरिद्रा (किनगोड़) तोतरों, वन्यकर्कटी (पोडोफिलम) आदि वनौषधियाँ पाई जाती है।

*दारूहरिद्रा (Berneris aristata DC.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–दारूहरिद्रा, पीतदारू; हिन्दी–दारूहल्दी; स्थानिक–किनगोड़, काशंमल।

लैटिन–Berberis aristata DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** कण्टकित, वहुशाखीय गुल्म, मूल काष्ठ पीतवर्ण का, काण्ड 3 मीटर से 5 मीटर तक लम्बा, कांटेदार शाखा रक्ताभ हरित वर्ण की तोड़ने पर पीताभ, पत्र लट्वाकार तट तीक्ष्ण, दन्तुर, पुष्पक्रम सीमाक्षी, मज्जरियों में चमकीले पीतवर्ण के फल पकने पर नीलाभ कृष्ण वर्ण के मांसल, स्वाद में मधुर होते है। फलों को यूनानी में जिरिष्क कहते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई. जुलाई; फलकाल–जून, जुलाई; प्रयोज्यअंग–मूल, छाल, काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालयं के सभी जनपदों टिहरी, पौड़ी देहरादून, चमोली, उत्तरकाशी, अल्मोड़ा नैनीताल, पिथौरागढ़ आदि जनपदों के 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक कई किस्में पाई जाती हैं। सभी किस्में (स्पीसीज) औषध उपयोग की हैं। अन्य किस्में निम्न हैं।

**किनगोड़** *(Berneris lycium Royle.)*

(अ) किनगोड़ Berberis lycium Royle पत्र अधोमुख भालाकार, पत्रतट कण्टकित पुष्पवृन्त पतला। यह 900 मीटर की ऊँचाई पर बहुतायत में पाया जाता है।

(ब) काशमोई B. asitica Roxb पत्र अधोमुख, लट्वाकार व पुष्प पीतवर्ण के यह किस्म 900 मी. से लेकर 1,500 मी. ऊँचाई तक सर्वत्र।

(स) तोतरो B. chirita Roxb इसके गुल्म 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर को ऊँचाई तक पाये जाते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

(द) B. petiolaris Wall, B. jaeschkeana C.K. गुल्म, पर्ण–मसृण, चमकीले, पुष्प क्रमबद्ध, छत्राकार सीमाक्ष क्रम में इसके अतिरिक्त अन्य प्रजातियों Mehonia nepalensis DC हलदिया, खोरु के गुल्म भी इन घाटियों में पाये जाते हैं। व्यापारिक रूप से इन घाटियों से काफी मात्रा में इसके काण्ड और मूल का संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते हैं।.फूलों की चटनी बनाकर प्रयोग करते हैं। मूल क्वाथ से धनसत्व तैयार किया जाता हैं जिसे रसौंत कहते हैं। स्थानिक लोग रसोंत का प्रयोग नेत्रबिन्दु के रूप में आंख की ललिमा एवं आंखदुखनी में प्रयोग करते है। प्रमेह (धातुविकार) कामला, (पीलिया) उदरविकार आदि रोगों में दारुहल्दीक्वाथ एवं रसौंत का उपयोग करते है। ओझा लोग इसकी डाल से भूत प्रेत भगाते हैं। गारूड़ी लोग अपने अनेक प्रयोगों में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तिक्ता दारूहरिद्रा स्याद्रूक्षोष्णा व्रणमेहनुत्।**

**कर्णनेत्रमुखोद्भूतां रूजं कण्डूञ्चनाशयेत्।** *(ध.नि.)*

चरक ने लेखनीय, अर्शोध्न एवं कण्डूघ्न गण में इसका उल्लेख किया है।

**शास्त्रीय योग :** रसाञ्जनवटी, रवदिरारिष्ठ, रक्तशोधकवटी, हरिद्राखण्ड, चन्द्रप्रभावटी, जात्यादितैल, पुनर्नवामण्डूर, रवदिरारिष्ठ।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–हलदिया, खोरू।

लैटिन–Mehonia nepaulensis Spring (Sy-B. napaulensis Spring)

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित उर्ध्वसंश्रित गुल्म, काण्ड–बहुशाखीय, 1 मीटर से 3 मीटर तक लम्बा, छाल–कार्कयुक्त, काण्ड तोड़ने पर पीताभ, मूल–पीतवर्ण का पत्र–विषम–पिच्छाकार अनुपर्ण कण्टसद्यश, पत्रक लट्वाकार, भालाकार, अवृन्त दन्तुर, पुष्प–सवृन्त, पीले रंग के, फल मांसल, रक्ताभ बैंगनी रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, चकराता, देववन, मसूरी, वेरीनाग, पिथौरागढ़, मुन्स्यारी, धारचूला आदि स्थानों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई पर प्रायः उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल काष्ठ का उपयोग पीत चन्दन की तरह किया जाता है। ग्रामीण लोग इसका लेप फोड़े–फुन्सी पर करते हैं।

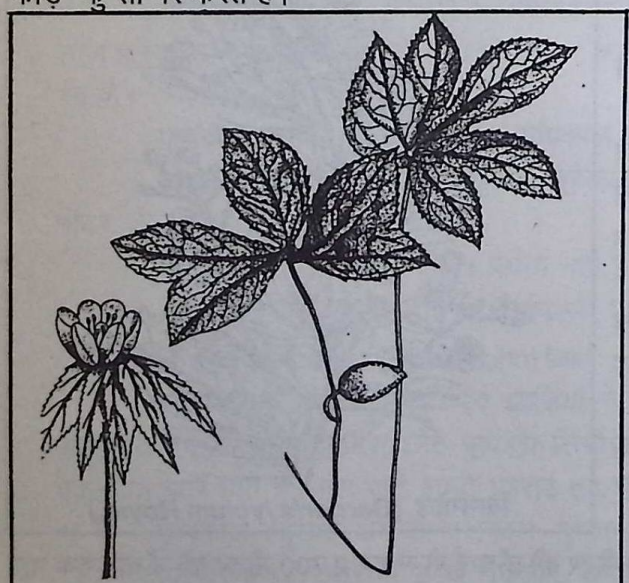

**वन्यकर्कटी *(Podophyllum hexandrum Royle.)***

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वन्यकर्कटी, गिरिपर्पट; स्थानिक–वनककडी, काखडया।

लैटिन–Podophyllum hexandrum Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वहुवर्षायु भौमिक काण्ड वाला शाक, काण्ड–एक वर्षायु, 60 से.मी. से 90 से.मी. लम्बा, मूल–प्रकन्दी, ग्रन्थिल, विशेष गन्धवाला, अन्दर से पीताभ वर्ण का, पत्र–एकान्तर, सवृन्त, वर्तुल, पत्रतट 3 भागों में विभक्त, खण्डित, दन्तुर धार वाले, पुष्प–प्याले के आकार में श्वेतवर्ण के, फल–मांसल, अण्डाकार, पकने पर रक्तवर्ण, बीज–मटर सद्यश गोल एक फल में 15 से 20 तक।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र(सब–एलापाईन एवं एलपाईन)



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक खरसू, मोरू (क्वरकस) के छायादार ढलानों में प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, पिंडारीघाटी, पिथौरागढ जनपद के पच्चूली वन क्षेत्र में उपलब्ध है। व्यापारिक रुप से पोडोफिलम के नाम से इन घाटियों से मूल का संग्रह किया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अरण्यश्रपुषं रूक्षं तिक्तं संग्राही वामनम्।**

**हन्ति कृच्छ्र कफानाह अष्ठीला मुदराणिच।।** *(कै.नि.)*

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके हुये फल खाते हैं। पके फलों का उपयोग स्थानिक लोग मद्य (शराब) बनाने के काम में भी करते हैं। मूल चूर्ण का प्रयोग मवेशियों के खुरपका रोग में करते है। यह बूटी रक्तविकार तथा कैन्सर जैसी घातक बिमारियों में उपयोगी हैं।

**कुल अहिफेनकुल PAPAVERACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में एक वर्षायु, बहुवर्षायु पादप आते हैं। इस वर्ग के पौधों से श्वेत या पीला सा गाठा द्रब पदार्थ तोड़ने पर या चीरा लगने पर निकलता है। पर्ण विन्यास एकान्तर, सादे, दन्तुर गुच्छाकार होते हैं। पुष्प–पत्र कोणीय, ब्राह्यकोष 2-3 दल में, पुष्प सुन्दर, पीले, गुलाबी, श्वेत, लाल रंग के होते हैं। पंखुड़ियां 4 से 6 एवं 8 से 12 दल में, पुंकेशर–अनियमित फल–लम्बगोल बीज–सूक्ष्म संख्या में अनेक इस वर्ग की वनस्पतियाँ मादक, क्षोभक, ग्राही, शामक, निद्राजनक, वामक एवं रेचक गुण वाले होते हैं। इस कुल में अहीफेन (अफीम), स्वर्णक्षीरी (सत्यानासी), कलिहारू (व्लुपौपी) आदि वनौषधियाँ पाई जाती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अहिफेन, खाखस; हिन्दी–अफीम, पोस्तडोडा।

लैटिन–Papaver somniferum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाक, काण्ड–तलोत्थ 80 से.मी. से 1 मी. लम्बा, हरित, रोमिल, पत्र–दीर्घायत, स्तम्भलिंगी, पत्रतट–खण्डित, विषम, दन्तुर धारवाले, पुष्प–बड़े सफेद रंग के सुन्दर कभी–कभी नीलाभ रंग के फल कोषयुक्त, विषम कोष्ठीय, दाड़िम जैसे आकार में, बीज–चौलाई बीज सद्यश काफी संख्या में, इन्हीं बीजों को खसखस या पोस्तदाना कहते हैं। फल कोष को पोस्त डोडा कहते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–अफीम (निर्यास) पोस्तडोडा, बीज।

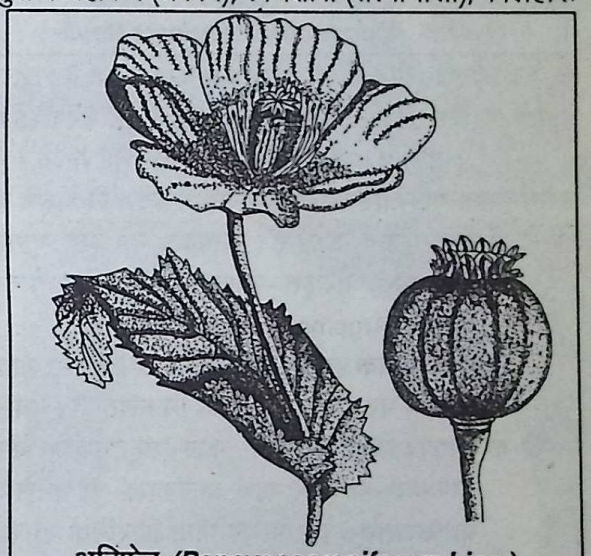

**अहिफेन *(Papaver somniferum Linn.)***

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के देहरादून, नैनीताल, अल्मोड़ा जनपद में चकराता, देववन, जौनसार, उत्तरकाशी आदि स्थानों में इसकी खेती 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक की जाती है। अहीफेन (अफीम) भारत का आदिवासी पौधा नहीं है। यह पौधा मुसलमानों के साथ भारत में आया है। 15वी शदी में इसका प्रवेश भारत में हुआ। भाव प्रकाश निघण्टुकार ने अपने ग्रन्थ में इसका समावेश किया है। फलों पर चीरा लगाकर दूध जैसे निर्यास को अफीम कहते हैं। व्यापारिक रूप से चकराता, जौनसार से इसका संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पोस्तदाना वल्य, दिमाग के लिये उपयोगी मानते हैं। अफीम मादक एवं विषैली है। यह निद्राकर वेदनाहर, ग्राही एवं कफघ्न है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अहिफेन रसे तिक्तं विपाके कटुकं विषम्।**

**स्तम्भनं रूक्ष मुष्णं च, बेदनास्थापनं परम्।।** *(भा.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

स्वेदनं स्वापजननं कफरोग विनाशनम्।।
दुग्धेन खाखसंबीजं प्रलेपात् दारूणं जयेत्।। *(शारङ्धर)*

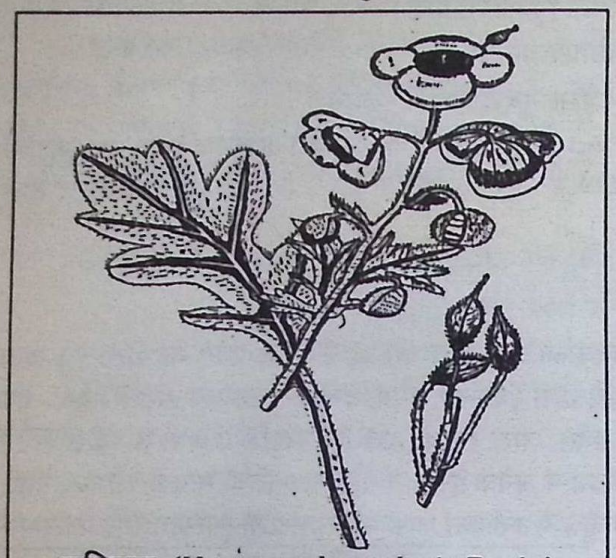

कलिहारु *(Meconopsis aculeata Royle.)*

**शास्त्रीय योग :** अहिफेनासव, वृ. गंगाधरचूर्ण, कर्पूरस, निद्रोदयवटी, दुग्धवटी, बालघुट्टी।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कलिहारु।

लैटिन–Meconopsis aculeata Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय मूल वाला शाक, काण्ड एक वर्षीय, तलोत्थ, 30 से. मी. से 90 से. मी. लम्बा, रोमिल, पत्र–मूलज, दीर्घायत, तट–खण्डित, सवृन्त पुष्प–बैंगनी नीले रंग के, सुन्दर, असीमाक्ष, मूल–कन्दिल, श्वेताभ रंग का।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल और कुमाऊं में यह वनौषधि 3,000 मीटर की ऊँचाई लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, पिंडारीघाटी अलकन्दाघाटी, फूलों की घाटी मेदनीबुग्याल, कूशकल्याणी आदि कतिपय स्थानों पर सुलभ है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रजाती भी इन घाटियों में कहीं कहीं पाई जाती है जिसे Meconopsis napaulensis कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** जौनसारी और बुशेरी लोग मूल क्वाथ का प्रयोग वेदनाशामक के रूप में करते है। भोटिया लोग इसके मूल और बीजों का उपयोग हृदय विकार में करते हैं। ग्रामीण लोग मूलकन्द को विषैला मानते हैं। गर्भस्त्राव आदि में बाह्य प्रयोग करते हैं। सम्भवतः यह बूटी लांगली (कलिहारी) का प्रकार भेद हो सकता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–स्वर्णक्षीरी; हिन्दी–सत्यानासी, कंटेला।

लैटिन–Argemone maxicana Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय, उर्ध्वसंश्रित शाक, काण्ड 60 से. मी. से 1 मीटर लम्बा, समस्त–काण्ड कांटेदार, काण्ड को तोड़ने पर पीले रंग का रस निकलता है। पत्र–दीर्घायत, अवृन्त,पिच्छाकार, तट–खण्डित एवं कांटेदार, पुष्प प्याले के आकार के पीले रंग के, फल–स्फुटनशील, बीज काले, सरसों के समान।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, काण्डक्षीर, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यद्यपि यह पौधा फिरंगियों के साथ भारत में खरपतवार के रूप में आया है। तथापि भारत के उष्णभागों में सर्वत्र बहुतायत में पाया जाता है। उत्तराखण्ड के देहरादून टिहरी, अल्मोड़ा नैनीताल जनपदों के निचले मैदानी भागों में सर्वत्र यह पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक लोग मूल क्वाथ का उपयोग त्वचा के विकारों एवं रक्तशोधक के रूप में करते हैं। सत्यानासी का क्षीर मूत्रल एवं व्रणरोपण में प्रयोग करते हैं। सत्यानासी का तेल मृदुरेचक है। अधिक मात्रा में प्रयोग करने पर विषैला है।

**टिप्पणी** : संहितोक्त स्वर्णक्षीरी यह नहीं है। अधिकतर विद्वानों का मत है कि शास्त्रीय स्वर्णक्षीरी हेम दुग्धा, काञ्चनक्षीरी विशेष पौध हिमालय के बुग्यालों (एलपाईन जोन) में कोई शाकीय पादप है। वैद्य वापालाल जी शाह ने Euphorbia thomsoniana हिरवी को स्वर्णक्षीरी लिखा पीतमूली, रेवन्दचीनी Reum emodi को भी कुछ लेखकों ने स्वर्णक्षीरी, का संकेत किया है। मेरे विचार से स्वर्णक्षीरी, हेमदुग्धा भृंगराज (कम्पोजिटी) कुल की वनस्पति है जिसका दग्ध पीतवर्ण का होता है और हिमालय में उपलब्ध है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

काकड़ासींगी Pistacia integerrima

बुरांस Rhododendron arboraum

कलिहारू Meconopsis aculeata

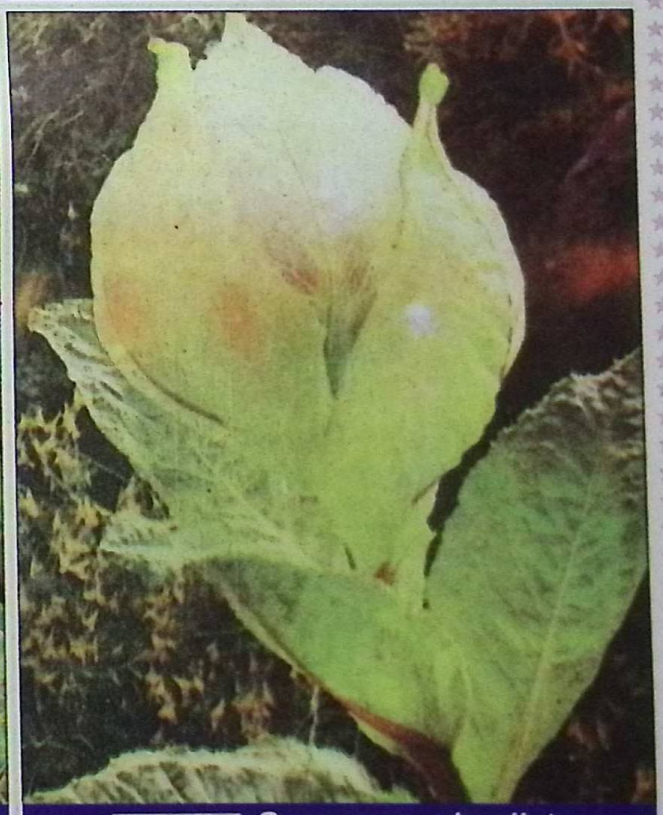

बह्मकमल Saussurea obvallata

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : स्वर्णक्षीरी हिमादुग्धा स्वर्णाहवा रूक्मणी तथा।**
**हेमाहवा पीत दुग्धा च तन्मूला चोक उच्यते।।** *(रा.नि.)*
**सुवणक्षीरी अन्तासद्यशपत्रा हयावली इति लोके कंकुष्ठ मित्यमपरे।।**
*(डल्हणः सु.सू.अ. 38)*
**हेमाहवा रेचनी तिक्ता मदन्युत्क्लेशकारिणी।।** *(भा.प्र.)*

**कुल-कमलादिवर्ग NEMPHAEACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियाँ जल में होती हैं। पर्ण–बडे, गोल एवं पर्णवृन्त–द्विधाविभक्त होकर जल में तैरते रहते हैं। पुष्प बड़े श्वेत, रक्त, पीले, नीले रंग के, एकाकी भी होते हैं। पुष्प वृन्त लम्बा, मोटा एवं सच्छिद्र होता है। पुष्प–बाह्य कोष 3 से 6 पंखड़ियों में या उससे अधिक, पुंकेशर एवं स्त्रीकेशर संख्या में अधिक होते हैं। परागकोश अन्तर्मुख होता है। बीज कोष 8 या अधिक संयुक्त एवं पुष्पासन काफी बड़ा होता है। इस कुल की वनस्पतियाँ शीतल, पौष्ठिक, मूत्रल, पितशामक एवं वल्य होती है। इस कुल में मुख्य रूप से कमल कमलकेशर, कुमुद, मखाना, नीलोफर आदि द्रब्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कमल, अरविन्द; हिन्दी–कमल, कमलबीज।

लैटिन–Nelumbo nucifera Gaertn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह जलीय बहुवर्षायु मूल वाला पौधा है। इसके पत्र चौड़े, अण्डाकार, सनाल एवं चिकने एवं पानी में तैरते रहते हैं। संस्कृत साहित्य में इसे अरविन्द, कोकनद, पुण्डरीक, पद्म, शतपत्र आदि कतिपय नामों से जाना जाता हैं। पुष्प वर्ण भेद भी से श्वेत, नील, रक्त होते हैं। नीले फूल वाले कमल को नीलोफर कहते हैं। श्वेत कमल के पुष्पकेशर को पद्मकेशर कहते हैं। कमल का अन्य जीनस Nymphea alba है जिसे कुमुद या कोई कहते हैं।

पुष्पकाल–मई, जून; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–पुष्प, पद्मकेशर।

नाल–भिस (मुरार) मृणाल; बीज–पद्मबीज (कमलगट्टा); कन्द–प्रकन्द (शालूक)।

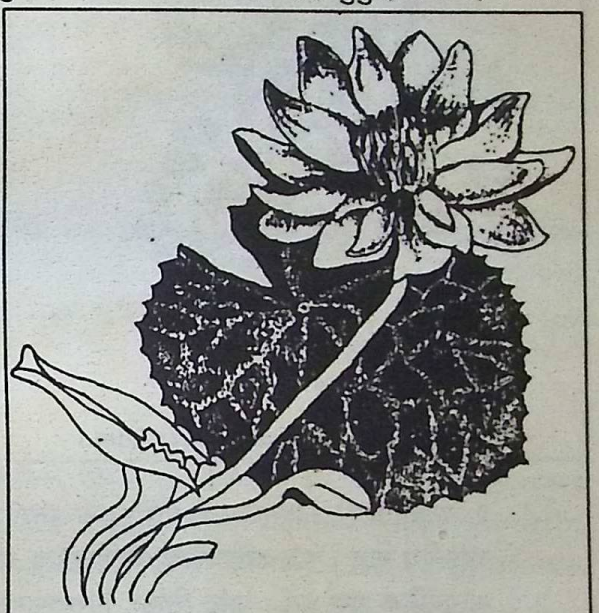

**कमल** ***(Nelumbo nucifera Gaertn.)***

**प्राप्तिस्थान :** कमल की किस्में उत्तराखण्ड के देहरादून जनपद, शिवालिक ग्रामीण क्षेत्र, कुमाऊं के रामनगर, काशीपुर, रूद्रपुर आदि स्थानों के बिहड़ो कीचड़वाले, तालाबों में यत्र–तत्र पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग बीज (कमलगट्टा) एवं नाल (भिष) का उपयोग बल्य एवं शीतल, मूत्रल के रूप में करते हैं। बीज पौष्ठिक, गर्भस्थापक एवं पैतिक विकारों में उपयोगी है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पुण्डीकं हिम तिक्तं मधुरं पित्तनाशनम्।**
**दाहाध्नं मस्त्रशोषध्नं पिपासा भ्रमनाशनम्।।**
**उत्पलानिकषायाणि, रक्तपित्त हराणि च।**
**कुमुदोत्पलनालस्तु, सपुष्पा सफलास्मृताः।।**
**पौष्करं तु भवेद्बीजं मधुरं रस पाकयोः।।** *(ध.नि.)*
**ज्वरातिसारे-उत्पलदाडिम त्वक् च पद्मकिज्जल्कमेव च।**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**पीतं तण्डुलतोयेन, ज्वरातिसार नाशनम्।।** *(भाव मिश्र)*
**मूत्रकृच्छ्रे-कमल पिवेद्कषायं कमलोत्पलनाम्।।** *(च.चि.अ. 26)*

**कुल-पर्पटादिवर्ग FUMARIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्रायः शाकीय (एक वर्षायु) वनस्पति पाई जाती है। शाखायें मृदु, पर्ण मूलोद्भव एकान्तर, अभिमुख, अविभाजित होते हैं। पुष्प–छोटे, स्त्रीपुंसोपयोगी, पुष्पबाह्य कोष के दल 2, पुष्पाभ्यन्तर दलकोष 5, पुंकेशर पुष्प की पंखड़ियों के सामने, पुष्प पीत, नील, फली में चमकते हुये एक या अनेक बीज होते हैं। इस कुल की वनस्पतियाँ प्रायः तिक्त, ज्वरध्न, स्वेदल एवं कटुपौष्टिक होती हैं। इस वर्ग में पित्तपापड़ा (पर्पट), इन्द्रजटा आदि वनौषधियाँ पाई जाती हैं।

**पित्तपापड़ा *(Fumaria parviflora Lam.)***

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पर्पटक, पर्पट; हिन्दी–पित्तपापड़ा, शाहतरा।

लैटिन–Fumaria parviflora Lam.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षायु, परिसृत, मृदुशाखीय शाक, काण्ड–मृदु 30 से. मी. से 60 से. मी. लम्बा, पत्र, हरिताभ, छोटे, पिच्छाकार, विभक्त, पत्त गहरे, खण्डित, तट–अच्छिन्न, पुष्प–गुलाबीरंग, श्वेताभ, फल छोटे, एक बीज वाले इसकी अन्य स्पीसीज (जाति) भी पाई जाती है। जिसे Fumaria indica कहते हैं।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पंचांग।

**स्थानिक प्रयोग :** 1. ग्रामीण लोग पित्तपापड़ा, नागरमोथा के क्वाथ को ज्वरों के शमन के लिए प्रयोग करते हैं। यह उत्तम तृषाशामक हैं।

2. यकृतविकार, विषमज्वर में पंचांग का श्रृतशीत कषाय देने से लाभ होता है।

**शास्त्रीय योग :** पर्पटकादिक्वाथ, षडंगपानीय, धान्यकादिकषाय।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पर्पट तिक्ताः पित्तकफापहाः।** *(सु.सू.अ. 46)*

**शाकं पर्पटकं चयत् कफपित्तहरंतिक्त शीत कटु विपच्यते।**
*(सु.सू.अ. 29)*

**पर्पट शीतलस्तिक्तः पित्तश्लेष्म ज्वरापहः।**
**रक्त दाहारूचिग्लानि मदभ्रम विनाशनः।।**
**कृशः शाख पर्पटकः सुतिक्तोरक्तपुष्पकः।।** *(ध०नि०)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–इन्द्रजटा, भूतकेश।

लैटिन–Corydalis govaniana Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षायु भौमिक काण्ड वाला शाक, काण्ड एक वर्षायु 60 से० मी० से 80 से० मी० लम्बा, मूल गुच्छों में ग्रन्थिल, पत्र–मूलोद्भव, काण्ड की अपेक्षा लम्बे, द्वि–पिच्छाकार, पत्रक–गहरे खण्डित, दीर्घ, सवृन्त, पुष्प–चमकीले पीले रंग के फल–कोषयुक्तं, छोटे काले रंग के बीज वाले होते हैं। औषधीय उपयोगी अन्य किस्में भी इन घाटियों में पाई जाती हैं। यथा (अ) Corydalis ramosa Wall काण्ड परिसृत, पर्ण पिच्छाकार विभक्त, पत्रक–गहरे,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

खंडित, दीर्घायत, लट्वाकार, (ब) Corydalis cornuta Royle - काण्ड शयान, 60 से० मी० तक ऊँचा, मृदुशाखीय, पत्र पिच्छाकार, गहरे खंडित प्राय अच्छिन्न तट वाले एवं पुष्प पीत वर्ण के। .

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय के यह सब–एलपाईन एवं एलपाईन जोन के 2,400 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक हिमनदों (ग्लेसियरों) एवं बुग्यालों में सभी घाटियों में जमुनाघाटी, भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, पिडांरीघाटी तथा पिथौरागढ़ जनपद के सीमा क्षेत्रों में उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग काण्ड स्वरस का उपयोग नेत्रबिन्दु के रूप में प्रयोग करते हैं। तिब्बती चिकित्सा में पंचांग एवं पुष्पों का उपयोग किया जाता है।

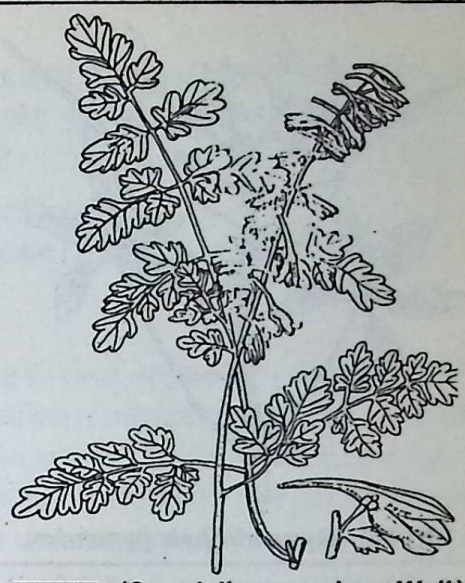

इन्द्रजटा *(Corydalis govaniana Wall.)*

**कुल-वरूणादिवर्ग CAPPARIDACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में छोटे पौधे, गुल्म, लता एवं वृक्ष पाये जाते हैं। पर्णविन्यास–त्रिपत्रक, मसृण, चर्मिल, फल, बहुधा असमान, मांसल, पुष्प खिलने पर अनेक वर्ण के सुन्दर होते हैं। इस वर्ग की वनस्पतियाँ तिक्त, मूत्रल, कटुपौष्टिक, विषघ्न, व्रणरोपक एवं स्वेदजनन होती हैं। इस कुल के मुख्य औषधोपयोगी पादप वरूण, हिंस्सा (हीस), तिलपर्णी (हुल–हुल) व्याघ्रनखी आदि मुख्य हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वरूण; हिन्दी–वरना, वरूण।

लैटिन–Crataeva nurvala Buch.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णपाती गुल्म, मध्यम वृक्ष, पर्ण विल्वपत्र सदृश, त्रिपत्रक, सवृन्त, लट्वाकार, भालाकार, मसृण, चर्मिल, पत्राग्र नुकीले, पुष्प खिलने पर सुन्दर श्वेताभ पीतवर्ण के गुच्छाकार, मज्जरियों में, फल कांगजी निम्बु सदृश, गोलाकार, पकने पर रक्तवर्ण के, फलमज्जा पीताभ अनेकों बीज वाले पत्र एवं फल स्वाद में तिक्त, छाल धूसर वर्ण की रवेदार तथा अन्दर से श्वेताभ।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च ; फलकाल–अगस्त ; प्रयोज्यअंग–छाल, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के देहरादून वनखण्ड, शिवालिक वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, तराई भावर में काशीपुर, रामनगर, मोहान्ड, कोटद्वार, स्थानों पर उपलब्ध है। व्यापारिक रूप से छाल का संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग छाल क्वाथ का प्रयोग मूत्रदाह एवं मूत्रकृच्छ्र में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वरूण शीत वातघ्नः तिक्तो विद्रधिजन्तुजित्।**

**तथा च-कटुरूणाश्च, रक्तदोष हरः परः।** *(ध.नि.)*

**वरूणः पित्तलो भेदी श्लेष्म कृच्छ्राऽश्ममारूतान्।**

**निहन्तिगुल्म वातास्त्रः कृमिचोष्णाऽदग्निदीपनः।।**

**कषायो मधुरस्तिक्तः कटुको रूक्षको लघुः।।** *(भा.प्र.)*

**शास्त्रीय योग :** वरूणादिक्वाथ, वरूणधृत, काञ्चनारगुग्गुलु मज्जिष्ठाद्यारिष्ठ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तिलपर्णी *(Gynandropsis gynandra)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिलपर्णी, अजगन्धा; हिन्दी–हुल–हुल; स्थानिक–जख्या।

लैटिन–Gynandropsis gynandra (L) Briq.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षायु शाकीय पादप, काण्ड 30 से० मी० से 90 से० मी० लम्बा, पर्ण–समपत्रक, करतलाकार, पत्रक संख्या में 5, अभिलट्वाकार, रोमश, गन्धयुक्त, पुष्प श्वेताभ रंग के मज्जरियों में स्पर्श करने पर चिप–चिपे, फलियाँ–मेथीफल सद्यश पतली रेखांकित, बीज कालेरंग के वृक्काकार एवं मसलने पर गन्धयुक्त होते हैं। इसकी एक अन्य पीले फूल वाली प्रजाति भी पाई जाती है जिसे Cleome viscosa Linn कहते है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के प्रायः सभी जनपदों के उष्णभागों में खेतों के आस–पास, सड़कों के किनारे, वर्षाकाल के बाद यह सर्वत्र 1,500 मीटर की ऊँचाई तक स्वयंजात पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण बीजों का उपयोग मसाले के रूप में छौंक (तुड़का) लगाने के लिये करते है बीज–दीपन, पाचन एवं वात–कफ शामक होते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अजगन्धा कटूष्णा स्यात्वातगुल्मोदरापहा।**
**कर्णव्रणार्तिशूलध्नी, कृमिध्नी च ज्वरापहा।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हिंस्त्रा; हिन्दी–कन्थारी, हिंस, कव्रा;

लैटिन–Capparis sepiaria Linn.

**वानस्पतिक स्वरुप :** प्रसणशील आरोही गुल्म, काण्ड–तीक्ष्ण कांटेदार, जोड़ों में, पर्ण–लट्वाकार, आयताकार, अभिलट्वाकार, अभिप्रासवत्, सवृन्त, पुष्प–श्वेतवर्ण के, फल–मटर सद्यश, काले रंग के होते हैं। अन्य जाति भी इन घाटियों में पाई जाती है जिसे Capparis spinosa कहते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–शीतकाल; प्रयोज्यअंग–फल, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों के उष्ण मैदानी भागों में शिवालिक वनखण्ड, देहरादून बनखण्ड, काशीपुर, रामपुर, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर की निचली घाटियों में सर्वत्र उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूलत्वक् क्वाथ का प्रयोग सन्धिवात एवं पक्षाघात में करते हैं। ज्वरध्न एवं ग्रन्थि रोगों तथा विषध्न के रुप में भी इसके मूल क्वाथ का प्रयोग करते हैं। अधिक मात्रा में प्रयोग करने पर यह दाहक है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कन्थारी कटु तिक्तोष्णा कफवात निकृन्तनी।**
**शोफध्नी दीपनी रूच्चा, रक्त ग्रन्थिरूजापहा।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–व्याघ्रनखी; हिन्दी–वधनई, करेरूआ।

लैटिन–Capparis spinosa Linn:

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, परिसृत गुल्म, काण्ड बहुशाखीय, कण्टकित पर्ण–लट्वाकार, मसृण, पुष्प–श्वेत एवं गुलाबी रंग के, फल–पकने पर रक्तवर्ण के होते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उंष्ण मैदानी भागों में शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, ऋषीकेश, नरेन्द्रनगर, काशीपुर, अल्मोड़ा तथा नैनीताल जनपदों के तराई भावर क्षेत्र में सर्वत्र सुलभ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** मूल को दाहक एवं स्फोटकर मानते हैं। कास एवं श्वास में पंचांग क्वाथ का प्रयोग करते हैं।

**टिप्पणी :** इसके अतिरिक्त करीर, करेरूआ Capparis decidua एवं C. zeylinaca Linn. आदि के कण्टकित गुल्म भी उत्तराखण्ड के उष्ण मैदानी भागों में पाये जाते हैं स्थानिक लोग मूत्रजनन (मूत्रल) के रूप में मूलक्वाथ का प्रयोग करते हैं। मधुमेह में फलों का उपयोग शाक के रूप में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वातश्लष्मे हर रूच्यं, कटूष्णं गुदकीलजित्।**
**करीराध्मानकरं, रूचिकृत् स्वादतिक्तकम्।।** *(ध.नि.)*

**कुल-सर्षपकुल CRUCIFERAE (Brassicaceae)**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्राय शाकीय पौधे विशेष रूप से पाये जाते हैं। काण्ड–मुदु, एकवर्षायु, बहुवर्षायु, पत्र–मृदु, लट्वाकार, एकान्तर, भालाकार, पुष्पों की पंखुड़ियाँ आमने–सामने, स्वस्तिकार, पंखुड़ियाँ संख्या में, पुष्प–पीले, श्वेत, गुलाबीरंग के बीजों में उड़नशील तैल पाया जाता हैं। कई तैल भोजन सामग्री के उपयोग में आते हैं। इस कुल की वनस्पतियाँ तिक्त, कटु, विदाही, दीपन, वातानुलोमन, कफनिस्सारक एवं वेदनास्थापक होती हैं। इस कुल की वनस्पतियाँ मुख्यरूप से मसालों एवं तेलों के रूप में उपयोगी की जाती है जिनकी प्रायः खेती की जाती है। यथा सरसों, खूवकलां, चन्द्रसूर (होलों) राई, तोड़िया, तोदरी, मूली आदि प्रमुख हैं।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–खूवकलां; हिन्दी–खूवकलां।

लैटिन–Sisymbrium irio Linn. or Sisymbrium sophia Wall Ex. Pran.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाक, काण्ड–मृदु 30 से० मी० से 50 से० मी० लम्बा, पर्ण–मूलज, एकान्तर, निशिताग्र, पुष्प–गुलाबी पीले रंग के होते हैं। इसके अतिरिक्त हिमालय की घाटियों में औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ पाई जाती हैं :

1. Capsella bursa-pastoris (Linn.) Medic 2,700 से 3,600 मीटर की ऊँचाई पर, पुष्प–श्वेताभ
2. Cardamine impatiens Linn. 1,800 मीटर से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक, पुष्प–श्वेताभ।
3. Arabis amplexicaulis Edgew 3,300 मीटर से 3,800 मीटर तक, पुष्प–गुलाबी श्वेत।
4. A. pterosperma Edgew 3,300 मीटर से 3,800 मीटर की ऊँचाई पर, पुष्प, श्वेत गुलाबी।
5. Draba glacialis Adams 3,600 मीटर की ऊँचाई पर, पुष्प–श्वेतवर्ण के।
6. Nasturtium fontanum Asch. 2,800 मीटर से 3,300 मीटर की ऊँचाई पर, पुष्प–श्वेतवर्ण के।
7. N. palustre DC. 3,300 मीटर की ऊँचाई तक, पुष्प–पीताभ हरित।
8. Eruca sativa Linn. 2,800 मीटर से 3,300 मीटर तक, पुष्प–नांरगी पीताभ रंग के।

पुष्पकाल–जून से जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यंअग–बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उपरोक्त सभी प्रजातियाँ उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के प्रायः सभी घाटियों के बुग्यालों (एलपाईन मेडोज एवं सब–एलपाईन) वनक्षेत्रों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इन किस्मों का स्थानिक प्रयोग बहुत कम करते हैं। तथापि इन सभी किस्मों में औषधीय गुणवत्ता विद्यमान है।

**टिप्पणी :** इसके अतिरिक्त निम्न पादपों की खेती उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों में की जाती है जिनके संस्कृत एवं लैटिन नाम इस प्रकार से है :

1. चन्द्रसूर (हालों) Lepidum sativum Linn. मसालों के रूप में बीज का उपयोग किया जाता है।
2. तोदरी Matthiola indica R.Br. बीजों का चिकित्सा में उपयोग किया जाता है।
3. मूलक (मूली) Raphanus sativus Linn. शाक (सब्जी)।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

4. सर्षप (सरसों) Brassica campestris. var. rapa.

5. राई (राजिका) B. junea (L.) Czern. इनकी खेती पहाड़ के मैदानी भागों में विशेष रूप से की जाती है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : (1)** *चन्द्रसूर :* **दीर्घबीजों वातशूल गुल्मध्नः स्तन्यपुष्ठिकृत्।**
**बल्योवाजीकर पानात् लेपाच्शोणितशूलनुत्।।**
**चन्द्रशूरं हितं हिक्का वातश्लेष्मातिसारिणम्।** *(भा.प्र.)*

**(2)** *तोदरी* **: वलासजित् पित्तकरी, जराहरी प्रमेहपीडाप्रणुदस्तितोदरी।।**
*(सि.भै. मणिमाला)*

**(3)** *मूली* **: कुटु तिक्तरस हृद्या, रोचिनी वह्निदीपनी।**
**सर्वदोषहरा लध्वी कण्ठया मूल कपोत्रिका।।**
**त्रिदोष शमनं शुष्कं विषदोष हरं लधु।** *(सुश्रुत)*
**वालं दोषहरं, वृद्धं त्रिदोष मारूतापहम्।** *(चरकः)*

**(4) सरसों : कटूष्णंसार्षपतैलं, रक्तपित्तप्रदूषणम्।**
**कफशुक्रानिलहरं, कण्डूकोठविनाशनम्।।** *(चरक)*
**अज्जनं हन्त्यपस्मारं उन्मादं चैव दारूणम्।।** *(हारीतसंहिता)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–बरमूला।

लैटिन–Megacarpea polyandra Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय कन्दिल शाक, काण्ड–उर्ध्वसंश्रित, 60 से० मी० से 1 मीटर तक लम्बा, मृदुशाखीय, अरोमिल, पत्र–एकान्तर, पत्रक संख्या में अनेक, तीर्यगाकार, मसलनें पर सरसों के पत्र समानगन्ध, पुष्प–गुच्छों में छोटे, पीतवर्ण एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में यह 3,300 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी के ताली, सहस्त्रताल, हथनी, किनकोलियाखाल, जमुनाघाटी के हरकीदून एवं मेदनी आदि बुग्यालों में कहीं कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्तियों का शाक बनाकर खाते हैं। मूल को ज्वरध्न और दीपन–पाचन मानते हैं। उदरविकारों में मूलस्वरस का प्रयोग करते हैं। बैलों को ताकत के लिए इसके मूल का उपयोग करते हैं। इस क्षेत्र की यह उपयोगी वनस्पति हैं। इसके अतिरिक्त Draba glacialis Adams एवं Nasturtium fontanum Asch आदि किस्में इन घाटियों में पाई जाती है।

## कुल-वन्पशाकुल VIOLACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में एकवर्षायु शाकीय पादप एवं गुल्म पाये जाते है। पर्ण विन्यास एकान्तर, सादे, पुष्प–एकाकी, पृथक मांसयुक्त होते हैं इस कुल के पुष्प दर्शनीय सुन्दर एवं रंग बिरंगे होते हैं। इस वर्ग के द्रब्य ज्वरध्न, कफध्न, शोथध्न एवं मूत्रल होते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वनप्शिका; यूनानी–गुलवन्पशा; स्थानिक–डुण्डीविराली।

लैटिन–Viola serpens Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय, शाकीय मुदु पादप, पर्ण–लट्वाकार, हृदयाकार, मूलोद्भव एक साथ 4–से 5 तक लम्ब सवृन्तयुक्त, पत्रतट दन्तुर, पुष्पसवृन्त नीलवर्ण के इसके अतिरिक्त उत्तराखण्ड में 2,700 मीटर की ऊँचाई



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक निम्न किस्में (स्पिशीज) पाई जाती है।

(अ) Viola biflora Linn पुष्प–पीतवर्ण के।

(व) Viola canescens Wall पुष्प नीलवर्ण के।

पुष्पकाल–अप्रैल से जून; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पंचांग, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों की सभी घाटियों में किस्में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मी. की. ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है। व्यापारिक रूप से वन्पशा का संग्रह किया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** पंचांग एवं पुष्पों का प्रयोग जुखाम एवं खांसी में क्वाथ के रूप में प्रयोग किया जाता है। गले के विकारों में इसके क्वाथ से गरारे भी करते हैं।

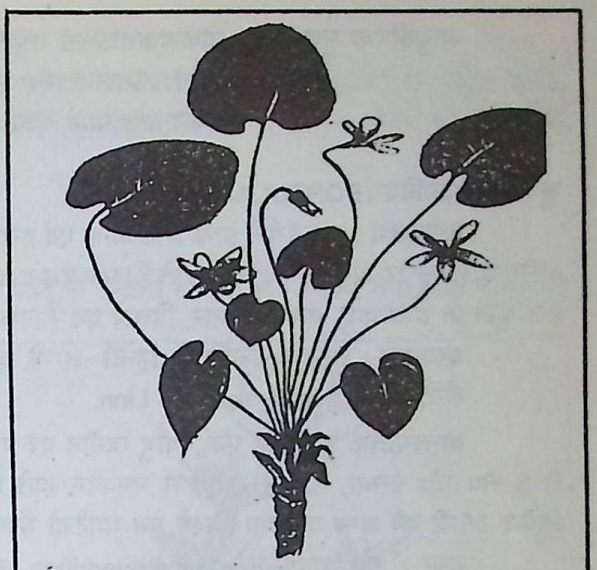

*गुलवन्पशा (Viola serpens Wall.)*

**कुल-विकंकतकुल FLACOURTIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बड़े वृक्ष एवं गुल्म होते हैं। पर्ण–सादे, एकान्तर उपपर्ण– संयुक्त, अस्थाई, पुष्प उभयलिंगी या एकलिंगी, पुष्प–पंखड़ियाँ अनियमित, फल रसाल, बीज बड़े, तैलीय होते है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ तन्द्राप्रद, त्वचारोगों में उपयोगी एवं मुखशोधक होती हैं। इस कुल में तुवरक (चालमोगरा) पचनाला, कंडाई आदि औषधीय पादप हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–प्राचीनामलक; हिन्दी–पचनाला।

लैटिन–Flacourtia jangomas Raed.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित मध्यम आकार का गुल्मीय वृक्ष, काण्ड एवं शाखायें कन्टकित, पत्र–लट्वाकार, भालाकार, मसृण, सवृन्त, लम्बाग्र, पुष्प छोटे, पुष्पक्रम असीमाक्षी, कुछ पीताभ वर्ण के फल गहरे गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–नवम्बर, दिसम्बर ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णभागों जौनसार, कालसी, अल्मोड़ा के तराई भावर में 900 मीटर की ऊँचाई तक कहीं–कहीं सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल का प्रयोग मूत्रल एवं ज्वरघ्न के रूप में किया जाता है। फलों का उपयोग यकृत विकार में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वातघ्नं पित्तकफहृत् उष्णं गुरू समीरजित्।**
**विषत्रिदोष शमनं, कफ तृष्णावातहरः प्रोक्तम्।।** *(मदनपाल. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–विकंकत; हिन्दी–कंडाई, स्थानिक–कांगू।

लैटिन–Flacourtia indica Merr. Syn. F. ramontchi Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती मध्यम आकार का गुल्म, काण्ड एवं शाखायें कांटेदार, पर्ण–अण्डाकार, अधोमुख, अरोमिल, तट–क्रकची, सवृन्त, पुष्प–हरित पीताभ वर्ण के फल मांसल, लाल रंग के स्वाद में मधुर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–फल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के सभी जनपदों में शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनखण्ड, अल्मोड़ा एवं नैनीताल के भावर एवं तराई के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते है। पत्र का उपयोग पशुचारा के रूप में करते हैं। पीलिया में क्वाथ का फाण्ड प्रयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : विकङ्कतोऽम्लो मधुरो पाकेऽतिमधुरोलघुः।**
**दीपन कामलास्त्रध्नः पाचनः पित्तनाशनः।।** *(रा.नि.)*
**विकङ्कत फलं पक्वं, मधुर सर्वदोषजित्।।** *(भा.नि.)*

**कुल-लोणिकादिवर्ग PORTULACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्रायः छोटे शाक एवं प्रसर जाति की वनस्पतियाँ पाई जाती है। पर्ण प्रायः रोमश, रसाल, अभिमुख, एकान्तर, अखण्ड एवं स्थिर होते हैं। पुष्प रचना अनेक प्रकार की, बहुधा शाखाग्र, बाह्यपुष्पकोष के दल पुष्पाभ्यन्तर इस कुल के द्रव्य कटु, कफ–वातहर, पित्तल एवं सारक होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–लोणिका; हिन्दी–लोणी, कुल्फा।

लैटिन–Portulaca oleracea Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षायु जमीन पर परिसृत शाक, पत्र–आयताकार, एकान्तर, गोल, खण्डिताग्र, 2 से 3 से० मी० लम्बा, मांसल, स्वाद में नमकीन होते हैं। पुष्पकोणीय, गुच्छों में पीतवर्ण के, बीज छोटे संख्या में अधिक लोणी की अन्य कतिपय किस्में इन घाटियों में पाई जाती हैं।

यथा : लोनीशाक–Portulaca quadrifida. लोणी–P. tuberosa Roxb.

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पंचांग, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों के उष्णभागों शिवालिक क्षेत्र, देहरादून, टिहरी गढ़वाल, उत्तरकाशी, पौडी, अल्मोड़ा, नैनीताल के मैदानी भागों खेतों के आसपास सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण इसकी भाजी बनाकर खाते हैं। शाक दीपन, पाचन होता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : लोणी रूक्षा गुरू कट्वी, वातश्लेष्महरीपटुः।**
**अर्शोध्नीदीपनी रूचा, चाम्लामन्दग्निविषनाशिनी।।** *(भा.प्र.)*
**स्वादुपाक रसाशीताः, कफध्ना नातिपित्तलाः।**
**लवणानुरसा रूक्षाः यक्षारा वातला सराः।।** *(सु.सू.अ. 46)*

**कुल-CARYOPHYLLACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में एकवर्षीय शाकीय पादप एवं गुल्म पाये जाते है। काण्ड–मृदु पुष्प छोटे, कक्षीय, पुष्पक्रम असीमाक्ष एवं वर्ण में श्वेत, हरित, गुलाबी रंग के होते हैं। इस वर्ग की निम्न प्रजातियां इस क्षेत्र में उपलब्ध हैं।

1. Arenaria kashmirica Edgew शाकीय पादप, पुष्प–श्वेत वर्ण के 3,300 मी० से 3,800 मीटर तक ।

2. Gypsophylla cerastioides D.Don. बहुवर्षायु रोमिल शाक, पुष्प–श्वेत गुलाबी रंग के 2,100 मीटर से 3,000 मीटर तक।

3. Stellaria aquatica Scop एक वर्षीय मृदुरोमिल शाक, पुष्प हरिताभ श्वेत 2,600 मीटर से 2,400 मीटर।

4. S. medica Linn. एक वर्षायु शाक, पुष्प श्वेतवर्ण के।

5. Polycarpea corymbosa Lam. एक वर्षीय मृदु रोमिल पादप, पुष्प–हरित श्वेत वर्ण के, पंचांग का प्रयोग शोथ एवं सन्धिवात में बाह्यलेप करते हैं।

6. Lichnis nutans Benth. मृदु, रोमिल शाक, पुष्प–गुलाबी रंग के 2,800 मीटर से 3,600 मीटर तक।

7. Lichnis pilosa Edgew रोमिल मृदु शाकीयपादप, पुष्प–श्वेत हरित 3,000 मीटर से 3,600 मीटर तक

8. Silene cucubalus Wibel बहुवर्षायु परिसृत शाक, पुष्प–पीताभ गुलाबी रंग के।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जून से अगस्त; फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में उपरोक्त सभी प्रजातियाँ भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, पिंडारीघाटी, रूद्रनाथ, कालीघाटी एवं सभी बुग्यालों (एलपाईन मेडोज) में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**कुल-TAMARICACEAE**

इस कुल में Myricaria bracteate Royle के गुल्म पञ्चूली वनक्षेत्र पिथौरागढ़ जनपद में 3,600 मीटर की ऊँचाई पर सुलभ है।

**कुल-वासन्तीकुल HYPERICACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वासन्ती।

लैटिन–Hypericum patulum Thunb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंश्रित बहुशाखीय गुल्म काण्ड 90 से०मी० से 1.5 मी० लम्बा, पर्ण लट्वाकार, दीर्घायत एवं प्रासवत् पुष्प–शाखाग्र, पीतवर्ण के अन्य औषधोपयोगी किस्में (स्पिसीज) इन घाटियों में पाई जाती है। जिसे Hypericum perforatum Linn एवं H. elodeoides Choisy कहते है।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपद के सभी जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक ये किस्में सर्वत्र पाई जाती हैं। होमियोपैथी चिकित्सा में इसका उपयोग किया जाता है।

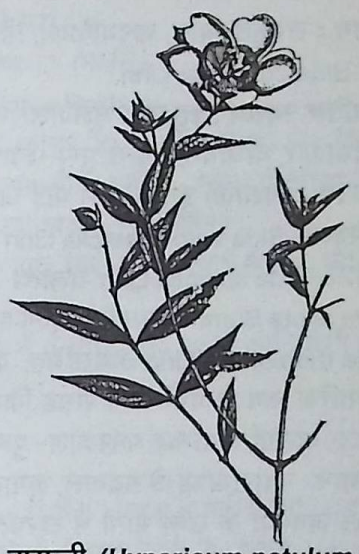

*वासन्ती (Hypericum patulum Thunb.)*

**कुल- POLYGALACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मराडू।

लैटिन–Polygala chinensis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षायु शाक, काण्ड मृदु, तलोत्थ, पर्ण–अभिमुख, मसृण, पुष्प–गुलाबी रंग के इसके अतिरिक्त अन्य किस्म भी इन घाटियों में पाई जाती हैं। जिसे Polygala abyssinica Fre. कहते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक: प्राय सभी घाटियों में सुलभ है। इसके पंचांग के क्वाथ का उपयोग प्लुरिसी, ज्वरध्न एवं सर्पविष में किया जाता है।

***Melastoma malabathricum* Linn.**
**Family - MELASTOMACEAE**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल-बलाकुल MALVACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक (गुल्म) एवं शाकीय पौधे पाये जाते हैं। अन्तःत्वचा कड़ी और रेशेदार होती है। पर्ण–प्राय एकान्तर, अखंडित, पत्रतट–करतलाकार एवं सादे होते हैं। उपपर्ण अनेक आकार के पाये जाते हैं पुष्प श्वेत पीले, गुलाबी एवं रक्तवर्ण के होते हैं। पुष्पबाह्यकोष के दल पांच, बहुधा संयुक्त, परागकोष एक खाने वाला और बहिःस्फोटक होता है। स्त्री केशर एक होता है। फल प्रायः भिण्डी के आकार के, गोल, अण्डाकृति, धारीदार अनेक आकृति के होते हैं। बीज प्रायः चपटे गोल, प्रायः रोमश होते हैं। इसवर्ग की वनस्पतियाँ पौष्टिक, ग्राही, मूत्रल, स्वेदल, विषहर, शोथध्न एवं ज्वरध्न होती है। इस वर्ग में लताकस्तूरी (मश्कदाना) वला, अतिवला, भूमिवला, आदि कतिपय द्रव्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बला, खरयष्ठिका; हिन्दी–खरेंटी, वरियारा।

लैटिन-Sida cordifolia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय मूलवाला, उर्ध्वसंश्रित क्षुप, काण्ड 60 से० मी० से 1 मीटर तक लम्बा, शाखीय, रोमिल, पर्ण–हृदयाकार, दीर्घायत, सवृन्त, पुष्प–श्वेताभ, फल–रोमिल, बीज कठोर एवं बारीक होते हैं। इसके अतिरिक्त औषधोपयोगी किस्में (स्पिशीज) इन क्षेत्रों में पाई जाती हैं। खरेंटी के बीजों को बीजबन्द कहते हैं।

1. भूमिबला–Sida veronicaefolia Linn प्रसरणशील, मुदुकाण्ड, शाक, पुष्प–पीतवर्ण के।
2. खरेंटी–Sida spinosa Linn तलोत्थ शाकीय पादप, छाल रेशेदार पुष्प–पीतवर्ण के।
3. Sida acuta Burm बहुशाखीय, गुल्मक, पत्र भालाकार दीर्घायत, सवृन्त, दन्तुर, पुष्प–पीत।
4. Sida rhombifolia Linn उर्ध्वसंश्रित, काण्ड शाखीय, पत्र अधोमुख, अण्डाकार, अरोमिल, पुष्प–पीताभ श्वेतवर्ण के, व्यापारिक रूप से पंचांग का संग्रह किया जाता है।

पुष्पकाल–जुलाई, सितम्बर; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पंचांग, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं जनपदों के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनक्षेत्र, तराई, भावर, अल्मोड़ा, नैनीताल जनपदों के उष्ण भागों में खरपतवार के रूप में वर्षा के बाद 1500 मीटर की ऊँचाई तक सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग विशेष उपयोग नहीं करते है बीज एवं मूल को वातवेदना तथा धातुविकार में उपयोग करते हैं। प्रदर में वला मूलचूर्ण मधु के साथ देते हैं।

**शास्त्रीय योग :** बलातैल, वलाधृत, वलारिष्ठ, महानारायण तैल, च्यवनप्राश क्षीस्वलातैल, बलातैल आदि।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** **बलास्निधा हिमास्वादु बल्याकान्तित्रिदोषनुत्।**
**रक्तपित्तक्षयं हन्ति, बलेजौबर्धयत्यपि।।** *(ध.नि.)*
**बला तिक्तामधुरा पित्तातीसार नाशिनी।**
**बलवीर्य प्रदा पुष्ठीः कफ रोग विशोधनी।।** *(रा.नि.)*

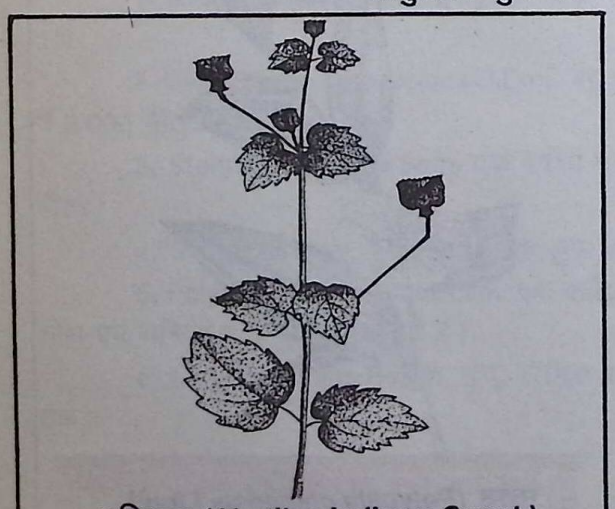

*अतिबला (Abutilon indicum Sweet.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अतिबला; हिन्दी–कंघी।

लैटिन–Abutilon indicum Sweet.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, अरोमिल, मसृण गुल्म, काण्ड 1 मीटर से 2 मीटर तक ऊँचा, पत्र–मृदुरोमिल, हृदयाकार, तट–दन्तुर, पुष्प–पीले रंग, फल–गोल कंधी सदृश, बीज कोषीय–काले रंग के इसकी अन्य किस्म (स्पिसीज) इन घाटियों में पाई जाती है जिसे Abutilon graveolens W. of A. कहते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–सितम्बर;



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रयोज्यअंग–पंचाग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं जनपदों के उष्ण एवं मैदानी भागों में देहरादून, ऋषीकेश, रायवाला, शिवालिक एवं तराई–भावर टिहरी, अल्मोड़ा आदि स्थानों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक उपलब्ध है। बलाचतुष्ठय में अतिबला भी है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य अतिबला (कधी) के पंचांग क्वाथ का प्रयोग मूत्रकृच्छ्र में करते हैं। मूल छाल मूत्रजनन है।

**शास्त्रीय योग :** महविषगर्भतैल, बलातैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तिक्ता कटुकश्चातिबला, वातध्नी कृमिनाशिनी।**
**दाह तृष्णा विषच्छर्दि, क्लेदोपशमनी परा।।**
**हन्त्यादतिबला मेहं सेवेत् सितया सहः।।** *(भा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कामल्या; लैटिन–Hibiscus cancellatus Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय, रोमिलशाक, मूल–कन्दिल, काण्ड 30 से० मी० से 90 से० मी० लम्बा, पर्ण 4–6'' ब्यास में वर्तुल, तट दन्तुर, एवं तीन खण्डों में विभक्त, पुष्प–पीत वर्ण के, फल दीर्घायत एवं रोमिल।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपद के प्रायः घास वाले ढलानों में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,500 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग बल्य के रूप में करते हैं। म० प्र० के आदिवासी इसे कामराज कहते हैं।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–खुब्बा।

लैटिन–Malva rotundifolia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** परिविसर्पी, मृदुरोमिल, शाकीय, पर्ण– 1" से 3'' ब्यास में वर्तुल, तट–दन्तुर, पुष्प छोटे, गुच्छों में गुलाबी रंग के। इसके अतिरिक्त दूसरी किस्म भी इन घाटियों में पाई जाती है। जिसे Malva verticillata Linn. कहते हैं।

पुष्पकाल–मई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–बीज, पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल और कुमाऊं के सभी जनपदों में ये किस्में उष्णकटिबन्धीय वनक्षेत्रों से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, जमुनाघाटी, चम्बा, कांणाताल, अल्मोड़ा, नैनीताल, पिथौरागढ़, देहरादून आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग बीज और पंचांग का उपयोग कास में करते हैं।

**टिप्पणी :** इस कुल की औषधोपयोगी अन्य किस्म उत्तराखण्ड की निचली घाटियों में पाई जाती है। जिसे Urena lobata Linn. कहते है। ग्रामीण लोग पंचांग क्वाथ का प्रयोग मूत्रदाह में करते है। बला के उपभेदों में भी इसके पंचांग का उपयोग किया जाता है।

**कुल-शाल्मलीकुल BOMBACACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियों में बड़े वृक्ष होते हैं। काण्ड मोटा, पर्ण–एकान्तर, सादे, उपपर्ण–अस्थाई, पुष्पवाह्यकोष प्यालाकृति में, 3 से 5 दलयुक्त या नालिकाकार के रूप में संलग्न, स्त्रीकेशर नालिका सादे या विभाजित। इस वर्ग की वनस्पतियाँ तिक्त एवं कषाय रस प्रधान होती है। गोंद, रसायन एवं बाजीकर होता है। इस वर्ग में शाल्मली (सेमल), गोरख आदि हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शाल्मली; स्थानिक–सेमल।

लैटिन–Salmalia malabarica Schott.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके विशाल पर्णपाती वृक्ष होते हैं। काण्ड स्कन्ध सीधा मोटा, शाखाओं पर सर्वत्र शंक्वाकार कांटे पाये जाते हैं। पर्ण–करतलाकार, खडित, सवृन्त, पत्रक संख्या में 5 से 7, भालाकार अभिलट्वाकार, लम्बाग्र एवं सरल तटवाले, पुष्प–मोटे दलों में रक्तवर्ण के पुष्पकलिकाओं का शाक खाया जाता है। फल–गोल अण्डाकार, पंचकोणीय होता है। फलों के फटने से काले बीज निकलते है। पके फलों से सफेद रेशमी रूई निकलंती है। आधुनिक खोजों से पता लगा है कि सेमल की रूई से बने तकिये श्वास (दमा) रोग को पैदा करते हैं। छोटे पौधे की जड़ को सेमल मूशली कहते हैं।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल; फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

प्रयोज्यअंग–पुष्प, फल, छाल निर्यास (मोचरस), दो वर्ष तक के पौधे की जड़ को सेमलमूशली कहते है।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के शिवालिक वनक्षेत्र, देहरादून, टिहरी, अल्मोड़ा, नैनीताल के तराई भावर के निचली घाटियों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक इसके वृक्ष पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग कच्चे फलों का शाक के रूप में उपयोग करते हैं। फूलों के कषाय को शीतल संग्राहक के रूप में प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** शाल्मलीधृत, पुष्यानुकचूर्ण, पत्रांगासव, कामधेनु रस, मोचरस का उपयोग–चन्दनारिष्ठ, प्रदरारिलौह, कुटजावलेह एवं चन्दनादि चूर्ण में होता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शाल्मलीः पिच्छिलो बृष्यो बल्योमधुरश्शीतलः।**
**कषायश्च लधु स्निगधः शुक्र श्लेष्म विवर्धनः।।** *(भा.नि.)*
**मोचरसस्तु कषायः कफवात हरो रसायनों योगान्।।** *(रा.नि.)*

**कुल-मुचुकुन्दादिवर्ग STERCULIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं शाकीय पादप आते हैं। काण्डत्वक् से गोंद या तरल पदार्थ निकलता है। पर्ण–एकान्तर, उपपर्णयुक्त, सादे एवं चौड़े होते हैं। पुष्प पत्रकोणोद्भूत, विभाजित, छत्राकार, नियमित, पुष्पवाह्यकोष एवं पुष्पाभ्यन्तर कोष के 5-5 दल पृथक् होते हैं। फलः रसाल, विविध आकार के एवं शिम्बी फल सदृश इस वर्ग की वनस्पतियों में ग्लुकोसाईड, टैनीन, कैफीन, थियोब्रामीन आदि तत्व पायें जाते हैं। इस वर्ग में मुचुकुन्द, उलटकम्बल, मरोड़फली आदि औषधीय पादप आते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मुचुकुन्द; हिन्दी–मुचुकुन्द।

लैटिन–Pterosperinum suberifolium Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष मध्यम आकार के सघन, काण्ड मृदु, पर्ण थाली के आकार में चौड़े, गोलाकार, आयताकार, खण्डित, चमकीले, पत्रतट सरल, अधःपृष्ठ रक्ताभ श्वेत, पुष्प–बड़े सुगन्धित, द्विलिंगी, पर्णकोणीय, एकलक्रम में पीताभवर्ण के, फल–लम्बगोल पंचकोषीय, बाहर से गाढे भूरे रंग के, बीज चपटे भूरे रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के शिवालिक वनक्षेत्र, देहरादून वनखण्ड, तराई–भावर अल्मोड़ा जनपद की निचली उष्णघाटियों में इसके वृक्ष पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग शिरःशूल में फूलों का लेप चन्दन की तरह करते हैं। इसके पुष्पों में सुगन्धित उड़नशील तेल पाया जाता हैं।

**शास्त्रीय योग :** हिमांशुतैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मुचुकुन्द कटुस्तिक्तः कफकास विनाशनः।**
**कण्ठदोषहरः त्वक्दोषशमनों व्रणपाविनाशनः।।** *(भा. प्र.)*
**शिरपीडायां शिरोऽर्ति नाशयत्याशु पुष्पं वा मुचुकन्दजम्।।** *(चक्रदत्तः)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आवर्तकी; हिन्दी–मरोड़फली; स्थानिक–भिमल्या।

लैटिन–Helicteres isora Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय, सघन गुल्म, काण्ड–हरिताभ, रोमिल, पत्र सवृन्त, लट्वाकार, उपवर्तुलाकार, तीनखण्डों वाला, रूक्ष, तट–क्रकची, रोमश, पुष्पः–लालरंग के समूहवद्ध रूप में निकलते हैं। फलियाँ–मुड़ी हुई, गुच्छों में धूसर वर्ण की एवं अग्रभाग नुकीले होते हैं।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–फली, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं उष्णकटिबन्धीय वनक्षेत्रों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनखण्ड, तराई भावर एवं अल्मोड़ा जनपद की निचली घाटियों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** उदरशूल एवं दस्तों में इसकी फलियों का क्वाथ देते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : आवर्तनी कषायश्च शीतला ह्यतिसारहा।**
**त्रिदोषोदर शूलध्नी कृमिजालविनाशनी।।** *(नि.र.)*

फलियों में कुछ मात्रा में स्नेह द्रब्य तथा कम मात्रा में टैनिन आदि तत्व पाये जाते हैं।

**कुल-धन्वनकुल TILIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं छोटे पौधे आते हैं। इस वर्ग के वृक्षों की छाल अत्यन्त दृढ़ और रेशेदार होती है। पर्ण–एकान्तर, अभिमुख, सादे एवं उपपर्ण युक्त होते हैं। पुष्प नियमित एवं दलपुंज 4 या 5 परस्पर साथ–साथ लगे रहते हैं। परागकोश दो थैली वाला स्त्रीकेशर एक, गर्भाशय ठीक पुष्पासन पर स्थित, फल शुष्क या रसाल होते हैं। इस वर्ग के पादप स्निग्ध, पिच्छिल, रक्तपित्तशामक, दाहप्रशमन, वल्य एवं वर्णरोपक होते हैं। इस कुल में नागवला, (गुलशकरी), धन्वन, फालसा, चेंच, (चच्चु) आदि कतिपय औषधोपयोगी द्रब्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–नागवला, गांगेरूकी ; हिन्दी–गुलशकरी, गंगेरन।

लैटिन–Grewia hirsuta Vahl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, शाखायें मूलोद्भव, रोमिल, पर्ण अनियमित आकार में, रेखाकार, लट्वाकार, प्रासवत्, लम्बाग्र, पुष्प पीतवर्ण, फल प्रायः चारखण्डों में विभक्त।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर; फलकाल–शीतकाल; प्रयोज्यअंग–मूल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं वन क्षेत्र के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून, अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर वनक्षेत्र में 900 मीटर की ऊँचाई तक उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूलत्वक् चूर्ण का प्रयोग ग्रामीण वैद्य बल्य एवं रसायन के लिये करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** नागवलारसायन, नागवला चूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : गांगेरूकी मधुराम्ला कषायोष्णागुरूस्तथा।**
**कटुस्तिक्ता च वातध्नी व्रणपित्तविकारजित्।**
**कण्डूति कुष्ठ वातध्नी व्रणपित्तविकारजित्।।** *(रा.नि.)*
**गांगेरूकी फलं रूक्षं कषायं स्वादुवातलम्।**
**क्षये नागवलायास्तु धृतमाक्षिकमिश्रितम्।।** *(शोठलः)*

महर्षि चरक ने नागवला रसायन का विशेषतया उल्लेख किया है। नागवलाचूर्ण को धृत एवं मधु के साथ बल्य के रूप में प्रयोग किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–परूषक; हिन्दी–फालसा।

लैटिन–Grewia asiatica Linn.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, काण्ड–बहुशाखीय, पर्ण–त्रिपत्रक, खर, दन्तुर, आयताकार, पर्ण आधार हृदयाकार, पुष्प–पीतवर्ण के, फल–मटर सदृश, मांसल, बैंगनी रंग के एवं स्वाद में मधुराम्ल।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–फल, मूलछाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में शिवालिक वनक्षेत्र एवं तराई भावर में इसके गुल्म पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पके फल खाये जाते है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अत्यम्ल मीषत्मधुरं कषायानुरसं लधुः।**

**वातध्नं पित्तजननं आमंविद्यात् परूषकम्।।** *(सुश्रुत)*

**रोचनं मधुरं पाके विष्ठम्भि च वृहणम्।** *(कै.नि.)*

*धामिन (Grewia tilaefolia vhal)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–धन्वन, हिन्दी–धामिन।

लैटिन–Grewia tilaefolia Vhal

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के वृक्ष, पर्ण–एकान्तर, रूक्ष, आयताकार, रोमश, 6 से 15 से० मी० लम्बे, 3 से०मी० चौड़े, पुष्प–पीतवर्ण के, फल पकने पर कृष्णवर्ण के मांसल एवं स्वाद में मधुर इसकी अन्य किस्म भी पाई जाती है जिसे फरसेंण Grewia elastica कहते हैं। पशुचारे के रूप में उपयोग किया जाता हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं वनक्षेत्र के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा एवं नैनीताल जनपद के तराई–भावर की निचली घाटियों में 900 मीटर की ऊँचाई तक उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** ब्रणरोपण हेतु छाल का लेप करते हैं। पके फल खाये जाते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : धन्वन कफपित्तास्त्र कासजित् तुवरो लधुः।**

**मधुर स कषायं च, शीतं पित्तंकफापहम्।।** *(मदनपाल निधण्टु)*

**स कषायं हिमं स्वादु धान्वनंकफवातजित्।** *(सु.सू.अ. 46)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–भीमल, भीमवल; स्थानिक–भ्यूंल।

लैटिन–Grewia oppositifolia Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाबहार, बहुशाखीय गुल्म, पर्ण 5 से 10 से० मी० लम्बे, 3 से 6 से० मी० चौड़े, कर्कश, रोमिल, आयताकार, पुष्प–हल्के पीले रंग के तथा श्वेताभ वर्ण के, फल मांसल स्निग्ध पकने पर काले रंग के स्वाद में मधुर, कठोर बीज वाले।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के सभी जनपदों में खेतों के आस–पास इसके वृक्ष 1,600 मीटर की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। ग्रामीण लोग भीमल के वृक्षों को पशुचारा के लिये खेतों की मेड़ों में लगाते है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण महिलायें भीमल की छाल की लुगदी बनाकर बालों को धोने हेतु शैम्पों के रूप में प्रयोग करती है। पके फल खाये जाते हैं। पशुचारा में भीमल विशेष उपयोगी है। भीमल को दूध देने वाले मेवेशियों को दूध बढ़ाने के लिये खिलाया जाता है। छाल का उपयोग रेशों के लिये किया जाता है। इन रेशों से रस्सी बनाई जाती है। लघु उद्योग में भीमल के रेशों का विशेष उपयोग किया जाता हैं। उत्तराखण्ड का यह उपयोगी पादप है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चञ्चु; हिन्दी–चेंच।

लैटिन–Corchorus aestuans Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वर्षाकालीन एक वर्षायु पादप, काण्ड 30 से 90 से० मी० ऊँचा, पर्ण एकान्तर, दन्तुर, प्रासवत्, लम्बाग्र, पुष्प–पीताभ वर्ण के, फलियाँ पतली, धारीदार एवं बहुबीजी एवं लुवावदार औषधोपयोगी निम्न किस्में उत्तराखण्ड के मैदानी भागों में पाई जाती हैं। यथा बृ० चञ्चु Corchorus olitorus एवं C. capsularis क्षुद्रचञ्चु।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं सभी जनपदों के मैदानी भागों में ये किस्में वर्षा काल के बाद 900 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण इसके पंचांग का शाको में उपयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चञ्चुः शीता सरा रूच्या स्वाद्वी दोषत्रयापहाः।**

**धातुपुष्ठी करावल्या, मेध्या पिच्छिलास्मृता।।** *(भा० प्र०)*

**लधुपाके च जन्तुध्नं, पिच्छिलो व्रणिनाहितः।।**

**कषाय मधूरो ग्राही चञ्चुस्तेषां त्रिदोषहा।।** *(सू०सू०अ० 46)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–झिंझिरीटा ; हिन्दी–चिकती।

लैटिन–Triumfetta bartramia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शाकीय क्षुप, काण्डमृदु, अरोमिल, पत्र–बहुरूपीय, निशिताग्र, लट्वाकार 3 खण्डों में विभक्त, तट क्रकची पीत वर्ण के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों के उष्णभागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है।

## कुल-वासन्तीकुल : LINACEAE

**वर्गलक्षण :** इस कुल में शाकीय पादप एवं गुल्म पाये जाते है। काण्ड मृदुशाखीय, पत्र, अभिमुख, एकान्तर, मसृण, पुष्प पीत, रक्त, श्वेत वर्ण के होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वासन्ती; स्थानिक–पयूंली।

लैटिन–Reinwardtia indica Dum.

**वानस्पतिक स्वरूप :** तलोत्य, अरोमिल, मृदु शाखीय पादप, 60 से०मी० से 90 से०मी० लम्बे, पत्र–दीर्घाग्रत, अरोमिल, भालाकार, सवृन्त, पुष्प कक्षीय–पीत वर्ण के चमकीले।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय भागों से लेकर 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पुष्प बसन्त के उद्गम का द्योतक है। मांगलिक गीतों में पयूंली के पुष्पों की मान्यता है।

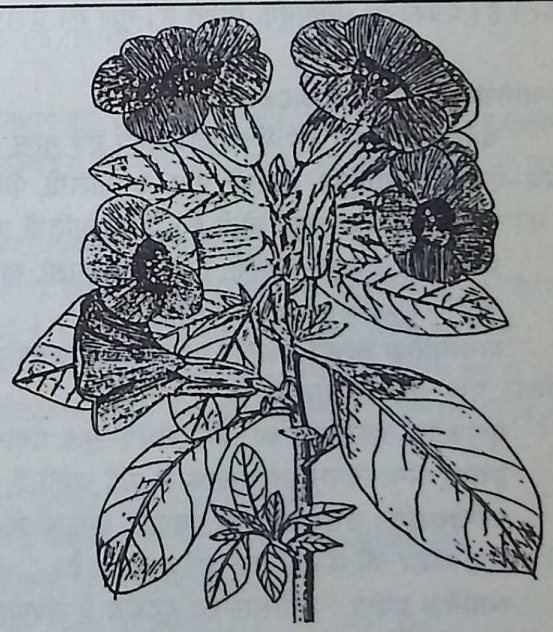

**वासन्ती (Reinwardtia indica Dum.)**

## कुल- माधवीकुल : MALPIGHIACEAE



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–माधवी ; स्थानिक–अनेता।

लैटिन–Hiptage benghalensis Kurz.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित आरोही गुल्म, पत्र 4–6" लम्बे, अरोमिल, दीर्घायत, लट्वाकार एवं भालाकार, अच्छिन्नतट, सवृन्त एवं अनुपर्ण युक्त, पुष्प–सुगन्धित, कक्षीय श्वेत वर्ण के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर, रामनगर, काशीपुर, कोटद्वार आदि उष्णकटिबन्धीय स्थानों पर सुलभ है।

**कुल- लालजड़ीकुल : GERANIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय, मृदु पादप पाये जाते हैं। काण्ड मृदु, तलोत्य, परिसृत, मूल कन्दिल, रक्ताभ, पत्र–एकान्तर अभिमुख, पुष्प–सुन्दर, रक्त, पीत, गुलाबी, रंग के।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–लालजड़ी, रतनजोत।

लैटिन–Geranium wallichianum D.Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षायु तलोत्य शाकीय पादप, मूल–ग्रन्थिल पर्ण–वर्तुल, हस्ताकार, 3 से 5 खण्डों में, दन्तुर, अनुपर्ण दीर्घायत, लट्वाकार, पुष्प–गुलाबी रंग के मनमोहक होते हैं। उत्तराखण्ड हिमालय में कतिपय किस्में पाई जाती हैं। जिनमें कुछ इस प्रकार से हैं।

1. Geranium nepalense Sweet
2. Geranium molle Linn.

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक हिमालय की सभी घाटियों एवं बुग्यालों (मेडोज) में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का प्रयोग व्रणरोपण में करते है। दन्तशूल एवं पञ्चांग धन का प्रयोग वृक्करोगों में करते हैं। पत्रस्वरस क्षुधावर्धक मानते हैं। मूल का प्रयोग रंग के काम में किया जाता है।

**कुल-चांगेरीकुल : OXALIDACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीयपादप एवं गुल्म पाये जाते हैं। पर्ण–करतलाकृति के, पक्षाकारवत्, संयुक्त, दलपत्र–एकान्तर, अभिमुख, एकाकी, पुष्प–उभयलिंगी, पीत, श्वेत एवं गुलाबी रंग के, फल शिम्बी के आकार में। इस कुल की वनस्पतियाँ प्रायः खट्टी होती हैं। ये वनस्पतियाँ प्रायः ग्राही, रक्त स्तम्भन एवं पित्तघ्न होती हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चाँगेरी; स्थानिक–अमलो, खट्टीबूटी।

लैटिन–Oxalis acetosella Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** जमीन पर परिसृत एकवर्षायु शाकीय पादप, पर्ण त्रिपत्रक, मृदु, अम्ल, रोमिल, मूलोद्भ अण्डाकार, पुष्प–पीत एवं गुलाबी रंग के होते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, नवम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूल, पंचांग।

इसकी अन्य किस्म उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं जिसे Oxalis corniculata Linn. कहते हैं।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के सभी जनपदों के उष्णकटिबन्धीय भूभागों में खरपतवार के रूप में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** अतिसार एवं गुदभ्रंश में उपयोग करते हैं गुदभ्रंश में घी के साथ गुदा में लेप करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** चांगेरीधृत, यकृद्दारी लौह



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : दीपनी चोष्णावीर्याच, ग्राहिणी कफमारूते।**
**प्रशस्यतेऽम्लचांगेरी ग्रहण्यर्शो हिता च सा।।**
**उष्णा किश्चितकषाया च, चांगेरी चाग्निदीपनी।**
**पित्ताम्ला ग्रहण्यर्शः कुष्ठातिसार नाशनः।।** *(भा० प्र०)*

**कुल-BALSAMINACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–गुलमेहन्दी।

लैटिन–Impatines balsamina Linn or Impatines cristata Wall

**वानस्पतिक स्वरूप :** मृदुरोमिल शाकीय पादप, काण्ड उर्ध्वसंश्रित, पर्ण–भालाकार, अवृन्त, तीक्ष्णदन्तुर 6" से 8" तक लम्बे मृदु। पुष्प–गुलाबी, श्वेतवर्ण के सुन्दर, फल–स्फुटनशील। इसकी अन्य किस्में उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं। यथा–Impatines scabrida DC.

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में इसकी किस्में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर तक प्रायः सभी घाटियों में वर्षाकाल में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** बीजों का उपयोग मसालों के रूप में किया जाता हैं। पत्तियों का उपयोग मेहन्दी के रूप में किया जाता है।

**कुल-विल्वकुल : RUTACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बड़े वृक्ष और शाकीय पादप पाये जाते हैं। पर्ण–सुगन्धित एवं तैलिय ग्रथियों से युक्त, पुष्प–नियमित, शाखाग्रोद्भूत, पुष्प बाह्यकोष एवं पुष्प आभ्यन्तरकोष के दल 4–5 परस्पर आच्छादित, पराकोश दो खाने वाला, स्त्रीकेशर एक, फल–रसाल या मांसल, इस वर्ग की वनस्पतियाँ सुगन्धित तैलीय, उत्तेजक, सारक, मूत्रल, स्वेदल, ज्वरघ्न, दीपन होती है। मुख्य रूप से बिल्व (बेल), निम्बु, विजोरानिम्बु, कपित्थ, टिम्बरू, केदारपाती (नैर) आदि द्रव्य प्रमुख है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–विल्व, श्रीफल, शिवपत्र ; स्थानिक/हिन्दी–बेल।

लैटिन–Aegle marmelos Correa

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के प्रसिद्ध फलदार वृक्ष, काण्ड कार्कयुक्त, तीक्ष्ण शल्यमय, पत्र एकान्तर, अरोमिल सुगन्धित, त्रिपत्रक, सवृन्त, विषम पक्षाकार, पुष्प–सफेद रंग के, फल–गोल, कठोर, चिकने एवं पकने पर मांसल, पीतवर्ण के मधुर।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; फलकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–बेलगिरी, छाल, पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों विशेषकर उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वृत, अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर क्षेत्र में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पत्र शिव जी को चढ़ाये जाते हैं। बेलगिरी का प्रयोग आंव–पेचीस में विशेष रुप से ग्रामीण लोग करते हैं। मधुमेह में मूत्रशर्करा को कम करने के लिये बिल्वपत्र स्वरस का प्रयोग करते है। रक्तातिसार में बिल्वचूर्ण मट्ठे के साथ सेवन करते है।

**शास्त्रीय योग :** बिल्वादिचूर्ण, बेलमूरब्बा, दशमूल, गंगाधर चूर्ण, बिल्वतैल आदि।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : विल्वं तु संग्राहिकं दीपनीय् वातकफप्रशमनानाम्।।** *(च०सू०अ० 25)*
**कफपित्तानिलहरं तीक्ष्णं स्निग्धं संग्राहीदीपनम्।**
**कटु तिक्त कषायोष्णां, बालं विल्व मुदाहृतम्।।** *(भा० प्र०)*

कच्चा फल–दीपन, पाचन, ग्राही, रक्तस्तम्भक, पका फल–कषाय, मधुर, मृदुरचेक, पत्रस्वरस–शोथहर, मधुमेह नाशक,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मूलत्वक्–शोथध्न, कफध्न, ज्वरनाशक, शोथहर, कटुपौष्टिक।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कपित्थ ; हिन्दी/स्थानिक–कैंथ, कैंत।

लैटिन–Feronia limonia (Linn) Sw.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष, काण्डत्वक् श्वेताभ, धूसरवर्ण का बहुशाखीय, कांटेदार, पर्ण–एकान्त संयुक्त, सुगन्धित, पत्रक–संख्या में 3 से 9 तक, अभिलट्वाकार, मसृण, पुष्प–छोटे, रक्ताभ वर्ण के, फल–कठोर बेल सदृश, श्वेताभ, गोल, मांसल।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–फल, छाल, पत्र, गोंद

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के मैदानी भागों, देहरादून, शिवालिक वनखण्ड, रामनगर, तराई–भावर, नैनीताल जनपद के निचले मैदानी भागों में स्वयंजात एवं सड़कों के आस–पास लगाये हुये पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** बवासीर के रोगी को बेलगिरी और कैंथ मज्जा चूर्ण को जल के साथ ग्रामीण लोग प्रयोग करते हैं। प्रमेह (धातुविकार) में पत्र स्वरस का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीययोग :** कपित्थाष्ठकचूर्ण, ग्रहणीकपाटरस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कपित्यमामं कुष्ठध्नं विषध्नं ग्राहिवातलम्।**
**मधुराम्लकषायत्वात् सौगन्ध्याञ्चरूचिप्रदम्।।** *(चरक सू०अ० 29)*
**कपित्थो मधुराम्लञ्च, कषायस्तिक्तशीतलः।**
**बृष्यपित्तानिलंहन्ति संग्राही व्रणनाशनः।।** *(रा०नि०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत, तुम्बुरू; हिन्दी–तेजवल, तुम्बरू; स्थानिक–टिमरू।

लैटिन–Zanthoxylum alatum Roxb.

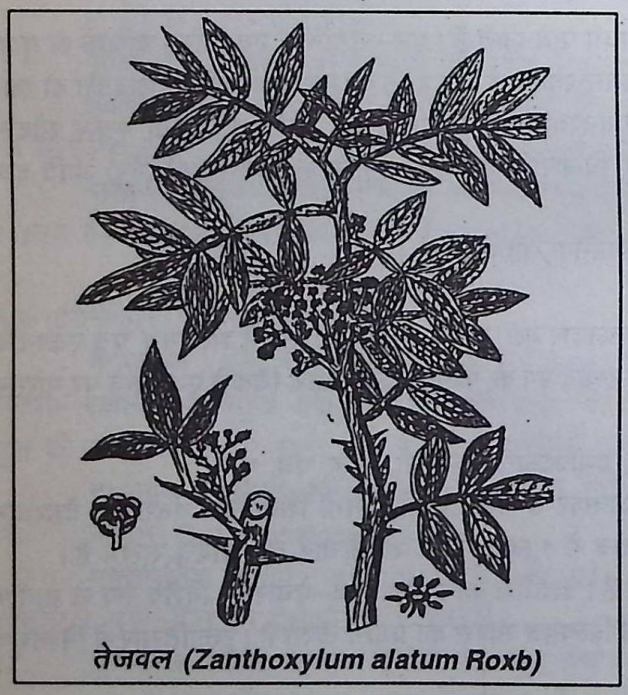

*तेजवल (Zanthoxylum alatum Roxb)*

**वानस्पतिक स्वरूप :** गुल्माकृति के बहुशाखीय छोटे वृक्ष होते है शाखा एवं काण्ड उभारदार कांटेयुक्त, पर्ण एकान्तर, सपत्रक, पत्रक 2–6 जोड़े में, विषम संख्यक, अभिमुख क्रम में स्थित, दन्तमयधार वाले सुगन्धित, पुष्प गुच्छों में कक्षीय, पीत वर्ण के, फल–हरितवर्ण के, पकने पर रक्ताभ वर्ण के तीव्र सुगन्धियुक्त, इसके अतिरिक्त टिमुर की अन्य किस्म भी कहीं–कहीं पाई जाती है जिसे Fagra oxyphylla Syn.,Zanthoxylum oxyphyllum कहते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून : फलकाल–जुलाई, अगस्तः प्रयोज्यअंग–बीज, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में इसके गुल्म 9,00 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्राय टिहरी गढ़वाल, पौड़ी, अल्मोड़ा, नैनीताल, उत्तरकाशी सभी जनपदों में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** इसकी मृदु शाखा का प्रयोग दांतुन के रूप में करते हैं। दांतुन मुखशोधक एवं मुखदौर्गन्ध्यहर मानते हैं। बीजों का उपयोग दन्तमज्जन के लिये करते हैं। फलों एवं पत्तों में उड़नशील तेल पाया जाता हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तम्बरूः कटु तीक्ष्णोष्णः कफ मारूत शूलजित्।**
**अपतन्त्रोदंराध्मान, कृमिध्नोवह्निदीपनः।।** *(ध० नि०)*

**शास्त्रीय योग :** मुखशोधक दन्तमज्जन।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–कांचन ; स्थानिक–कंज।
लैटिन–Toddalia asiatica Lam.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही कण्टकित गुल्म, काण्ड एवं पर्ण कांटेदार, पत्र–एकान्तर, अरोमिल, त्रिपत्रक, पत्रक–लट्वाकार, दीर्घायत, सुगन्धित, पुष्प कक्षीय, पीतवर्ण के, फल गोल, कठोर एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–फल, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में इसके गुल्म, टिहरी जनपद के धनशाली, घुत्तू एवं अल्मोड़ा जनपद के ताड़ीखेत, भिकियासैंण, मोहान्ड आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल काष्ठ हल्दी के समान पीतवर्ण का सुगन्धित होता है। ग्रामीण पीतचन्दन के रूप में इसके मूल का उपयोग करते है।

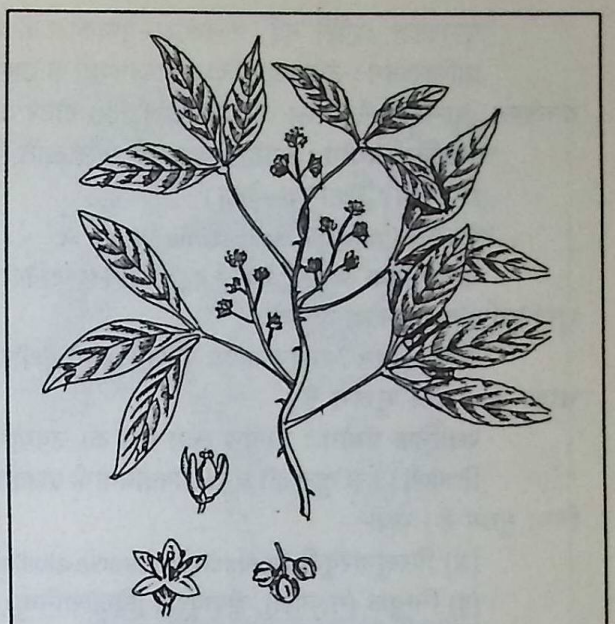

*काँचन (Toddalia asiatica Lam.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–नैर, केदारपाती।
लैटिन–Skimmia laureola Seib.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित सुगन्धित गुल्म, काण्ड शाखीय, अरोमिल, पत्र–एकान्तर, सरलतट वाले 4–6'' तक लम्बा दीर्घायत, अधोमुख एवं सुगन्धित होते हैं। पत्तों में सुगन्धित उड़नशील तेल पाया जाता है। पुष्प पीताभ वर्ण के।

पुष्पकाल–अप्रैल, जुलाई ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं कुमाऊं में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्राय सभी घाटियों में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसे कस्तूरापत्ता भी कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि कस्तूरी मृग इसके पत्तों को खाता है। लेखक का अनुभव है कि कस्तूरा मृग का यह मनपसन्द चारा नहीं हैं। पत्तों का धूपन सामग्री में उपयोग करते है।

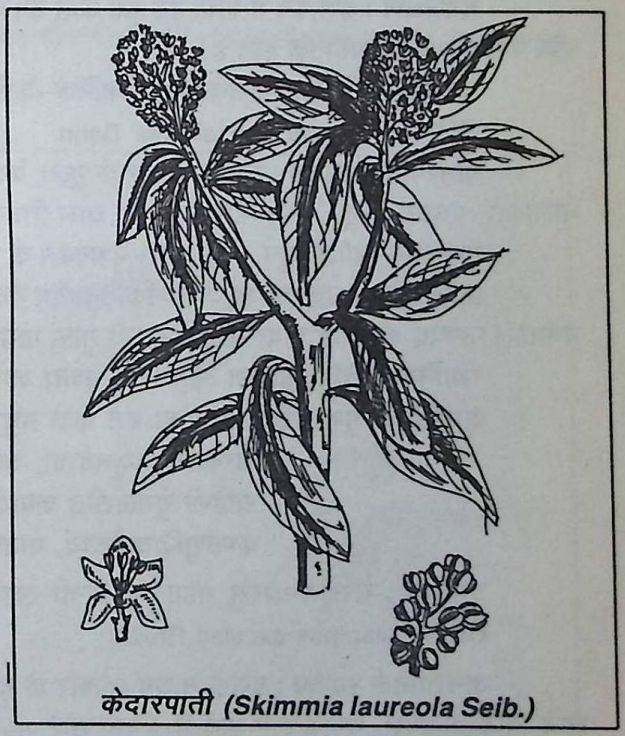

*केदारपाती (Skimmia laureola Seib.)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–कड़ीनीम, स्थानिक–गन्धेलो।
लैटिन–Murraya koenigli Spreng.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शाखीय गुल्म, काण्ड 1 मी० से 3 मी० लम्बा, पत्र 6'' तक लम्बे, अरोमिल, पत्रक लट्वाकार, भालाकार, लम्बाग्र, पुष्प–अग्रस्थ, सीमाक्षी गुच्छों में श्वेत वर्ण के सुगन्धित, फल–मांसल, पकने पर काले रंग के स्वाद में कषाय मधुर गुठलीदार। अन्य किस्म भी मैदानी उष्ण भागों में पाई जाती है। जिसे कामिनी Murraya exotica Linn कहते है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों के उष्णकटिबन्धीय भागों में शिवालिक वनखण्ड, टिहरीवृत, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा, नैनीताल जनपदों के 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फल खाते हैं। पत्तियों का उपयोग कढ़ीपत्ता के नाम से किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–बेली।

लैटिन–Lamonia acidissima W. of A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके बहुशाखीय कण्टकित गुल्म होते हैं। पत्र–मसृण सुगन्धित, एकान्तर, अभिलट्वाकार, सुगन्धित, पुष्प–श्वेताभ वर्ण के।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय मैदानी भागों शिवालिक, देहरादून वनखण्ड एवं तराई भावर में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग उदरशूल में क्वाथ के रूप में करते हैं।

**टिप्पणी :** इस कुल की अन्य औषधोपयोगी प्रजातियाँ उत्तराखण्ड हिमालय की घाटियों में पाई जाती हैं। जिनमें निम्न मुख्य हैं। यथा–

(अ) पिस्सूमारवूटी Boenninghausenia albiflora Rei क्षुप, पुष्प श्वेत, पंचांग गन्धयुक्त, 2,400 मीटर पर।

(ब) निम्बुक (गलगल), बीजपूरक (विजोरानिम्बु), चकोतरा, जम्बीर आदि सभी किस्में Citrus की हैं।

**कुल- रोहिणीकुल : SIMARUBACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्रायः बड़े वृक्ष आते हैं। पत्र–एकान्तर, अभिमुख, फल–गोल, अण्डाकार, इस वर्ग के द्रव्य ज्वरघ्न एवं कटुपौष्ठिक होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मांसरोहणी ; स्थानिक–करूई, तिथाई।

लैटिन–Picrasma quassioides Benn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, काण्ड–शाखीय, पर्ण अरोमिल, एकान्तर, पिच्छाकार, दीर्घायत, भालाकार, पत्रतट दन्तुर, पुष्प–पीताभवर्ण के, छाल तिक्त होती है।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय मैदानी भागों देहरादून वनखण्ड, कालसी, देववन, अल्मोड़ा एवं नैनीताल जनपद के तराई भावर में कहीं–कहीं गुल्म पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग छाल क्वाथ का उपयोग मलेरिया एवं अन्य सामान्य ज्वरों में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मांसरोहा रसे पाके मधुरा तुवरा हिमाः।**
**भग्नसन्धानकृत्प्रोक्ता, तथैव व्रणरोपिणी।।**
**रोहिणी युगलंशीतं कषायं कृमिनाशनम्।**
**कण्ठशुद्धिकरंरूच्यं, वातदोष निषूदनम्।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अरलु, महानिम्व; हिन्दी–महानिम्व।

लैटिन–Ailanthus excelsa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के वृक्ष होते हैं। पर्ण–1 मीटर तक लम्बे, पत्रक 6 से 10 से.मी. लम्बे, चौड़े नोकदार, दन्तुधार में होते हैं । पुष्प छोटे मज्जरियों मे पीताभवर्ण के, फल–सीसम की फली सद्यश ।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल प्रयोज्यअंग–छाल, मूलत्वक

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण मैदानी भागों में सड़कों के आसपास इसके वृक्ष लगाये हुये पाये जाते हैं ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** छाल का ग्रामीण लोग अतिसार (दस्त) एवं ज्वरों में उपयोग करते हैं।

**टिप्पणी :** संहिता एवं निघण्टू ग्रन्थों के आधार पर श्योनाक, शुकनाषा एवं अरलु तीनों भिन्न–भिन्न द्रव्य है परंतु टीकाकारों एवं निघण्टूकारों ने कतिपय स्थलों पर श्योनाक का पर्यायवाची अरलु एवं दीर्घवृन्त दिया है आचार्य प्रियर्वत शर्मा के विचारों के अनुसार अरलु से Ailanthus excelsa तथा श्योनाक से Oroxylum indicum का प्रयोग शास्त्र सम्मत स्वीकार किया है।

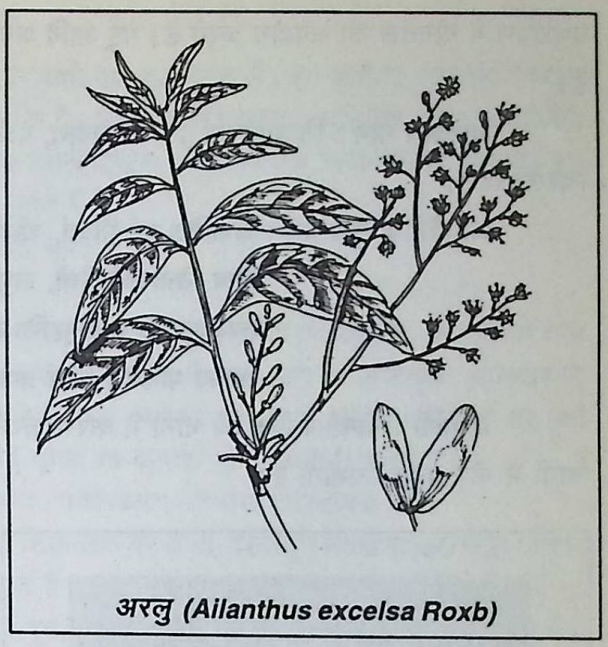

*अरलु (Ailanthus excelsa Roxb)*

**कुल-निम्बकुल : MELIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बड़े वृक्ष एवं गुल्म होते हैं। पर्ण–एकान्तर उपपर्णरहित, पुष्पाभ्यन्तरदल कोष के दल 3 से 6, पुंकेशर 8 से 10 या इससे भी अधिक होते हैं। गर्भाशय 3 से 5 खानों वाला, स्त्रीकेशर नलिका का मुख चौड़ा या गोल सा होता है। पुष्प–सुगन्धित, श्वेत हरित वर्ण के। इस वर्ग की वनस्पतियां कुष्ठघ्न, विषघ्न, ज्वरघ्न, ग्राही, वामक एवं कटुपौष्टिक होती हैं। मुख्य रूप से इस कुल में निम्ब (नीम), महानिम्ब (वकायन) आदि द्रव्य आते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–निम्ब; हिन्दी/स्थानिक–नीम।

लैटिन–Azadirachta indica A. Jass.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष, पर्ण सपत्रक, असमपक्षवत्, पत्रक–संख्या में 9 से 15 एक पत्र अग्रभाग में एकाकी, पत्रक भालाकार, लट्वाकार, गाढ़े हरे रंग के तिक्त, पुष्प श्वेतवर्ण के सुगन्धित, पत्रकोणीय, मज्जरियों में फल–लम्ब गोल, चिकने मांसल एवं मीगीदार। बीजों को निमोली कहते हैं। बीजों से नीमतेल निकाला जाता है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र, बीज (निमोली) पुष्प।

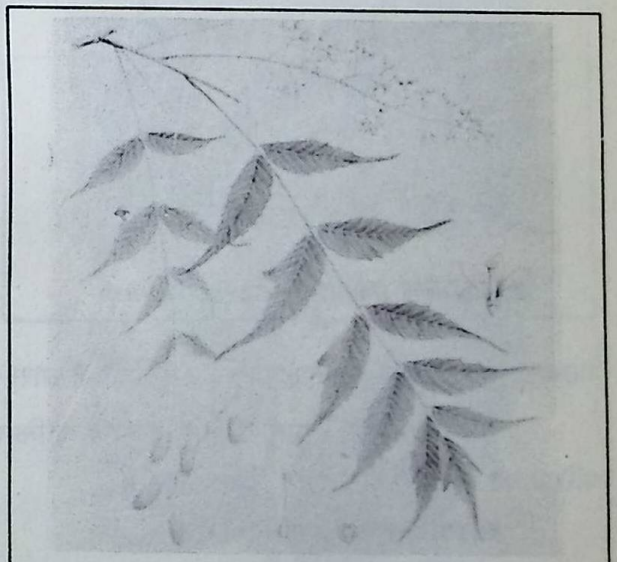

*नीम (Azadirachta indica A. jass)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के मैदानी भागों देहरादून, ऋषिकेश, रामनगर, काशीपुर, अल्मोड़ा जनपद के मैदानी भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्रस्वरस का प्रयोग ज्वर एवं रक्त विकार, खाज, खुजली में करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

व्रणरोपण में नीमतेल का उपयोग करते हैं। गेहूं आदि अनाज को कीड़ों से बचाने के लिए पत्तों का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** निम्बादिचूर्ण, निम्बादिक्वाथ, पञ्चनिम्बचूर्ण, महासूदर्शनचूर्ण, अर्शोध्नीवटी, रक्तशोधकवटी, ज्वरसंहाररस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कफपित्त हरं तिक्तं, शीतं कटुविपच्यते।**

**निम्ब तिक्तरसोशीतो, लधुश्लेष्मास्त्रपित्तजित्।।**

**कण्डूकुष्ठान् ब्रणान्हन्ति लेपाहारादिशीतलः।**

**अपक्वं पाचमेत् शोथं ब्रणपक्व विशोधयेत्।।** *(चरकः)*

**टिप्पणी :** नीमतैल पिचु को योनी में धारण करने से परिवार नियोजन का सफल उपाय है। कीटमार खादों में नीम बहुत उपयोगी है।

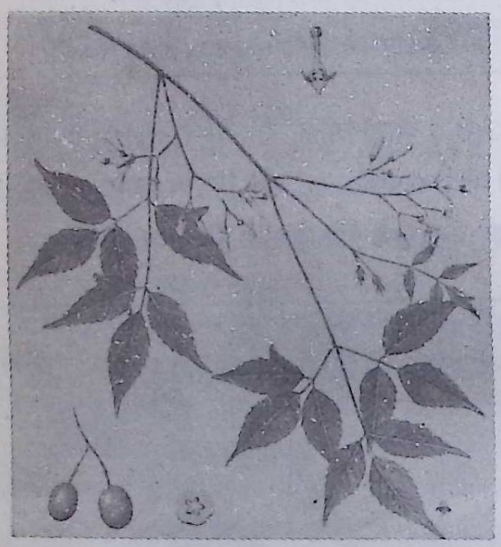

*महानिम्ब (Melia azedarach Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–द्रेंक, महानिम्ब ; हिन्दी–वकायन ; स्थानिक–डैंकण।
लैटिन–Melia azedarach Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह नीम की जाति का और उसके समान आकृति वाला पर्णपाती वृक्ष है। काण्ड बहुशाखीय एवं मृदु होता है। पर्ण–लम्बे सपत्रक, द्वि या त्रिपक्षवत्, पत्र संख्या में 3 से 7 तक लट्वाकार, भालाकार, पत्रतट–नीम सद्यश गहरे हरे रंग के, दन्तुर, पुष्प नीलाम–श्वेतवर्ण के, मज्जरी में, फल–गुच्छों नीमफल सद्यश गोल, मांसल, बीज कठोर।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र, पुष्प, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों, शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी गढ़वाल, अल्मोड़ा एवं नैनीताल जनपदों में खेतों के आस–पास इसके गुल्म स्वयंजात एवं रोपित पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग त्वक्दोष, कृमिध्न के रूप में फलों तथा छाल का उपयोग करते हैं। पत्तियों का पशुचारा में उपयोग किया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** अर्शोध्नी वटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : महानिम्ब हिमोरूक्षः तिक्तोग्राहीकषायकः।**

**कफपित्त कृमिच्छर्दि कुष्ठ हृल्लास रक्तजित्।** *(ध०नि०)*

**प्रमेह गुल्म श्वास गुल्मार्श, मूर्षिका विषनाशनः।।** *(भा० नि०)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल-गुग्गुल्वादिवर्ग : BURSERACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बड़े और छोटे गुल्माकार पर्णपाती वृक्ष पाये जाते हैं। इन बृक्षों से सुगन्धित निर्यास निकलता है। इस निर्यास का औषध और धूपन में उपयोग होता है। पर्णविन्यास एकान्तर, अभिमुख, पुष्प–उभयलिंगी एवं कई जातियों में एकलिंगी, पुंकेशर पंखड़ियों के बराबर या उससे द्विगुण, स्त्रीकेशर एक, फल–कठोर होता है। इस वर्ग में गुग्गुलु एवं शल्लकी, बोल आदि औषधीय द्रव्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शल्लकी, कुन्दुरु ; हिन्दी–सलई, धूप।

लैटिन–Boswellia serrata Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के धूसरवर्ण के वृक्ष, काण्डत्वक् रक्ताभ, पीतवर्ण, चिकना, कागज की तरह पतले–पतले परतोंदार, शाखायें अनेक समूहबद्ध, पत्रक–8 से 16 जोड़ों में प्रायः अवृन्त, अभिमुख, आयताकार, पत्रतट–दन्तुर, पुष्प–छोटे, समूह में रक्ताभ श्वेत वर्ण के सुगन्धित, फल–मांसल, अण्डाकार, हरिताभ पीतवर्ण का वृक्षों पर चीरा लगाने से गोंद (निर्यास) निकलता है। जिसे शलई गूगल या कुन्दरू गोंद (लोवान) कहते है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–निर्यास, काण्डत्वक्।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर वनखण्डों में इसके वृक्ष कहीं कहीं पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** इसके गोंद का धूपन के रूप में एवं भूतबाधाहर मानते हैं। ब्रणों में वाह्य लेप करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शल्लकी तिक्तमधुरा, कषाया ग्राहिणीपरा।**

**कुष्ठास्त्रकफवातास्त्रो व्रणदोषार्तिनाशिनी।।**

**तत्पुष्पं कफ वातार्शः कुष्ठारोचकनाशनम्।** *(कै०नि०)*

**कुन्दुरूः कटु तिक्तो वातश्लेष्मयापहा।**

**पाने लेपे च शिशिरः प्रदरामयशक्तिकृत्।।** *(ध०नि०)*

**कुल- ज्योतिष्मत्यादिवर्ग : CELASTRACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं लतायें पाई जाती हैं। पर्ण–एकान्तर, अभिमुख, सादे, उपपर्णरहित, पुष्प मज्जरी सद्यश, पीत, श्वेत वर्ण के, पुंकेशर 3 से 5, दो थैलीवाला, स्त्रीकेशर नलिका छोटी, फल अण्डाकार गोलाई लिये हुये इस वर्ग की वनस्पतियों के बीजों में तेल होता है। यह तेल वातघ्न एवं नाड़ी वल्य होता है। इस वर्ग में मालकांगनी एवं जमरासी आती हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–ज्योतिष्मती, कंगुनी; हिन्दी–मालकंगनी, स्थानिक–मालकौंणी।

लैटिन–Celastrus paniculatus willd

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्षारोही, बहुशाखीय काष्ठमय लता, कोमल शाखाओं पर वातरन्ध्रों के चिहनों से बिन्दुकित, पर्ण लट्वाकार, आयताकार, अण्डाकार, सवृन्त, पत्रतट–दन्तुर, पुष्प–छोटे, मज्जरी सद्यश पीताभ हरितवर्ण के, फल–मटर के आकार में पकने पर लाल–पीले

*ज्योतिष्मती (Celastrus paniculatus willd)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रंग के तैलीय।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–बीज, तेल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के मैदानी भागों शिवालिक वनखण्ड, रायवाला, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर एवं कोटद्वार वनक्षेत्र के 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः उपलब्ध है ।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य मालकंगनी तेल का उपयोग नेत्र ज्योतिवर्धक एवं मानसिक रोगों में उपयोग करते हैं ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पक्वरक्त फला गुच्छा, पीततैला वर्तुला।**
**ज्योतिष्मती कटुस्तिक्ता क्षराकफ समीरजित्।।**
**अत्युष्णा वामनी तिक्ष्णा, वहिन्बुद्धि स्मृतिप्रदा।** *(ध०नि०)*
**पित्त संतापनं मेधा, प्रजाबुद्धिविवर्धनम्।।** *(रा० नि०)*

**शास्त्रीय योग :** ज्योतिष्मतीतेल, मरिच्यादितैल

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कृष्णमोक्षक; हिन्दी–जमरासी, पतियाल

लैटिन–Elaeodendron gleaucum pens.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, काण्ड शाखीय रक्ताभ वर्ण के, लट्वाकार, दीर्घायत, अरोमिल, सवृन्त, पुष्प कक्षीय, पीताभ वर्ण के, फल अष्ठिल।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं के उष्ण मैदानी भागों, शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, कालसी, कोटद्वार पौड़ी जनपद के मैदानी भागों एवं तराई भावर में गुल्म पाये जाते हैं। कहीं–कही अन्य प्रजाति भी पाई जाती है जिसे धण्टापाथ्ली (मोक्षक) Schrebera swietenioides कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण पत्तियों को कुचल कर छींक लाने के लिये प्रयोग करते हैं। मानसिक व्याधियों में इसकी पत्तियों का धुआँ देने से चेतना आती है।

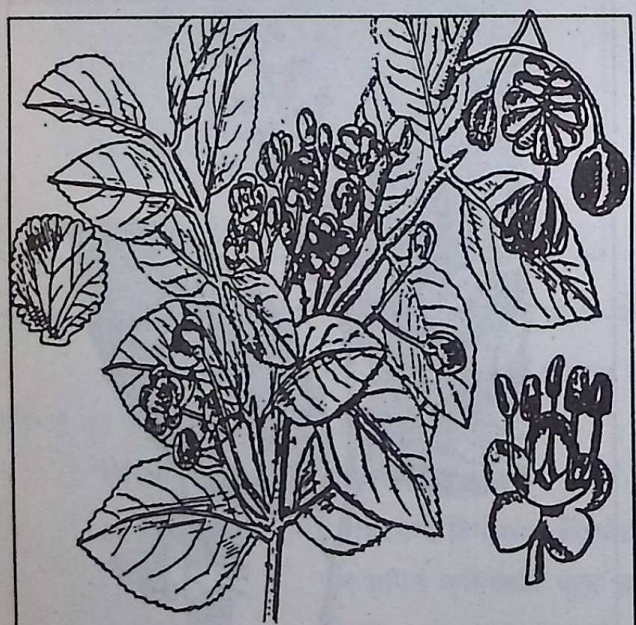

*भिल्लोटक (Euonymus tingens Wall)*

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** कषाय, तिक्त, कफवातध्न ग्राही, शोथध्न, कृमिनाशक, छाल–श्वास–कासध्न।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भिल्लोटक ; स्थानिक–भमेली, कुंकुम।

लैटिन–Euonymus tingens Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित मध्यम आकार के गुल्म, काण्ड के भीतर की छाल पीले रंग की, पत्र दीर्घायत, लट्वाकार भालाकार, लम्बाग्र, क्रकची, अरोमिल, पुष्प–छोटे, हरित–पीताभ वर्ण के सुगन्धित, फल–अर्जुनफल सद्यश, धारीदार। अन्य किस्में भी उत्तराखण्ड हिमालय में पाई जाती हैं। जिसमें Euonymus hamiltonianus आदि हैं।

पुष्पकाल–मई, जून; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–छाल (कंकुम)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्राय



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भिलंगनाघाटी, दुफन्द पौवागी, मन्दाकिनीघाटी, त्रिजुगीनारायण, कुण्ड, अल्मोड़ा जनपद एवं पिथौरागड़ जनपद के कफकोट ब्लाक, रानीखेत ब्लाक में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग छाल का लेप पीत चन्दन के रूप में करते हैं। नेत्र विकारों में भी छाल का लेप किया जाता है।

**टिप्पणी :** सुश्रुत संहिता के चिकित्सा अध्याय 24 में भिल्लोटक का उल्लेख है। यथा–

**भिल्लोटक उत्तरापथे केदार भूमौ, ककु भानिकारि फलोवृक्षः।।** *(डल्हणः)*

सुश्रुत के टीकाकार डल्हण ने उत्तराखंड भू भाग में अर्जुन फल सदृष्य गुल्म को भिल्लोटक माना है।

**कुल- बदरादिवर्ग : RHAMNACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष और वृक्षक पाये जाते हैं। इस वर्ग की वनस्पतियों के पत्र सादे, एकान्तर, अभिमुख होते हैं। पुष्प वाह्यकोष नलिकाकार, 4 या 5 दल का, परागकोश दो खानों वाला, कर्णिका युक्त होता हैं। स्त्री केशर नलिका कुछ मुड़ी होती है। फल गोल अण्डाकृति में शुष्क या मांसल होते हैं। गुठली में 1 से 4 खाने होते हैं। इस वर्ग की वनस्पतियाँ ग्राही, पौष्ठिक, शोधक एवं पित्तनाशक होती है। इसवर्ग में उन्नाव (राजवदर) बेर, (बदर) घोंण्ट आदि द्रब्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बदर ; हिन्दी–बेर, बेरी।
लैटिन–Zizyphus jujuba Lom.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय कांटेदार गुल्म, सदाहरित, काण्डत्वक्–रक्ताभ धूसरवर्ण का, पर्ण–विभिन्न आकार में अण्डाकार, पत्रतट दन्तुर, पुष्प पीताभ हरित वर्ण के, पत्रकोणीय, फल पंकने पर रक्ताभ एवं नारंगी वर्ण के मांसल एवं गुठलीदार उत्तराखण्ड के मैदानी उष्णभागों में पाया जाता हैं उसके अतिरिक्त निम्न गोपघोण्टा Z. oxyphylla नामक प्रजाति पाई जाती है।

पुष्पकाल–सितम्बर, नवम्बर;
फलकाल–दिसम्बर, फरवरी;
प्रयोज्यअंग–फल, छाल ।

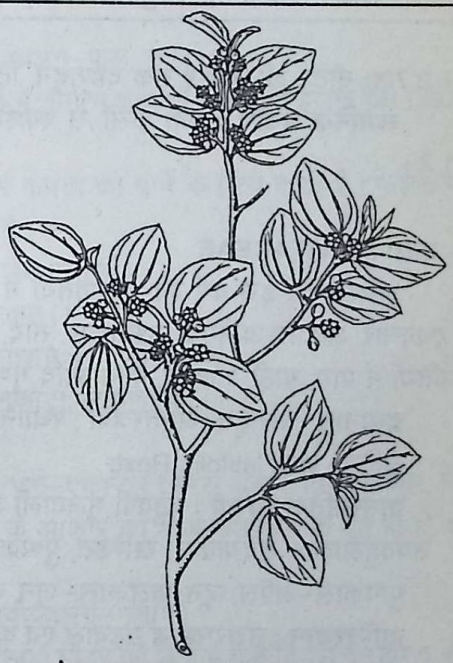

**बेर (Zizyphus jujuba Lom)**

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवलिक, देहरादून वनखण्ड एवं अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर वनक्षेत्रों में इसकी झाड़ियाँ 900 मीटर की ऊँचाई तक सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण पके फलों को खाते है। पत्ती का उपयोग बकरी के चारे में किया जाता है छाल का चिकित्सा में उपयोग होता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कर्कन्धु कोलबदरमामं पित्तकफापहम्।**
**पक्वं पित्तानिल हरं, समधुरं सरः।।** *(सु० स० 39)*
**सौवीर वदरं शीत, भेदन गुरू शुक्रलम्।**
**बृंहणं पित्तदाहास्त्र, क्षयतृष्णानिवर्हणम्।।** *(भा०प्र०)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

थंथार (Ramnus virgata Roxb)

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–थंथार; स्थानिक–चठोलो।

लैटिन–Ramnus virgata Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णप्राती गुल्म, काण्ड–शाखीय, अरोमिल, कांटेदार, पर्ण–अभिमुख, विषम पक्षाकार, पत्रक भालाकार, अरोमिल, पुष्प हरित पीताभवर्ण के, फल गोल, मांसल, कृष्ण वर्ण के इसके अतिरिक्त अन्य किस्में भी उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं। यथाः

1. लुहींस Rhamnus purpurea Edgew इसके गुल्म पर्णपाती, काण्ड–शल्य विहीन, पुष्प–कक्षीय।
2. गौंता Rhamnus triquetra Wall.

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं के प्रायः सभी जनपदों में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक देहरादून, टिहरी गढ़वाल, पौड़ी, अल्मोड़ा नैनीताल आदि जनपदों में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फलों से स्याही तैयार की जाती हैं। छाल का उपयोग विषघ्न के रूप में किया जाता हैं।

**कुल- द्राक्षाकुल VITACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियों में बहुधा लतायें पाई जाती हैं। काण्ड में जलीयांश अधिक होता हैं। पर्ण–एकान्तर, अधःपत्र अभिमुख, हस्ताकार, सादे, या संयुक्त होते हैं। पुष्प–पत्राभिमुख एवं संयुक्त होते हैं। इस वर्ग की वनस्पतियों में प्रायः ग्राही, शोथध्न, बल्य आदि गुण पाये जाते हैं। इस कुल में मुन्नका, द्राख आदि द्रव्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अमृतस्त्रवा ; स्थानिक–छिवाड़ी।

लैटिन–Vitis latifolia Roxb

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी मूलवाली आरोही लता, काण्ड–मृदु, छिद्रित, धारीदार, पत्र–सरल ब्यास में 3'' से 9'', उपवर्तुलाकार, हृदयाकार, खण्डित, पुष्पक्रम–कक्षीय, छत्राकार, पुष्प हरित एवं गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून; फलकाल–जून, जुलाई; प्रयोज्यअंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड गढ़वाल एवं कुमाऊं में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,800 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी जनपदों में उपलब्ध हैं। इसकी अन्य किस्में भी इन घाटियों में पाई जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते हैं। पत्तों का उपयोग पशुचारा में किया जाता हैं। मूल को मूत्रल, एवं रक्तप्रदर में उपयोग करते है। देहरादून में इसके मूल को सेमल मूशली के नाम से विक्रय करते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–नगास्या।

लैटिन–Leea aspera Edgew

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय 1 मीटर से 2 मीटर ऊँचा गुल्म, धारीदार, कोणिक, रक्ताभ, पत्र 3" से 6'' लम्बे, 2"–3'' चौडे, विषम पिच्छाकार, पत्रक 2 से 3 जोड़े में, लट्वाकार, दीर्घायत, पत्रतट–दन्तुर, पुष्प–छोटे, कक्षीय हरितवर्ण के, फल–गुच्छों में पकने पर काले रंग के मांसल, स्वाद में कुछ मधुर।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अक्टूबर, नवम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भागो में धनशाली, घुत्तु, उत्तरकाशी, पौड़ी, चमोली, जौनसार, अल्मोड़ा आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते हैं। मूल का उपयोग वातविकार में करते हैं।

**कुल- अरीष्ठकादिकुल : SAPINDACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, गुल्म एवं लताये पाई जाती हैं। पर्ण–बहुधा एकान्तर, अभिमुख, सादे, संयुक्त एवं उपपर्ण रहित होते है। पुष्प वाह्यकोष एवं आभ्यन्तर कोष के दल 4 से 5, पुंकेशर गर्भाशमाधः एवं भीतर संलग्न, फल बहुधा मांसल एवं पंखवाले होते हैं। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः वामक, विषहर और जन्तुध्न होती हैं । इस वर्ग में रीठा, (अरिष्ठक) काकादनी, कोशाम्र (कुसुम) आदि द्रव्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अरीष्ठक; हिन्दी, स्थानिक–रीठा।

लैटिन–Sapindus mukorossi Gaertn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष मध्यम आकार का, पत्र–एकान्तर, संयुक्त पिच्छाकार, 10–15" तक लम्बे पत्रक 5–8" जोड़ों में विपरीत क्रम में, भालाकार, लम्बाग्र, अच्छिन्न, अरोमिल, सवृन्त, पुष्प छोटे, गुलाबीरंग के, फल–गोल मांसल, गुठलीदार।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–अक्टुबर, जनवरी ; प्रयोज्यअंग–फल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों में ग्रामीण क्षेत्रों के आसपास इसके वृक्ष 1,800 मी० की ऊँचाई तक लगाये हुये पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फलमज्जा का प्रयोग गर्म कपड़ों को धोने के लिये करते हैं। फलमज्जा का प्रयोग वमन कराने के लिये भी करते हैं। यह गर्भाशय संकोचक हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अरिष्ठकटुकः पाके तीक्ष्णोष्णों लेखनोगुरूः।**
**दोषत्रयहरो ग्रहपातनों ग्रहशान्तिकृत्।।**
**अर्धशीर्ष व्यथां हन्ति, वमनद्विषनाशनः।।** *(नि०सं०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकादनी, कर्णस्फोटा ; हिन्दी–कनफोटा, लताफटकी।

लैटिन–Cardiospermum halicocabum L.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वर्षाकालीन एकवर्षायु आरोही लता, पर्ण–एकान्तर रोमिल, दन्तुर, त्रिकोणाकार, त्रिपत्रक, पुष्प–छोटे, अनियमित कक्षीय, श्वेतवर्ण के, फल–त्रिकोष्ठी, थैले के आकार का बीज काले रंग के एवं बीजों के ऊपर सफेद निशान।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–सितम्बर, अक्टुबर; प्रयोज्यअंग–पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड शिवालिक एवं तराई–भावर में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का उपयोग सन्धिवात एवं अनार्त्तव में करते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कोशाम्र ; स्थानिक–कुसुम।

लैटिन–Schleichera trijuga Willd

**वानस्पतिक स्वरूप :** छायादार, पर्णपाती मध्यम आकार का वृक्ष पर्ण–विषम, पिच्छाकार, पत्रक 2 से 4 जोडे में सम्मुख, वर्तुलाकार, अरोमिल, पुष्प–छोटे हरिताभ, पीत वर्ण के फल–कोषीय, मांसल।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–बीज।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत, अल्मोड़ा जनपद के तराई, भावर क्षेत्र में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक लोग मवेशियों के खुरपका रोग में इसके बीजचूर्ण एवं छाल क्वाथ को व्रणों पर लगाते हैं। बालों के झड़ने पर कुसुम बीज तेल उपयोगी मानते हैं। मवेशियों के चारे के लिये पत्तियों का उपयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कोशाम्र कुष्ठशोथास्त्र पित्तव्रण कफापहः।**
**तत्फलं ग्राही वातध्न, अम्लोष्णांगुरूपित्तलम्।।**
**पक्वंतु दीपनं रुच्चं, लधूष्णां कफवातनुत्।।** *(भा०प्र०)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–पांगर, बखौर।

लैटिन–Aesculus indica Cole

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष, पत्र–सम्मुख, सवृन्त, पत्रक बड़े, अधोमुख, भालाकार, दीर्घायत, लम्बाग्र, क्रकची, अरोमिल, पुष्प–श्वेत, गुलाबी रंग के, फल गोल, गुच्छों में एक बीज वाले तैलीय।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–जुलाई, अक्टुबर ; प्रयोज्यअंग–बीज, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक इसके वृक्ष भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी जमुनाघाटी, चकराता, रानीखेत, नैनीताल प्रायः सभी जनपदों के पर्वतीय भागों में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** अकाल के दिनों बीजमज्जा का आटे के रूप में प्रयोग किया जाता हैं बीज तेल आमवात में अभ्यंग के लिये प्रयोग करते हैं। चूर्ण का बालों को धोने के लिये भी उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–नागदौन।

लैटिन–Staphylea emodi Wall

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, काण्ड एवं शाखाओं पर श्वेत वर्ण की रेखायें, पत्र–त्रिपत्रक 3–6'' लम्बे, लट्वाकार, क्रकची एवं लम्बाग्र, पुष्प हरितवर्ण के गुच्छों में, फल–पंखदार, उपर से तीन खण्डों में विभक्त।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, गंगी, दुफन्द, मन्दाकिनीघाटी, मदमहेश्वर, जमुनाघाटी, पिंडारीघाटी आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग काष्ठ को अपने घरों में रखते हैं। ऐसा विश्वास है कि इससे साँप घरों में नहीं आते हैं।

**कुल- आम्रादिवर्ग : ANACARDIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में छोटे एवं बड़े वृक्ष पाये जाते हैं। पर्ण विन्यास एकान्तर, क्वचित् अभिमुख, सादे या संयुक्त रूप में, स्त्री एवं पुंपुष्प अलग–अलग होते हैं। पुष्पवाह्य कोश के दल 3 से 5, पुष्पाभ्यन्तर कोश के दल 3 से 7, खाने वाला, अष्ठिल एवं प्रत्येक खाने में एक बीज होता है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ पौष्ठिक एवं रसायन होती हैं। फलों से चिकना दाहक रस निकलता है। इस वर्ग में आम, काकड़ासिंगी, भिलावा, काजू, चिरौंजी, अम्बाड़ा आदि द्रव्य पाये जाते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आम्रातक ; स्थानिक–अम्बाडा।

लैटिन–Spondias mangifera Willd

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष काण्ड–अरोमिल पर्ण–विषम पिच्छाकार, 10'' तक लम्बे, पत्रक 9 से 11 तक सम्मुख, दीर्घायत, अरोमिल, लम्बाग्र, मसलने पर गन्धयुक्त, पुष्प–मज्जरियों में, श्वेताभ, फल–अण्डाकार, मांसल, पकने पर पीला एवं गुठलीदार।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; फलकाल–सितम्बर, अक्टुबर ; प्रयोज्यअंग–फल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं की निचली पहाड़ियों पर 1,500 मीटर की ऊँचाई तक शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरीवृत, पौडी, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भांवर के उष्ण भागों में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते है। कच्चे फलों का शाक के रूप में प्रयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : आम्रात पादपों विम्बफलोपम फलोऽल्पकः।**

**आम्रातमम्लं वातध्नं गुरूष्णांरूचिकृत्सरः।।**

**पक्वंतु तुवरं स्वादु, रसे पाके हिमस्मृतम् ।।**

**तर्पणं श्लेष्मलं स्निग्धं, वृष्णांविष्ठम्भिवृंहणम् ।।** *(भा० प्र०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कर्कटश्रृंगी; हिन्दी–काकड़ासींगी; स्थानिक–काकड़ो।

लैटिन–Pistacia integerrima Stew.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष एवं गुल्म, पर्ण एकान्तर, संयुक्त, विषम पिच्छाकार, 6 -9'' तक लम्बे, पत्रक संख्या 4 से 6 छोटे अवृन्त, प्रायः भालाकार, अच्छिन, अरोमिल, पुष्प–छोटे गुच्छों में गुलाबी रंग के, फल रक्ताभ वर्ण के, इसकी शाखाओं में श्रृंग सद्यश कृमिगृह (Galls) लगते हैं। जो 3''–6'' तक लम्बे, पकने पर कृछ लालिमा लिये हुये, अन्दर से सनाल, सजीव कृमिवाले इन्हीं कृमिगृहों (Galls) को काकड़ासींगी कहते हैं। जिसका चिकित्सा में उपयोग किया जाता है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई;

फलकाल–जून, अगस्त;

प्रयोज्यअंग–कृमिगृह (Galls)।

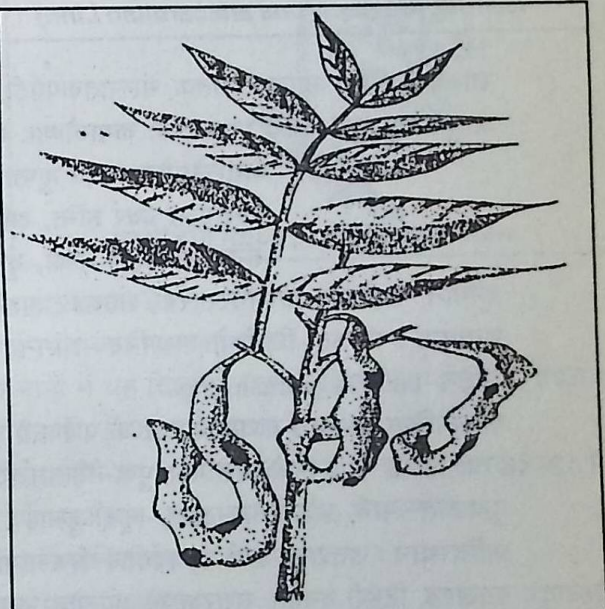

*कर्कटश्रृंगी (Pistacia integerrima Stew)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाऊं उष्णकटिबन्धीय भागों के टिहरी वनवृत, नागनी, चम्बा, घोन्टी, देहरादून वनवृत, उत्तरकाशी वनखण्ड, अल्मोड़ा, नैनीताल आदि जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य काकड़ासींगी चूर्ण का उपयोग शहद के साथ एकग्राम से 2 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार कास (खांसी) में प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** श्रृंगयादिचूर्ण, वालचातुभद्र, कासवटी, च्यवनप्राश, दशमूलारिष्ठ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : श्रृंगी कषाया तिक्तोष्णा कफवात क्षयज्वरान्।**

**श्वासोर्ध वाततृट्कास हिक्का रूचिर्वमीन्हरेत्।।** *(भा० प्र०)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

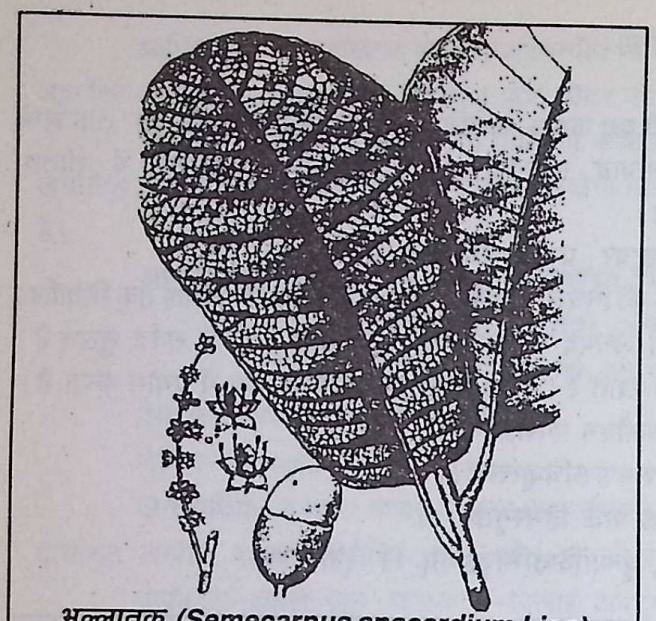

भल्लातक (Semecarpus anacardium Linn)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भल्लातक ; हिन्दी–भिलावा।
लैटिन–Semecarpus anacardium Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष, पर्ण–12" तक लम्बे, अखण्डित, अभिलट्वाकार, आयताकार, चर्मिल एकान्तर, काण्ड को तोड़ने पर दाहक एवं स्फोटकर रस निकलता है। पुष्प हरिताभ–पीतवर्ण के, सगुच्छ मज्जरियों में, फल अष्ठिल, लम्बा, चपटा, काला, चमकदार मांसल, पके हुये फलों में दाहक रस प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–सितम्बर, अक्टुबर; प्रयोज्यअंग–फल (बीज) तेल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून जनपद, तराई भावर, अल्मोड़ा एवं नैनीताल जनपद के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** अमृतभल्लातक, भल्लातकपर्पटी, भल्लातक लवण, कांकायनवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भल्लातकः कषायोष्णाः शुक्रलो मधुरो लघुः।**
**वातश्लेष्मोदरानाहः कुष्ठार्शो ग्रहणीगदान्।।**
**हन्तिगुल्म ज्वरं हन्ति, अग्निमाद्यकृमीन्व्रणान्।**
**तन्मज्जा मधुरो वृष्यो, वृंहणो वात पित्तहा।।** *(भा०नि०)*

कृमिध्न, नाड़ीबल्य, कफनिस्सारक, श्वासहर, अर्शोध्न, आमवातनाशक, वाजीकर, स्वेदजनन एवं रसायन।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जिंगीणी ; स्थानिक–झींगन।
लैटिन–Lannea grandis Engl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष, पत्र, एकान्तर, संयुक्त, विषम–पिच्छाकार, पत्र संख्या में 12–18 तक, 3"-6" तक लम्बे, अरोमिल, पुष्प–पीताभ श्वेतवर्ण के गुच्छों में, फल–गोलाकार, मांसल, गुठलीदार।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र, गोंद (निर्यात)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत, उत्तरकाशी, अल्मोड़ा जनपद, तराई भावर में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग झींगन गोंद का उपयोग करते हैं। पत्तियों का उपयोग पशुचारा के लिये किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिंतिडीक ; हिन्दी–समाकदाना ; स्थानिक–तुंगला, तुंगलों।
लैटिन–Rhus parviflora Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का बहुशाखीय गुल्म, पर्ण त्रिपत्रक, सवृन्त, पत्रक–रोमिल, रूक्ष, अधोमुख, अण्डाकार, क्रकची, पुष्प हरित–पीतवर्ण के, फल–मांसल गुच्छों में पकने पर गुलाबी रंग, स्वाद मीठे–खट्टे।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–बीज, गोंद (निर्यास)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में 800 मीटर की ऊँचाई से 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनवृत, उत्तरकाशी वनवृत, देहरादून वनवृत, अल्मोड़ा, नैनीताल जनपदों में सर्वत्र सुलभ है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग गोंद का प्रयोग धातुविकार (प्रमेह) में करते हैं। सूखे पत्तों का उपयोग बिड़ी पत्ते की तरह करते हैं। पके फल खाये जाते है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** कासहर, दीपन, तृषाशामक, दाहनाशक, ज्वरध्न।

**वातापंह तिन्तिडीकमामं पित्तवलासकृत्।।** *(सु.सू.अ. 46)*

**टिप्पणी :** उत्तराखण्ड में औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी पाई जाती हैं।

(अ) अखोड़िया Rhus wallichii Hook. f.

(ब) अखोड़िया Rhus punjabensis Stew.

(स) चमतुंगलो Rhus continus Linn.

(द) अरकोल Rhus succedanea Linn.

उपरोक्त प्रजातियों के काण्ड में प्रायः दाहक एवं स्फोटकर रस पाया जाता है। इनका स्वरस वदन पर लगने से फफोला पड़ जाता हैं।

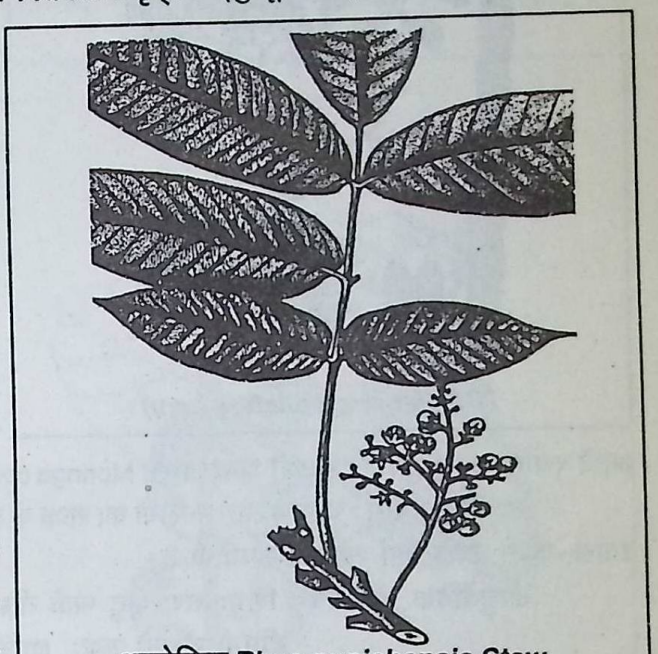

*अखोड़िया Rhus punjabensis Stew.*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–प्रियाल ; हिन्दी–पियाल, चिरौंजी।

लैटिन–Buchanania lanzan Sloreng.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष, काण्ड की शाखायें झुकी हुई, पत्र–एकान्तर, साधारण, 6-8" तक लम्बे, दीर्घायत, आयताकार, चर्मिल, अखण्डित, पुष्प पत्रकोणोद्भूत, मज्जरियों में श्वेताभ वर्ण के फल–मांसल गुठलीदार, गिरी तैलीय, बल्य, पके फल खाये जाते है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–फल व गिरी।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में यह टिहरी वनखण्ड, शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, तराई–भावर एवं अल्मोड़ा जनपद में 900 मीटर की ऊँचाई तक सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फलों को खाया जाता है। गिरी का उपयोग सूखे मेवों के रूप में करते है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** उत्तम पौष्ठिक, बल्य, हृद्य, वाजीकर मूत्रल, वातनाशक, केशरन्जक।

**प्रियाल तैल मधुरं गुरू श्लेष्माग्निवर्धनम्।**
**वातपित्तहरं बृष्यं, प्रियालं गुरू शितलम्।**
**प्रियाल मज्जा मधुरो, वृष्य पित्तनिलापहः।।**

*(सु०सू०अ० 46)*

**कुल- शांभाजनादिवर्ग : MORINGACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियों में बड़े वृक्ष पाये जाते हैं। इस कुल की वनस्पतियों में पर्ण–एकान्तर, पर्णपाती एवं द्वित्रिभग्न होते हैं। पत्रदल अभिमुख होते हैं। पुष्प ब्राह्यकोश नलिकाकार, पुष्पदल छोटे एवं बड़ी संख्या में, पंखड़ियों जैसे होते हैं। पुंकेशर 5 एवं स्त्रीकेशर एक होता हैं। गर्भाशय तीन खाने वाला होता हैं। प्रत्येक खाने में तीन धार वाले अनेक बीज होते हैं। बीजों से तेल निकलता हैं। इस वर्ग की वनस्पतियों में मूत्रल, स्वेदल, अश्मरीध्न, शोथध्न, कफध्न, उंत्तेजक एवं दाहक गुण पाये जाते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

*शिग्रु (Moringa oliefera Lam)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शिग्रु, शोभाज्जन, कृष्णगन्धा ; हिन्दी–सहिंजना ; स्थानिक–सैंजन।

लैटिन–Moringa oliefera Lam.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड–त्वक् कार्क सद्यश, पत्र 1 से 2 फुट लम्बे त्रि–पिच्छाकार, सवृन्त, सम्मुख, अरोमिल, पत्रक सम्मुख अधोमुख अण्डाकार दीर्घवृत्तीय, अच्छिन्न, झिल्लीमय, पुष्पः श्वेत वर्ण के, फली लम्बी अरोमिल एवं बीज श्वेताभ।

पुष्पकाल–फरवरी, अप्रैल ; फलकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–फल, पुष्प, मूलछाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वन क्षेत्रों में 1,200 मी० की ऊँचाई तक नरेन्द्रनगर, नागनी, देवप्रयाग, रूद्रप्रयाग, कुण्ड, जमुनाघाटी, टौन्स, रामनगर, काशीपुर, डिड़ीहाट आदि स्थानों पर सुलभ है। इसकी अन्य किस्म Moringa concanensis Nirmao (कड़वा सोहंजना) भी पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फलियों का शाक के रूप में प्रयोग करते हैं। फलियाँ एवं पुष्प आमवात, कटीशूल, श्वास–कास एवं प्लीहा शोथ में उपयोगी है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शिग्रुः सरः कटु पाके तीक्ष्णोष्णो मधुरो लघुः।**
**दीपनो रोचनो रूक्षः, क्षास्तिक्तोविदाहकृत।।**
**संग्राह्य शुक्रलो हृद्यः, पित्तरक्तः प्रकोपणः।**
**चक्षुष्यः कफ वातध्नो, विद्रधि श्वयधू कृमीन्।।** *(भाव प्रकाश)*

## कुल- कोरेरियेसी : CORIARIACEAE

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मसूरी, वरूल।

लैटिन–Coriaria nepolensis Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़े आकार का क्षुप, काण्ड़शाखीय, रक्ताभ, पत्र 2–4" लम्बे लट्वाकार, दीर्घायत, लम्ब्राग, अच्छिन्न, सवृन्त, कभी मृदुरोमिल, पुष्पहरित–पीतवर्ण के फल–गोल, मांसल पकने पर गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; फल–जून, जुलाई; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण कटिबन्धीय वनों में 1,500 मी० की ऊँचाई पर टिहरी वनखण्ड धनशाली, काणांताल मन्सूरी, चकराता, रानीखेत, नैनीताल आदि स्थानों में सुलभ है ।

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पके फलों को ग्रामीण स्याही बनाने हेतु प्रयोग करते है।

## कुल- पलाशादिवर्ग : PAPILIONACEAE (LEGUMINOSAE)

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में मुख्यतः तीन प्रकार के पुष्प होते है, इन्हीं पुष्पों के आधार पर तीन उपवर्गो में यह बाँटा गया है। अब नये कुलों के आधार पर इन्हें स्वतन्त्र कुल के रूप में स्वीकार किया गया है। पैपिलिओनेसी वर्ग में तितली जैसे पुष्प विशेष होते है। इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं लताएं पाई जाती है। पर्ण–एकान्तर, करतलाकार या पक्षाकार, एकाकी एवं संयुक्त होते हैं। पुष्प अनियमित, पुष्प बाह्यकोष के दल परस्पर, न्यूनाधिक रूप में संयुक्त देखे जाते हैं। पुष्पाभ्यन्तर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

दल पंचकोषीय होते हैं। इन पाँचों दलों के सबसे बड़े दल को पताका कहते है। उडुपाकार दलों में 10 पुंकेशर एवं स्त्रीकेशर आसपास नीचे से जुड़े हुए होते है। गर्भाशय में एक या अधिक बीज होते है। फल–शिम्बी के रूप में फटकर खुलने वाले होते है।

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ग है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः ज्वरघ्न, कृमिघ्न, रसायन, कण्डुघ्न, विषघ्न होती हैं। इस वर्ग में मुख्य रूप से पलाश, मुग्द्धपर्णी, माषपर्णी, शालपर्णी, गुंज्जा, कपिकच्छु, रूद्रवन्ती, शणपुष्पी आदि द्रव्य हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पलाश, किंशुक, ब्रह्मवृक्ष ; हिन्दी–पलाश, टेसू, ढ़ाक ; स्थानिक–ढ़ाक।

लैटिन–Butea monosperma (Lam)

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, पत्र–त्रिपत्रक, पत्रक–मजबूत–कर्कश, चर्मिल, उर्ध्वतल पर चिकने किन्तु अधः पृष्ठ पर रेशमी रोयेंदार सम्मुखपर्ती पत्रक 15 से० मी० लम्बे, तिरछे, लट्वाकार अथवा चौड़े अंडाकार सवृन्तक होते हैं। पुष्प कक्षीय–अग्नि ज्वाला की भाँती रक्तवर्ण के गुच्छों में, फलियाँ चपटी, मृदुरोमिल, लटकी हुई गुच्छों में होती हैं। बीज चपटा, गोलाकार पकने पर लाल रंग का होता हैं। पलाश वृक्ष की लाख भी उत्तम समझी जाती हैं। इसके गोंद को कमरकस कहते हैं।

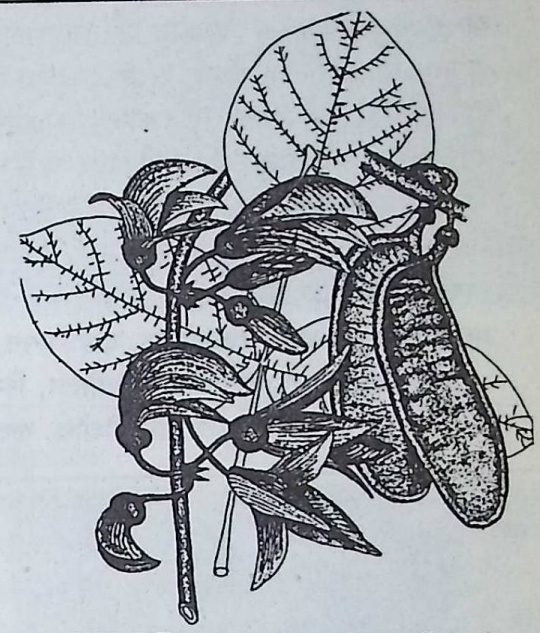

*पलाश Butea monosperma (Lam)*

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–बीज (पलासपापड़ा), पुष्प, गोंद (कमरकस), छाल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों उष्णकटिबन्धीय बनों में प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, देवप्रयाग, देहरादून वनखण्ड, तराई भाबर, रामनगर, काशीपुर आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पुष्पों का उपयोग उदरविकार में करते हैं। पलाशबीज चूर्ण कृमिरोग में देते हैं। गोंद (कमरकस) का प्रयोग कटीशूल, पृष्ठशूल में करते हैं। गोद बल्य है।

**शास्त्रीय योग :** पलाशबीजादिचूर्ण, पलाशक्षार, कृमिकुठारंरस, कृमिधातिनीवटी महानारायण तैल, पलाशकल्प

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : किशुकं कफपित्तघ्नं।** *(सुश्रुत)*

**क्षारश्रेष्ठः कृमिघ्नश्च, संग्राही दीपनः सरः।**
**प्लीह गुल्म ग्रहण्यर्शो, वातश्लेष्म विनाशनः।।** *(ध० नि०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मृद्गपर्णी, क्षुदसहा, शूर्पपर्णी ; हिन्दी–मुगवन, जंगली मूंग ; स्थानिक–मुंगी।

लैटिन–Phaseolus trilolbus Ait.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय, विसर्पी अथवा आरोही शाक, काण्ड–मृदु परिसृत, रोमिल, पत्र–त्रिपर्णक, पत्रक–प्रायः आकृति में परिवर्तनशील, 1-2" लम्बे, तीन विच्छेदों में विभक्त, रोमिल, पुष्प गुच्छों में पीले रंग के फली चपटी मूंग सद्यश बीजों युक्त। इसकी अन्य किस्म भी पाई जाती हैं जिसे Phaseolus calcaratus Roxb कहते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक उष्ण कटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वनखण्ड टिहरीवृत, उत्तरकाशी, अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर में वर्षाकाल के बाद सर्वत्र सुलभ हैं।

**शास्त्रीय योग :** दशमूल, च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मुग्दपर्णी हिमास्वादु वातरक्तक्षयापहा।**

**पित्तदाह ज्वरान् हन्ति, चक्षुष्या कफ शुक्रला।।** *(राजवल्लभः)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–माषपर्णी; स्थानिक–वनउड़द, मषवन।

लैटिन–Phaseolus labialis Spreng.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय परिसृत चक्रारोही लता, काण्ड–मृदु, रोमिल, उड़द सद्यश, पर्ण–सयुक्त, त्रिपत्रक, आयताकार, अण्डाकार, माषपर्ण सद्यश, अधःपृष्ठ रोमिल,पुष्प–पीताभ बैंगनी रंग के, फली–पतली–चपटी, रोमिल,

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक उष्णकटिबन्धीय भागों में शिवालिक वन क्षेत्र, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनक्षेत्र, कोटद्वार, अल्मोड़ा एवं नैनीताल जनपदों के तराई भावर में वर्षाकाल के बाद सर्वत्र सुलभ है। इसकी अन्य क़िस्में भी इन क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

**शास्त्रीय योग :** च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : रक्तशोधक, दाहप्रशमन, वात-पित्तशामकः।**

**माषपर्णी हिमातिक्ता, स्निग्धा शुक्रवलासकृत्।**

**मधुरा ग्राहिणीशोथ, वातपित्त ज्वरास्त्रजित्।।** *(भा०प्र०)*

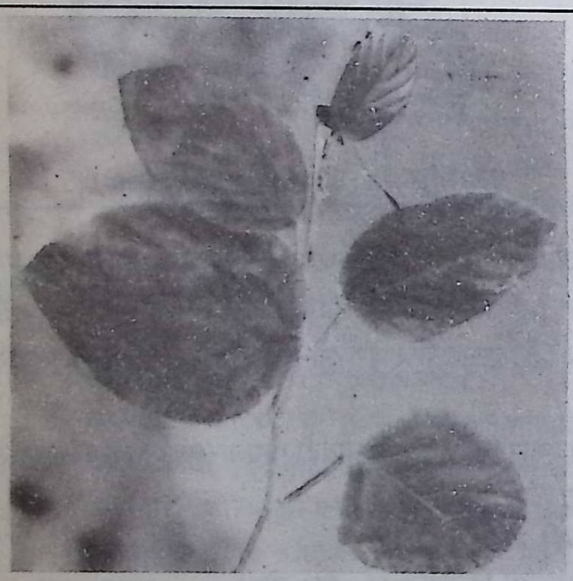

**शालपर्णी (Desmodium gangeticum DC)**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शालपर्णी; हिन्दी–सरिवन।

लैटिन–Desmodium gangeticum DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंश्रित, तलोत्थ शाकीय गुल्म, काण्ड–कुछ कोणदार, पर्ण–एकपत्रक, प्रासवत्, लट्वाकार, दीर्घायत, तीक्षणाग्र, सवृन्त, अनुपर्ण लम्बा एवं मृदु, पुष्प–गुलाबी रंग के मज्जरी–सद्यश, बीज संख्या में अनेक चपटे। इसकी कई अन्य किस्में उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं। जिनमें निम्न किस्में मुख्य हैं। इन सभी का प्रायः शालपर्णी के नाम से संग्रह किया जाता है।

1. Desmodium latifolium DC.
2. Desmodium laxiflorum DC.
3. Desmodium pulchellum Benth.

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में शिवालिक वनखण्ड रायवाला, छिद्रवाला, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत, उत्तरकाशी वनवृत एवं अल्मोड़ा नैनीताल जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक ये किस्में सर्वत्र सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** दशमूल का घटक, दशमूलारिष्ठ, च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शालपर्णी रसे तिक्ता, गुरूष्णा च वातजित्।**

**विषमज्वर मेहार्श, शोथसन्तापनाशिनी।।** *(रा.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पृश्निपर्णी; हिन्दी–पिठवन।
लैटिन–Uraria picta Desv.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय, तलोत्य शाकीय काण्ड 30 से. मी. से 90 से. मी. तक लम्बा, पर्ण विभिन्न आकार में, त्रिपर्णक, दीर्घायत, सवृन्त, पत्रक 4–8" तक भालाकार, लम्बाग्र, पुष्प–छोटे गुलाबी रंग के मज्जरी में बीज छोटे पकने पर श्वेताभ वर्ण के इसकी अन्य औषधोपयोगी किस्म पाई जाती है। जिसे Uraria logopoides कहते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई;
फलकाल–पुष्पकाल के बाद;
प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड गढ़ेवाल के उष्ण–कटिबन्धीय भागों टिहरी वनवृत, देहरादून वनवृत, उत्तरकाशी वनवृत, पौड़ी वनवृत एवं अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक कहीं–कहीं सुलभ है।

*पृश्निपर्णी (Uraria picta Desv).*

**शास्त्रीय योग :** दशमूल, च्यवनप्राश, दशमूलारिष्ठ अमृतारिष्ठ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पृश्निपर्णी त्रिदोषध्नी वृष्णोष्णा मधुरासरा।**
**हन्तिदाह ज्वर श्वास, रक्तातीसारतृड्वमी।।** *(भा. प्र.)*
**"पृश्निपर्णी सांग्राहिक-वातहर-दीपनीय वृष्याणाम्"** *(च. सू. अ. 25)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गुञ्जा, रक्तिका, काम्बोजी ; हिन्दी–रत्ती, घुमची ; स्थानिक–रत्ती।
लैटिन–Abrus precatorius Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी लता आरोही, बहुवर्षीय, शाखीयं, पत्र बहुपिच्छाकार, 2–3" लम्बे पत्रक 20–30 की संख्या में सम्मुखपाती इमली के पत्रकों के सदृश होते हैं। पुष्प–श्वेताभ हल्के गुलाबी रंग के, सवृन्त, काण्डज गुच्छों में निकलते है। शिम्बी गुच्छों में एवं कोष्ठ के अन्दर बीज लाल रंग के और कुछ भाग काले रंग का इसकी श्वेत बीज वाली जाति भी कहीं–कहीं जाती है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–दिसम्बर, जनदरी ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, देवप्रयाग, उत्तरकाशी, बड़ाकोट, जमुनाघाटी, तराई भावर, रामनगर, काशीपुर आदि स्थानों में स्वयंजात सर्वत्र सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** गुञ्जादितैल, गुञ्जाभद्ररस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : गुञ्जासोष्णा रसेतिक्ता, कषायाकफपित्तहा।**
**चक्षुष्या शुक्रलाकेश्या, त्वच्या रूच्यावलप्रदा।।**
**इन्द्रलुपृहरातीव्रा स विषा मदमोह कृत्।**
**हन्तिरक्षोग्रह विषं, कण्डूकुष्ठ विषकृमीन्।।** *(कैय.नि.)*
**गुञ्जावल्ली तु मधुरा, चिंचापत्री सशिंविका ।**
**बीजं कृष्णारुणंतस्या, जायते सर्वभूमिषु ।।** *(शिवदत्त)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

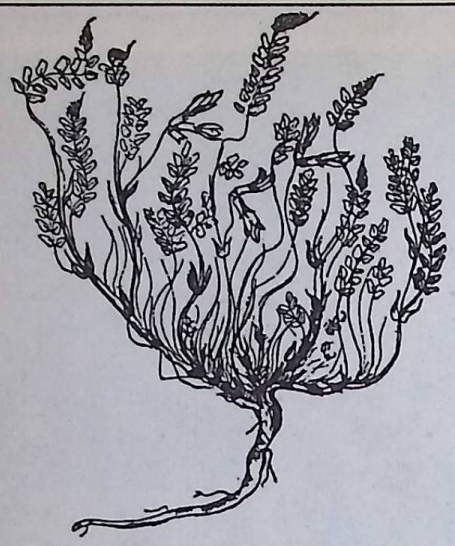

रूद्रवन्ती *Astragalus condolleanus Royle.*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–रूद्रवन्ती; स्थानिक–रूद्रवन्ती।

लैटिन–Astragalus condolleanus Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय मूल वाला काण्ड एक वर्षायु विसर्पी, 30 से. मी. से 60 से. मी. ऊँचा, पत्र चणपत्र सद्यश, मृदुरोमिल, मूल–कठोर, रेशेदार, पुष्प पीत वर्ण के फल शिम्वी सद्यश। इसके अतिरिक्त अन्य किस्में भी इन हिमालय में पाई जाती हैं, जो इस प्रकार से है :

1. रूदन्ती Astragalus leucocephalus Grah.
2. Astragalus chlorostrachys Lindl.

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में 2,800 मीटर की उँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई पर भागीरथीघाटी, गंगोत्री, तपोवन, गोमुख, जमुनाघाटी मन्दाकिनीघाटी, पिंडारीघाटी एवं पिथौरागढ़ जनपद के सीमान्त बुग्यालों इसकी किस्में पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण एवं साधु–सन्त मूल को वल्य एवं उरःक्षत, क्षय तथा श्वास–कास में प्रयोग करते हैं। इनका विश्वास है कि यही असली रूद्रवन्ती है।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–वीरव्रट।

लैटिन–Flemingia bracteata Wight.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय एकवर्षीय गुल्मीय शाक, पत्र दीर्घायत, भालाकार, रोमिल, सवृन्त, 3" से 6" तक लम्बे, पुष्प गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

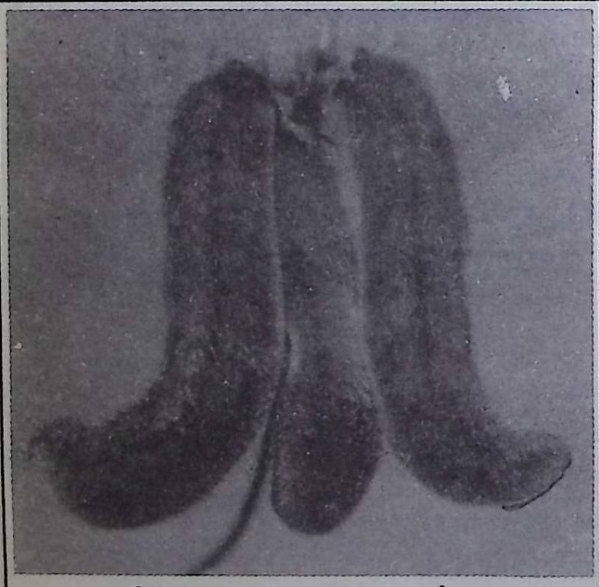

कपिकच्छु *(Mucuna prurita Hook)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत एवं अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर वनक्षेत्र में 900 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**टिप्पणी :** स्थानिक व्यापारी पञ्चांग का शालपर्णी के नाम से संग्रह करते हैं। शालपर्णी में इसकी मिलावट की जाती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कपिकच्छु ; स्थानिक–केंवांच; स्थानिक–दाकली।

लैटिन–Mucuna prurita Hook

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय चक्रारोही आरोही लता, पर्ण–संयुक्त, त्रिपत्रक, लट्वाकार, समचतुर्भजाकार, सूक्ष्मरोमिल, पुष्प रक्ताभ बैंगनी रंग के, पत्रकोणीय, मज्जरी में, फलियाँ शिम्बीयुक्त धारीदार, रोमश, रोंये दाहक, कण्डू (खुजली) करने वाले, बीज संख्या में 5–6, कृष्णाभ,धब्बेदार,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मसृण। इसकी अन्य किस्में इन घाटियों में पाई जाती हैं। जिसे भैंसलगलो Mucuna imbricata DC कहते हैं।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक गढ़वाल एवं कुमाऊं के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड तराई भावर, कोटद्वार, रामनगर, किच्छा, टनकपुर, धनशाली उत्तरकाशी, जौनसार, टौन्सघाटियों में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** बीजों का प्रयोग चूर्ण रूप में प्रमेह एवं धातु विकार में होता हैं। यह धातु पौष्टिक है। कच्ची फलियों का शाक बनाकर खाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** बानरीगुटिका, मन्मथरस, धातुपौष्ठिकचूर्ण, शतावर्यादिचुर्ण, मूसली पाक, कपिकच्छुपाक।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कपिकच्छुर्भृशं बृष्या, मधुरा वंहणी गुरूः।**
**तिक्तावातहरी वल्या, वातपित्तास्त्रनाशिनी।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शिंशपा, कृष्णासारा; हिन्दी–शीशम; स्थानिक–सीसम।

लैटिन–Dolbergia sissoo. Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके पर्णेपाती मध्यम आकार के वृक्ष होते हैं। काण्ड छाल मोटी, खाकीस्तरी रंग की लम्बाई के रुक में कुछ विदीर्ण होती हैं। पर्ण–एकान्तर सपत्रक, पत्रक, संख्या में 3–5 एकान्तर क्रम में स्थित एवं लट्वाकार होते हैं। पुष्प–पीताभ श्वेत एवं पत्र कोणोद्भूत, मज्जरियों में खिलते हैं। फली–लम्बी, चपटी 1-1/2 से 4 इंच लम्बी 2 से 4 बीज युक्त होती हैं। काष्ठसार कृष्णाभ भूरे रंग का होता हैं।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च ; फलकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, छाल, पत्र, बीज

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं चमोली जनपद में तराई भावर क्षेत्र में बनों एवं सड़कों के किनारे इसके वृक्ष स्वयंजात एवं लगाये हुए पाये जाते हैं।

**शास्त्रीय योग :** खदिरासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शिंशपा कटुका तिक्ता कषायादोष हारिणी।**
**उष्णवीर्या हरेन्मेदः कुष्ठाश्वित्र बमिकृमीन्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिनिश, नेमी; हिन्दी–सांदन; स्थानिक–सांदन।

लैटिन–Ougeinia dalbergioides Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड की भीतरी छाल लाल रंग की, पर्ण–त्रिपत्रक, 3–6" तक लम्बे, अण्डाकार, वृताकार कुण्ठिताग्र, गोल एवं दन्तुर होते हैं। पुष्प–श्वेताभ गुलाबी रंग में मंज्जरियों में खिलते हैं। फलियाँ 3" से 4" लम्बी गुच्छों में तथा पतली होती हैं।

पुष्पकाल–मई, जून; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–छाल, काष्ठसार (गोंद)।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, धनशाली, घुत्तू, नागनी, जौनसार, टौन्सघाटी, रामनगर कोटद्वार, काशीपुर, किच्छा,

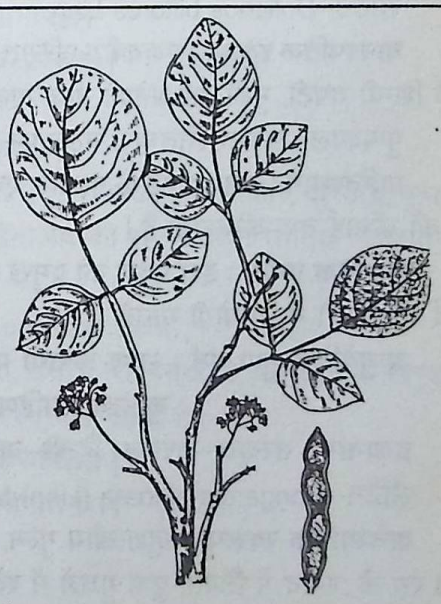

**सांदन (Ougeinia dalbergioides Benth)**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

टनकपुर आदि वन क्षेत्रों में यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** काष्ठ का उपयोग लघु उद्योग में लकड़ी के बर्तनों के बनाने के लिये किया जाता है। पशुचारा के लिये पत्तों का उपयोग होता है। मूत्र विकारों में छाल क्वाथ का प्रयोग ग्रामीण करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : रक्तातिसारं कुष्ठंच, मेहमेद व्रणं तथा।**

**रक्तदोषं च पित्तं च, श्वित्रकुष्ठ कृमीन्स्तया।।** *(भा.प्र.)*

**दाहं च पाण्डु रोगं च, नाशयेदितिकीर्तित :।।** *(नि.र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बिदारीकन्द ; स्थानिक–सराल।

लैटिन–Pueraria tuberosa DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, पर्णपाती, बहुवर्षायु, मूलकन्दीय, लता, काण्ड–मृदु–बहुशाखीय, पर्ण–पलाश पत्र सद्यश, त्रिपत्रक तिर्यगायताकार, लट्वाकार, लतायें पर्ण विहीन होने पर पुष्पमज्जरी में नीलाम बैंगनी रंग के, शिम्बी–रोमश 2" से 3" लम्बी, मृदु, कन्द बड़े गोलाकार बाहर से धूसरवर्ण के अन्दर से श्वेत रंग के एवं स्वाद में मधुर–कषाय होते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड टिहरी वनखण्ड, अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर क्षेत्र में भीमताल, टनकपुर आदि वन क्षेत्रों में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** कन्द का प्रयोग दुग्धवर्धक एवं वलवर्ध के रूप में प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** च्यवनप्राश, विदारीचूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : विदारी मधुराशीता, गुरूस्निग्धाऽस्त्रपित्तजित्।**

**ज्ञेया च कफकृत् पुष्ठि वलवीर्य विवर्धनी।**

**वातापित्त प्रशमनी, वृष्यावल्या रसायनी।।** (रा.नि.)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कुलत्थ; हिन्दी–कुलथी; स्थानिक–गथ।

लैटिन–Dolichos biflorus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय परिसृत शाक, पर्ण–माषपर्ण सद्यश, त्रिपत्रक, मृदुरोमिल, पुष्प–पत्रकोणीय पीत वर्ण के शिम्बी चपटी, मुड़ी हुई अनेकों बीज वाली बीज–वृक्काकार, खाकी रंग।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय भागों में प्रायः इसकी खेती 1,200 मीटर की ऊँचाई तक की जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** इस प्रदेश की प्रमुख दालों में कुलथी का उपयोग किया जाता है। कुलथी का क्वाथ मूत्रल एवं गुर्दे की पथरी में उपयोगी मानते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : उष्ण कषाया पाकेऽम्ला कफ शुक्रनिलायहाः।**

**कुलत्था ग्राहिणः कास हिक्वाश्वासार्शनाशक।।** *(चरकः)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–करंज्ज ; हिन्दी–करंजुआ।

लैटिन–Pongamia pinnata (Linn) Merr.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय गुल्म, काण्डस्कन्ध अपेक्षाकृत छोटा, छाल चिकनी, चिन्हित, पर्ण–सपत्रक, गाढ़े हरे रंग के, स्वाद में तिक्त, पुष्प गुच्छों में श्वेत वर्ण के, फलियाँ चपटी, हल्के छिलकेदार एक बीजीय, रेखांकित, रक्ताभ वर्ण की। गिरी से घृत सद्यश तेल निकलता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प, बीजतेल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय भूभागों में सड़कों के आस–पास देहरादून ऋषीकेश, काशीपुर, रामनगर, हल्द्वानी, रूद्रपुर आदि स्थानों में इस गुल्म रोपित किये हुये होते हैं।

**शास्त्रीय योग :** करंज्जाद्यघृत, करंज्जादिचूर्ण

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : करंज्ज कटुकस्तीक्ष्णों वीर्योष्णों योनिदोषहृत्।**
**कुष्ठोदावर्त गुल्मार्शो व्रण कृमिकफापहः।।**
**तत्पत्रं कफवातार्शः कृमिशोफ हरं परम्।**
**तत्फलं कफवातध्नं मेहार्श कृमिकुष्ठनुत्।।** *(भा. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–नीली ; हिन्दी–नील।

लैटिन–Indigofera tinctoria L.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय तलोत्य शाखीय, काण्ड 60 से०मी० से 1 मी० लम्बा, पर्ण–सपक्षवत्, पत्रक संख्या में 5 या 6 जोड़े में, अण्डाकार, लट्वाकार, पुष्प–हरिताभ गुलाबी रंग के, पत्रकोणीय, फलियाँ–बेलनाकार गुच्छों में होती हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के मैदानी भागों देहरादून, ऋषिकेश, रायवाला, हल्द्वानी, रामनगर, रूद्रपुर कहीं–कहीं इसके पादप वर्षा काल के बाद स्वयंजात पाये जाते हैं। हिमालय की उष्णकटिबन्धीय भागों में इसकी अन्य किस्में पाई जाती है। यथा–

1. साखिनो Indigofera pulchella Roxb इसके पुष्पों का ग्रामीण लोग शाक बनाकर खाते हैं। पत्र का उपयोग पशुचारा में किया जाता हैं।

2. साखिन Indigofera heterantha Wall जौनसार एवं टिहरी वनवृत में इसके गुल्म पाये जाते हैं। अन्य कतिपय किस्में उत्तराखण्ड में उपलब्ध है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण महिलायें पत्तों का उपयोग केश रज्जन के लिये करती है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : नीलिनी रेचनी तिक्ता कश्योमोहभ्रमापहा।**
**वहुशिम्वा कलिका च, रंगपत्री च रज्जनी।** *(शिवदत्त)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शणपुष्पी; स्थानिक–झुनझुनियाँ।

लैटिन–Crotalaria juncea L. or Crotalaria albida Heyne

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीयु शाक काण्ड–तलोत्य, पर्ण मृदु, अण्डाकार, भालाकार, कुण्ठाग्र, पुष्प–पीतवर्ण के, शिम्बी–वेलनाकार, फूली हुई एवं अनेकों चपटे बीज वाली। हिमालय की समशीतोष्ण घाटियों में कतिपय किस्में पाई जाती हैं। यथा–

1. Crotalaria sericea Retz 2. Crotalaria calycina Schr.

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों में टिहरी वनवृत, उत्तरकाशी वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा के तराई भावर वनक्षेत्रों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक सभी किस्में पाई जाती है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : धण्टारवस्तु कटुको वान्तिकृत् कफपित्तहृत्।**
**शणस्त्वम्ल कषायश्च, मलगर्भास्त्रपातनः।।** *(शोठलः)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–जंगलीदाल।

लैटिन–Atylosia scarabaeoides Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय विसर्पी शाक, शाखा मृदु रोमिल श्वेताभ हरित, पत्र त्रिपत्रक, अनुपर्णी, पत्रक–



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

छोटे अधोमुख अण्डाकार, दीर्घायत, पुष्प–छोटे पीतवर्ण के । इसकी अन्य कतिमय क़िस्में इस क्षेत्र में पाई जाती हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भागों में प्राय 1500 मी० की ऊँचाई तक सभी जनपदों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वन वृत, टिहरी वनवृत, तराई–भावर में वर्षा काल के बाद सर्वत्र सुलभ हैं।

**टिप्पणी :** हरिद्वार देहरादून की फार्मेसियों में पंचांग का उपयोग मुग्दपर्णी के नाम से करते हैं।

*पारिभद्र (Erythrina suberosa Roxb)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पारिभद्र ; हिन्दी–फरहद ; स्थानिक–मन्दार।

लैटिन–Erythrina suberosa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के कण्टकित वृक्ष, काण्डछाल कार्की, धूसरवर्ण की, पर्ण–पलाश पत्र सद्यश त्रिपत्रक, पुष्प पत्रकोणिय, गुच्छों में, रक्तवर्ण के, शिम्वी 30 से.मी. तक लम्बी, इसके अतिरिक्त हिमालय की तलहटियों में अन्य किस्म भी स्वयंजात एवं रोपित पाई जाती हैं जिसे Erythrina variegata Linn मदार कहते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, छाल पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल, कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक इसके गुल्म स्वयंजात एवं रोपित सर्वत्र पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** लघु उद्योग में इसके काष्ठ से बर्तन बनाये जाते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पारिभद्र कटूष्णास्यात् कफवातनिकृन्तनः।**
**अरोचक हरः पथ्यः दीपनश्चापिकीर्तितः।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चक्षुष्या ; हिन्दी–चाकसू।

लैटिन–Cassia absus Linn. (Leguminosae)

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय, मृदु, परिसृत शाक, पत्र–जोड़ों में लट्वाकार, तिर्यगाकार, पुष्प–सवृन्त पीताभ नांरगी रंग के, फली–चपटी, रोमिल, बीज–चमकीले काले रंग के कुलथी सद्यश।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में प्रायः 1,200 मीटर की ऊँचाई तक घास के ढलानों में सर्वत्र सुलभ है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वन्यकुलत्थिका कटुस्तिक्ता स्यादर्शशूलनाशिनी।**
**विबन्धाऽध्मानशमनी चक्षुष्या व्रणरोपिणी।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–सटफल।

लैटिन–Trifolium repens Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, अरोमिल, कभी–कभी मृदुरोमिल शाक काण्ड बेलनाकार, विसर्पी एवं सन्धिपर्वो पर मूल युक्त, पत्रक दन्तुर, अधोमुख अण्डाकार, अवृन्त, अनुपर्णी, दीर्घायत एवं पत्र बृन्त से छोटे, पुष्प–सफेद गुलाबी



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मी. की ऊँचाई से लेकर 2,700 मी. ऊँचाई तक भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी एवं मन्सूरी, काणांताल, देववन, बेरीनाग, पिंडारघाटी, कालीघाटी आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती हैं जिनमें माल्यों Trifolium corniculata Linn. मुख्य है। ग्रामीण लोग इसके पञ्चांग को विषैला मानते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मेथिका, दीपनी, पीतबीजा ; हिन्दी–मेथी ; स्थानिक–मेथी।

लैटिन–Trigonella foenum-graecum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मेथी के एक वर्षी क्षुप होते है। पत्रक एक इंच तक लम्बे अभिप्रासवत् आयताकार, कुठिताग्र, पुष्प–अवृन्त पत्रकोणोंद्भूत पीतवर्ण के, फली 2'' से 3'' लम्बी, चोंचदार, 10–20 पीले बीज वाले मसलकर सूंघने पर सुगन्धित होते है।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ; फलकाल–जनवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में ग्रामीणों द्वारा इसकी खेती की जाती है। कोमल पत्र तरकारी के काम में प्रयुक्त होते है।

**स्थानिक प्रयोग :** जोड़ों एवं कमर दर्द (वायुविकार) में ग्रामीण लोग इसको आटे के साथ घी में भून कर लड्डू बना कर सेवन करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** मेथिकाचूर्ण, मेथिकामोदक।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मेथिका कटु रूषणा च रक्तपित्त प्रकोपणी।**
**अरोचकहरा दीप्तिकरी वातप्रणाशिनी।।** *(रा.नि.)*
**मेथिका दीपनी हृद्या, बद्धविट् कृमिशक्रनुत् ।**
**रूक्षोष्णां तत्फलं कासानिलश्लेष्म वमीन्जयेत्।।** *(क्षेमकुतुहलम्)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शरपुंखा; हिन्दी–शरपुंखा; स्थानीय–सरफोंका।

लैटिन–Tephorsia purpurea (L) Rens.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके बहुवर्षायु 1 से 3 फुट लम्बे, बहुशाखी क्षुप होते है। काण्डः–उर्ध्वसंस्थित, मृदुरोमिल, पत्र 3–6'' लम्बे, अल्पवृत्र वाले, पत्रक–संख्या में 12–20 तक, 1 से० मी० तक लम्बे, दीर्घायत, नताग्र एवं पत्रक को दो भागों में तोड़ने पर एक भाग बाण के अग्र भाग के समान दिखाई देता है। पुष्प–अग्रस्थित एवं कक्षीय, श्वेत गुलाबी रंग के होते है। फली 1–2'' लम्बी सीधी, रोमश एवं अग्रभाग पर कुण्ठिताग्र होती है। बीज–चितकबरा होता है। श्वेत पुष्प वाले शरपुंखा को Tephorsia villosa Pens कहते है। इसका पौधा जमीन पर परिसृत होता है।

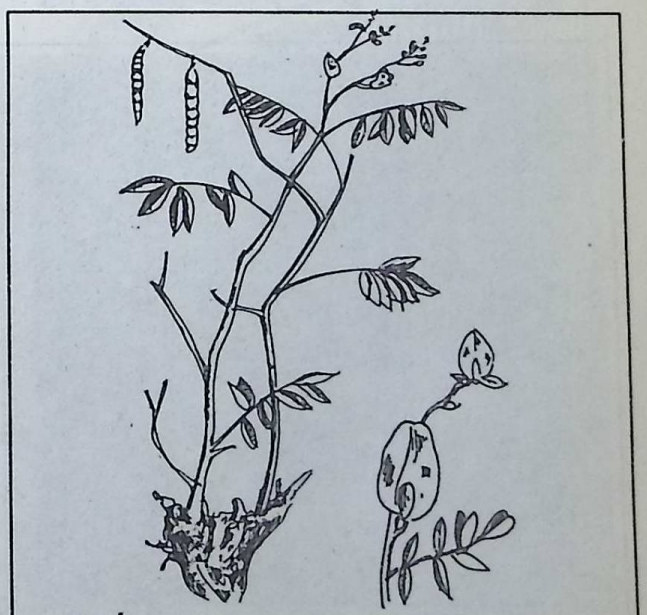

शरपुंखा (Tephorsia purpurea (L) Rens.)

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–दिसम्बर,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

जनवरी ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह पौधा उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 900 मी. की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, धरासू, उत्तरकाशी, देहरादून, ऋषिकेश, रूद्रपुर, काशीपुर, चम्पावत, टनकपुर, कोटद्वार आदि स्थानों में सर्वत्र सुलभ हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शरपुंखा कटुष्णाश्च, कृमिवात रूजापहाः।**
**श्वेतात्वाशु गुणाढ्यास्यात्, प्रशस्ता च रसायने।।**
**शरपुंखा यकृत प्लीहगुल्म व्रणविषापहः।**
**तिक्त कषायः कासास्त्र श्वासज्वरहरो लघुः।।** *(भा.प्र.)*

इसके अतिरिक्त इस कुल में जो औषधोपयोगी वनस्पतियाँ उत्तराखण्ड के जमुनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, अलकनन्दाघाटी फूलों की घाटी पिंडारीघाटी के बुग्यालों में 2,400 मी. से 3,600 मी. की ऊँचाई तक पायी जाती है वे निम्न हैं :

1. Hedysarum microcalyx Baker.
2. Lotus corniculatus Linn.
3. Uraria lagopus DC.
4. Vicio pallida Turcz.
5. Zornia gibbosa Span.
6. Parochetus communis Buch-Ham.
7. Oxytropis thomsonii Benth.

**कुल-पूतिकरञ्जादिवर्ग : CAESALPINIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियों में वृक्ष, गुल्म एवं शाकीय–पौधे पाये जाते है। इनके पत्र पिच्छसद्यश, सकृत्, विभाजित अथवा असकृत विभाजित, संयुक्त और कदाचित सादे, त्रिपत्रक एवं एकान्तर होते है। पुष्प की रचना–कलगी या मञ्जरी सद्यश या कदाचित् विभाजित एवं तोरण सद्यश होती है। पुष्प बाह्यकोष के पत्र संख्या में 5 बहुधा अलग–अलग एक के ऊपर एक आये हुए पुष्पाभ्यन्तर कोष 5, पुंकेशर 90, जो प्रायः पृथक–2 ही होते है। फल–शिम्बी सद्यश। इस वर्ग के द्रव्य प्रायः ज्वरध्न, रेचक, अर्शोध्न, कण्डूध्न एवं कुष्ठध्न होते है।

*काँटाकंरज (Cacesalpinia crista Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पूतिकरञ्ज, कुवेराक्ष, लताकरञ्ज; हिन्दी–करंजुआ, काँटाकंरज; स्थानिक–कठकरंज।

लैटिन–Cacesalpinia crista Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी सधन एवं परिसृत कंटीली झाड़ीनुमा लता होती है। शाखा–पत्रदण्ड पर सूक्ष्म, कठोर काँटे होते है। पत्र–पिच्छाकार, 6 से 8 जोडों में, अनुपर्ण–लम्बे मुड़े हुए काँटेदार, पत्रक–6 से 10 संख्या में विपरीत दीर्घायत, दीर्घवृत्तीय, झिल्ली सद्यृश, मृदुरोमश होते है। पुष्प–मञ्जरी में पीले रंग के, पत्र कोणोंद्भव, शाखाग्र, फली–चौड़ी, आयताकार चपटी, काँटेदार एवं प्रत्येक फली में 1 से 2 बीज होते है। बीज–चिकने अण्डाकार होते है। पत्र, बीज, गिरी स्वाद में तिक्त होते है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–नवम्बर, दिसम्बर ; प्रयोज्यअंग–बीज, पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्र नगर, नागनी, उत्तरकाशी, देवप्रयाग, जौनसार, तराई भावर देहरादून कोटद्वार, रामनगर, किच्छा, टनकपुर, चम्पावत आदि स्थानों में प्रायः सर्वत्र सुलभ है। दूसरी जाति भी इन घाटियों में पाई जाती है जिसे किगरी Cacesalpinia sepiaria Roxb कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** बीज ज्वरघ्न होते हैं।

**शास्त्रीय योग :** करञ्जादिबटी, विषमज्वरान्तक चूर्ण, महासुदर्शन चूर्ण, कृमिकुठार रस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : स्त्रंसनं कटुकं पाके, लधुवात कफापहम्।**
**शोथध्न मुष्णवीर्य च, पत्रं पूतिकरञ्जकम्।।** *(सू०स०अ० 46)*
**कुवेराक्षं यकृत प्लीहं वातध्नं व्रणरोपंणम्।।**
**पूतिकरंजं पत्रं, लधु वात कफापहम्।**
**भेदनं कटुकं पाके, वीर्योष्णं शोफनाशनम्।।** *(शो.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आरग्वध, राजवृक्ष; हिन्दी–अमलतास; स्थानिक–किरमाल।

लैटिन–Cassia fistula Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के गुल्मनुमा पर्णपाती वृक्ष पाये जाते है। पर्ण–संयुक्त दलपर्ण, पत्रक 4 से 8 जोड़ों में लट्वाकार अथवा अधोमुख अण्डाकार, दीर्घायत, लम्बाग्र एवं अच्छिन, पुष्प–पीले रंग के, पत्र कोणोंद्भूत, गुच्छों में लटके हुए फ़ली–1 से 2 फीट लम्बी, 4'' ब्यास तक मोटी, अपक्वावस्था में हरितवर्ण की पक्कावस्था में रक्ताभ–कृष्ण एवं कठोर, फल मजा–कृष्णाभवर्ण की एवं स्वाद में मधुर, बीज चपटे संख्या में अनेक पाये जाते है।

*अमलतास (Cassia fistula Linn)*

पुष्पकाल–अप्रैल, मई;

फलकाल–जून, अगस्त;

प्रयोज्यअंग–मूलत्वक, फलमज्जा, पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड नागनी, नरेन्द्रनगर, देवप्रयाग, देहरादून, कोटद्वार, काशीपुर, टनकपुर आदि स्थानों पर स्वयंजात एवं छाया तथा सुन्दरता हेतु यह वृक्ष सड़कों के किनारे लगाये हुए भी मिलते है।

**स्थानिक प्रयोग :** अमलतास की पकी फलियों के गूदे का उपयोग कब्ज दूर करने के लिये करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** आरग्वधारिष्ठ, आरग्वधादिसुत्रवर्ति, अमलतास गुलकन्द।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : आरग्वधो रसे तिक्तो, गुरूरूग्णा क्रिमिशूलनुत्।**
**कफोदर प्रमेहध्नः कृच्छ्रगुल्म त्रिदोषजित्।।** *(ध०नि०)*
**आरग्वधोऽतिमधुरः शीतशूलापहारकः।**
**ज्वर कण्डूकुष्ठ मेह कफविष्ठम्भ नाशनः।।** *(रा. नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कासमर्द, कासारि ; हिन्दी–कसौन्दी।

लैटिन–Cassia occidentalis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह वर्षाकाल में उगने वाला एक वर्षायु बहुशाकीय पौधा है। काण्ड–उर्ध्वसंस्थित 3 से 4 फुट तक लम्बा, पत्र–पक्षाकार, संयुक्त, पत्रक, 2'' से 4'' लम्बे, दीर्घवृत्तीय, अरोमिल, भालाकार एवं लम्बाग्र, पुष्प–पीले रंग, पत्रकोणोंद्भूत, फली–चिकनी, चपटी कई बीजों वाली 3'' से 5'' लम्बी होती हैं। इसके बीजों का उपयोग काफी के स्थान पर होता है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल, कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत, रामनगर, काशीपुर, रूद्रपुर, तराई–भावर कोटद्वार आदि सभी जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक वर्षाकाल के बाद सर्वत्र सुलभ है। इसकी अन्य किस्म भी पर्वतीय आंचलों में पाई जाती है जिसे श्याम सुन्दरी Cassia laevigata कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पत्रक्वाथ का उपयोग कास में करते हैं। व्रणशोथ पर पत्तियों का बाह्य लेप करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कासमर्दः सतिक्तोष्णो मधुरः कफवातजित्।**

**अजीर्ण कास पित्तध्नः पाचनः कण्ठशोधनः।।** *(रा. नि.)*

**दद्रु किटिभ कुष्ठानि, जयेत्देतत्प्रलेपनात्।।** *(चक्रदत्तः)*

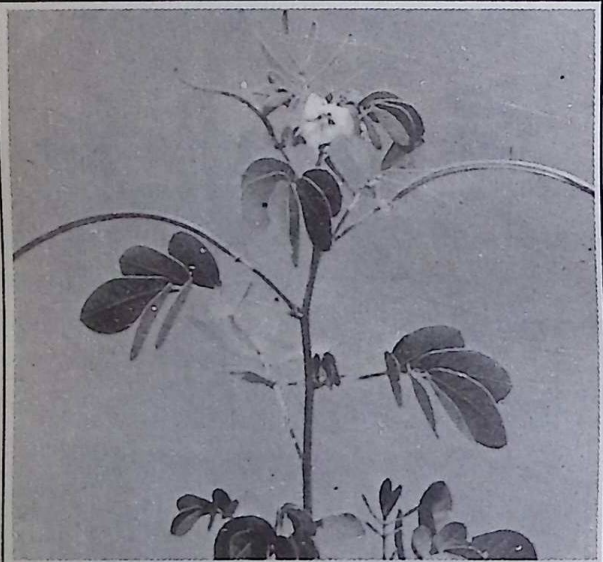

*चक्रमर्द (Cassia tora Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चक्रमर्द ; हिन्दी–चकवड़, पवांड़।

लैटिन–Cassia tora Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वर्षाकालीन एकवर्षायु तलोत्थ शाकीय गुल्म, पत्र–संयुक्त, पिच्छाकार, पत्रक अधोमुख, अण्डाकार, नताग्र एक दूसरे से मिले हुये, पुष्प–पीतवर्ण के, पत्रकोणीय, फली 4–6'' तक लम्बी, चिकनी बीजों वाली।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त;

फलकाल–अगस्त, सितम्बर ;

प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय भागों में प्रायः सभी जनपदों में वर्षाकाल के बाद 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण पत्तियों का उपयोग कण्डू (खाज खुजली) में बाह्य लेप के रूप में करते हैं। रक्त दोष में पत्तियों की भाजी खाते हैं।

**शास्त्रीय योग :** दद्रुध्नवटी, एक्जीमाहर लेप।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चक्रमर्द कटूष्णास्यात्, मेदोवातकफापहः।**

**दद्रु कण्डूहरः कान्ति सौकुमार्यकरोमतः।।** *(भा.प्र.)*

**दद्रुध्नलेपनंकुर्यात्।।** *(बंगसेन)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काञ्चनार ; हिन्दी–कचनार ; स्थानिक–ग्वीरियाल, ग्वैरियाल।

लैटिन–Bauhinia variegata Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के वृक्ष, काण्ड–छाल रक्ताभ वर्ण की पर्ण 4'' से 6'' तक लम्बे द्विपत्रक, द्विखण्डित, गहरे हृदयाकार, मध्यम भाग दबा हुआ, पुष्प–ताम्र श्वेतवर्ण के, सुगन्धित गुच्छों में, शिम्वी 5'' से 6'' तक लम्बी, चपटी कुछ टेढ़ी रक्तवर्ण की। इन घाटियों में निम्न अन्य किस्में भी पाई जाती हैं।

1. कोविदार, (ग्वीरियाल) Bauhinia purpures Linn इसके पुष्प गहरे गुलाबी रंग के होते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

2. कंणदी Bauhinia retusa Roxb पुष्प श्वेताभ वर्ण के, पत्र द्वियुग्मक, इसका गोद (निर्यास) औषधोपयोगी होता है । पत्तियों का उपयोग मवेशियों के चारे के लिये करते हैं।

3. मालझल–मालू Bauhinia vahlii W of A.

इसकी विशाल वृक्षाकार आरोही लतायें होती हैं। इस प्रदेश का यह महत्वपूर्ण पादप है। पत्तों का उपयोग पत्तलों के रूप में एवं पशुचारा के लिये किया जाता है। रेशे का उपयोग रस्सी बनाने के लिए किया जाता है। बीजों को भून कर ग्रामीण खाते है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–छाल, पुष्पकालिका।

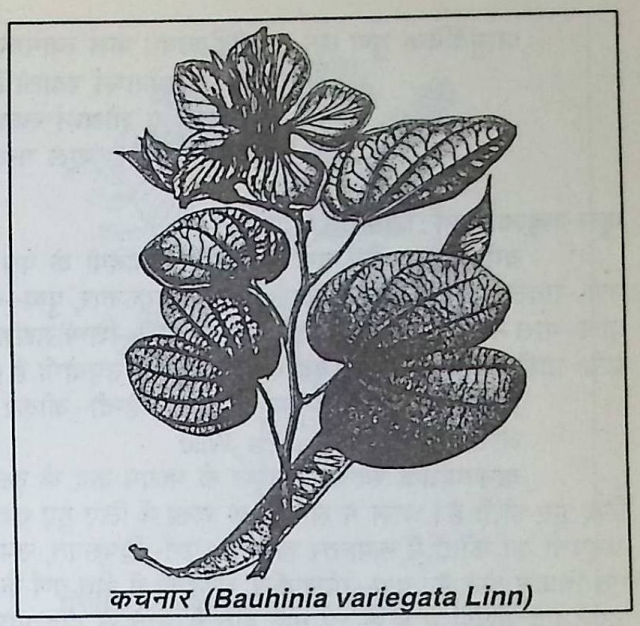

कचनार (Bauhinia variegata Linn)

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं के उष्णकटिबन्धीय भूभागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरी वनवृत पौड़ी वनवृत, अल्मोड़ा जनपद के तराई भावर, टनकपुर, नैनीताल जनपद के मैदानी भागों में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पुष्पकलिकाओं को शाक बनाकर खाते हैं। देवपूजन में पुष्पों को शुभ मानते हैं। सौन्दर्य की दृष्टी से कचनार के फूलों की डाली सुन्दर लगती हैं। ग्रामीण लोग घरों के आसपास इस गुल्म को लगाते हैं। यह पर्यावरण सन्तुलन में उपयोगी है। छाल क्वाथ का प्रयोग प्रदररोग में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** काञ्चनार गुग्गुलु, कांचनार क्वाथ, चन्दनासव, उशीरासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कोविदार कषायस्तु संग्राही व्रणरोपणः।**
**गण्डमाला गुद भ्रंश शमनः कुष्ठ केशहाः।।** *(ध०नि०)*
**पुष्पाणि मधुराणि मधुरविपाकानि रक्तपित्त हराणि च।।** *(सु.सू.अ. 48)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अम्लिका, तिन्तिडी ; हिन्दी–ईमली।

लैटिन–Tamarindus indicus L.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इमली के वृक्ष ऊँचे एवं बहुशाकीय होते हैं। पर्ण–सपत्रक 10 से 20 युग्म, पत्रक अभिमुख क्रम में स्थित, रेखाकार, आयताकार कुष्ठिताग्र, अग्रभाग कुछ कटा सा, चिकने होते है। पुष्प–पीताभ वर्ण के लालधारियों से चित्रित गुच्छवद्ध क्रम में खिलते है। फली 3" से 8" तक लम्बी, लम्बगोल, चपटी तथा अस्फोटी होती है। बाहरी छिलका कड़ा खाकी रंग का, गूदा गाढ़े भूरे रंग का एवं बीज कठोर चपटे होते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–फल का गूदा, बीज, पत्र, सार।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के मैदानी उष्ण कटिबन्धीय भागों में गाँवों के आसपास एवं सड़कों के किनारे इसके वृक्ष लगाये हुए पाये जाते है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग गर्मी में इसको चटनी बनाने में प्रयोग करते है।

ईमली (Tamarindus indicus L.)



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अम्लीकायाः फलं त्वाममत्यम्लं लधुपित्तकृत्।**
**पक्वं तु मधुराम्लं स्यात्भेदिविष्ठम्भवातजित्।**
**चिञ्चापत्रं तु शोथध्नं रक्तदोष व्यथापहम्।**
**शुष्क त्वचाक्षारः शूल मन्दाग्निनाशनः।।** *(भा. प्र.)*

**कुल-बब्बूलादिवर्ग : MIMUSACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग के वृक्षों एवं पादपो के पत्र पिच्छसद्यश विभाजित होते है। द्विबीजपर्ण, विभक्तदल, पर्ण–सदल, पक्षाकार पुष्पविन्यास प्रायः कन्दुकाकार, पुष्प–सूक्ष्म, कलगी जैसी पुष्परचना के आभ्यन्तर भाग में अत्यन्त पास–पास में आये हुये होते है। इस वर्ग की फली–शिम्बीसद्यश एवं सन्धियों से टूटने वाली होती है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः ग्राही, कृमि, अतिसार एवं रक्तविकारों में उपयोगी है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बब्बूल, आभा ; हिन्दी–कीकर, बबूल ; स्थानिक–कीकर।
लैटिन–Acacia arabica Wild

**वानस्पतिक स्वरूप :** बबूल के मध्यम कद के वृक्ष पाये जाते है। काण्डत्वक् गाढ़े भूरे रंग की या कालिमा लिए हुए होती है। छाल में लम्बाई के रूख में लिए हुए दरारें होती है। शाखाऐं गोल सरल तथा झुकी हुई होती है। अनुपत्रों का काँटों में रूपान्तर होता है। पर्ण–द्विपक्षवत्, उपपक्ष या पक्षक युग्म में पलक 10 से 25 संख्या में रेखाकार एवं चिकने होते है। पुष्प–गोलाकार, मुण्ड़को में पीत वर्ण के होते है। फली–शिम्बी सद्यश चपटी, खाकी रंग की, बीज चपटे एवं संख्या में 8 से 12 तक होते है। तने से गोंद प्राप्त किया जाता है। गोंद लालिमा लिए हुऐ सफेद रंग का होता है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–छाल, गोंद, फल, फूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनों में तथा मैदानी भागों में सर्वत्र सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** बब्बूलारिष्ठ, लवंगादिवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : बब्बूलः कफनुद्रग्राही कुष्ठकृमिविषापहः।**
**बब्बूलस्य फलंरूक्षं, विशदं स्तम्भनं गुरू।**
**कषाय मधुरं शीतं, लेखनं कफपित्तहृत्।।** *(नि०र०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–खदिर, गायत्री ; हिन्दी–खैर, कत्था ; स्थानिक–खैर।
लैटिन–Acacia catechu Wild

**वानस्पतिक स्वरूप :** छोटे आकार का काँटेदार वृक्ष, काँटे–टेडे तथा अनुपर्ण के रूपान्तर, पत्रक–10 से 20 जोड़े में (कभी 26–35 जोडे) अवृन्त ओर पक्ष्मल (Ciliate), पुष्प–छोटे, श्वेताभ हल्के पीले तथा मृदुरोमिल लम्बी स्पाइक मञ्जरियों में, फली–जोड़ो पर संकुचित, चपटी, गाढ़े भूरे रंग की फली में 5 से 6 बीज होते है।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–नवम्बर, जनवरी ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, निर्यास।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड़ के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागो में 900 मी० की ऊँचाई तक टिहरी बनखण्ड, नरेन्द्र नगर, धरासू, देवप्रयाग, जौनसार, देहरादून बन क्षेत्र, कोटद्वार बन क्षेत्र, रामनगर, आदि स्थानो पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल का उपयोग क्वाथ विधि से तैयार कर कास एवं रक्तविकार में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** खदिरादिवटी, खदिरारिष्ठ, सुन्दरीकल्प, खदिरासव, खदिरधृत, दशमूलारिष्ठ, महामरिच्यादि तैल, पत्रंगासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : खदिरस्तु रसे तिक्तः शीतपित्त कफापहः।**
**पाचनः कुष्ठ कासास्त्र, शोथकण्डूव्रणापहः।।** *(रा. नि.)*
**खदिरः शीतलोदन्त्य कण्डु कासारूचिप्रणुत्।**
**तिक्तकषायो मेदोध्नः, कृमि मेहज्वर व्रणान्।।**
**श्वित्रशोथाम पित्तास्त्र पाण्डु कुष्ठकफानहरेत्।।** *(भा.प्र.)*
**रवदिर कुष्ठध्नानां श्रेष्ठम्।** *(चरक)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शिरीष (कृष्ण); हिन्दी–सिरस; स्थानिक–सिरस।

लैटिन–Albizzia lebbck Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शिरीष के पर्णपाती मध्यम आकार से लेकर विशाल–वृक्ष पाये जाते है। सवृन्त एवं दीर्घायत, पुष्प–पुष्पमुण्डक, पत्र कोणीय, सवृन्त, हरित, श्वेतवर्ण के, सुगन्धित, शिम्बी–चपटी 6-10 बीजों वाली।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–बीज, छाल, पुष्प, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागो एवं मैदानी भागों में सड़कों के किनारे लगाये हुए वृक्ष पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** शिरीषछाल क्वाथ का उपयोग श्वास रोग में करते हैं। सर्पदशं में गारूड़ी छाल एवं शिरीष बीज का उपयोग करते हैं।

*शिरीष (कृष्ण) (Albizzia lebbck Benth)*

**शास्त्रीय योग :** शिरीषासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तिक्तोष्णों विषहा बर्ण्य स्त्रिदोषशमनोलधुः।**
**शिरीषःकुष्ठ कण्डूघ्नः त्वगदोषश्वासकासहाः।** *(ध.नि.)*
**शिरीषोविषघ्नानां श्रेष्ठम्।** *(चरक)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–किणिही ; स्थानिक–सफेद सिरिस।

लैटिन–Albizzia procera (Roxb) Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष बड़ा, काण्ड मसृण, हरिताभ श्वेतरंग का, पत्रक 10-15 जोड़ों में, अरोमिल, पुष्प–पीले सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–छाल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा के उष्णकटिबन्धीय वनों में 900 मी० की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी बन खण्ड, नरेन्द्र नगर, धरासु, उत्तरकाशी, जौनसार, टौन्स धाटी, कोटद्वार, रामनगर, टनकपुर आदि क्षेत्रों में सर्वत्र सुलभ हैं। इसकी अन्य जातियाँ भी इन धाटियों में पायी जाती है। जिनमें कालाशिरीष Albizzia odorotissima Benth मुख्य है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–लज्जालू ; हिन्दी–छुई–मुई।

लैटिन–Mimosa pudica Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह बहुवर्षी, विसर्पी, क्षुप, काण्ड–रोमिल रूक्ष, पत्र–संयुक्त, लम्बे, वृन्त वाले, त्रिपत्रक, संख्या में 4 हस्ताकार, पत्रक–रेखाकार एवं ½" लम्बे पुष्प–पुष्पदण्ड के अग्रभाग पर, गुलाबी रंग के, शिम्बी छोटी संधियों पर एवं सूक्ष्म।

पुष्पकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा के उष्ण भागों में कहीं–कहीं 900 मी० की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, देहरादून, कालसी, रामनगर आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है। यह वर्षा कालीन एक वर्षायु पौधा हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : लज्जालुः शीतला तिक्ता, कषाया कफपित्त जित्।**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**रक्तपित्त भतीसारं, योनिरोगान् विनाशयेत्।** *(भा.प्र.)*
**रक्तपादी कटुःशीता पीत्तातीसार नाशिनी।**
**शोफ दाह श्रम श्वास, ब्रणकुष्ठ कफास्त्रनुत्।।** *(रा.नि.)*

**कुल-पद्मकादिवर्ग ROSACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में क्षुप, गुल्म एवं वृक्ष पाये जाते है। वनस्पति शास्त्र के आधार पर कई किस्मों की वनस्पतियां इस वर्ग में मिलती है। पर्ण विभिन्न प्रकार के सादे।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत,–पद्मक, पद्मकाष्ठ; हिन्दी–पद्माख ; स्थानिक–पइयाँ।
लैटिन–Prunus cerasoides D. Don.

*पद्मकाष्ठ (Prunus cerosoides D. Don)*

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष पाये जाते है छाल हल्का भूरापन लिए हुऐ, चिकनी, पतली, चमकीली पपड़ियों वाली होती है। काण्ड़ गोलाकार रक्ताभ एवं कुछ गंधयुक्त होता है। पर्ण भालाकार लट्वाकार, लम्बे नोक वाले, मसृण, पत्रधार कुछ दन्तुर एवं सवृन्त होते है। पुष्प–श्वेत–गुलाबी अनेक रंग के पत्रकोणोद्भूत एवं गुच्छों में खिलते है। पुष्पों से कमल जैसी हल्की सी गन्ध आती है। फल–अष्ठिफल, अण्ड़ाकार पीला या लाल दोनों सिरों पर कुण्ठित होता है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ;
फलकाल–मई, जून ;
प्रयोज्यअंग–छाल, काष्ठसार, बीजमज्जा।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के समशीतोष्ण स्थानो में 1,200 मी० से 2,400 मी० की ऊँचाई तक प्रायः गावों के नजदीक टिहरी वनखण्ड, चम्बा, काणांताल नैनीताल आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसके काष्ठ का उपयोग ग्रह बाधा को दूर करने के लिए करते है।

**शास्त्रीय योग :** पद्मकादि चूर्ण, पद्मकादि तैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : ईषत्पद्भसुगन्धि स्यात्, पद्मकं रक्त वल्कलम्।**
**पद्मकाष्ठ नवं ग्राह्यं, रक्तपित्तं च वर्णतः।।** *(शिवदत्तः)*
**पद्मकं शीतल स्निग्धं कषायं रक्त पित्तनुत् ।**
**गर्भ स्थैर्यकर प्रोक्तं, ज्वरछर्दि विषापहम्।।**
**मोहदाह ज्वर भ्रान्ति, कुष्ठविस्फोट शान्तिकृत्।।** *(ध.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तरूणी, रामतरूणी ; हिन्दी–गुलाब।
लैटिन–(अ) Rosa centifolia Linn. (ब) Rosa damascena Mill.

**वानस्पतिक स्वरूप :** गुलाब के कंटीले झाड़ीदार गुल्म होते है इसके कांटेदार आरोही क्षुप भी पाये जाते है। काँटे मजबूत और टेढ़े होते है। पुष्पों में पाँच दलपत्र जो श्वेत, हल्के गुलाबी रंग के पीताभ श्वेत एवं गुलाबी रंग के होते है। पुष्पों से गुलाब जल एवं गुलकन्द बनाया जाता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–अप्रैल, मई, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पुष्प, (अर्क), सुगन्धतैल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में शिवालिक, देहरादून, काशीपुर, हल्द्वानी, रामनगर आदि स्थानों पर इसकी खेती की जाती है। गुलाब का अर्क, सुगन्ध तेल के लिये व्यापारिक रूप से खेती की जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग गुलाब का गुलकन्द एवं गुलाबजल का धरेलू चिकित्सा में उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत, कुब्जक ; स्थानिक–कूजा, कूजो।

लैटिन–Rosa moschata Herrm.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुशाखीय झाड़ीदार कण्टकित आरोही गुल्म, पत्र 2" से 6" लम्बे, सवृन्त, पत्रक–लट्वाकार भालाकार, तट–दन्तुर एवं मृदुरोमिल, पुष्प सफेद रंग, सुगन्धित, फल–रोमिल, कठोर, लालरंग का।

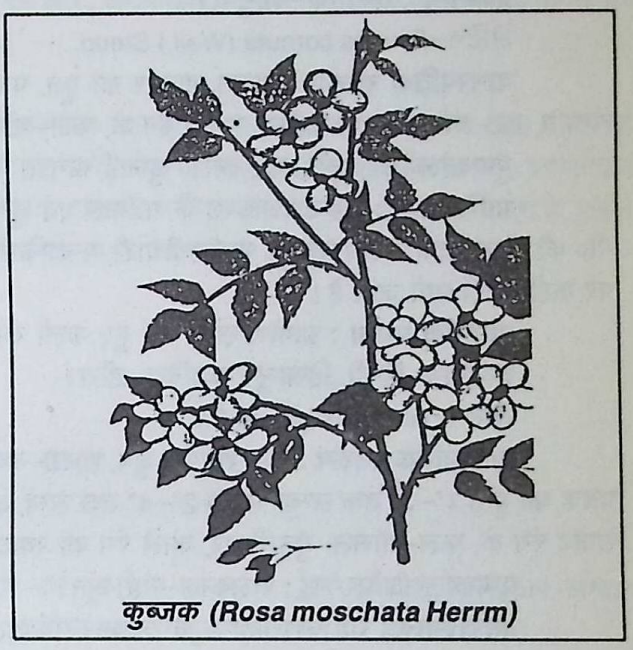

*कुब्जक (Rosa moschata Herrm)*

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर तक कतिपय निम्न वन्य किस्में गुलाब की पाई जाती हैं। यथा–

1. Rosa sericea Lindil.
2. Rosa macrophylla Lindil.
3. Roasa anserinaefolia Boiss.

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फूलों का उपयोग गुलकन्द बनाने के लिए करते हैं। इन प्रजातियों के पुष्पों से ईत्र तैयार किया जा सकता हैं। अतः इन किस्मों को उत्तराखण्ड हिमालय में बढ़ावा देना चाहिये। हिमालय की ऊँचाई वाली घाटियों (एलपाईन जोन) में मिलने वाली किस्मों में विशेष सुगन्ध होती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–एलवालुक ; हिन्दी–खुमानीभेद ; स्थानिक–चूलू।

लैटिन–Prunus cerasus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, छाल धूसर वर्ण की, पत्र– 2-3" लम्बे, लट्वाकार, वृताकार, अरोमिल, पुष्प–गुलाबी सफेद रंग के, फल, गोल, मांसल पीले रंग, मधुर, गुठलीदार।

पुष्पकाल–जनवरी, मार्च ; फलकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, गिरी।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल, कुमाऊं के पर्वतीय आंचलों में टिहरी, घोन्टी, धनशाली, उत्तरकाशी, चम्बा, पौड़ी, अल्मोड़ा, रानीखेत, ताड़ीखेत आदि प्रायः सभी जनपदों में 2,400 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र गांवों के आसपास इस वृक्ष रोपित पाये जाते हैं मीठी गिरी को खुमानी कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फल खाये जाते हैं। गिरी का तेल धरेलू उपचार में काम आता हैं। काष्ठसार क्वाथ मधुमेह में उपयोगी है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आरुक ; स्थानिक–आडु।

लैटिन–Prunus persica. Batsch.

**वानस्पतिक स्वरुप :** छोटा वृक्ष, पत्र– 3– 5" लम्बे लगभग 1 इंच चौड़े दीर्घायत–भालाकार, तट–क्रकची, फल–मांसल, लम्बा और बीज कठोर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,600 मी० की ऊँचाई पर भिलंगनाघाटी,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, चम्बा, काणाताल, नैनीताल, रानीखेत, लैन्सीडाउन आदि स्थानों में सुलभ हैं। इन धाटियों में ग्रामीण लोग इन वृक्षों की खेती करते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फल खाये जाते हैं।

**टिप्पणी :** इस वर्ग के सेब Pyrus malus नाशपाती Pyrus communis Linn. और लोकाट Eriobotrya japonica Lindl. के फलदार–वृक्ष भी इस क्षेत्र में ग्रामीण लोग बागों में लगाते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–जामुनी।

लैटिन–Prunus cornuta (Wall.) Steud.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, पत्र 4" से 6" लम्बे, 1" से 2.5" चौड़ें दीर्घायत, दीर्घवृत्तीय, लम्बाग्र, तट–क्रकची, पुष्प कक्षीय, सफेद रंग के, फल–माँसल, गुठलीदार, काले रंग का।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ जनपदों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मी० की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, पिण्डारीघाटी, कालीघाटी आदि स्थानों पर कहीं–कहीं पाये जाते है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके हुए फलों को खाते है। छाल का उपयोग अतिसार में करते है।

**द्रव्यनाम**–हिन्दी, हिंसालु ; स्थानिक–हींस।

लैटिन–Rubus ellipticus Sm.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा शाखीय क्षुप, शाखा–रक्ताभ, शोमिल, पत्र–पिच्छाकार, त्रिपर्णक, कभी–कभी एक, पत्रक का बृन्त 1"–3" तक लम्बा, पत्रक 2"–4" तक लम्बे, अधोमुख, अण्डाकार, दीर्घवृतीय, तट–क्रकची, पुष्प कक्षीय, सफेद रंग के, फल–माँसल, गुठलीदार, काले रंग का स्वाद में मधुर।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–मई, जून।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक सभी धाटियों में उपलब्ध है। इसकी अन्य जातियाँ इन घाटियों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक पायी जाती है। इसकी अन्य किस्में भी हिमालय में पाई जाती हैं । जिसमें Rubus nutans Wall एवं Rubus paniculatus Smith हैं।

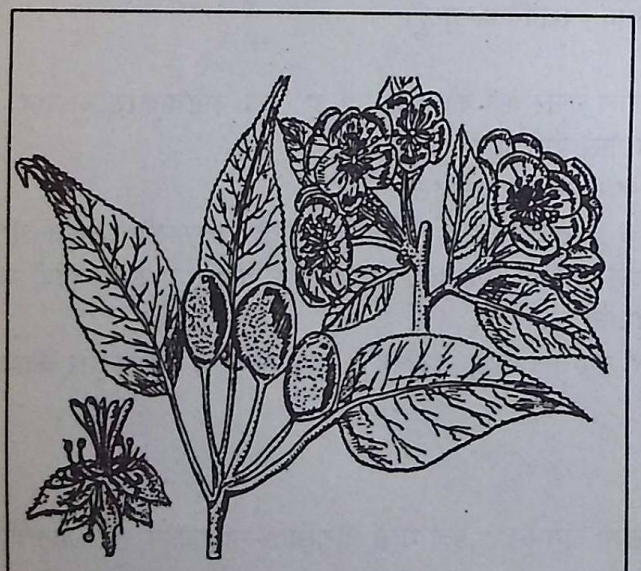

*मेहल (Pyrus pashia Buch Ham)*

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मेहल।

लैटिन–Pyrus pashia. Buch-Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का, पर्णपाती वृक्ष, पुराना काण्ड प्रायः काले रंग का, पत्र साधारण, 2–4" लम्बे, लट्वाकार–भालाकार, लम्बाग्र एवं सवृन्त, क्रकची, पुष्प–सफेद रंग के, फल–गोल, धूसर वर्ण के पकने पर फल मधुर।

पुष्पकाल–जनवरी, मार्च ; फलकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में विशेष ऊँचाई वाले स्थानों पर मिलती है जिसे पोथी Pyrus lanata Don. कहते है।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अल्मोड़ा जनपदों में उष्ण कटिबन्धीय वनों में 1,500 मी० की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में मिलता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फल स्वरस का उपयोग मवेशियों की आँखों पर चोट लगने पर करते हैं।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–वज्रदन्ती।

लैटिन–Potentilla fulgens Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, शाक, काण्ड उर्ध्वसंस्थित, 6" से 18" लम्बा रोमिल, पत्र–पिच्छाकार, संयुक्त कभी–कभी सम्मुख, पत्रक जोड़ो में एकान्तर क्रम से बड़े एवं छोटे, लट्वाकार, रोमिल, रोम–मृदु, तूलसद्यश, पुष्प–पीले या नारंगी पीले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के समशीतोष्ण भागों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, कांणाताल, मसूरी, चकराता, पिण्डारीघाटी, कालीघाटी, रानीखेत, वागेश्वर, भवाली आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है इसकी पीले, लाल, नीले पुष्पों की कई जातियाँ इन घाटियों में पाई जाती है। यथा :

1. Potentilla atrosanguinea Lodd.
2. Potentilla nepalensis Hook. F.
3. Potentilla albifolia Wall.
4. Potentilla ambigua Comb.
5. Potentilla kleiniana Wight & Arn.

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–भेकल।

लैटिन–Prinsepia utilis Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** गहरा–हरा, कांटेदार क्षुप, पर्ण एकान्तर, साधारण 1.5 से 5" चौड़े, भालाकार, लम्बाग्र, अच्छिन्न एवं तीक्ष्ण क्रकची, सवृन्त, पुष्प–सफेद रंग के, कक्षीय, फल–मसृण एवं पकने पर काले रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–जून, जुलाई; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,200 मी० की ऊँचाई से लेकर 2,100 मी० की ऊँचाई तक प्रायः–भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, अलकन्दाघाटी, कांणाताल, चम्बा, मसूरी, चकराता, बड़कोट, नैनीताल, रानीखेत आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** इसके तेल का प्रयोग ग्रामीण लोग खाने में करते हैं। कुछ स्थानों पर तेल की मालिस आमवात एवं संधिशोथ में उपयोगी मानते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–स्ट्राबेरी।

लैटिन–Fragaria vesca Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षीय शाक, पत्र–सवृन्त जोड़ों में, पत्रक ½" तक लम्बे, रोमिल, दन्तुर, मखमलीरंग के, पुष्प श्वेत वर्ण के फल पकने पर लाल एवं गुलाबी रंग के रसदार स्वाद में मधुर इसके अतिरिक्त अन्य किस्में Fragaria nubicola Lindl आदि है

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–फल, पंचाग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,800 मीटर की ऊँचाई तक घास वाले ढलानों, बुग्यालों (मेडोज) में इसकी कतिपय किस्में भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, भागीरथीघाटी, फूलों की घाटी, पिंडारीघाटी, रूद्रनाथ आदि स्थानों पर सर्वत्र सुलभ है । नैनीताल एवं अल्मोड़ा जनपद में इसकी नस्ल में सुधार कर खेती की जा रही है।

**स्थानिक प्रयोग :** रसदार फलों में इसका उपयोग किया जाता है । पञ्चांग का चिकित्सा में उपयोग किया जाता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–रींस, लेन्सी।

लैटिन–Cotoneaster bacillaris Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, अनियमित आकार के झाड़ीदार गुल्म, पत्र–अण्डाकार, दीर्घायत, झिल्लीमय, सवृन्त पुष्प–सफेद रंग के, फल–अनेक बीजों वाले एवं लाल रंग के।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं कुमाऊं जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक इसकी अन्य किस्में भी पाई जाती हैं। जो निम्न हैं :

1. Cotoneaster auminatus Lindl.
2. Cotoneaster microphyllus Wall.

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–घिगांरू।

लैटिन–Crataegus crenulata Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित कण्टकित गुल्म, पत्र–एकान्तर साधारण, सूच्याकार, दीर्घायत, अधोमुख, अरोमिल पर्णपाती, पुष्प–कक्षीय, श्वेत वर्ण के, फल–मांसल पकने में लालवर्ण के गुच्छों में।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी जनपदों में इसके गुल्म 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,800 मीटर की ऊँचाई तक सड़कों के आस–पास सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके फलों को खाते है। काष्ठ का उपयोग लघु उद्योग में करते हैं।

**टिप्पणी :** इसके अतिरिक्त इस कुल की अन्य औषधोपयोगी किस्में (स्पीसीज) हिमालय में पाई जाती है जिनमें कुछ निम्न हैं।

1. Agrimonia eupatorium Linn.
2. Geum urbanum Linn.
3. Sibbaldia parviflora Willd.
4. Sorbus aucuparia Linn.
5. Spiraea canescens D. Don.
6. Oxytropis thomsonii Benth.
7. Parochetus communis Buch-Ham.

उपरोक्त सभी प्रजातियाँ 2,400 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक एलपाईनजोन में सभी घाटियों में उपलब्ध है।

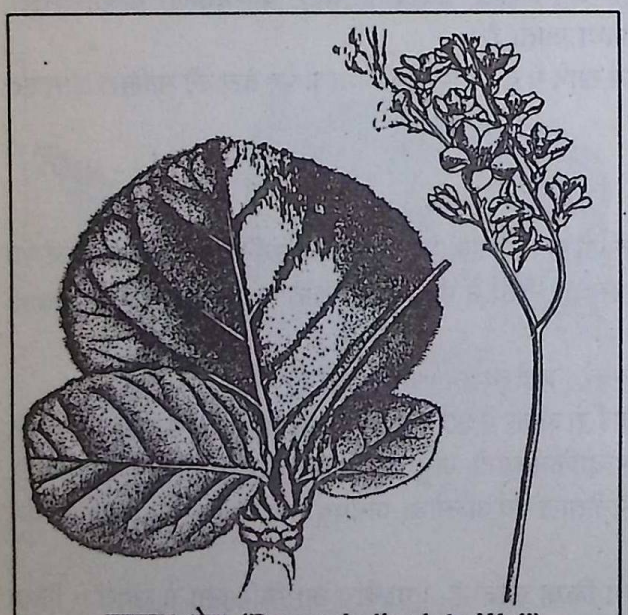

*पाषाण भेद (Bergenia ligulata Wall)*

## कुल-पाषाणभेद SAXIFRAGACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक, गुल्म एवं शाकीय पादप पाये जाते है। पर्ण–एकान्तर, कभी–कभी संलग्न उपपत्र भी पत्र वृक्ष के साथ होते है। पुष्प–सुन्दर, अनेक रंग के, फल–शिम्बी या आवृतकोष में होते है। इस वर्ग में पाषाण भेद जैसे उपयोगी द्रव्य पाये जाते है।

**द्रवयनाम :** संस्कृत–पाषाण भेद, शिलाभेद . हिन्दी–पाषाण भेद ; स्थानिक–सिलपाड़ों।

लैटिन–Bergenia ligulata Wall.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके बहुवर्षायु भौमिक काण्ड वाले कोमल क्षुप होते हैं। चट्ठानों के बीच की दरारों से इसका काण्ड़ बाहर निकलता है। इसी कारण इसे पाषाणभेद कहते है। मूलकाण्ड बाहर से रक्ताभवर्ण का एवं तोड़ने पर सफेद रंग का स्वाद में कषैला एवं मोटा होता है। इसमें बारीक उपमूल भी होते है। पर्ण–लट्वाकर या कुछ गोल, 2" से 6" तक लम्बे, माँसल, चिकने, किनारे मृदुरोमश एवं सूक्ष्म, सधन, दन्तुर तथा सवृन्त होते है। पत्र मूल से ही निकलते है जो संख्या में 3 से 4 तक होते है। पुष्प–गुलाबी–सफेद रंग के अनेक गुच्छों में सवृन्त होते है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूलकाण्ड़।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के समशीतोष्ण प्रदेशों में 1,800 मी० की ऊँचाई से लेकर 2,800 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, चकराता, देवबन, पिंडारीघाटी, रानीखेत, वागेश्वर दारमाघाटी, मुक्तेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त निम्न दो जातियाँ भी इन घाटियों में सुलभ हैं। जिनका कि औषधोपयोग होता हैं।

1. Bergenia ciliata Royle पत्र–रोमिल।

2. Bergenia stryacheyi H.K. पत्र पृष्ठ तथा तट अरोमिल एवं बर्फीले ढ़ालों में समूहो में 3,600 मी० की ऊँचाई पर पाया जाता हैं।

**शास्त्रीय योग :** पाषाण भेदादिचूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पाषाणभेदकः शूलकृच्छ्र मेह त्रिदोषजित्।**
**हृद्रोग प्लीहः गुल्मार्शः वस्तिशुद्धिकर परः।।**
**अश्मभेदो हिमस्तितः कषायो वस्तिशोधनः।**
**योनिरोगान् प्रमेहांश्च प्लीहशूल ब्रणानि च।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–असकुटा।

लैटिन–Ribes nigrum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप, काण्डशाखीय, 6 से 10 फुट तक लम्बा, पत्र–हृदयाकार, 3–5 खण्डों में, विभक्त, क्रकची एवं झिल्लीमय तथा रोमिल, पुष्प–हरे, गुलाबी रंग के, फल–माँसल, रसदार पीले रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–फल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 2,700 मी. की. ऊँचाई से लेकर 3,600 मी. की ऊँचाई तक, जमुनाघाटी, हरकीदून, टौन्सघाटी, भागीरथीघाटी, पिंडारीघाटी, दारमाघाटी आदि स्थानों पर कहीं–कहीं मिलता है। इसकी दूसरी औषधोपयोगी जाति भी इन घाटियों में पाई जाती हैं। जिसे Ribes rubrum Linn. कहते है। ग्रामीण लोग इसके पत्तों का प्रयोग मूत्रल रूप में करते हैं। इस वर्ग की निम्न औषध उपयोगी वनस्पतियाँ भी इस क्षेत्र में पायी जाती हैं।

| | |
|---|---|
| 1. Deutzia staminea R. Br. | 2,400 मीटर ऊँचाई पर |
| 2. Saxifraga brunoniana Wall | 3,300 मीटर ऊँचाई पर |
| 3. S. diversifolia Wall. | 3,400 मीटर ऊँचाई पर |
| 4. S. odontophylla H.K. f. & Th. | 3,250 मीटर ऊँचाई पर |
| 5. Parnassia nubicola Wall ex Royle. | 3,000 से 3,500 मीटर ऊँचाई पर |
| 6. Philaclelphous tomentosus Wall ex Royle. | 2,700 मीटर ऊँचाई पर |
| 7. Ribes alpestre Wall ex Decne. | 3,500 से 3,900 मीटर ऊँचाई पर |

## कुल-क्रेसुलेसी CRASSULACEAE.

**वर्गलक्षण :** इस कुल में शाकीय वनस्पति एवं काष्ठीय गुल्म भी पाये जाते हैं। पर्ण–माँसल, अखण्डित कभी पालियुक्त, एकान्तर या अभिमुख पाये जाते हैं। पुष्प–द्विबीजपर्ण, नियमित, विभक्तदल, पुष्पबाह्यकोष के दल 4-8 पंखड़ियों



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

में होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पर्णबीज ; हिन्दी–पथरचूर ; यूनानी–जखमेहयात ; स्थानिक–विषखपरो।

लैटिन–Kalanchoe spathulata DC or kpinnata Pers.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह माँसल बहुवर्षायु क्षुप है। काण्ड–चिकना 1 से 4 फुट तक ऊँचा, पोला, पर्ण–साधारण, माँसल, संयुक्त, अभिमुख, अण्डाकार दन्तुर होते हैं। पुष्प–2" लम्बे, नलिकाकार रक्ताभ–हरितवर्ण के नीचे को झुके हुऐ गुच्छों में खिलते हैं। फल–कागज जैसे पतले, पुष्पदलों से आवृत, बीज–छोटे, अण्ड़ाकार, चिकने, अनुलम्ब रेखाओं से युक्त होते है। पत्तियों को लगाने पर ही नया पौधा निकल आता है। यह इसकी विशेषता हैं।

पुष्पकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** मूलतः यह पौधा अफ्रिका का आदिवासी हैं। उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण प्रदेशों में 900 मी. की ऊँचाई तक नरेन्द्रनगर, उत्तरकाशी, धरासू, रामनगर, नैनीताल आदि स्थानों में स्वयंजात तथा उद्यानों एवं वाटिकाओं में लगाया हुआ मिलता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्तों का उपयोग व्रणरोपणार्थ करते हैं।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक, मिरधा।

लैटिन–Sedum multicaule Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** अरोमिल शाक, काण्ड–उर्ध्वसंथित, 4"–8" लम्बा, पत्र–मूलज, अवृन्त, पुष्प–पीले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पंचांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के समशीतोष्ण प्रदेश में 2,100 मीटर की ऊँचाई से 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी, काणाताल, मसूरी, नैनीताल, पिंडारघाटी, रानीखेत, दारमाघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इस वर्ग की कई ओर औषधोपयोगी जातियाँ उत्तराखण्ड के जनपदों में पायी जाती है। जो निम्न हैं :

| | |
|---|---|
| 1. Sedum ewersii Ledeb. | 3000-3600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Sedum crassipes Wall. | 3300 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Sedum heterodontum Hk. F.&Th. | 3300 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. Sedum linearifolium Royle. | 3350 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. Sedum trifidum Wall. | 2340-2550 मीटर की ऊँचाई पर |
| 6. Tillaea pentandra Royle ex Edgew. | 3,900 मीटर की उँचाई पर |

**कुल-ड्रासेरेसी DROSERACEAE**

**द्रव्यनाम**–स्थानिक–मुखजली।

लैटिन–Drosera lunata Buch Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी, उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड–मुदु, 8-10" तक लम्बा, पत्र–एकान्तर, अर्ध–चन्द्रकार, सवृन्त, पुष्प–अग्रस्थित, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक घास वाले ढ़ालों पर भिलंगनाघाटी, पौवागी, गड़ी, भागीरथीघाटी, चकराता, पिंडारीघाटी, दारमाघाटी, मुक्तेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल-लवङ्गादिवर्ग MYRTACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं क्षुप भी पाये जाते हैं। इनके पर्ण प्रायः अभिमुख क्वचित् एकान्तर, सादे अखण्डित किनारे वाले एवं पत्र सवृन्त होते हैं। पर्ण–सुगन्धित तैल बिन्दू वाले इस वर्ग के द्रव्य सुगन्धित, पाचन, स्वेदजनन, पौष्ठिक एवं तेल जन्तुघ्न होता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जम्बू; स्थानिक–जामुन, कालाजामुन।

लैटिन–Syzygium cumini (Linn) Skeels.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित वृक्ष, पत्र 3-6" लम्बे, अनियमित आकार में अण्डाकार–दीर्घायत अथवा दीर्घायत–भालाकार, लम्बाग्र, मसृण, पुष्प–हरितवर्ण के फल–माँसल, पकने पर रक्ताभ कृष्ण वर्ण-के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ;

फलकाल–मई, जून;

प्रयोज्यअंग–छाल, बीज, फल, मज्जा।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्णकबिन्धीय वनों में 1,200 मी की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, हल्द्वानी, टनकपुर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। इसकी एक दूसरी जाति भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। जिसे Syzygium operculatam Gamble नदी जम्बू या क्षुद्र जम्बू (स्थानिक–जमोया) कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फल खाये जाते हैं। जामुनगुठली का उपयोग मधुमेह में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** मधुमेहारियोग, उशीरासव, पुष्यानुकचूर्ण, चन्दनादिचूर्ण।

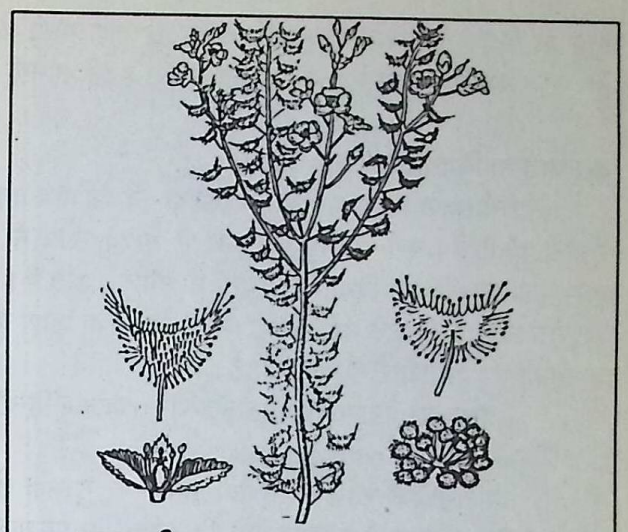

*मुखजली (Drosera landata Buch Ham)*

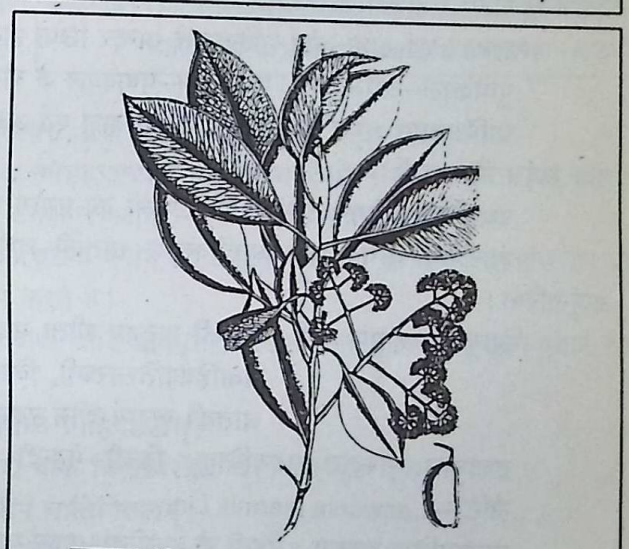

*जामुन (Syzygium cumini (Linn) Skeels)*

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : जाम्बवं कफ पित्तध्नं ग्राहिवातकरं परम्।।** *(चरक)*

**अत्यर्थ वातलं ग्राही, जाम्बवं, कफपित्तजित्।** *(सु.सू.अ. 46)*

**जाम्बवं वातलं ग्राहि, जाम्बवं कफपित्तजित्।** *(ध.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तैलपर्णी नीलगिरी ; हिन्दी–नीलगिरी, सफेदा।

लैटिन–Eucalyptus globulus Labier.

**वानस्पतिक स्वरूप :** युकेलिप्टस के ऊँचे–ऊँचे वृक्ष होते है। काण्ड स्कन्ध लम्बा, मसृण एवं सीधा होता है। पर्ण–रूपरेखा में हाँसिया सद्यश, सवृन्त, नीलाभ हरित वर्ण के मसलने पर पत्र सुगन्धित, तैल ग्रन्थी वाले होते हैं। इसी कारण इसे तेलपर्णी कहते है। पुष्प–गुच्छों में श्वेताभ वर्ण के पत्रकोणोंद्भूत होते है। फल–गुच्छों में कोषयुक्त एवं अनेक बारीक बीज वाले होते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–जनवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पत्र, नीलगिरी तेल।

**प्राप्तिस्थान :** यह आस्ट्रेलिया का आदिवासी वृक्ष हैं। उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में उष्ण



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भागों या मैदानी इलाकों में सड़कों के किनारे तथा बागों के रूप में इसके वृक्ष रोपित किये हुए मिलते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पत्तियों का प्रयोग हवन सामग्री एवं धूपन के लिए किया जाता है।

**कुल-धातक्यादिवर्ग LYTHRACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं शाकीय वनस्पतियाँ पायी जाती है। इनकी शाखायें कोमल एवं प्रायः चौधारी होती है। पर्ण–अभिमुख गुच्छों में या चक्ररूप में, पुष्प–एकाकी या विभाजित रचना में संगठित होते है। पुष्प–बाह्यकोष अथवा विभाजित रचना में संगठित होते हैं। पुंकेशर प्रायः 4 से 8, दत्तक पंखुडिया नीचे को आयी हुई, तन्तुसूत्र लम्बाई में छोटे बड़े होते है। बीज–गोल या कोण युक्त धारयुक्त एवं पक्षयुक्त होते है। इस वर्ग के द्रव्य ग्राही, प्रवाहिका एवं अतिसार में उपयोगी हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–धातकी, अग्निज्वाला। हिन्दी–धाय, धातकी ; स्थानिक–धौलु।

लैटिन–Woodfordia fruticosa Kurz.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके झाड़ीनुमा गुल्मक होते है। शाखाऐं लम्बी फैली हुई होती है। पर्ण–अभिमुख कभी–कभी 2-3 के चक्रों में स्थित होते हैं। रूपरेखा में यह भालाकार, या लट्वाकार–भालाकार आधार गोल या हृदयाकार पत्राग्र नुकीला एवं सरलधार वाले होते है। पुष्प–चमकीले लाल रंग के, पत्रकोणोद्भूत गुच्छों में निकलते है। फल–अण्डाकार एवं बाह्य कोष नलिका के अन्दर छिपा होता है ।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पुष्प, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र मिलता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फूलों का प्रयोग वालातिसार में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** धातक्यादिक्वाथ, धातकी चूर्ण, पुष्यानुकचूर्ण, दशमूलारिष्ठ अश्वगन्धारिष्ठ, द्राक्षासव, अर्जुनारिष्ठ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : धातकी कटुका शीता मदकृतुवरालधुः।**
**प्रवाहिकातिसारध्नी, विसर्पव्रणनाशिनी।।** *(रा.नि.)*
**धातकी कुसुमं शीतं रक्तपित्तातिसाराजित्।।** *(रांजवल्लभ)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मदयन्तिका ; हिन्दी–मेंहन्दी

लैटिन–Laswonia inermis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मेंहदी के झाड़ीदार गुल्म पाये जाते है। शाखायें कण्टमय होती है। पर्ण–अभिमुख क्रम में लम्बे, सनायपत्र सदृश, आधार एवं अग्र की ओर कम चौडी कुंठिताग्र एवं सरलधार वाले होते हैं। पुष्प–हरिताभश्वेत, गुच्छों में सुगन्धित, शाखाग्र खिलते है। फल–गोल, कई बीजों वाले होते है।

पुष्पकाल–जून से सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** इसके गुल्म उद्यानों में बाड़ हेतु लगाये हुऐ सर्वत्र सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण स्त्रियाँ माँगलिक अवसरों पर इसकी पत्तियों को पीस कर हाथ और पाँव में लाल रंग से रंगने में उपयोग करती हैं। तथा बालों को रंगने में भी प्रयुक्त करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : रक्तरंगा दाहहन्त्री वान्तिकृत् श्लेष्मकुष्ठहा।**
**बीज मस्याः ग्राहकन्तु शोथध्नं च प्रकीर्तितम्।।**
**भूतग्रहाणां दोषं तु ज्वरं चैव विनाशयेत्।।** *(नि.र.)*

**कुल-दाडिमादिवर्ग PUNICACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में एवं प्रसर किस्म की लता एवं शाकीय वनस्पतियाँ पाई जाती है। पर्ण–प्रायः अभिमुख



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

एवं सगुच्छक, पुष्प–एकाकी, सगुच्छक्रम, में पुष्प बाह्यकोष के दल रंगीन, नलिकाकार, गर्भाशय के साथ संलग्न, पराग कोष दो कोष वाले, गर्भाशय के अधोभाग में स्थित तथा अनेक कोष्ठवाले, फल–रसाल अनेक बीजों वाले इस वर्ग के द्रव्य ग्राही, दीपन एवं हृद्य होते हैं।

**द्रव्यनाम**–संस्कृत, दाड़िम ; हिन्दी–अनार ; स्थानिक–दाड़िमू ।

लैटिन–Punica granatum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** दाड़िम के पर्णपाती गुल्मनुमा वृक्ष होते है। पर्ण–अभिमुख, विपरीतक्रम से आयताकार, दीर्धवत्, अभिलट्वाकार या अभिप्रासवत्, कुण्ठिताग्र, मसृण पत्रतट–अखण्डित, पुष्प–एकल, रक्तवर्ण के अवृन्त। फल–गोलाकार, फलाभ्यन्तर–झिल्लीदार पर्दो द्वारा अनेक कोष्ठ में विभक्त, बीज पकने पर गुलाबी लाल रंग के दन्ताकार होते है। अनार रस भेद से अम्ल एवं मधुर दो किस्म का होता है। मीठे अनार को वीदाना कहते है एवं खट्टे अनार को अनारदाना कहते है।

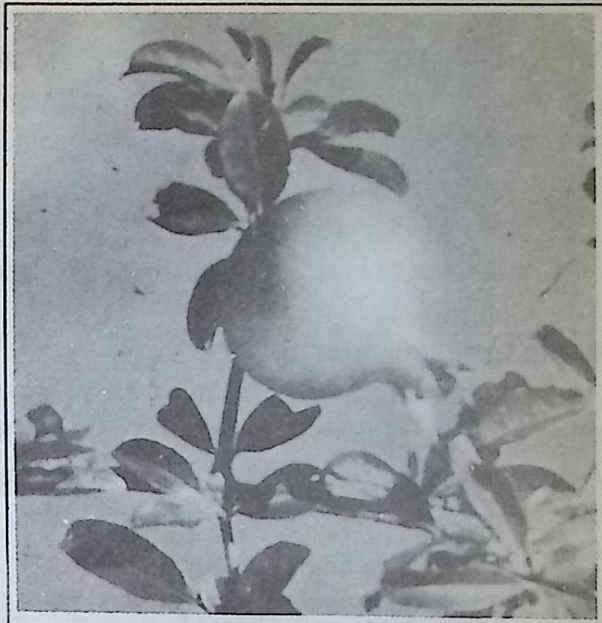

*दाड़िम (Punica granatum Linn)*

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–छाल, पुष्प, बीज, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों की उष्णधाटियों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक कहीं–कही टिहरी वनखण्ड, रामनगर, पिथौरागढ़, टनकपुर आदि स्थानों पर मिलता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसके बीजों को चटनी बनाने हेतु प्रयोग करते हैं ग्रामीण वैद्य अतिसार एवं प्रवाहिका में अनारपुष्प एवं फल छिलका चूर्ण का प्रयोग करते है।

**शास्त्रीय योग :** दाडिमाष्ठक चूर्ण, दाडिमादिक्वाथ, दाड़िमादिधृत, दाडिमावलेह, कासवटी, कृमिकुठार रस, मरिच्यादिवटी, विल्वादितैल, सोमराजी तेल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अम्लं कषाय मधुरं वातध्नं ग्राहिदीपनम्।**
**स्निग्धोष्णां दाडिमं हृद्यं कफ पित्ताविरोधि च।।** *(च.सू.अ. 29)*
**कषायानुरसं तेषां दाडिमं नातिपित्तलम्।**
**दीपनीय रूचिकरं हृद्यं वर्चोविट्बन्धनम्।।**
**त्रिदोषध्नं च मधुरम्लं वातकफापहम्।।** *(सु.स.अ. 36)*

## कुल-श्रृंड्गाटकादिवर्ग ONAGRACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्रायः शाकीय वनस्पतियाँ पाई जाती है। वृक्ष बहुत कम देखने को मिलते है। शाकीय पौधे विशेषरूप से जलीय पाये जाते हैं। पर्ण–सादे, अभिमुख या एकान्तर क्रम में। पुष्प–पत्रकोण से निकलते है। गर्भाशय अधः स्थायी होती है। विशेष रूप से इस वर्ग के द्रव्य शुक्रल एवं रूचिकर होते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मीलू।

लैटिन–Epilobium hirsutum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप, काण्ड–तूलरोमिल, उर्ध्वसंस्थित, 1–3 फुट लम्बा पत्र–भालाकार, दन्तुर, पुष्प–लाल, गुलाबी रंग के।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान** : यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई पर कहीं–कहीं, भिलंगनाधाटी, जमुनाधाटी रानीखेत, वागेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता है। ग्रामीण लोग इसे विषैला मानते है। उत्तराखण्ड में इस कुल की औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी लेखक ने अपने सर्वेक्षण के समय देखी है।

1. Epilobium palustre Linn. — 2000-3000 मि. ऊँचाई पर
2. Epilobium roseum Sch. — 2750-3300 मि. ऊँचाई पर
3. Circaea imaicola (Asch. et Magh) Hand Maz. — 2700-3300 मि. ऊँचाई पर

**कुल-सप्तचक्रादिवर्ग SAMYDACEAE**

**वर्गलक्षण** : इस वर्ग की वनस्पतियाँ वृक्ष एवं गुल्म आकार के पर्णपाती होते है पर्ण–क्रमानुसार, एकान्तर जामुन के पत्र सद्यश होते है। पुष्प–नियमित छोटे, द्विबीजपर्ण, विभक्त दल में फल–एक गुठली वाला, कठोर, 2 से 5 तक रेखाकार या धारीदार होता है। इस वर्ग के द्रब्य प्रायः मृदुरेचक, कासहर, प्रमेहनाशक होते है।

**द्रव्यनाम** : संस्कृत–चिल्हक ; स्थानिक–चीला।

लैटिन–Casearia graveolens Dalz.

**वानस्पतिक स्वरूप** : इसका वृक्ष छोटे आकार का पर्णपाती होता है। पत्र–4- 8" लम्बे, लम्बाग्र एवं कुंठाग्र, क्रकची तट, पुष्प हरितवर्ण के, फल–माँसल, दुर्गन्धयुक्त।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; फलकाल–मई, जून।

**प्राप्तिस्थान** : यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में प्रायः 1,200 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, उत्तरकाशी, धरासू, नरेन्द्र नगर, कुण्ड, गुप्तकाशी, भवाली, रानीखेत, आदि स्थानों पर सुलभ है। इसकी अन्य जाति भी इन स्थानों पर पाई जाती है। जिसे Casearia tomentosa Roxb. कहते है। छोटा पर्णपाति वृक्ष, पत्र 3–6" तक लम्बे, दीर्घायत, भालाकार, फल–पकने पर पीले रंग के एवं मसलने पर दुर्गन्धमय। वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह जी ने इनके फलों को हपुषा माना है।

**स्थानिक प्रयोग** : ग्रामीण फलों के चूर्ण को मछली मारने के काम में प्रयोग करते हैं।

**कुल-MELASTOMATACEAE**

**द्रव्यनाम** : स्थानिक–कुकुर

लैटिन–Osbeckia stellata Wall. ex D.Don.

**वानस्पतिक स्वरूप** : मध्यम तलोत्थ शाकीय पादप, पुष्प गुलाबी रंग के सुन्दर होते है यह उत्तराखंड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,600 मी. से लेकर 2,100 मीटर तक घुत्तू गगनानी, चम्बा, काणाताल, रानीखेत आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग** : ग्रामीण लोग पत्र स्वरस का प्रयोग मुखपाक में करते हैं।

**कुल-कोशातक्यादिवर्ग CUCURBITACEAE**

**वर्गलक्षण** : इस वर्ग में लगभग 800 प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती है। ये वनस्पतियाँ प्रसरी एवं लता के रूप में पाई जाती हैं। पर्ण–एकान्तर, बहुधा खर, हृदयाकृति, पत्रतट–सकोणीय, नर एवं मादा पुष्प अलग–अलग या एक ही बेल पर भी होते हैं। पुष्प–पीले एवं सफेद रंग के, पुष्प–बाह्यकोश के दल संख्या में 5 पुष्पाभ्यन्तर कोश की पंखड़ियाँ भी 5 होती हैं। फल–रसों से भरपूर अनेकों बीजों से युक्त, बीज–चपटे, चिकने एवं गिरी तैलीय इस वर्ग में पटोल, वन्यपटोल, इन्द्रायण, विशाला, कोषातकी, करैला, देवदाली, विम्बी, कर्कटी, कूष्माण्ड शिवलिंगी आदि कतिपय द्रव्य पाये जाते हैं। प्रायः खाद्य सामग्री में उपयोगी शाक इसमें होते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम**–संस्कृत–महाकाल (लाल इन्द्रायण), विशाला ; हिन्दी–लालइन्द्रायण ; स्थानिक–इलाडू।

लैटिन–Trichosanthes bracteata (Lam.) Voigh.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ी आरोहीलता, काण्ड–प्रतान, त्रिशाखी, पत्र– 2" से 6" व्यास में, लट्वाकार, उपवृत्ताकार, 3-7 खण्डों, में विभक्त प्रत्येक खण्ड–लट्वाकार, दीर्घायत एवं अच्छिन्न, पुष्प–सफेद रंग के, फल–मसृण एवं लाल रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर; प्रयोज्यअंग–फल, मूल।

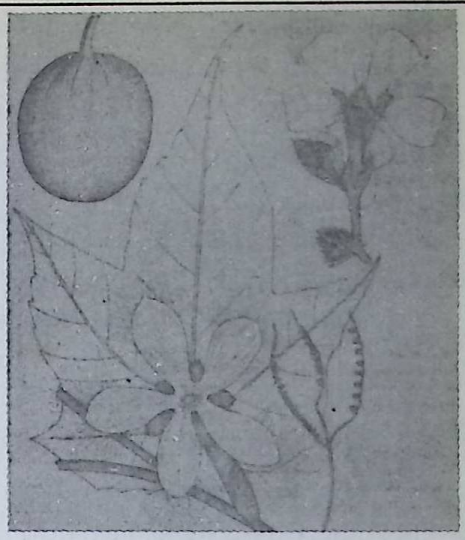

*महाकाल*
***Trichosanthes bracteata (lam) Voigh.***

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों की निचली घाटियों में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,600 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी–धनशाली, इन्द्रोला, घुत्तु, मन्दाकिनी घाटी–फाटा, कुण्ड़, गुप्तकाशी, कालीमठ, उत्तरकाशी, जमुनाघाटी एवं चकराता आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** शाकों में फलों का उपयोग किया जाता हैं। मधुमेह में करैले का रस पिलाते है।

**शास्त्रीय योग :** नारायण चूर्ण, अभयारिष्ठ, लोध्रासव, महा मन्जिष्ठाद्यासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : इन्द्रवारूणिकाऽत्युष्णा, रेचनी कटुका तथा।**
**कृमि श्लेष्म ब्रणान् हन्ति, हन्ति सर्वोदराण्यपि।।** *(ध.नि.)*
**गवादनी द्वयं तिक्तं पाके कटु सरंलधु।**
**वीयोष्णां कामलापित्त कफल्पीहोदरापहम्।।**
**श्वास कासापहं कुष्ठ गुल्मग्रन्थिव्रणाप्रणुत्।**
**प्रमेह मूठगर्भाम गण्ड़ामय विषापहम्।।** *(भा.प्र.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शिवलिंगी, चित्रफला, पुत्रदा ; स्थानिक–पुतलगलो।

लैटिन–Bryanopsis lacinissa (Linn) Nand. syn. Bryonia laciniosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह एक बर्षायु वर्षाकालीन लता जाति की बनस्पति है। काण्ड–मृदु, मसृण, पर्ण गहरे–हस्ताकार, 5 खण्डों में विभक्त, मृदुरोमिल तीक्ष्णाग्र होते है, पुष्प–पीताभ हरितवर्ण के, फल–गोल, पृष्ठ पर चित्रित, माँसल एवं पकने पर लाल रंग के, बीज–आकार में शिवलिंग सद्यश, काले रंग के तैलीय होते है।

पुष्पकाल–सितम्बर, अक्टुबर ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में प्रायः 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड नरेन्द्रनगर उत्तरकाशी, धरासू, देवप्रयाग, श्री नगर, जौनसार, कोटद्वार, रामनगर, टनकपुर आदि स्थानों पर गाँवों के आसपास बाडों में स्वयंजात सर्वत्र पाई जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पुत्रदा के लिये ग्रामीण वैद्य बीजों का उपयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : लिंगिनी कटुरूष्णा च दुर्गन्धा च रसायनी।**
**सर्वसिद्ध करादिब्या, वश्यारसनियामिनी।।** (रा.नि.)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वन्यपटोल ; स्थानिक–जंगली चचीण्डा।

लैटिन–Trichosanthes cucumerina Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मृदुरोमिल, एक वर्षीय लता, काण्ड–प्रतान्तिशाली, पत्र 2"-4" ब्यास में, प्रायः 5 खण्डों



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

में विभक्त, रोमिल, सवृन्त, पुष्प–छोटे हरित–पीतवर्ण के, फल–लम्बा, शंक्वाकार एवं लाल रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागो में प्रायः 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड , धोन्टी, धनशाली, नरेन्द्रनगर, उत्तरकाशी, धरासू, रूद्रप्रयाग जमुनाघाटी एवं देहरादून आदि स्थानों पर मिलता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** विषमज्वर (मलेरिया) बुखार में पञ्चांग क्वाथ का प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योगः** पटोलादिक्वाथ, पटोलाद्यचूर्ण, अरविन्दासव, उशीरासव, पुनर्नवादिक्वाथ, चन्दनासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कफ पित्तहरं तिक्तं शीतं कटु विपच्यते।।** *(च.सू.अ. 29)*

**कफपित्तहरं व्रण्यमुष्णं तिक्तमवातलम्।**

**पटोलं कटुकं पाके, वृष्यं रोचनदीपनम्।।** *(सू.सू.अ. 46)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बिम्बी ; स्थानिक–कन्दुरी।

लैटिन–Coccinia indica W.& A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी विसर्पी लता, मूल–कन्दिल, पर्ण–2"-4" व्यास में सवृन्त हृदयाकार, लट्वाकार, 4 से 5 खण्डो वाला, पुष्प–सफेद रंग के, फल–दीर्घायत, मांसल, पकने पर लाल।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा के उष्ण भागो में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, उत्तरकाशी, धनशाली, नरेन्द्रनगर, कोटद्वार, रामनगर, टनकपुर आदि स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** मधुमेह में फलों का शाक प्रयोग करते हैं। मूलचूर्ण का उपयोग प्रमेह में करते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कारवेल्लक ; हिन्दी–करेला।

लैटिन–Momordica charantica Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी आरोही एवं प्रसरणशील लतायें होती है। करैला बरसाती, बैशाखी दो प्रकार का होता है। आकृति भेद से भी छोटा एवं बड़ा दो प्रकार का होता है। पर्ण–कटे हुऐ सवृन्त, वृक्काकार–वर्तुल, 1" से 3" व्यास में, गहरे, 5-6 खण्डों वाला सवृन्त, पुष्प–पीले रंग के, फल–गोल, धारीदार, अग्रभाग तीक्ष्ण।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–फल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** इसकी उत्तराखण्ड़ के सभी ग्रामीणों द्वारा खेती की जाती हैं। इसकी मुख्यतया दो फसलें होती हैं। बरसाती एवं वैशाखी।

**स्थानिक प्रयोग :** शाकों में फलों का उपयोग करते है। मधुमेह में करेले का रस पिलाते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कारवेल्लं सकटुकं, कटुपाकमवातलम्।**

**दीपनं भेदनं तिक्तम वृष्यमहिमं लघुः।।**

**हृन्त्यरोचक पित्तास्त्र कफ पाण्डु व्रणक्रीम्।**

**श्वास कास प्रमेहाश्म कोठकुष्ठज्वरानपि।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कर्कोटक, (नरलिंगी पादप) तथा वन्ध्याकर्कोटकी (स्त्रीलिंगी पादप) ;

हिन्दी–ककोड़ा या खेखसा तथा बाँझककोड़ा।

लैटिन–Momordica diocia Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी आरोहीलता, पर्ण–हृदयाकार, अखण्ड या तीन खण्ड़ों में, लट्वाकार एवं दन्तुर, नर और स्त्री पुष्पों की लताऐं पृथक होती है। नरपुष्पों की लता को कर्कोटक कहते हैं। अन्य किस्म को कर्कोटक (कंकोंड़ा) M. cochindinensis कहते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई ; प्रयोज्यअंग–फल, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागो में 900 मीटर की ऊँचाई तक



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

टिहरी बनखण्ड, धोन्टी, श्रीनगर उत्तरकाशी, रामनगर, कोटद्वार, टनकपुर, आदि स्थानों पर यत्र तत्र पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–बनकुन्दुरू।

लैटिन–Melothria heterophylla Cogn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूल–कन्दिल, काण्ड–प्रतान, लम्बे पत्र–विभिन्न आकार प्रकार के, पुष्प–पीताभ, श्वेतरंग के, एक लिंगी तथा नर पुष्प एवं स्त्री पुष्प अलग–अलग फल पकने पर लाल रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ;

प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक धोन्टी, धनशाली, उत्तरकाशी, टनकपुर, कोटद्वार आदि स्थानों पर यत्र तत्र मिलता है।

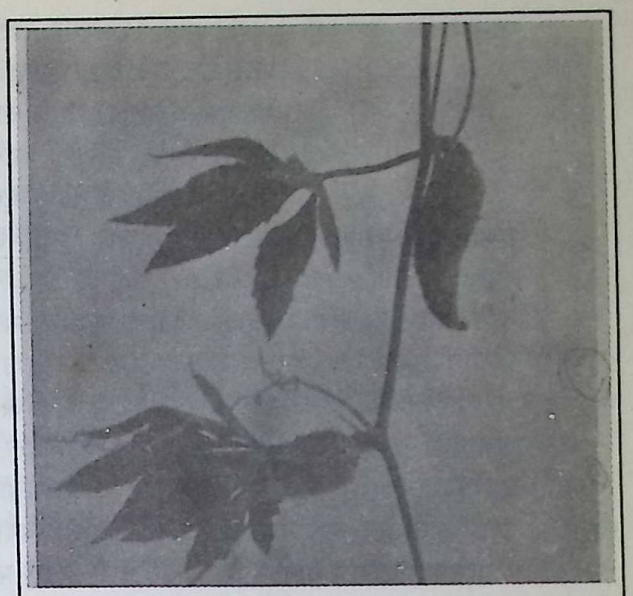

*कर्कोटक (Momordica diocia Roxb)*

**द्रव्यनाम**–संस्कृत, कुष्माण्ड, वल्लीफल ; हिन्दी–पेठा; स्थानिक–भुजेलु।

लैटिन–Benincasa hispida (Thumb) Cong.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पेठा की लम्बी–लम्बी आरोही एवं परिसृत लतायें होती है। काण्ड'–कोणाकार एवं कर्कश सफेद रोंयदार होते है। स्त्री एवं नरपुष्प अलग–अलग खिलते है ये पुष्प पीत वर्ण के होते है फल–खरबूज सद्यश, बड़े वजनदार एवं धारीदार होते है। फल का गूदा सफेद रंग का होता है।

पुष्पकाल-अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–फल, गूदा, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** पेठा मलेशिया का आदिवासी पौधा है। उत्तराखण्ड के सभी जनपदों की निचली घाटियों में सर्वत्र इसकी खेती की जाती है। घरों के आसपास छतों पर इसकी बेलें चढ़ी रहती है।

**स्थानिक प्रयोग :** इसका शाक एवं बड़ी तथा पेठा की मिठाई बनाते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कूष्माण्ड़–खण्ड़, कूष्माण्ड़धृत, कुष्माण्डचूर्ण। पेठे की अधिकतर मिठाई बनाई जाती है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : सक्षांर पवन कुष्माण्डं मधुराम्लं तथा लधुः।**

**सृष्ठमूत्रपुरीषं च, सर्वदोष निवर्हणम्।।** *(च.सू.अ. 29)*

**पित्तध्नं तेषु कूष्माण्डं वालं मेध्यं कफापहम्।** *(सु.सू.अ. 36)*

**वृष्यं स्वादुतरं त्वरोचकहरंवल्यं च पित्तपहम्।**

**कूष्माण्डं प्रवरं वदन्ति भिषजो वल्लीफलानांपुनः।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कटुतुम्बी ; हिन्दी–कड़वी लौकी।

लैटिन–Lagenaria siceraria Standl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी आरोही परिसृत लतायें होती है। काण्ड पंचकोणीय पर्ण–गोलाकार, पंचकोणाकार, लट्वाकार, हृदयाकार, पत्र के दोनों पृष्ठ सूक्ष्म रोमश होते है। पुष्प–एकलिंगी श्वेतवर्ण के, फल–लम्बे, लम्बगोल, कमण्डल के आकार में होते है। इसके मीठे किस्म की खेती की जाती हैं। जिसे लौकी कहते है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पों के साथ ; प्रयोज्यअंग–फल, बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में इसकी खेती की जाती है। जंगली किस्म को कटुतुम्बी कहते है इसका चिकित्सा में उपयोग होता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** यह वामक और विषध्न है



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कासश्वास विषच्छर्दि ज्वरार्ते, कफकर्षिते।**
**प्रताम्यति नरै चैव, वमनार्थदिष्यते।।** *(च.क.अ. 3)*
**तिक्का अलावुरहृद्या तु वामिनी वातपित्तजित्।।** *(सुश्रत)*
**कटुतुम्बी कटुस्तीक्ष्णा वान्तिकृत् श्वासवातजित्।**
**कासध्नी शोथनी शोफ ब्रणशूलं विषापहाः।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जीमूतक, देवदाली ; हिन्दी–धधरबेल, बंदाल ; स्थानिक–बन्दालडोडा।
लैटिन–Luffa echinata Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** देवदाली की प्रसरण शील आरोही लतायें होती है। काण्ड–पतले पाँच कोनो वाले, कर्कश, काण्डसुत्रद्विधा विभक्त, पर्ण–सवृन्त वृत्ताकार, गोल, लट्वाकार, हृद्वत, रोमश 2-5 से. मी. लम्बे होते हैं। पुष्प–पीताभ श्वेत वर्ण के, फल–लम्बे, दीर्घ–वृताभ तथा देखने में खेखसे के फलों को तरह मालूम होते है।

पुष्पकाल–अगस्त, अक्टूबर ; फलकाल–पुष्पकाल, के बाद ; प्रयोज्यअंग–फल, काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण कटिबन्धीय वनों में सर्बत्र इसकी लतायें स्वयंजात पाई जाती है। सूखे फलों को बन्दाल डोडा (बंदाल) कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य सर्पविष में इसके फलों के क्वाथ को पिलाते है। यह वामक और विषध्न है।

**शास्त्रीय योग :** देवदाली चूर्ण, देवदाली कल्प।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : देवदाली तु तिक्तोषणा, कटुः पाण्डुकफापहा।**
**दुर्नामश्वास कासध्नी, कामला शोथ नाशिनी।।** *(रा.नि.)*
**वामनी हन्ति गुदजकफ शोफाम कामला।**
**ज्वर कासाऽरूचिश्वास हिक्का पाण्डुक्षयकृमीन्।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कोशातकी, जालिनी ; हिन्दी–तोरी, तोराई।
लैटिन–Luffa acutangula (Linn.) Roxb. var. amara Clarke.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह वन्य एवं खेती भेद से दो प्रकार की होती हैं। जंगली तोराई कड़वी होती है। इसकी आरोही लताऐं होती है। पर्ण–श्वेताभ मृदुरोमश, कर्कष, अण्ड़ाकार दोनो शिरों पर कुछ फटे हुऐ। पुष्प–पीतवर्ण के, फल–शंक्वाकार, उन्नतधारियों वाले माँसल, फल पकने पर जालीदार, एवं काले बीज वाले होते है, स्वाद में ये फल एवं बीज तिक्त (कड़वे) होते है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पों के साथ ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदो के उष्ण कटिबन्धीय बनो में इसकी जंगली लतायें सर्वत्र सुलभ हैं। मीठी जाति की ग्रामीणो द्वारा खेती की जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** फल का शाक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

**आयुर्वेदिय गुण धर्म : गरे गुल्मोदरे कासे, वातेश्लेष्माशय स्थिते।**
**कफे च कण्ठवक्रस्थे कफ संचय येषु च।।**
**रोगेस्वेषु प्रयोज्यं स्यात् स्थिराश्च गुरवश्च ये।** *(च.सू.अ. 29)*
**कुष्ठ मेह ज्वर श्वास कासाऽरूचिहराणिच।** *(सु.सू.अ. 46)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–त्रपुस, तिक्तकर्कटिकां ; हिन्दी–कड़वी ककड़ी।
लैटिन–Cucumis sativus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी भी वन्य एवं कृषिभेद से कई किस्में पाई जाती हैं। कड़वी ककड़ी आरोही लता जाति की वनस्पति है। पर्ण–दीर्घ, पत्रवृन्त पर गोलाकार, पंचकोणीय, सधन, रोमश, पुष्प–एकलिगीं पीतवर्ण के। फल–दीर्घ–स्थूल श्वेत, हरिताभ–पीत, फल के पार्श्व भाग कण्टक सद्यश इसकी अन्य किस्में भी पाई जाती है, Cucumis melo var. utilissimus ककड़ी क़हते है। इसकी खेती की जाती हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के साथ ; प्रयोज्यअंग–बीज, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदो के उष्णकटिबन्धीय वनों में रेतीली जमीन पर सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** कड़वी ककड़ी वामक, मूत्रल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : त्रपुषं मूत्रलं तिक्तं वामकं कफपित्तजित्।** *(शोठल)*

**तिक्तं कर्कटिका प्रोक्ता, रसे पाके कटुस्मृताः।**

**तिक्तामूत्रकरी वान्तिकारका, मूत्रकृच्छ्रहा।।** *(नि.र.)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–खरबूजा।

लैटिन–Cucumis melo Linn.

**प्राप्तिस्थान :** यह बलूचिस्तान और पश्चिमी अफ्रीका का मूल निवासी पौधा हैं। मुसलमानों के काल में 12वीं–13वीं सदी में इसका भारत में प्रचार हुआ। मदनपाल और भावप्रकाश निघण्टु में इसका उल्लेख है। अब उत्तराखण्ड के तराई वाले भागों देहरादून, रामनगर, काशीपुर आदि स्थानों में ग्रामीण इसकी खेती करते हैं। उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में इस कुल के निम्न औषधोपयोगी शाकों की खेती भी की जाती हैं। यथा :–

1. Luffa aegvptiaca Mill घिया, तोरई।
2. Citrullus sp. तिण्ड़िश (टिंडा)।
3. Trichosanthus dioca Roxb पटोल (परवल)।
4. Trichosanthus cucumerina var. anguina चचिण्डा।

**कुल-हरीतक्यादिवर्ग COMBRETACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बड़े वृक्ष एवं गुल्म पाये जाते है। पर्ण–प्रायः अभिमुख, या एकान्तर, 3–4 पत्रों के चक्र में एवं सादे। पुष्प मंजरी के रूप में, पुष्पाभ्यन्तर कोष के दल नीचे से जुड़े हुऐ गर्भाशय के साथ संलग्न पुष्पाभ्यन्तर कोष की पंखुड़ियाँ 4–5 अथवा बिल्कुल होती भी नही है। स्त्री केशर गर्भाशय के अघः–स्थायी एवं एक खाने वाले होते है। फल–प्रायः फाँक सद्यश धारवाले, बैगन की आकृति में एक बीज वाले होते है। इस वर्ग में हरड़, बहेड़ा, अर्जुन, असन आदि द्रव्य पाये जाते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हरीतकी, शिवा ; हिन्दी–हरड़, हर्रे।

लैटिन–Terminalia chebula Retg.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष ऊँचा, पर्णपाती, प्रकाण्ड लम्बा, अनेक शाखों वाला पर्ण–3–4" लम्बे, लट्वाकार, दीर्घवृत्तीय, सवृन्त,पुष्प–मञ्जरी में खिलने वाले पीताभ वर्ण के होते है। फल–1" से 3" तक लम्बे, कठोर, धारीदार, एक गुठली वाले होते है।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–जनवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनों में प्रायः टिहरी वनखण्ड, उत्तरकाशी, जौनसार, श्रीनगर, कोटद्वार, रामनगर, पिथौरागढ़ आदि स्थानो में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** घरेलू उपचार की मुख्य औषधि है। बच्चों के उदर विकार में घिस कर देते हैं।

**शास्त्रीय योग :** हरीतक्यादिचूर्ण, हरीतकी अवलेह, हरीतक्यादिक्वाथ, अभयारिष्ठ, त्रिफला चूर्ण, आरोग्यवर्धनी वटी, चन्द्रप्रभावटी, योगराज गुग्गुल, चित्रक हरीतकी, रक्तशोधक वटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अर्शासि ग्रहणी दोषं पुराण विषमज्वरम्।**

**कासं प्रमेह मानाहं प्लीहानुमुदरंनवम्।।** *(च. चि. अ. 1)*

**त्रिफला कफ पित्तध्नी मेहकुष्ठहरासरा।**

**चक्षुष्या दीपनी रूच्चा, विषमज्वर नाशिनी।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

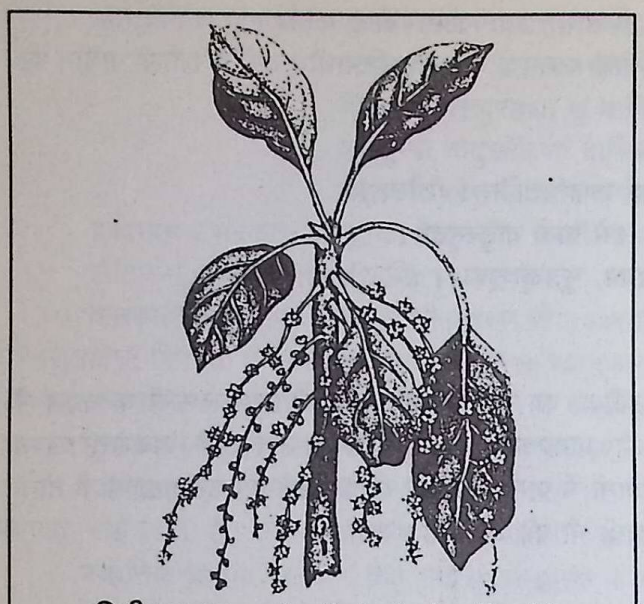

*बिभीतक (Terminalia belerica Roxb)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बिभीतक। हिन्दी–बहेड़ा।
लैटिन–Terminalia belerica Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके वृक्ष आकार में बड़े पर्णपाती होते हैं। काण्ड़–स्कन्ध लम्बा, सीधा ब्यास में 2 से 4 मीटर तक शाखायें झुकी हुई छायादार होती हैं पर्ण–एकान्तर, 3–8'' लम्बे, लट्वाकार–दीर्घ–वृत्तीय एवं सवृन्त, पुष्प–सफेद, पीतवर्ण के, फल–1'' लम्बा, कठोर, पकने पर खाकी भूरे रंग का होता है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–फल, मज्जा।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्णकटिबन्धीय वनों में प्रायः 900 मीटर की ऊँचाई तक, शिवालिक वन खण्ड, टिहरी वन खण्ड, कोटद्वार, रामनगर, टनकपुर आदि स्थानों पर यत्र–तत्र मिलता है।

**स्थानिक प्रयोग :** फलमज्जा का प्रयोग कास में करते हैं गिरी बल्य होती है।

**शास्त्रीय योग :** त्रिफला चूर्ण, लबंगादिवटी, कासवटी, चन्द्रप्रभावटी गन्धक रसायन, आरोग्यवर्धनी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भेदनं लधु रूक्षोष्णं, वैस्वर्य क्रिमिनाशनम्।**
**चक्षुष्यं स्वादु पाक्यांक्षं कषायं कफपित्तजित्।।**
**विभीतको मदकरः कफमारूतः नाशनः।** *(सु.सू.अ. 46)*
**विभीतकं स्वादुपांक, कषायं कफ पित्तनुत्।**
**उष्णवीर्य हिमस्पर्श, भेदनं कासनाशनम्।।**
**रूक्षं नेत्रहिंत केश्यं, क्रिमि वैस्वर्यनाशनम्।।** *(आ. प्रदीप)*

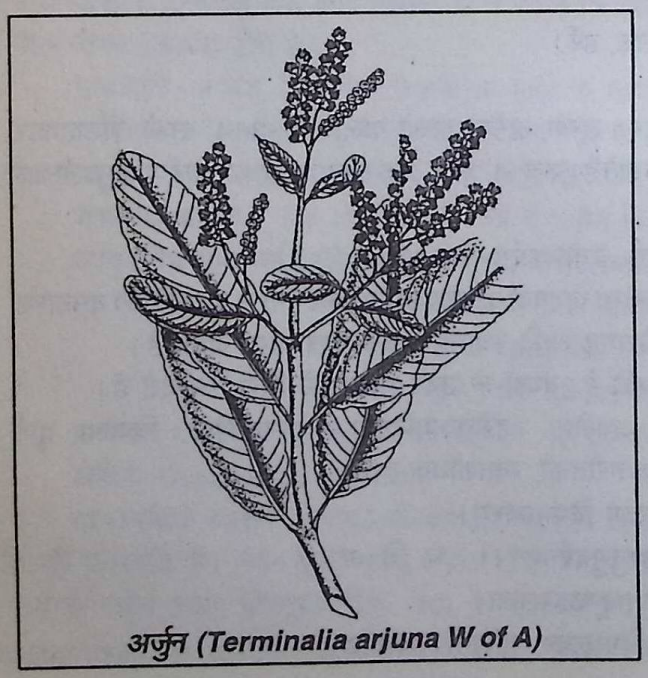

*अर्जुन (Terminalia arjuna W of A)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अर्जुन ; हिन्दी–कोह, अर्जुन ;
लैटिन–Terminalia arjuna W of A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके पर्णपाती वृक्ष होते हैं। छाल बाहर से श्वेताभ, अन्दर से गुलाबी रंग की पर्ण–अभिमुख, आयताकार, कुष्ठिताग्र, चर्मिल, पुष्प पीताभवर्ण के, शाखाओं पर मंजरी सद्यश, फल कमरख के फल सद्यश, लम्बे, कठोर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ;
फलकाल–पुष्पकाल के बाद;
प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून, वनखण्ड, तराई–भावर, काशीपुर, रामनगर, हलद्वानी आदि उष्णकटिवन्धीय भागों में सर्वत्र वृक्ष रोपित पाये जाते हैं।

**शास्त्रीय योग :** अर्जुनारिष्ठ, अर्जुनधृत, पुष्यानुक्चूर्ण, प्रभाकरवटी, अर्जुन चूर्ण।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** हृद्य, रक्तपित शामक, प्रमेह नाशक।

**ककुभो शीतलो हृद्यः क्षतः क्षयविषास्त्रजित्।**
**भेदो मेहः व्रणान्हन्ति, तुवरः कफपित्त हृत्।।** *(भा.प्र.)*
**अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं योज्यं हृदयामये।।** *(चक्रदत्त)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–असन ; हिन्दी–असना।

लैटिन–Terminalia tomentosa W of A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती वृक्ष, पर्ण–क्रमानुसार, दीर्धवृताकार, दीर्धायत, अधोमुख, सवृन्त, कुण्ठिताग्र पुष्प–उभयलिंगी पीताभ वर्ण के, मज्जरीसद्यश, फल धारियों में पंखसद्यश।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–छाल, काष्ठ।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरीवृत, नरेन्द्रनगर, तराई भावर, अल्मोड़ा जनपद के मोहान्ड, काशीपुर आदि क्षेत्रों में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल क्वाथ का उपयोग मेदोबृद्धि में करते हैं। पशुओं के चारे में पत्तियों का उपयोग होता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–धव ; स्थानिक–धौ, धौडी।

लैटिन–Anogeissus latifolia Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के, काण्ड–मसृण, छाल–श्वेताभवर्ण की, पर्ण–क्रमानुसार, दीर्घायत, अरोमिल, पुष्प–सवृन्त, पीताभ वर्ण के गोलाई लिये-नोक वाले फल–चमकदार, पंखसद्यश।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, निर्यास।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के शिवालिक वनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, टिहरीवृत, नरेन्द्रनगर, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर वनक्षेत्र में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पशुचारा में पत्तियों का उपयोग किया जाता है। जलावन में लकड़ी का प्रयोग करते हैं। निर्यास (गोंद) वल्य और विषध्न काष्ठ का उपयोग लघु उद्योग में।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : धवो द्यृठ तरूः कषायो मधुर त्वचः।**

**पाण्डुतरूः पीतफलो धवलश्च काष्ठ भारोद्वहः।।** *(शिवदत्त)*
**धवः शीत प्रमेहार्शः पाण्डुपित्त कफापहः।।** *(भा.प्र.)*

**कुल-जीरकादिवर्ग UMBELLIFERAE (Apiaceae)**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में विशेष रूप से शाकीय पौधे, झाड़ियाँ, पाई जाती हैं। वृक्ष प्रायः नहीं पाये जाते है। पर्ण–मुख्यतः सादे, एकान्तर होते हैं। पुष्प–स्त्रीपुंसयोगी, छत्राकार सूक्ष्म, बीज–सुगन्धित, द्विअन्तराल युक्त होते है। इस वर्ग में मुख्यतया सुगन्धित द्रव्य पाये जाते है। कुछ वनस्पतियाँ दीपन, वल्य, वातध्न, उत्तेजक होती है एवं कुछ वनस्पतियाँ दाहक, मादक एवं सविष होती है। अधिकतर द्रव्यों का प्रयोग मसालो के रूप में किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मण्डूकपर्णी; हिन्दी–ब्राह्मी; स्थानिक–बिरमी, ब्राह्मी बूटी ।

लैटिन–Centella asiatica Linn. Urban.

**वानस्पतिक स्वरूप :** छोटे–छोटे परिसृत पौधे होते हैं। काण्ड सपर्ण नमदार जलीय जमीन पर फैलता है। काण्ड के प्रत्येक ग्रन्थी मूल पर पुष्प एवं फल लगते है। पर्ण–गोलाकार, वृक्काकार, ब्यास में 1.25 से 6.25 से. मी. मसृण, किनारे गोल कहीं–कहीं दन्तुर, हरित वर्ण के स्वाद में कुछ तिक्त होते है। पुष्प–पर्वो पर छत्राकार गुच्छों में निकलते है। पुष्प सफेद गुलाबी रंग के फल–गुच्छों में छोटे–छोटे होते है।

पुष्पकाल–फरवरी से जून ; फलकाल–मार्च से जून; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह वनस्पति उत्तराखण्ड के गढ़वाल जनपदों के देहरादून, ऋषिकेश, कोटद्वार, रामनगर आदि



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

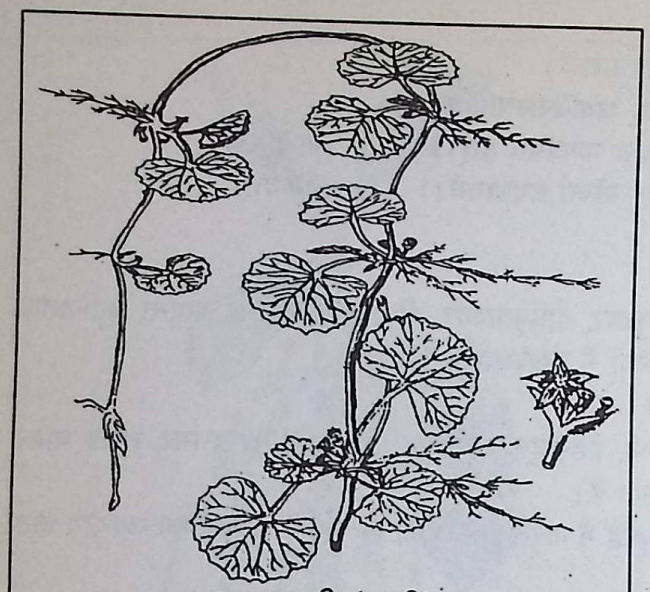

मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी)
**Centella asiatica Linn. Urban.**

स्थानों पर नमी वाले वनों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक एवं गन्ने के खेतों में पानी की नालियों के आसपास बहुतायत से पायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य दो जातियाँ पूर्व नामकरण के अनुसार भी इन घाटियों के जलीय स्थानों के समीप पाई जाती हैं।

1. Hydrocotyle javanica Thumb पर्ण 1–3'' ब्यास में पत्र के दोनों पृष्ठ चमकदार, झिल्ली सद्यश।

2. Hydrocotyle rotundifolia Roxb पत्र ¼–1'' ब्यास में हृदयाकार, खण्ड़ित तट एवं दोनों पृष्ठों पर रोमिल, पुष्प–छोटे–पीले रंग के।

ये जातियाँ उत्तराखण्ड गढ़वाल में 1,500 मी. की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, धोन्टी, धुत्, उत्तरकाशी, जोशीमठ, श्रीनगर, जौनसार एवं चम्बा आदि स्थानों पर यत्र–तत्र मिलती है।

**स्थानिक प्रयोग :** स्थानिक लोग पत्तियों का चूर्ण निन्द्रानाशः एवं मानसिक दोषों में प्रयोग करते हैं ।

**शास्त्रीय योग :** ब्राह्मीपाक, ब्राह्मीपानक, ब्राह्मी तैल, ब्राह्मीधृत, ब्राह्मरसायन, सारस्वतारिष्ठ, सारस्वतधृत, ब्राह्मीवटी, सोमनाथरस, स्मृतीसागररस, उन्मादगजकेशरी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** **रक्तपित्त हराण्याहुहृद्यानी सु लधूनि च ।**
**कुष्ठ मेह ज्वरश्वास कासारूचि हराणि च ।।**
**कषायातु हिता पित्ते स्वादु पाक रसा हिमा ।** *(सु.सू.अ. 46)*
**मण्डूकपर्ण्या स्वरस प्रयोज्यः आयु प्रदान्यामयनाशनानि ।**
**बलाग्निवर्ण स्वरवर्धनानि, मेध्यानि चैतानिरसायनानि ।।** *(चरक)*
**ब्राहम्यापुष्पा हिमा मेध्या कषायातिक्तका लधुः ।**
**स्वर्या स्मृतिप्रदा कुष्ठपाण्डु मेहास्त्रकासजित् ।।** *(ध.नि.)*

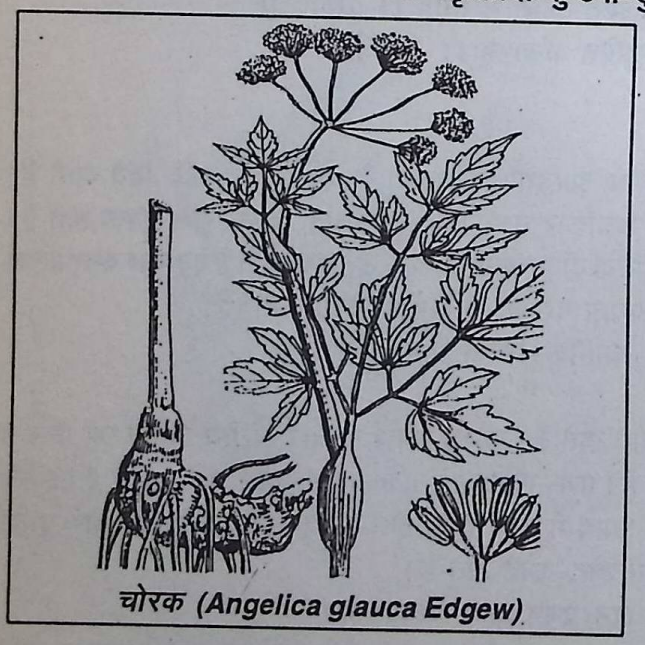

चोरक **(Angelica glauca Edgew)**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चोरक ; हिन्दी–चोरा।
लैटिन–Angelica glauca Edgew.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह हिमालय में उपलब्ध बहुवर्षीय मूल वाला 2 से 4 मीटर तक ऊँचा पौधा है। मूल–गाँठदार, नवीन जड़े 1 फुट से 2 फुट तक लम्बी, एवं उग्र–सुगन्धित होती है। काण्ड–मुदु रोमिल, नालदार, 2 से 3 फुट तक लम्बा, पर्ण–बडे त्रि–पिच्छाकार, पत्रक–अण्ड़ाकार एवं भालाकार, तट तीक्ष्ण, दन्तुर, पुष्पक्रम–छत्राकार, पुष्प–सफेद रंग के। बीज–सोया सद्यश, चपटे, रेखाकार।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–मूल (Rhizome).

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

3,600 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगना घाटी, पँवाली, दुफन्द, सहस्त्रताल, भागीरथीघाटी, रैथल दयारा, सुक्की एवं जमुनाघाटी, हरकीदून, मन्दाकिनीघाटी, केदारनाथ आदि स्थानों पर पाया जाता है। एक दूसरी जाति भी इन घाटियों में पायी जाती है। जिसे ग्रामीण लोग रिखचोरा कहते है। सम्भवतः यह शास्त्रीय चण्डा Angelica archangelica Linn. है। इसमें प्रकन्द मोटा तथा अधिक गाँठो एवं मूलों वाला होता है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल का उपयोग मशालों के रूप में करते हैं। उग्रसुगन्धित एवं दीपन–पाचन में उपयोगी मानते हैं।

**शास्त्रीय योग :** महासुगन्धित अगद, वालसूर्य अगद।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चोरक, मधुरतिक्त कटु पाके कटु लधुः।**

**तीक्ष्णो हृद्यो हिमोहन्ति, कुष्ठकण्डू कफानिलान्।।** *(भा.प्र.)*

**चरके अर्शोध्ने एवं अतिसारहर महाकाषाये गृञ्जनक पठ्यते।।** *(चरक)*

**द्रव्यनाम**–स्थानिक, गन्धायण।

लैटिन–Heracleum pinnatum C.B. clarke.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड़ 2–4 फुट लम्बा, मूल–प्रकन्दी, सुगन्धित, पत्र–त्रि–पिच्छाकार, पत्रक–अण्डाकार, खंडित पुष्प–पुष्पछत्री, सफेद रंग के, बीज–चपटे एवं सुगन्धित तथा रोमिल।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

इसकी अन्य कई जातियाँ भी घाटियों में मिलती है, जिसमें छत्र्या–H. candicans Wall. मुख्य है। मूल–प्रकन्दी एवं अग्रसुगन्धितः यह शाक 1,500 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगना घाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, एवं हरकीदून आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल एवं बीज का उपयोग मशालों के रूप में किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मूरामाँसी ; स्थानिक–मूर।

लैटिन–Selinium tenuifolium Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, सुगन्धित शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 2–3 फुट लम्बा, मूल–प्रकन्दी, पर्ण–बड़े प्रायः 4–5, पिच्छाकार, संयुक्त, पत्रक–दीर्घायत, पिच्छाकार, पुष्पक्रम–पुष्पच्छत्री, पुष्प सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ;

प्रयोज्यअंग–मूल।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भूतकेशी, भूतजटा ;

स्थानिक–भूतकेश।

लैटिन–Selinium vaginatum C.B Cl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह बहुवर्षायु मूलवाला एवं काण्ड एक वर्षायु वाला पौधा हैं। काण्ड़–2 से 5 फुट तक ऊँचा शाकीय होता हैं। भौमिक काण्ड घने बालों वाला, सुगन्धित मूल लम्बा विचित्रगन्ध वाला होता है। पर्ण–द्वि, त्रिपत्रक, बारीक गाजर के सद्यश सुगन्धित होते है। पुष्प–छत्राकार गुच्छो में श्वेताभवर्ण के होते है। फल–(बीज)–रेखाकार, सौंफ सद्यश।

*मूरामाँसी (Selinium tenuifolium Wall)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–भौमिक काण्ड़ (मूल)।

**प्राप्तिस्थान :** सेलिनियम की दोनो प्रजातियाँ उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के ऊँचाई वाली घाटियों में 2,800 मीटर से 3,800 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, मन्दाकिनीघाटी, अलकनन्दाघाटी, कांणाताल, मंसूरी, चकराता दारमाघाटी, कालीघाटी, मेदनीबुग्याल आदि स्थानों पर पायी जाती हैं। मांसीत्रय में भूतकेशी एवं मूरामांसी का उल्लेख है।

**स्थानिक प्रयोग :** अपस्मार, एवं मिर्गी के दौरे पड़ने पर मूल का उपयोग करते हैं। बार–बार सूधंने में शिरःशूल होता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मांसी द्वयं कषायं च वर्ण्य पित्तकफापहम्।**
**रक्षोघ्नं च सुगन्धी, स्यात् वातघ्नं केश्यमुत्तमम्।।** *(रा.नि.)*
**आकाश माँसी हिमा शोफ व्रण नाड़ीरूजापहा।**
**लूतागर्दभ जालादि हारिणी, वर्ण कारिणी।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–छत्र्या।

लैटिन–Trachyspermum falconeri C.B. Clarke.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, सुगन्धित शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 1–3 फुट लम्बा, पत्र–द्वि–पिच्छाकार, पत्रक–सूच्याकार एवं अग्रसुगन्धित, पुष्प–पुष्पछत्री, सफेद रंग के बीज–कृष्ण जीरक सद्यश, काले रंग के एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–बीज, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह घास वाले ढ़ालो पर 1200 मीटर की ऊँचाई तक धनशाली, घुत्तू उत्तरकाशी, सरजूघाटी, रामनगर, भवाली आदि स्थानों पर उपलब्ध है।.

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण बीजों का प्रयोग उदरशूल में करते है। मूल का भी चिकित्सा में उपयोग होता है।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक, जंगली जीरा।

लैटिन–Bupleurum falcatum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीय, अरोमिल शाक, काण्ड उर्ध्वसंस्थित, 1 से 4 फुट लम्बा, पर्ण अवृन्त, सूच्याकार, सहपत्र–सूच्चाकार, भालाकार एवं तीक्ष्णाग्र, सहपत्रिका 4–5, पुष्प–पुष्पछत्री, पीताभ रंग के फल दीर्घायत।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्य अंग–बीज, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह पौधा उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 1,600 मीटर की ऊँचाई से 3,000 मीटर तक घाटियों के ढलानों पर स्वयंजात उपलब्ध हैं। इसकी दूसरी औषधोपयोग की जाति भी इन घाटियों में मिलती हैं। जिसे Bupleurum jucundum Kurz. कहते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–तिरोई।

लैटिन–Pimpinella diversifolia DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** रोमिल, उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड–2–5 फुट लम्बा, मृदुरोमिल, पत्र–एक पिच्छाकार, संयुक्त पत्रक–3 से 5 भालाकार, भिन्न आकार का सहपत्र 1 से 2, पुष्प–सफेद रंग के।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर की ऊँचाई पर भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, कांणाताल, मन्सूरी, चकराता, जमुनाघाटी, हरकीदून, मेदनी बुग्याल, दारमाघाटी, मुक्तेश्वर, आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** सीगूंबीज के नाम से बीजों का उपयोग मशालों में किया जाता है कृष्ण जीरक (कालाजीरा) के नाम से भी बीजो का उपयोग होता है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–लेसर।

लैटिन–Pteorospermum candallii Benth.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, उग्रसुगन्धित, शाक, काण्ड–6' से 8'' लम्बा; विसर्पी, मूल–प्रकन्दो, सफेदी लिए हुए, पुष्प–पुष्पछत्री, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदो में 3,600 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,900 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है। विशेषकर यह किनकोलियाखाल, ताली, मदमहेश्वर आदि स्थानों पर मिलता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का प्रयोग धूप के लिए करते है। यह तीव्र सुगन्धी वाला पादप है। इस कुल की निम्न औषधियोपयोगी वनस्पतियाँ भी उत्तराखण्ड हिमालय में पायी जाती है।

| | |
|---|---|
| 1. Bupleurum longicaule Wall. Ex. Dc. | 3,000-3,500 मीटर की ऊँचाई |
| 2. Chaerophyllum villosum Wall. ex. Dc. | 1,800-3,500 मीटर की ऊँचाई (मीठा अतीस) |
| 3. Heracleum brunonis Hook | 3,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. Ligusticum elatum C.B.Cl. | 3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. Pimpinella diversifolia DC. | 1,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 6. Seseli trilobum Benth | 3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 7. Vicatia stewartii Clarke | 3,400-3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 8. Trachidium roylei Hindl | 4,100 मीटर की ऊँचाई पर |
| 9. Torilis japonica (Houth) D.C. | 2,425 मीटर की ऊँचाई पर |
| 10. Apium teplophyllum | 3,000 मीटर की ऊँचाई (जंगली अजवायन) |

## कुल-अरेलियेसी ARALIACEAE

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वान्दा।

लैटिन–Hedera nepalensis K. Koch.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, आरोही लता, पत्र–साधारण, चमकीले, लट्वाकार, 3 से 5 विषमाकार खण्डो में विभक्त, पुष्प–पुष्पछत्री पीले रंग के।

पुष्पकाल–दिसम्बर, मार्च ;

प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, काणांताल, चकराता, देववन, पिंडारीघाटी, दारमाघाटी, मुक्तेश्वर आदि स्थानों में वृक्षों से चिपका हुआ पाया जाता है।

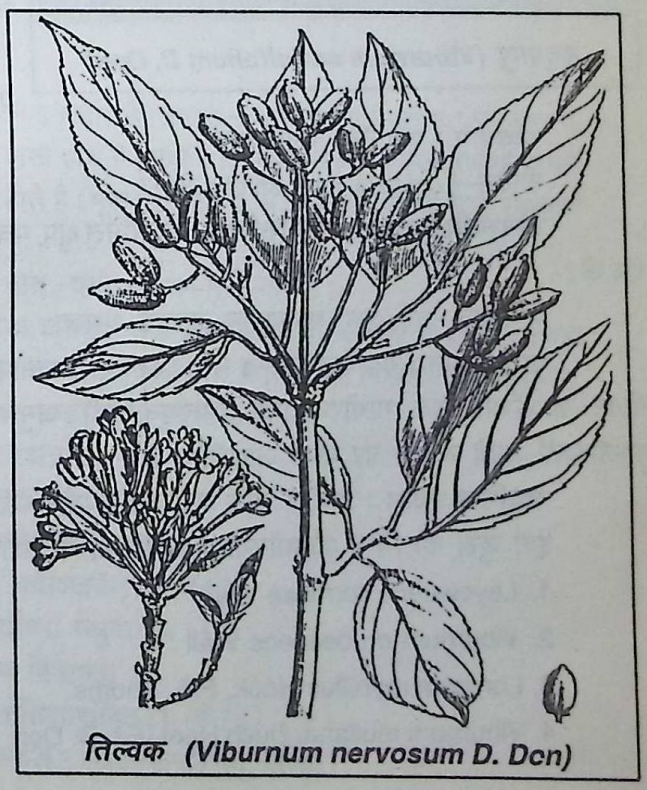

तिल्वक (Viburnum nervosum D. Don)

## कुल-कैप्रिफोलियेसी CAPRIFOLIACEAE

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिल्वक ; स्थानिक–तिर्लीण।

लैटिन-Viburnum nervosum D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा गुल्म अथवा मध्यम कद का वृक्ष, काण्ड–शाखीय, पत्र–2" से 5" लम्बे, 1-3"



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

चौड़े दीर्घवृत्तीय–दीर्घायत, क्रकची, मुदुरोमिल, पुष्प–गुलाबी, सफेद रंग के, सुगन्धित।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 2,400 मीटर से 36,00 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनींघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, मन्सूरी, काणांताल मेदनी बुग्याल, चकराता, दारमाघाटी, कालीघाटी, मुक्तेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। ठा० बलवन्त सिंह ने इसी वृक्ष को शास्त्रीय तिल्वक स्वीकार किया है।

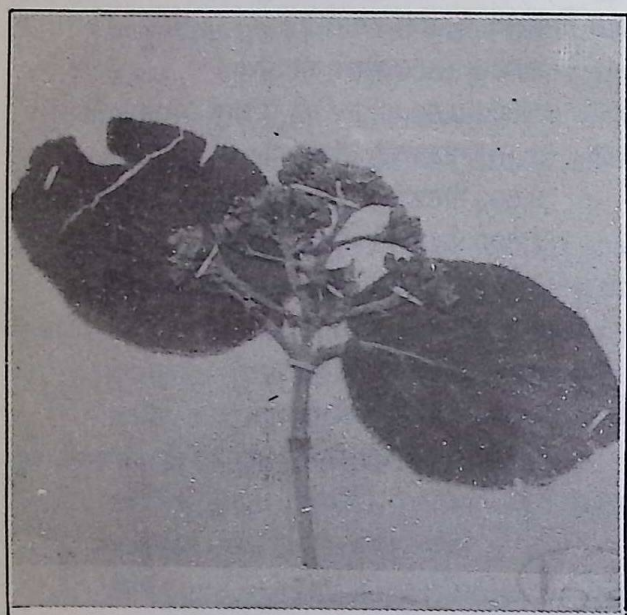

*मट्याणु (Viburnum cotinifolium D. Don)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मट्याणुँ।

लैटिन–Viburnum cotinifolium D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा गुल्म अथवा मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–शाखीय, पर्ण लट्वाकार या वर्तुलाकार, 2–5" लम्बे, पत्र का उर्ध्वपृष्ठ हरा एवं अधोपृष्ठ मृदुरोमिल, क्रकची, पुष्प–सफेद रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 1,500 मीटर से 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः कांणाताल, चकराता, जौनसार, भिलंगनाघाटी, जमुनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, भागीरथीघाटी, जोशीमठ, रानीखेत वागेश्वर, नैनीताल आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। व्यापारिक रूप से इसकी छाल का संग्रह विदेशी वाइवरनम के स्थान में किया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल क्वाथ का उपयोग यकृतविकार एवं कब्ज दूर करने के लिये ग्रामीण करते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वनचिलु।

लैटिन–Lonicera angustifolia Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, मृदुरोमिल क्षुप, पत्र–सवृन्त, दीर्घायत, कुष्ठाग्र पुष्प–कक्षीय, सफेद, गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–जुलाई, अगस्त।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर की ऊँचाई तक भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, चकराता, मेदनी बुग्याल, दारमाघाटी, कालीघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्रों का उपयोग जानवरों में पेट के अफारे में करते हैं।

इस कुल की निम्न औषधोपयोगी प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड में पायी जाती हैं :

| | |
|---|---|
| 1. Leycesteria formose Wall | 2,500-2,700 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Viburnum erubescens Wall | 2,200-2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Lonicera myrtillus Hook. F.&. Thoms | 1,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. Viburnum mullaha. Buch Ham. Ex. D. Don | 1,400-3,000 मीटर की ऊँचाई पर |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल-कोरनेसी CORNACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वमारे, भमोरी।

लैटिन–Cornus capitata Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम कद का वृक्ष, पर्ण–दीर्घायत या लट्वाकार, 2–3'' लम्बे मृदुरोमिल, पुष्पश्वेत, पीतवर्ण के फल–गोल एवं बाह्यपृष्ठ, खुदरा, स्वाद में मधुर।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड की निचली घाटियों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः काणांताल, चम्बा, गजा, घुत्तू, जमुनाघाटी, चकराता, जौनसार, एवं मसूरी आदि स्थानों पर पाया जाता है।

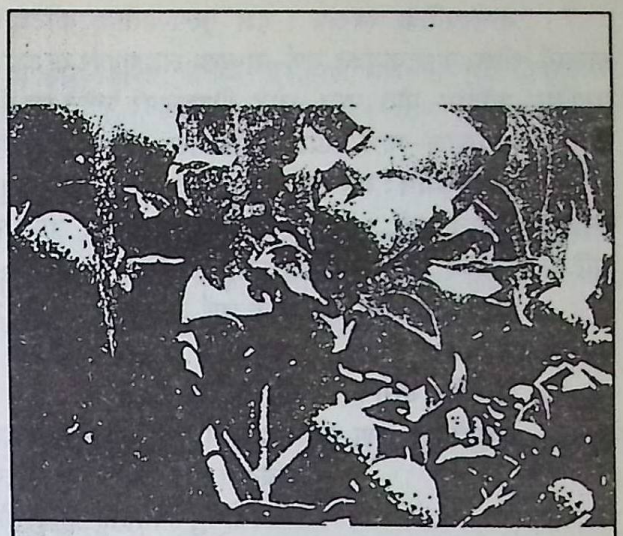

*भमोरी (Cornus capitata Wall)*

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पके हुए फलों का मुरब्बा बनाते हैं। इसके अतिरिक्त निम्न औषधोपयोगी जाति भी उत्तराखण्ड में पायी जाती हैं।

1. Marlea chinensis (Lour) Parker 2,500 मीटर की ऊँचाई पर

**कुल-मञ्जिष्ठादिवर्ग RUBIACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मञ्जिष्ठा ; स्थानिक–मंजीठ।

लैटिन–Rubia cordifolia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** अतिप्रसरी बहुवर्षायु लता जाति की वनस्पति हैं। काण्ड–चतुष्कोणीय, रक्ताभ, पर्ण–सवृन्त, खर, हृदयाकार चार–चार चक्रों में लट्वाकार, नुकीले, 2–4'' लम्बे होते है। पुष्प छोटे–छोटे श्वेताभ रक्तवर्ण के गुच्छों में खिलते है। फल–गोल, माँसल पकने पर कृष्णाभरक्तवर्ण के होते है। मूल–15 सै. मी. से 30 सै. मी. लम्बा मृदु, रक्तवर्ण का होता हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूल, काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, चकराता, कांणाताल, पिड़ारघाटी, रानीखेत, वागेश्वर, दारमाघाटी, नैनीताल, भवाली आदि स्थानों पर कही–कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य मूलक्वाथ का प्रयोग रक्तप्रदर में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** महामञ्जिष्ठादिक्वाथ, महामञ्जिष्ठाद्यासव, खदिरारिष्ठ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मञ्जिष्ठा मधुरा स्वादे कषायोष्णा गुरूस्तथा।**
**कफोग्र व्रणमेहास्त्र विषनेत्रा मयाञ्जयेत्।।** *(ध.नि.)*
**मञ्जिष्ठा तुवरा तिक्ता, वीर्योष्णा मधुरागुरू :।**
**कर्णक्षियोनिरोगनी, कफशोष विषापहा :।**
**विसर्प मेहकुष्ठार्शो वर्ण रक्तातिसारजित्।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मदन, पिण्ड़ीतक ; हिन्दी–मदनफल ; स्थानिक–मैणदू, (राडू)।

लैटिन–Randia dumetorum Lamk.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष गुल्मजातीय, काँटेदार एवं काण्ड बहुशाखीय मध्यम आकार का होता है। शाखायें–तीक्ष्ण कण्टकयुक्त, पर्ण–सम्मुख, लट्वाकार या अधोमुख, भालाकार, हरित, अपामार्ग के पत्ते सद्यश। पुष्प–छोटे, सुगन्धित, श्वेताभ–पीत, फल–छोटे, पिण्डाकार पकने पर पीले रंग के कठोर बीजों वाले होते हैं।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्य अंग–फल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 1,200 मीटर तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, धोन्टी, धनशाली, जमुनाधाटी, कोटद्वार, काशीपुर, रामनगर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। इसकी दूसरी जाति भी इन धाटियों के उष्ण भागों में पायी जाती हैं। जिसे मेंढल Randia tetsasperma Roxb. कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** फलों के चूर्ण का उपयोग उल्टी लाने के लिये करते हैं। गर्म कपड़ो को धोने हेतु फल चूर्ण का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** मदनादिलेप, मदनकल्प।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : राठको वृत पत्रोऽथय कंटकी पर्वतादिषु।**
**विटपी मदनं तस्य, फलं रेखाफलं स्मृतम्।** *(शिवदत्त)*
**मदनोमधुरस्तिक्तो वीर्योष्णो लेखनोषणः।**
**रूक्षोलधु प्रतिश्याम ज्वरविद्रधिकुष्ठहा।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिलक, प्रपौण्ड्रक ; स्थानिक–उडारू।

लैटिन–Wendlandia exserta DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती, छोटावृक्ष, पर्ण–4" से 9" तक लम्बे, अण्डाकार, भालाकार एवं लम्बाग्र, पुष्प–मञ्जरी में सफेद रंग के एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर धनशाली, देहरादून, कोटद्वार रामनगर आदि स्थानों पर पाया जाता है। वनस्पति विशेषज्ञ ठा० बलवन्त सिंह ने इसे शास्त्रीय तिलक माना है।

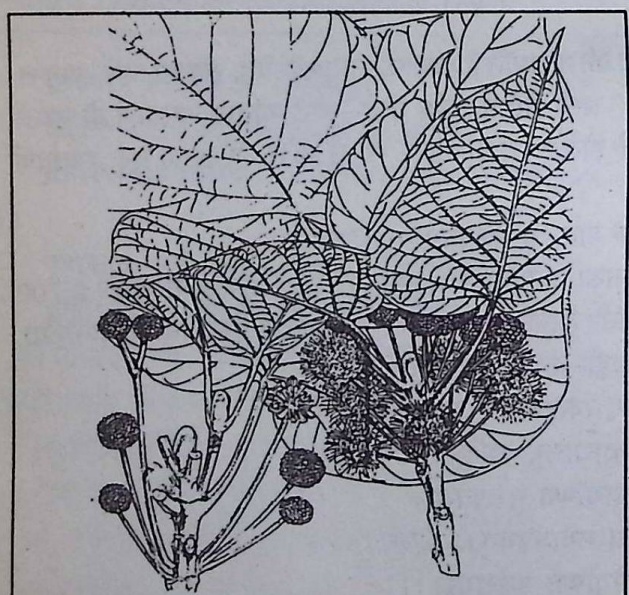

*हरिद्रु (Adina Cardifolia Hook)*

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पुष्पों का अर्क नेत्र विकारों में प्रयोग करते हैं।

**टिप्पणी :** तिल्वक नामक द्रव्य के पर्यायों में भी तिलक का संहिताकारों ने उल्लेख किया है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हरिद्रु, हारिद्र; स्थानिक–हलदू।

लैटिन–Adina cordifolia Hook.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के पर्ण पाती वृक्ष होते है। काण्ड़ सीधा, अनेक शाखाओं युक्त, काष्ठसार पीले रंग का, पत्र–सम्मुख, 4–9'' व्यास में वर्तुलाकार, हृदयाकार, सवृन्त एवं लम्बाग्र, पुष्प–पीले रंग के कदम्ब पुष्प सद्यश, गोलाकार होते है।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, धनशाली, देहरादून आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : लधुः कफंहरो वर्ण्यः, व्रणशोधन रोपणः।**
**तिक्तो वल्यः कान्तिदश्च, त्वग्दोषांश्चविनाशयेत्।।** *(रा.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–महापिण्डी ; स्थानिक–थनैला।

लैटिन–Gardenia turgida Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** छोटा, पर्णपाती वृक्ष, काण्ड छाल–हरित, पीताभ, अरोमिल, पर्ण–सम्मुख, विषमाकार 1-4'' लम्बे, दीर्घवृत्तीय, अधोमुख, अण्डाकार एवं लम्बाग्र, पुष्प– सुगन्धित, सफेद रंग के, फल–1" व्यास में, गोल, श्वेताभ और कठोर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–शीतकाल में ; प्रयोज्यअंग–फल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में कहीं–कहीं मुनिकिरेती, देहरादून, कोटद्वार, रामनगर आदि स्थानों में मिलती है। हरिद्वार एवं देहरादून की फार्मेसियों में इसकी छाल का भारंगी के नाम से उपयोग होता है। ठा. बलवन्त सिंह ने इसे करहाट अथवा महापिण्डी शास्त्रीय द्रव्य माना है।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–पापरी ; स्थानिक–अंगारी।

लैटिन–Pavetta indica Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा क्षुप, पर्ण–सम्मुख, 3–9'' लम्बे, अधोमुख अण्डाकार या अधोमुख भालाकार, एवं कुण्ठाग्र, पुष्प–सफेद रंग के, सुगन्धित, फल–गोल, नतोदर।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड़, कुण्ड़, रूद्रप्रयाग एवं देहरादून के वनों में कहीं–कहीं पाया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गन्धप्रसारिणी ; स्थानिक–पदाड़।

लैटिन–Paederia foetida Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** दुर्गन्ध युक्त, प्रसरणशील अथवा आरोही लता, मूल बहुवर्षी, पत्र–सम्मुख, अण्डाकार, लट्वाकार अथवा लम्बाग्र, दोनों पत्रों के बीच में दो–दो संयुक्त अनुपर्ण, पुष्प–हरिताभ वर्ण के।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह शिवालिक वनखण्ड़ एवं देहरादून की घाटियों, कोटद्वार रामनगर, टनकपुर आदि स्थानों में यत्र–तत्र छाया में एवं नम स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** वातब्याधियों में पंचाग का उपयोग क्वाथ के रूप में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** प्रसारिणी तैल, महानारायण तैल, महापैशाचिक धृत, माषतैल, बलारिष्ठ, प्रसारणी तैल, कुब्ज प्रसारिणी तैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : प्रसारिणी गुरूस्तिक्ता सरासन्धाकृन्मता।**
**त्रिदोष शमनी वृष्या, तेजः कान्ति वलप्रदा।।** *(ध.नि.)*
**आमवाते-प्रसारण्याढ़क क्वाथे प्रस्थे गुड़रसोनयोः।।** *(चक्रदत)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत – दमनपापर।

लैटिन–Oldenlandia corymbosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी शाक, काण्ड 3 से 12 इंच तक लम्बा, विसर्पी, पत्ररेखाकार, भालाकार, पुष्प सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में टिहरी वनखण्ड, धोन्टी, धनशाली उत्तरकाशी आदि स्थानों में खेतों के आसपास यत्र–तत्र पाया जाता हैं। कुछ वैद्य इसके पञ्चांग का भी क्षेत्रपर्पट के नाम से उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक, छोटीकुरी।

लैटिन–Galium mollugo Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** विसर्पी शाक, काण्ड–त्रिभुजाकार, पत्र–अवृन्त, चक्करदार, 4 से 5 तक अरोमिल,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्प–छोटे–छोटे, पीले गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–पञ्चाग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में मिलता है। इसके अतिरिक्त इस कुल की निम्न प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पायी जाती है।

| | |
|---|---|
| 1. Galium aparine Linn | 3,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 2. Galium asperuloides Edgew | 2,700 से 3,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 3. Galium rotundifolium Linn. | 3,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 4. Hamiltonia suaveolens Roxb. | 2,130 मीटर की ऊँचाई तक |
| 5. Leptodermis lanceolata Wall | 2,850 मीटर की ऊँचाई तक |

## कुल-जटामाँस्यादिवर्ग VALERIANACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में बहुवर्षायु या वर्षायु पौधे पाये जाते है। इनके मूल या भौमिक काण्ड़ तीव्र सुगन्धित, पर्ण–मूलोद्भव, अभिमुख, अनेक, उपपत्ररहित पुष्प–स्त्रीपुंसोपयोगी अथवा नर–मादा पृथक–पृथक पुष्पपंखडियाँ संयुक्त, नलिकाकार, पुंकेशर ऊपर आये हुऐ संख्या में प्रायः 4 होते है। पराग कोश दो अन्तराल वाले गर्भाशय अधःस्थित, फल–अस्फोटी एवं शुष्क होते है। इस वर्ग में जटामाँसी, तगर आदि कतिपय उपयोगी वनस्पतियाँ पाई जाती है। इस कुल की वनस्पतियाँ मेध्य, वर्ण्य, त्रिदोषध्न नाड़ीवल्य होती है।

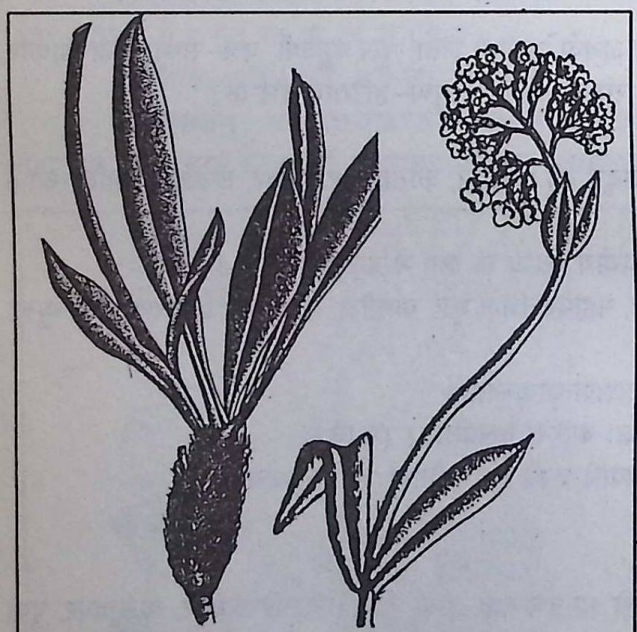

*जटामाँसी (Narclostachys Jatamansi DC)*

**द्रव्यनाम :** संस्कत–जटामाँसी ; स्थानिक–माँसी।

लैटिन–Nardostachys Jatamansi DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** जटामाँसी के बहुवर्षीय भौमिक काण्ड वाले, एकवर्षायु शाकीय पौधे होते हैं। काण्ड 10 सै. मी. तक ऊँचा मृदु शाखीय होता है। पर्ण–मूलोदृभव, संख्या में अनेक, 15 सै.मी. से 18 सै.मी. लम्बे, पत्र–आधार से बड़े उपर की ओर कम, रूप रेखा में आयताकार या कुछ लट्वाकार, विनाल, पुष्प–मुण्डक में शाखाग्र संख्या में अनेक, गुलाबी–श्वेत रंग के सुगन्धित, मूल–भौमिक काण्ड तीब्र सुगन्धित लोमश गुच्छों में रक्ताभवर्ण के जटा सद्यृश सधन रेशेदार। मूल बारीक खाकी रंग का होता है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–प्रकन्द, (भौमिक काण्ड)।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,000 मी. की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, पवालीकांटा, ताली, किनकोलियाखाल, सहस्त्रताल, खतलिंग, भागीरथीघाटी के दयारा, गंगोत्री, जाड़गंगाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, केदारनाथ, चोरावाड़ीताल, हथनी, मदमहेश्वर, तुगंनाथ, रूद्रनाथ, अलकनन्दाघाटी के हेमकुण्ड़, वसुधारा, नीतीपास, धौलीघाटी, हरकीदून, मेदनी बुग्याल, नन्दाकोट आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** मानसिक एवं रक्तवह संस्थान के विकारों में माँसी फान्ट का उपयोग करते है यह निद्राशामक, हृद्य है। धूपन सामग्री में एवं बालों की सुन्दरता के लिए भी माँसी मूल का प्रयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**शास्त्रीय योग :** माँस्यादिक्वाथ, अरविन्दासव, पीप्पल्यासव, ब्राह्मी वटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : सुरभिस्तु जटामाँसी, कषाया कटुशीतला।**
**कफ हृदभूतदाहध्नी, पित्तध्नी मोदकन्तिकृत।।** *(रा.नि.)*
**माँसी तिक्ता कषाया च, मेध्याकान्ति वलप्रदाः।**
**स्वाद्वी हिमात्रिदोषास्त्र दाहविसर्प कुष्ठनुत्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तगर; स्थानिक–सुमयाँ।

लैटिन–Valeriana wallichii DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके बहुवर्षीय शाकीय, रोमश पौधे होते है। मूल स्तम्भ गाँठदार, सुगन्धित, जड़े पतली, कई संख्या में, गुच्छेदार, पर्ण–मूलोद्भव, स्थायी सवृन्त, रूप रेखा में हृदयाकार–लट्वाकार 2 सै. मी. लम्बे 3 सैमी. चौडे, पत्रतट, दन्तुर, लहरदार, काण्ड–पत्र संख्या में कम एवं छोटे होते है। पुष्प शाखाग्र गुच्छों में गुलाबी–श्वेत वर्ण के होते है। पुष्प प्रायः एकलिंगी होते है।

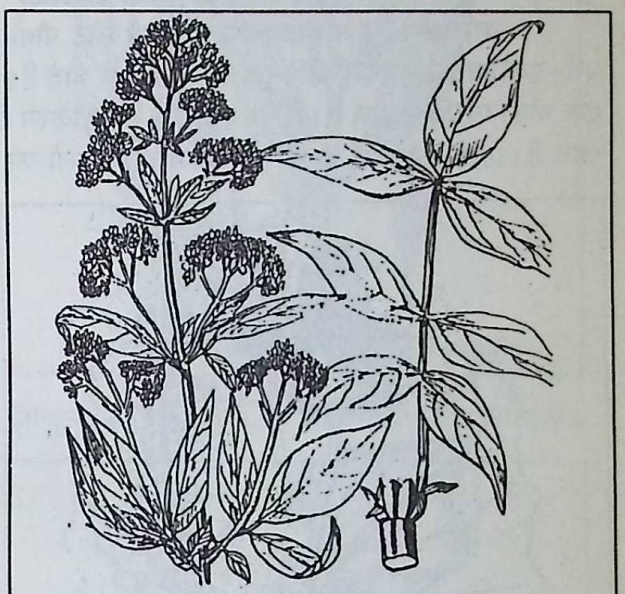
*तगर (Valeriana wallichii DC)*

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूलस्तम्भ, जड़े।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक चम्बा, काँणाताल, भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, अलकनन्दाघाटी, जमुनाघाटी, चकराता, देववन एवं मसूरी आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। इसकी औषधोपयोगी एक दूसरी जाति भी इन घाटियों में पायी जाती है। जिसे V. hardwickii Wall. कहते हैं मूल–स्तम्भ सीधा, अधोगामी, पत्र संयुक्त, पिच्छाकार, पुष्प–पुष्पक्रम में, कक्षीय तथा समशिख। व्यापारिक दृष्टि से इन घाटियों से इसके मूल स्तम्भ का संग्रह किया जाता हैं। ओर बाजार में सुगन्ध वाला के नाम से मिलता है।

**शास्त्रीययोग :** दशाँगलेप, तागरादिक्वाथ, ब्राह्मीवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तगरं स्यात् कषायोष्णंस्निग्धं दोषत्रयप्रणुत्।**
**द्यक् शीर्ष विषदोषध्नं भूतापस्मारनाशनम्।।** *(ध.नि.)*
**तगरं कटुक तिक्त कटुपांक सरंलधु।**
**स्निग्धोष्णां तुवरं भूत मदापस्मार नाशनम् ।।** *(कै. नि.)*

**कुल-ड़िपसेसी DIPSACEAE**

**द्रव्यनाम**–स्थानिक–विषकड़ार।

लैटिन–Morina longifolia Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 2-3 फुट लम्बा, काँटेदार, रोमिल, पत्र–अवृन्त, कांटेदार, 6-10" लम्बे, दन्तुर एवं तीक्ष्णाग्र, पुष्पक्रम अग्रस्थ, मुण्डक एवं पुष्प–गुलाबी सफेद रंग के। मूल–प्रकन्दी तथा उग्रसुगन्धित।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह हिमालय में 2,400 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मन्दाकिनीघाटी, देववन एवं मंसूरी, रानीखेत, वागेश्वर खरघाटी, दारमाघाटी, मुक्तेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। ग्रामीण लोग मूल का प्रयोग फोड़े को पकाने में करते है। इसके पुष्प विशेष गन्धवाले होते हैं। किम्वदन्ती के आधार पर इसकी बराबर सुगन्ध लेने से बेहोशी सी आती हैं। अतः इसके स्थानिक, संज्ञाहर (एनेस्थेटिक) गुण के समबन्ध में विचार किया जा सकता हैं।

**कुल-भृंगराजादिवर्ग COMPOSITEAE (Astenaceae)**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग की वनस्पतियाँ छोटे पौधों के रूप में अधिक एवं कुछ वृक्षक के रूप में पाई जाती हैं। पर्ण–एकाकार, कदाचित्, अभिमुख या गुच्छाकार होते हैं। पुष्प–अनेक संख्यक, मुण्ड़क के रूप में, ये छोटे–छोटे पुष्प एक चौड़ी परिधि में होते हैं। ये नर एवं मादा दोनों किस्म के होते हैं। कभी–कभी नर एवं मादा पुष्प अलग–अलग पाये जाते हैं। फल–कृष्णवर्ण के जीरक सद्यश इन्हीं फलों को बीज भी कहते हैं। इस वर्ग के प्रायः मूल एवं पत्र सुगन्धित होते हैं।

*कूठ (Saussurea lappa C.B. Clarke)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कुष्ठ ; स्थानिक–कूठ।

लैटिन–Saussurea lappa C.B. Clarke.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूल–कन्दिल, उग्रसुगन्धित, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित 2–4 फुट तक लम्बा, पत्र 6–12″ तक लम्बे, 5–6″ चौड़े, दीर्धायत, भालाकार, मूलज एवं दन्तुर, पुष्प–नालरहित, मुण्डक, गहरे, बैगनी रंग के। मूल कन्दिल, मूली सदृश खुरदरा तोड़ने पर श्वेताभ रालीय, उग्रसुगन्धित स्वाद में तिक्त एवं चरपरा होता हैं।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल; के बाद ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में इसकी खेती 2,400 मीटर की ऊँचाई पर गंगी (भिलंगनाघाटी), रैथल (भागीरथीघाटी) आदि स्थानों में की जाती है। इस क्षेत्र में कूठ की खेती की विशाल संभावनाऐं हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** तमकश्वास (दमा) एवं वातव्यधियों में ग्रामीण मूल का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कुष्ठादिचूर्ण, दशमूलारिष्ठ, सरिवाद्यारिष्ठ, कुमार्यासव, च्यवनप्राश, नारायण चूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कुष्ठं कटूष्णं तिक्तं स्यात्, कफमारूत कुष्ठजित्।**
**विसर्प विष कण्डूति खर्मूदद्रुध्न, कान्तिकृत्।।** *(रा.नि.)*
**कुष्ठं तिक्तं कंटुस्वादु लधुष्णं शुक्रलं जयेत्।**
**वातास्त्र विसर्प कुष्ठ कास कफानिलान्।।** *(कै.नि.)*
**कुष्ठं वातहराभ्यमोपयोगिनाम्।।** *(च.सू.अ. 25)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–फेनकमल ; स्थानिक–भेड़गन्धा।

लैटिन–Saussurea gossypiphora D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, मूलरोमिल, काण्ड–6–8″ लम्बा, उर्ध्वसंस्थित, पत्र–अवृन्त, मृदुरोमिल, दन्तुर, पुष्प–मुण्डक, गुलाबी–बैगनी रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4,000 मीटर की ऊँचाई तक सहस्त्रताल, खतलिंग, महस्त्रताल, हेमकुण्ड, धौलीघाटी, कल्पाग्लेसियर, गोमुख, हरकीदून आदि



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

स्थानों में कहीं–कहीं पाया जाता हैं। ग्रामीण लोग इसका प्रयोग भूतबाधाहर द्रव्य के रूप में करते हैं। यह दिव्यौषधियो में से कोई द्रव्य हो सकता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–स्थलपद्म ; स्थानिक–कोंल, बह्मकमल।

लैटिन–Saussurea abvallata Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, सुगन्धित शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 2–3 फुट लम्बा, मृदुरोमिल, पर्ण–दीर्घायत, भालाकार, अवृन्त, अरोमिल एवं तीक्ष्णाग्र, पुष्प–मुण्डक, बैगनी रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर।

प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

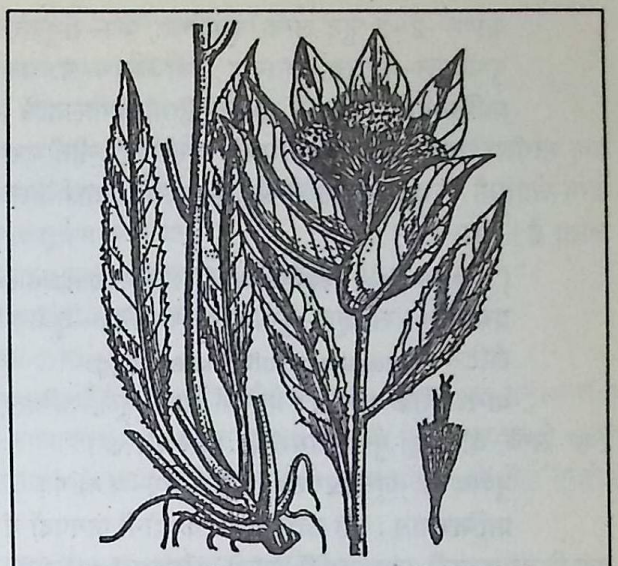

*बह्मकमल (Saussurea abvallata Wall)*

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4,000 मीटर की ऊँचाई तक सहस्त्रताल, रूपागली, खतलिगं केदारनाथ, वासुकीताल, हँथनी, गंगोत्री, तुंगनाथ, वसुधारा, हेमकुण्ड आदि हिमनदों पर कहीं–कहीं पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–दमनक ; स्थानिक–कुंणजा।

लैटिन–Artemisia valgaris Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप, काण्ड–शाखीय, सुगन्धित, 3–6 फुट लम्बा, पर्ण– 1–3", पिच्छाकार, संयुक्त, अच्छिन्नतट एवं कुण्डाग्र; पुष्प–सुगन्धित, हरित–पीताभ वर्ण के।

पुष्पकाल–अगस्त, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्र का प्रयोगशोथ को दूर करने के लिए करते है।

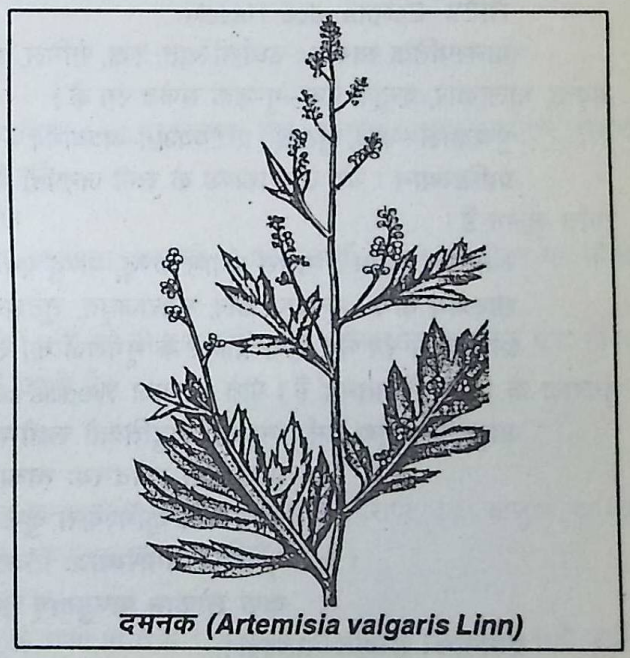

*दमनक (Artemisia valgaris Linn)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–शेषकी (छामस्या)।

लैटिन–Artemisia maritima Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, सुगन्धित क्षुप, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, मृदुरोमिल, पर्ण–संयुक्त, पिच्छाकार, पुष्प–पीले रंग के, सुगन्धित।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर। प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प।

**द्रव्यनाम :** प्रचलित–अफसन्तीन; स्थानिक–डुमार।

लैटिन–Artemisia absinthium Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, क्षुप, काण्ड–3 से 4 फुट तक, पत्र–सुगन्धित, मृदुरोमिल, ½–1" लम्बे, पुष्प–पीताभ श्वेत।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–गंगातुलसी।

लैटिन–Artemisia sacrorum Ledeb.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

काण्ड़–2–3 फुट लम्बा, सुगन्धित, पत्र–संयुक्त, पिच्छाकार, रोमिल, पुष्प–हरित पीत।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चाग।

**प्राप्तिस्थान :** इसकी सभी जातियाँ हिमालय में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक भागीरथीघाटी, अलकनन्दाघाटी, धौलीघाटी नीतीपास एवं भलारी आदि स्थानों पर पाई जाती हैं। इसके अलावा अन्य जातियाँ भी इनघाटियों के अलग–अलग ऊँचांई वाले स्थानों में मिलती हैं जिनका कि उपयोग चिकित्सा में किया जाता हैं। यथा :

(1) Artemisia vestita Wall. (2) Artemisia scoparia Waldst Kit (3) Artemisia parviflora Wight.

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–दुग्धफेनी ; स्थानिक–दूधी।

लैटिन–Taraxacum officinale Wigg.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूल, कन्दिल, दूधवाला, पत्र–मूलज, अवृन्त, अरोमिल, विषम आकार के, 2-8" लम्बे, दीर्घायत पुष्प–चमकीले, पीले रंग के।

पुष्पकाल–जून, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, जमुनाघाटी, मँसूरी, कांणाताल, चकराता, देववन एवं हरकीदून आदि स्थानों पर पाया जाता है। ग्रामीण लोग मूल क्वाथ का प्रयोग यकृत, प्लीहा के विकारों में करते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भृंगराज ; स्थानिक–भाँगरू।

लैटिन–Eclipta alba Hassk.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, रूक्ष, रोमिल, शाक, काण्ड़ 1–2 फुट लम्बा, पत्र–विषम आकार में सम्मुख, अवृन्त, भालाकार, दन्तुर, पुष्प–मुण्डक सफेद रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के सभी जनपदों में 1,600 मीटर की ऊँचाई तक नम एवं जलीय स्थानों पर सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** भांगरा पंचाग कण्डू, पाण्डु एवं बालों के रंगने के लिये ग्रामीण प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** भृंगराज तैल, भृंगराजधृत, सूतशेखर रस, गन्धक रसायन।

आयुर्वेद में रंग भेद से 3 प्रकार के भृंगराज का उल्लेख मिलता है। श्वेत, पीत एवं कृष्ण। अभी तक कृष्ण भृंगराज के विषय में मतभेद हैं। पीत भृंगराज Wedilia calendulacea को कहते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मार्कवः कटुतिक्तो रूक्षोष्णोंऽक्षिशिरोर्त्तिनुत्।**
**कफ वात हरोदन्त्यः त्वच्म्रकेश्योरसायनः।।**
**हन्तिकास कृमिश्वास कुष्ठशोफामपाण्डुता।।** *(कै.नि.)*
**भृंगराज समारव्यातः तिक्तोष्णो रूक्ष एवं च।**
**कफ शोफाम पाण्डुत्वग् हृद्रोगविषनाशनम्।।** *(ध.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सहदेवी।

लैटिन–Vernonia cinerea Less.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सहदेवी के स्वावलम्बी, सशाखीय 60 सै. मी. से 1 मीटर तक ऊँचे पौधे होते है। काण्ड़–पतला, मृदु शाखाओं वाला पर्ण–बहुरूपिक रेखाकार, अण्डाकार, लट्वाकार, अवृन्त होते है। पुष्प–हलके जामुनी रंग के बीज–बारीक काले जीरे से मिलते जुलते है। यह श्वेत एवं नील पुष्प भेद से दो प्रकार की होती है।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के उष्ण भागों में प्रायः 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सभी स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** ज्वरध्न के रूप में पंचाग क्वाथ का प्रयोग करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : सहदेवी दण्ड़ोत्पला विषम ज्वरनाशिनी।**
**सहदेवी द्विधा प्रोक्ता, श्वेता नीला च पुष्पतः।।**
**द्वयं चैकान्तरं हन्ति, भक्षणात् धारणादपि।**
**निद्राकरा धृताशीर्षे नीलासिध्म विनाशिनी।।** *(शोठल)*
**सहदेवी शिफावव्या श्वेतसूत्रेण कन्यया।**
**निहन्ति दक्षिणेवाहौं, ज्वर भूतग्रहादिकान्।।** *(वैद्यमनोरमा)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सोमराजी ; स्थानिक–धोड़ाजीरी, काली जीरी।

लैटिन–Centratherum anthelminticum (Willd) Kunt.

**वानस्पतिक स्वरूप :** काली जीरी के 2 मीटर तक ऊँचे एक वर्षीय पौधे होते हैं। काण्ड पर अनुलम्बदिशा में रेखाऐं एवं कहीं–कही 2 बैगनी चिन्ह भी होते है। पर्ण–भालाकार, सवृन्त, लट्वाकार, क्रकची, पुष्प–मुण्डक में शाकीय बैंगनी–गुलाबी रंग के होते है। बीज–जीरक सद्यश, कृष्णवर्ण के स्वाद में तिक्त होते है। पुष्प एकीन ही बीज बनते हैं। जिनका चिकित्सा में प्रयोग होता हैं।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में गांवो के नजदीक कहीं–कहीं पाया जाता है।

**वक्तव्य :** कुछ लोगों ने वावची का पर्याय सोमराजी माना हैं। परन्तु कुछ ग्रन्थकार सोमराजी को वाकुची से भिन्न द्रव्य मानते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–जंगली, पुदीना।

लैटिन–Ageratum conyzoides Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी शाक, काण्डरोमिल, 1–2 फुट लम्बा, पत्र–सम्मुख अथवा एकान्तर, सवृन्त, लट्वाकार एवं दन्तुर, रोमिल, पुष्प–श्वेत या जामुनी रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी धाटियों में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग धाव पर इसकी पत्ती को पीस कर बाँधते हैं। जिससे रक्तस्त्राव बन्द हो कर धाव अच्छा होता हैं। गुदभ्रन्श में पत्ती पीसकर लगाई जाती हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–अकलकोहड़ी।

लैटिन–Tridax procumbens Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शाक, काण्ड़ 1 फुट तक लम्बा रोमिल एवं उर्ध्वसंस्थित, विसर्पी, पत्र–सम्मुख, खण्डित, दण्ड़ित, दन्तुर एवं सूक्ष्मवृन्त वाले, पुष्प–मुण्ड़क, लम्बे, पुष्पदण्ड़ पर तथा पीले रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय क्षेत्र के उष्ण भागों में 1,200 मी. की ऊँचाई तक प्रायः सभी धाटियों में पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग रक्तस्त्राव को बन्द करने के लिए व्रण, धाव आदि में पत्रों का उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–छिक्किका ; स्थानिक–छिकनी।

लैटिन–Centipeda minima (Linn.) A. Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** शाक, शाखायें मूल से निकल कर चारों तरफ फैली हुई, पत्र–3–5" लम्बे, अधोमुख, भालाकार, दीर्घायत, पुष्प–मुण्ड़क, छोटे, गोलाकार एवं कुछ पीले रंग के।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में खेतों के आस–पास 1,200 मीटर की ऊँचाई तक नम स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग सिर में भारीपन अथवा शिरःशूल में स्वरस एवं चूर्ण का नस्य रूप में उपयोग करते हैं।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक, कुरो।

लैटिन–Xanthium strumarium Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** रूक्ष, कर्कश शाक, काण्ड 1–3 फुट लम्बा, पर्ण–सवृन्त, लट्वाकार, त्रिकोणदार, खडित एवं दन्तुर, पुष्प–मुण्डक, उभयलिंगी हरित–पीताभ वर्ण के, फल–कठोर एवं मृदु कण्टकित।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–फल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में सड़कों के आस–पास 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानों पर पाया जाता हैं। यह विदेशों से यहाँ आकर खरपतवार के रूप में पैदा हो गया है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–नीलकंठी।

लैटिन–Senecio alatus Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, शाक, काण्ड– 1 से 4 फुट लम्बा रोमिल, पत्र–मृदुरोमिल, 6 से 10" लम्बे लट्वाकार, हृदयकार, सवृन्त एवं दन्तुर, अधः पृष्ठ नीलाभ वर्ण, पुष्प–मुण्ड़क, पीले रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** इसकी कई जातियाँ इन घाटियों में पायी जाती हैं। जो 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक मिलती हैं। जिसमें नीलकंठी भेद S. jacquemontianus Benth. किस्म मुख्य हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग क्वाथ का प्रयोग ज्वरों में करते हैं।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक–चोपाली।

लैटिन–Sonchus asper Vill.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मृदुरोमिल, दुग्धयुक्त शाक, काण्ड़–शाखीय, ग्रन्थिमय, 2–3 फुट लम्बा, पत्र–भालाकार या पिच्छाकार, खड़ित 6–10 ''तक लम्बे, दन्तुर, अपसारी, शूलमय, पुष्प–पीले रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, मई। प्रयोज्यअंग–पञ्चाग।

इसकी अन्य कई जातियाँ इन धाटियों में मिलती है जिसमें दुधी S. aleraceus Linn. मुख्य हैं।

**प्राप्तिस्थान :** ये जातियाँ उत्तराखण्ड के सभी जनपदों के उष्ण भागों में खेतों के समीप नम स्थानों पर 1200 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाई जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण पञ्चांग का प्रयोग रक्तशोधन के लिए करते है।

**द्रव्यनाम**–संस्कृत–जातुकन्द ; स्थानिक–गोगल, धूप।

लैटिन–Jurinea macrocephala Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूलकन्दिल, पत्र–मूलज, 6–8'' तक लम्बे, खण्डित, रूक्ष, दीर्घायत, पुष्प–काण्डमूल से मुण्ड़क में।

*जातुकन्द (Jurinea macrocephala Benth.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः घास वाले ढालों पर भिलंगना घाटी, पंवालीकांटा, ताली, सहस्त्रताल, खतलिंग, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी, हरकीदून आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का प्रयोग धूपन एवं रक्षोध्न के रूप में करते हैं। इन धाटियों से मूल का संग्रह किया जाता हैं।

**वक्तव्य :** सुश्रुत संहिता में एक स्थल पर टीकाकार डल्हण ने जातुकंद को उत्तरापथ का गुग्गुल माना हैं जो सम्भवतः यही हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कुरी।

लैटिन–Biclens pilosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड, हरित, कृष्ण, 2–3 फुट लम्बा, पर्ण–अवृन्त, अधोमुख, लट्वाकार, खंडित, पुष्प–श्वेत वर्ण के मुण्डकों में।

पुष्पकाल–जनवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्र शाक का प्रयोग कुष्ठ में करते हैं।

**द्रव्यनाम**–स्थानिक–कड़वी बूटी।

लैटिन–Ainsliaea aptera DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड़ 2–3 फुट लम्बा, मृदुरोमिल, पत्र–4" से 5" लम्बे, दन्तुर, सवृन्त, मूल–कन्दिल स्वाद में तिक्त, मुण्डक–सफेद, गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई। प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियो में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल के क्वाथ का उपयोग तीव्र उदरशूल में वेदनाशामक के रूप में करते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–बुरुन्स।

लैटिन–Cnicus wallichii DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, काँटेदार शाक, काण्ड 3–6 फुट लम्बा रोमिल, पर्ण–दीर्घायत, अवृन्त एवं पत्रतट, काँटेदार, खंडित, पुष्प–मुण्ड़क सफेद रंग का। मूल–कन्दिल, सुगन्धित तथा सफेदी लिए हुए धूसर रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं। इसकी अन्य कई जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग कृमि एवं उदर विकार में करते हैं।

**द्रव्यनाम**–संस्कृत, पुष्करमूल ; स्थानिक–मानू।

लैटिन–Inula racemosa Hook. f.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, मूल–कन्दिल, सुगन्धित, काण्ड 2-3 फुट लम्बा, रोमिल, पत्र–एकान्तर, मूलज एवं सवृन्त, 6–8" लम्बे, दीर्घायत, मृदुरोमिल, पुष्प–मुण्डक–पीले रंग के तथा कक्षीय।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** गढ़वाल में 2,700 मीटर की ऊँचाई पर रैथल (भागीरथीघाटी), पिंडारघाटी आदि स्थानों पर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कहीं–कहीं इसकी खेती की जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** हृदय विकार एवं फुफ्फुस विकारों में ग्रामीण लोग मूल का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** पुष्करादिचूर्ण, दशमूलारिष्ठ, नारायणचूर्ण, महासुर्दशन चूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पुष्करमूलं हिक्कांश्वास कास पार्श्वशूलहराणाम्।** *(च.सू.अ. 25)*

**पुष्करं कटुकं तिक्तमुष्णं वातकफ ज्वरान्।**
**हन्तिकासाऽरूचिश्वासान् विशेषात् पार्श्वशूलनुत्।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–गुग्गल।

लैटिन–Tanacetum longifolium.

पञ्चांग का उपयोग हवन सामग्री एवं सौन्दर्य प्रसाधन में करते है। यह उत्तेजक, शोथहर कीटाणूनाशक है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कटेला।

लैटिन–Echinops niveus Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थितं शाक काण्ड़ 2–4 फुट लम्बा, कांटेदार, पत्र–3–8'' लम्बे, पिच्छाकार, विभक्त, पुष्प–मुण्ड़क, काँटेदार।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः चम्बा, कांणाताल, चकराता, मँसूरी आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल का प्रयोग ग्रामीण लोग कृमिध्न एवं मूत्रल के रूप में करते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मुण्डी ; हिन्दी–गोरखमुण्डी।

लैटिन–Sphaeranthus indicus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह सुगन्धित प्रसरणशील एवं 30 सैमी. तक ऊँचा एक वर्षीय पौधा हैं। काण्ड–सपक्ष, रोमिल, अभिलट्वाकार या अभिप्रासवत् पत्र–2-5 सै. मी. से 5 सै. मी. लम्बे, दन्तुर, अवृन्त, विनाल तथा काण्ड संसक्त होते हैं। पुष्प–मुण्ड़क में कदम्ब, पुष्प सद्यश गुलाबी रंग के होते हैं।

पुष्पकाल–अक्टूबर, नवम्बर ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पुष्प, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी तराई भावर के उष्ण क्षेत्रों में इसके पौधे खेतों के आसपास स्वंयजात पाये जाते हैं। धान के खेतों एवं नमदार स्थानों पर अधिक मिलते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मुण्डितिका कटुः पाके वीर्योष्णामधुरालघुः।**

**मेध्यागण्ड़ापचीकृच्छ्र, कृमिपित्तार्तिपाण्डुनुत्।।** *(म.नि.)*

**मुण्ड़िका कटुतिक्तास्यात्, अनिलास्त्र विनाशिनी।**
**आमारूचिऽन्यपस्मार, गण्ड़श्लीक्षपदनाशिनी।।** *(ध.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–झण्डू ; हिन्दी–गेंदा।

लैटिन–Tagetes arecta Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसका 60 सै. मी. से 2 मीटर तक ऊँचा पौधा होता हैं। काण्ड–मसृण, मृदु शाखीय होता हैं। पर्ण–सुगन्धित, अवृन्त, लट्वाकार होते हैं। पुष्प–पीतवर्ग के संख्या में कई होते हैं।

पुष्पकाल–सितम्बर, जनवरी ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** इसके पौधे बागों एवं घरों में सजावट के लिए सर्वत्र लगाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** घाव एवं चोट में फूलों का लेप करते हैं। यह व्रणरोपक एवं पूतिहर है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मयूरशिखा ; हिन्दी–मयूरजटी।

लैटिन–Elephantopus scaber Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके स्वावलम्बी 15 सै. मी. से 40 सेन्टमीटर तक ऊँचे पौधे होते हैं। शाखाएं द्विविभक्त,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रोमश, पर्ण–मूलोद्भव, रूपरेखा में अभिलट्वाकार या अभिप्रासत्, रोमश, पत्रतट. दन्तुर, आधार की ओर क्रमशः कम चौड़ी एवं पर्णवृन्त में रूपान्तरित होते हैं। पुष्प–मुण्ड़क, बैगनी रंग के होते हैं। मूल गुच्छों में शतावरी मूल सद्यश।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर; फलकाल–पुष्पकाल के बाद; प्रयोज्यअंग–मूल, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में इसके क्षुप कहीं–कहीं पाये जाते हैं।

**टिप्पणी :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ जनपदों में इस कुल की निम्न औषधीय प्रजातियाँ भी पायी जाती हैं। द्रब्यगुण शास्त्र में इनका समावेश किया जाय।

| | |
|---|---|
| 1. Adenostemma lavenia (Linn.) O, Kuntze. | 1,500–2,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Ainsliaea pteropoda DC | 2,400 मीटर की ऊँचाई तक |
| 3. Anaphalis cuneifolia HK .f. | 3,400 मीटर की ऊँचाई तक |
| 4. A. margaritacea Benth & Hook. f. | 2,200–2,260 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. A. royleana D.C. | 3,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 6. A. araneosa D.C. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 7. A. triplinervis C. B. Cl. | 2,500 मीटर की ऊँचाई तक |
| 8. Aster peduncularis Wall. ex Ness. | 2,800–3,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 9. A. indamellus Grieson. | 3,300–3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 10. Cicerbita macrorhiza (Royle)Beauv | 3,200 मीटर की ऊँचाई तक |
| 11. Cemanthodium arnicodes (Wall) R. Gooc | 3,400 मीटर की ऊँचाई तक |
| 12. Dubyaea hispida (D. Don) DC. | 3,400 मीटर की ऊँचाई तक |
| 13. Erigeron alpinus Linn. | 1,500–2,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 14. E. multiradiatus (DC.) Benth. | 2,000–3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 15. Eschenbachia stricta (Willd) Raizada. | 1,500–2,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 16. Gnaphalium affine D. Don. | 2,000–2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 17. Gynura angulosa DC. | 1,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 18. Helinium grandiflorum (Willd) O. Ktze. | 2,800–3,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 19. Inula cuspidata. C. B. Cl. | 1,800–3,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 20. Inula cappa DC. | 1,400 मीटर की ऊँचाई तक |
| 21. Leontopodium himalayanum DC. | 3,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 22. Laggera alata, Schultz. Bip. ex Oliv. | 1,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 23. Myriatis wallichii Less | 2,800 मीटर की ऊँचाई तक |
| 24. Prenanthes brunoniana Wall. | 2,700 मीटर की ऊँचाई तक |
| 25. Saussurea heteromalla (D. Don) Hand-Mazz. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 26. S. denticulata Wall. | 2,800 मीटर की ऊँचाई तक |
| 27. S. hypoleuca spreng. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 28. S. piptathera Edgew. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 29. Senecio chrysanthemoides DC. | 2,800–3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 30. S. rufinervis DC. | 2,000 मीटर की ऊँचाई तक |
| 31. S. alatus Wall ex DC. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 32. S. kuntianus Wall ex DC. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |
| 33. S. quinguelobus (Wall) H.K.f.Th. | 3,300 मीटर की ऊँचाई तक |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

34. Solidago virga-aurea Linn. — 3,000–3,800 मीटर की ऊँचाई पर
35. Tricholepis elongata DC. — 2,500–3,000 मीटर की ऊँचाई पर
36. Lactuca brunoniana Clarke. — 3,000–3,800 मीटर की ऊँचाई पर
37. Cirsium veratum Spreng. (मूल–रक्तरोधक) — 2,400–3,300 मीटर की ऊँचाई पर

**कुल-इरिकेसी ERICACEAE**

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–अनियार ; स्थानिक–अयांर।

लैटिन–Lyonia ovalifolia (Wall) Drude.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड–छाल, कार्कयुक्त, बादामी रंग की पत्र 3-6'' लम्बे, लट्वाकार, दीर्घायत, सरलतट, तीक्ष्णाग्र, पुष्प–सफेद रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक काणांताल, चम्बा, मन्सूरी, चकराता, देवबन, गढ़वाल एवं कुमांयु की सभी धाटियों में पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तालीसभेद ; स्थानिक–अतरासू।

लैटिन–Rhododendron anthopogon D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप, काण्ड–शाखीय, 6–12 फुट लम्बा, पत्र–1" से 2" लम्बे लट्वाकार, अधःपृष्ठ, रक्तवर्ण का, अवृन्त, पुष्प–पीताभ श्वेत एवं सुगन्धित।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कोठ्या।

लैटिन–Rhododendron lepidotum Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सुगन्धित, उर्ध्वसंस्थित, क्षुप, काण्ड–1 से 4 फुट लम्बा, पत्र–दीर्घायत या अधोमुख, लट्वाकार पत्रपृष्ठ रक्ताभ वर्ण का, पुष्प–सुगन्धित, गुलाबी रक्तवर्ण का।
पुष्पकाल–मई, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकनीघाटी, जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी, हरकीदून, दारमाघाटी, कालीघाटी, नन्दाकोट आदि स्थानों पर पाया जाता है। सैरेयक तथा उसके भेदों को अभी तक एक ही जाति माना जाता रहा है। वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह के अनुसार ये शास्त्रीय द्रव्य Rhododendron की जातियों में से हो सकते है ऐसा वृद्धत्रयी नामक ग्लौसरी में संकेत किया गया है।

*सिमरू (Rhododendron panulatum M.D.Don)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–सिमरू।

लैटिन–Rhododendron campanulatum D.Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप या वृक्ष, काण्ड 10 से 15 फुट तक लम्बा, पत्र–3–5" लम्बे, दीर्घवृत्तीय, अरोमिल, पुष्प–बड़े, सुन्दर, बैगनी–सफेद या मिश्रित रंग के तथा सुगन्धित।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पत्र।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखंड के गढवाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटीयों में पाया जाता हैं।

**द्रव्यमान :** संस्कृत–कुरवक; स्थानिक–बुराँश, लैटिन–Rhododendron arboreum Sm.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड–छाल–कार्क सद्यश धूसर वर्ण की, पर्ण 4–6" तक लम्बे, भालाकार, या दीर्धायत, अरोमिल तथा ऊपरी पृष्ठ श्वेतावरण से युक्त, पुष्प–बड़े, देखने में सुन्दर, लाल रंग के एवं गुच्छों में।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प।

*कुरवक (Rhododendron arboreum Sm)*

**प्राप्तिस्थान :** यह 1,500 मीटर-की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, चम्बा, काँणाताल, चकराता, देवबन जमुनाघाटी, पिंडारघाटी, रानीखेत, वागेश्वर, नैनीताल, मुक्तेश्वर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** नवीन पत्र विषैले होते है। ग्रामीण लोग पत्र स्वरस से साधित तैल का प्रयोग आमवात एवं गृध्रसीवात में करते हैं। पुष्पों की चटनी बनाकर खाते हैं। ग्रामीण वैद्य पुष्पों का उपयोग कासध्न एवं ग्राही रूप में करते हैं। वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह ने इसे शास्त्रीय कुरवक माना हैं। इस कुल की औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पायी जाती है। जिन पर विशेष अनुसन्धान की आवश्यकता हैं।

1. Cassiope fastigiata D. Don.
2. Gaultheria trichophylla Royle.
3. Rhododendron hypenanthum Balf.
4. Gaultheria nummularioides D. Don.

**कुल-चित्रकादिवर्ग PLUMBAGINACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में क्षुप, वृक्षक एवं शाकीय रूप की वनस्पतियाँ पायी जाती है। पत्र–एकान्तर एव गुच्छ के रूप में होते है। पुष्प–श्वेत, लाल, बैगनी रंग के, पुष्पवाह्यकोष अधःस्थायी नलिका सद्यश, पुंकेशर पंखड़ियों के अभिमुख, अण्डाकार, गर्भाशय उर्ध्वयी पाँचकोण में, फल–पतले, चिपचिपे, बीज–लम्बा और नली जैसा होता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चित्रक ; स्थानिक–चिपकुरो। लैटिन–Plumbago zeylanica Linn.

**वानस्पतिक सवरूप :** चित्रक के बहुवर्षीय गुल्म होते हैं। मूल का भीतरी भाग चरपरा एवं पीताभ वर्ण का, काण्ड़ एवं शाखाऐं रक्ताभ, रेखायुक्त, पत्र–एकान्तर पतले, लट्वाकार, अच्छिन्न तट, सवृन्त एवं निशिताग्र, पुष्प–सफेद रंग के शाखाग्रो पर एवं चिपचिपे, मज्जरियो में।

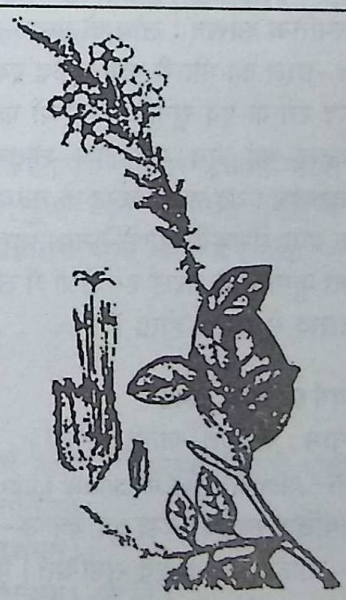

*चित्रक (Plumbago zeylanica Linn)*

पुष्पकाल–फरवरी से अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–मूल एवं मूलत्वक्।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वन खण्ड नरेन्द्रनगर, धोन्टी, देहरादून, उत्तरकाशी, धरासू आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण दाइयाँ मूल का उपयोग गर्भस्त्राव कराने के लिए करती हैं।

**शास्त्रीय योग :** चित्रकादिवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चित्रकोऽग्नि सम : पाके कटु शोफ कफापहः।**
**वातोदरार्शो ग्रहणी, कृमिकण्डूति नाशनः।।** *(रा.नि.)*

**कुल-प्रिमुलेसी PRIMULACEAE**

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–जोंकमारी।

लैटिन–Angallis arvensis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाक, काण्ड–चतुष्कोणीय, पत्र–अवृन्त, सम्मुख लट्वाकार ½ - 1" लम्बे, अच्छिन्न तट एवं तीक्ष्णाग्र, पुष्प–कक्षीय, एकाकी नीले रंग के।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उष्ण भागों में खेतों के आसपास 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता है। पंचांग का प्रयोग शोथनाशक एवं मूत्रल के रूप में किया जाता है। पीनस को दूर करने के लिए नस्य का प्रयोग करते है।

**कुल-लोध्रादिवर्ग SYMPOCACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, वृक्षक एवं क्षुप पाये जाते है। पर्ण–एकान्तर, उपपत्रविहीन, साधारण, सपुष्प, द्विबीजपर्ण, संयुक्तदल, उर्ध्वस्थगर्भाशय, 2 से 5 अन्तराल युक्त, स्त्री केशर नलिका मृदु होती है। फल के साथ पुष्प–वाह्यकोष के पत्र सलंग्न होते है। प्रत्येक अन्तराल में एक–एक बीज होता है। फल माँसल होता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–लोध्र ; स्थानिक–लोध।

लैटिन–Symplocos crataegoides Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** लोध के मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष पाये जाते है। काण्ड–15 से 20 फुट लम्बा, शाखीय, काण्ड–छाल का भीतरी भाग सफेद एवं परतदार, पत्र 2–4'' लम्बे, लट्वाकार, दन्तुर एवं अघः पृष्ठ हल्के रंग का, पुष्प–सफेद रंग के एवं सुगन्धित। पुष्पों का उपयोग ईत्र बनाने के लिये किया जाता है।

पुष्पकाल–मई, जून। फलकाल–शीतकाल। प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,500 मीटर की ऊँचाई से 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः वणचुरी, माणीकिनाथ, धुत्तु चकराता, देवबन, मंसूरी एवं जमुना आदि धाटियों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त कुमाऊँ के तराई वन क्षेत्रों में लोध S. racemosa Roxb. प्रजाति भी कहीं–कहीं पायी जाती हैं। इसकी छाल का लोघ्रासव में प्रयोग होता है।

**कुल-जात्यादिवर्ग OLEACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जाती, चमेली।

लैटिन–Jasminum Officinale Linn. var. grandiflorum Bailey.

**वानस्पतिक स्वरुप :** बड़ा क्षुप, काण्ड़–शाखीय, परिसृत, पत्र–सम्मुख, विषम पिच्छाकार, पत्रक 9 से 11 अवृन्त, अरोमिल, पुष्प– सफेद रंग के एवं सुगन्धित। पुष्पों का उपयोग ईत्र बनाने के लिये किया जाता है।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पुष्प, पत्र।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–स्वर्णयूथिका।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लैटिन–Jasminum humile Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, क्षुप, काण्ड़–शाखीय, पत्र–एकान्तर, विषम पिच्छाकार, पत्रक 1 से 5 जोड़ो में आकार में छोटे–बड़े, लट्वाकार एवं भालाकार, पुष्प–पीले रंग के सुगन्धित पुष्पों का उपयोग ईत्र बनाने के लिये किया जाता है।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उपरोक्त दोनों जातियां इन घाटियों में 600 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र मिलती है।

**शास्त्रीय योग :** जात्यादितैल।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शिवमल्ली, वकपुष्प ; स्थानिक–शिलंगी।

लैटिन–Osmanthus fragrans Lour.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड–छाल अन्दर से लाल रंग की, पत्र–सम्मुख, लट्वाकार–अरोमिल एवं तिक्ष्णाग्र, पुष्प–सफेद रंग के एवं सुगन्धित। पुष्पों का उपयोग ईत्र बनाने के लिये किया जाता है।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ; प्रयोज्यअंग–छाल, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में गुप्तकाशी, कालीमठ, जोशीमठ आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण वैद्य छाल का उपयोग मुखरोग एवं दन्तविकारों में करते है। पुष्पों से विशेष सुगन्धित तैल बनाया जाता है एवं यहाँ के लोग इसे माँगलिक वृक्ष मानते है। ठा. बलवन्त सिंह ने इसे शास्त्रीय वक पुष्प स्वीकार किया हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–सफोरी।

लैटिन–Syringa emodi Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती, बड़ा क्षुप, पर्ण–3" से 4" लम्बे, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत, अच्छिन तट एवं लम्बाग्र, पुष्प–गुलाबी, तट सफेद रंग के एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–बीज, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** यह 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक चकराता, देववन, रामवाड़ा, गंगी, पौवागी एवं जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–यूथिका ; हिन्दी–जूही।

लैटिन–Jasminum auriculatum Vahl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह आरोही गुल्मनुमा जाति की वनस्पति है। पर्ण–साधारण, कभी–कभी त्रिपत्रक, इसमें नीचे के पत्रक छोटे, अण्डाकार, गोल, मसृण एवं मृदु रोमिल होते है। पुष्प–श्वेत, सुगन्धित गुच्छों में।

इसकी अन्य किस्में उत्तराखण्ड हिमालय की निचली घाटियों में पायी जाती है। यथा :–

1. Jasminum arborescens Roxb. (चमेली)
2. Jasminum. sambac Ait. (मालती/मोतिया)
3. Jasminum multiflorum Andr. (कुन्द)
4. Jasminum dispermum Wall.

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय की निचली घाटियों एवं उद्यानों में इसकी लतायें पायी जाती है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : यूथिका युगलं स्वादु, शिशिरं शर्करार्तिनुत्।**
**पित्तदाह तृषाहारि, नानात्वग् दोषनाशनम्।।**
**सर्वासां यूथिकानां तु, रसवीर्यादिसाम्यता।** *(रा.नि.)*
**मधुरं तुवरं हृद्यं पित्तध्नं कफवातलम्।**
**व्रणास्त्र मुखदन्तक्षि, शिरोरोग विषापहम्।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पारिजात, शेफालिका ; हिन्दी–हारसिगांर; स्थानिक–कुरी।

लैटिन–Nyctanthes arbortristis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके क्षाड़ीदार एवं मध्यम कद के वृक्ष होते है। काण्डछाल भूरे रंग की खुरदरी होती है। पर्ण–विपरीत, स्पर्श में अत्यन्त रूक्ष, खर, नुकीले अण्डाकार, आधार की तरफ गोल, पत्रतट, अखण्ड़, एवं दन्तुर, पुष्प–केसरियावर्ण के सुगन्धित, फल–चपटे, गोल, हरे रंग के होते है।

पुष्पकाल–फरवरी से जून ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पुष्प, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों एवं हिमालय की निचली घाटियों में सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पत्रक्वाथ का प्रयोग गृद्यसीवात में करते है। पुष्पों का उपयोग सुगन्धित तैलों के रूप में किया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : प्राजक्तः पारिजातश्च, हारश्रृगारपुष्पकः।**
**नाल कुंकुमको राग पुष्पी, च खरपत्रकः।।** *(नि.स.)*
**तत्पत्रं पित्तोरोगध्नं, कर्ण व्याधि विनाशनम्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मुष्कक ; हिन्दी–मोखा (श्वेत)।

लैटिन–Schrebera swieteníoides Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मोखा के मध्यम आकार के वृक्ष होते है। काण्डत्वक् मसृण श्वेताभ वर्ण का होता है। पर्ण–विपरीत पक्षवत्, पत्रक 9 की संख्या में मसृण होते है। पुष्प–पीताभ–गुलाबी रंग के, दलचक्र नलिका के अग्रभाग में निर्विष्ठ, फल–घण्टाकार, लटके हुऐ कठोर, बीज 3 से 4 तक होते हैं।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, क्षार।

**प्राप्तिस्थान :** हल्द्वानी के मैदानी भागों में इसके वृक्ष सर्वत्र स्वयंजात होते है। इसके अतिरिक्त कहीं–कहीं कृष्ण मुष्कक भी पाया जाता है। श्वेत मुष्कक को अधिक उपयोगी माना गया है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मोक्षकः कटुकस्तिक्तो, ग्राह्यष्ण कफवातहत्।**
**विषमेदोगुल्मकण्डू, वस्तिरूक् कृमिशुक्रनुत्।।** *(भा.प्र.)*
**क्षारश्रेष्ठ क्षारवृक्षो द्विविध श्वेत कृष्णकः।।** *(भा.प्र.)*

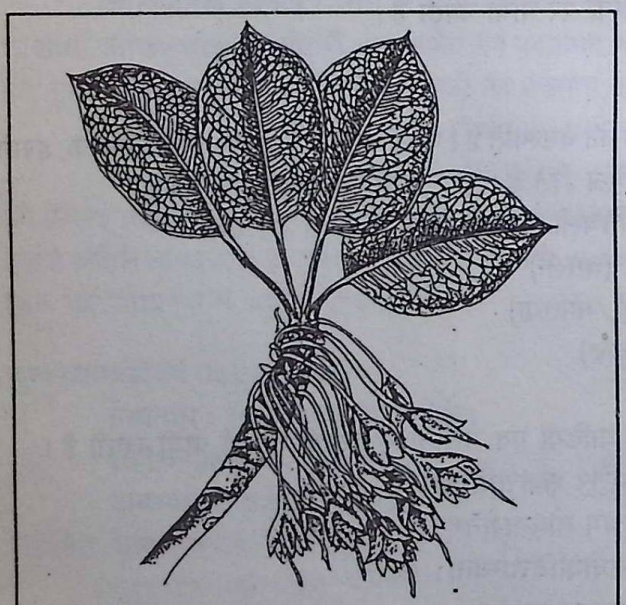

*महुआ (Madhuca indica J.F. Gmel.)*

**कुल-मधुकादिवर्ग SAPOTACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मधुक ; हिन्दी–महुआ।

लैटिन–Madhuca indica J.F. Gmel.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा पर्णपाती वृक्ष, काण्ड–छाल हरिताभ, पत्र–5–7" लम्बे, दीर्घवृत्तीय या दीर्घायत, लम्वाग्र एवं कुठित, पुष्प–पीताभ श्वेत एवं मादक गन्ध वाला।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ;

फलकाल–जून, जुलाई ;

प्रयोज्यअंग–पुष्प, फल, बीज, तेल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के मैदानी उष्ण भागों में सड़कों के किनारे कहीं–कहीं पाया जाता है। इसकी दूसरी जाति भी देहरादून के आसपास पाई जाती है। जिसे मधूकपुष्पी (च्यूरा) M. butyracea(Roxb.) Macbride. कहते हैं। यह पिथौरागढ़ जनपद के उष्ण भागों में भी पाया जाता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पुष्पों का उपयोग मद्य बनाने के लिए करते है। महुवा के पुष्पों को आटे में मिलाकर रोटी खाते है

**शास्त्रीय योग :** मधुकासव, मधुकहिम।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मधुक पुष्पं मधुरं शीतलं गुरू वृहंणम्।**

**बलशुक्रकरं प्रोक्त, वात पित्त विनाशनम्।।**

**फलं शीत गुरू स्वादुं, शुक्रलं वात पित्तनुत्।**

**अहृद्यं हन्ति तृष्णास्त्र, दाहश्वास क्षतक्षयान्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बकुल ; हिन्दी–मौलसरी।

लैटिन–Mimusopus elengi Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके सघन, चिकने मध्यम कद के वृक्ष होते है। काण्ड़ स्कन्ध अपेक्षाकृत छोटा तथा सीधा होता है। इसकी शाखा प्रशाखा निकल कर चारो ओर फैली रहती है। पत्र–सघन, मसृण, अंडाकार, नुकीले पुष्प–सुगन्धित, श्वेतवर्ण के अकेले या मञ्जरियों में निकलते है। फल–लम्बा, अण्डाकार एवं पकने पर नारंगी पीत वर्ण का होता है। बीज–चपटा चमकीले भूरे रंग का होता है।

पुष्पकाल–मई से अगस्त ; प्रयोज्यअंग–त्वक्, पुष्प, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उद्यानों एवं सड़कों के आसपास इसके वृक्ष लगाये हुऐ पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पुष्पों का उपयोग देवपूजा में करते है। पके फल खाये जाते है। छाल का उपयोग दन्तविकारों में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** बकुलाद्यतैल, बकुल पुष्पार्क, बकुलदन्तमञ्जनचूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मधुरं च कषायं च, स्निग्धं संग्राहावाकुलम्।**

**स्थिरीकरं च दन्तानां, विशदं तत्फलं गुरू।।** *(ध.नि.)*

**मधुरञ्च कषायञ्च स्निग्धं संग्रहिबाकुलम्।।** *(सु.सू.अ. 46)*

**चलदन्ते तु गण्डुषो वकुलत्वक् कृतौ हितः।।** *(चक्रदत्त)*

## कुल-तिन्दुकादिवर्ग EBENACEAE

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकतिन्दुक ; स्थनिक–विषतेन्दु।

लैटिन–Diospyros cordifolia Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बड़ा क्षुप या मध्यम आकार का वृक्ष, काण्ड़–शाखीय, तीक्ष्ण काँटेदार, पर्ण 2-4" लम्बे, दीर्घायत, झिल्ली सद्यृश, गहरे हरे, रोमिल, पुष्प–हरिताभ, फल–गोल, माँसल एवं पकने पर पीले रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; फलकाल–शीतकाल में ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में निचली घाटियों में इसके वृक्ष पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिन्दुक ; स्थानिक–तेन्दु।

लैटिन–Diospyros tomentosa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष होते है। पत्र–एकान्तर, 3" से 6" लम्बे, लट्वाकार, रोमिल, सवृन्त, पुष्प–हरित, पीताभ, फल–पकने पर पीला, मसृण, सुगन्धित, मधुर।

पुष्पकाल--मई, जून ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वन खण्ड, नरेन्द्रनगर एवं



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

देहरादून आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता हैं। इसके अतिरिक्त अन्य जाति भी इन स्थानों पर मिलती है जिसे पीना– D. montana Roxb. कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पके फल खाये जाते हैं। पत्र–बीड़ी पत्ता के नाम से प्रयोग किया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तिन्दुकं कफपित्तध्नं कषायं मधुरं लधुः।** *(च. सू. अ. 21)*

**स्यादामं तिन्दुकं ग्राही वातलं शीतलं लधु।**
**पक्वं पित्त प्रमेहास्त्र श्लेष्मध्नं मधुरं गुरूः।** *(भा.प्र.)*

## कुल-पील्वादिवर्ग SALVADORACEAE

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पीलू ; हिन्दी–पीलु (बड़ा)।

लैटिन–Salvadora persica Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पीलु के मध्यम आकार के टेड़े–मेड़े वृक्ष होते है। पर्ण–आमने–सामने, रूपरेखा में अण्डाकार, चर्मिल, सिरे पर गोल होते है। पुष्प–सूक्ष्म, हरिताभ, श्वेत, फल–एक बीज वाला तथा माँसल होता है। पकने पर फल रक्त एवं पीतवर्ण का होता है। स्वाद में फल मीठा एवं चटपटा होता है।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ; फलकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** इसके गुल्म उत्तराखण्ड के मैदानी तराई भावर क्षेत्र में स्वयंजात पाये जाते है। इसके अतिरिक्त लधु पीलु–Salvadora oleoides Dcne. नामक जाति भी इस क्षेत्र में पाई जाती है।

## कुल-कुटजादिवर्ग APOCYNACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, लता एवं क्षुप सभी प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती है। इस वर्ग के द्रव्य सविष, दूध–युक्त एवं सुन्दर पुष्पों वाले होते है। पर्ण–चमकदार, मसृण, अभिमुख, अखण्ड एवं उपपत्र रहित, अखण्ड किनारे वाले होते है। पुष्प लाल, गुलाबी, श्वेत, पीत अनेक रंग वाले होते है। फल–लम्बगोल या सेम आकार के एक वृन्त पर फली संयुक्त जोड़े में होती है काण्ड, पत्र एवं पुष्प को तोड़ने पर श्वेताभ दुग्ध निकलता है। बीज अनेक प्रकार के होते है।

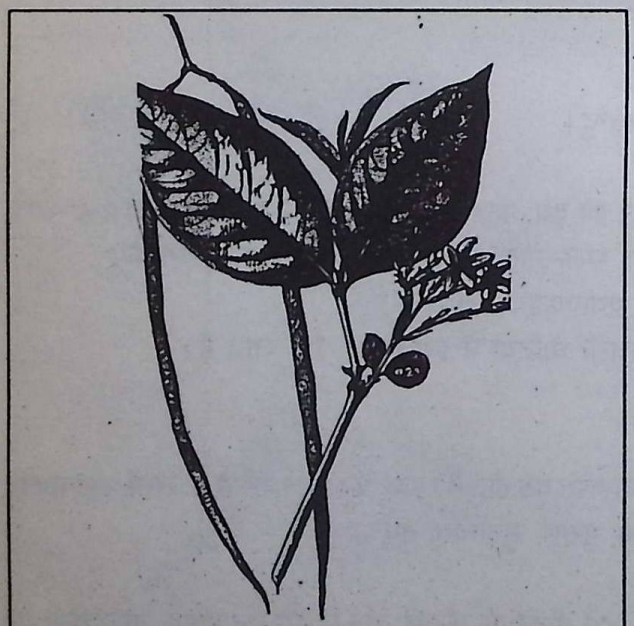

*कुटज (Holarrhena antidysenterica Wall)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कुटज ; स्थानिक–कूड़ा।

लैटिन–Holarrhena antidysenterica Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णपाती, दुग्धयुक्त वृक्ष, काण्ड मसृण, छाल स्वाद में तिक्त, पत्र–4-6" लम्बे, दीर्घायत, लम्बाग्र, चमकीले, हरे रंग के, पुष्प–सुगन्धित, सफेद रंग के, फलियाँ–पतली, लम्बी, दो–दो एक साथ परन्तु अलग–अलग। इन फलियों के बीज को इन्द्रयव कहते हैं जो कि स्वाद में तिक्त होते है।

पुष्पकाल–मई, जून; फलकाल–शीतकाल; प्रयोज्यअंग–छाल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वन खण्ड, मुनिकीरेती, नरेन्द्रनगर, देवप्रयाग, आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है एवं सभी जनपदों के शिवालिक एवं भावर–तराई क्षेत्र में सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल चूर्ण एवं बीजों का उपयोग



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रवाहिका (मरोड़) में मट्टे के साथ करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कुटजारिष्ठ, कुटजावलेह, कुटजधनवटी, गंगाधर चूर्ण, महासुदर्शनचूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कुटजः कुटको रूक्षो दीपन स्तुवरोहिमः।**

**अर्शोतिसार पित्तास्त्र, कफ, तृष्णामकुष्ठजित्।।** *(भा.प्र.)*

**तत्पुष्पं शीतलं तिक्तं, कषायं लधुदीपनम्।**

**वातलं कफ पित्तास्त्र कुष्ठातिसार जन्तुजित्।।** *(कै.नि.)*

**इन्द्रयव त्रिदोषध्नः संग्राही शीतल, कटुः।**

**ज्वरातिसारः रक्तार्शः कृमि विसर्प कुष्ठनुत्।।** *(भा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–मीठा, इन्द्रयव।

लैटिन–Wrightia tomentosa R.&S.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष, काण्ड–क्षीरयुक्त, पत्र–सम्मुख पाती, 3–6" लम्बे, दीर्घ वृत्तीय, लम्बाग्र, कृकची तट, पुष्प–सफेद रंग के, फलियाँ 8" से 12" लम्बी एवं जोड़ा पूरी लंम्बाई में संयुक्त बीज–इन्दयव सद्यश एवं मधुर।

पुष्पकाल–मई, जून ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–छाल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी बन खण्ड, व्यासी, लक्ष्मण झूला, देहरादून, जौनसार, कोटद्वार, हल्द्वानी आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सर्पगन्धा ; हिन्दी–धवलरूआ।

लैटिन–Rauwalfia sarpentina Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** छोटा मसृण क्षुप, काण्ड़ 1–2 फुट लम्बा, पत्र भालाकार या दीर्घवृत्तीय, विपरीत, अथवा चक्रिक, पत्र–चमकीले, अभिलट्वाकार, छोटे पर्णवृन्त युक्त होते है। पुष्प–छोटे गुच्छों में श्वेत–गुलाबी रंग के, फल–रक्ताभ, माँसल बैगंनी रंग का होता है। मूल–स्वाद में कटु, गन्धयुक्त।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ;

प्रयोज्य अंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के तराई वाले बनों में पाया जाता है। विशेष कर देहरादून, चौहड़पुर, ऋषिकेश, कोटद्वार आदि स्थानों पर कहीं–कहीं पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** मानसिक विकार में मूलचूर्ण का प्रयोग करते हैं।

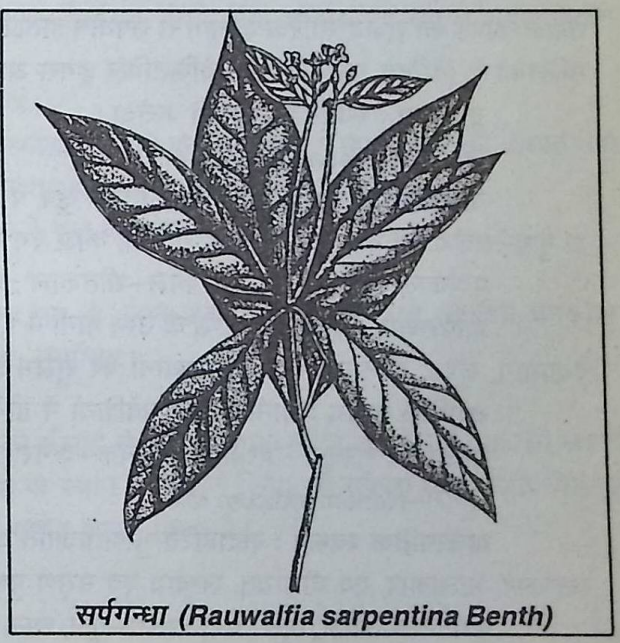

*सर्पगन्धा (Rauwalfia sarpentina Benth)*

**शास्त्रीय योग :** सर्पगन्धादिचूर्ण, सर्पगन्धावटी।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सपृपर्ण; हिन्दी–सप्तपर्ण, छितवन, सतौना।

लैटिन–Alstonia scholaris Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का क्षीरी वृक्ष, काण्ड़–शाखीय, पत्र–संख्या में 7, प्रायः एक ग्रन्थि से निकले हुए, 4"-7" लम्बे, अघोमुख, लट्वाकार, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत, पत्र–वृन्त छोटा, पुष्प–हरित, श्वेतवर्ण के फलियाँ–लम्बी, दो–दो एक साथ।

पुष्पकाल–दिसम्बर, मार्च ; फलकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल, दूध।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वन खण्ड, नरेन्द्र नगर,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कालसी आदि स्थानों पर मिलता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** छाल का उपयोग ज्वर, श्वास में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** सपृपर्णसत्वादिवटी, मलेरियासंहारकवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : त्रिदोषशमनों हृद्यः सुरभिदीपन सरः।**

**शूल गुल्म कृमीन् कुष्ठं, हन्तिशाल्मलिपत्रकः।।** *(ध.नि.)*

**सपृपर्णो व्रणश्लेष्म वात कुष्ठास्त्र जन्तुजित्।**

**दीपनः श्वास गुल्मघ्नः, स्निग्धोष्णा स्तुवरोसरः।।**

**कुष्ठं जीर्ण ज्वरं श्वासं गुल्मं च ग्रहर्णी तथा।**

**प्रवाहिका स रक्तां च, वातरक्तं विनाशयेत्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आस्फोता ; स्थानिक–सफेद बेल, दुधी बेल।

लैटिन–Vallaris heynei Spreng.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, क्षीरयुक्त क्षुप, काण्ड–सफेद रंग का, पत्र–सम्मुख, 2-4" लम्बे, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत, लम्बाग्र एवं सवृन्त, पुष्प–सफेद रंग के एवं सुगन्धित।

पुष्पकाल–दिसम्बर, अप्रैल ; प्रयोज्य अंग–मूल, काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्राय टिहरीवन खण्ड, नरेन्द्र नगर, धोन्टी, धनशाली आदि सभी स्थानो पर यत्र–तत्र पाया जाता है। आजकल हरिद्वार और देहरादून की फार्मेसियों में उसके काण्ड का सफेद सारिवा के नाम से उपयोग होता है। सम्भवताः यह श्वेत सारिवा से भिन्न द्रब्य आस्फोता, अस्फुर मल्लिका हैं (देखिये ग्लोसरी आफ वेजिटेविल ड्रगस् आफ बृहत्रयी ठा. बलवन्त सिंह)।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–जंगली करौदा।

लैटिन–Carissa spinarun A. DC.

**वास्तविक स्वरूप :** सदाहरित काँटेदार क्षुप, पत्र–सम्मुख, लट्वाकार, मृदुरोमिल क्षीरयुक्त एवं गहरे–हरे रंग के पुष्प–सफेद रंग के, फल–माँसल, गुलाबी, काले रंग का।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्य अंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वन खण्ड, धोन्टी, धनशाली, देवप्रयाग, कुण्ड़, श्रीनगर आदि सभी स्थानों पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मवेशियों में होने वाले खुरपका रोग में मूलक्वाथ का बाह्य प्रयोग करते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–करबीर ; स्थानिक–कनेर।

लैटिन–Nerium indicum Mill.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित गुल्म प्रजाति के छोटे वृक्ष होते है। पत्र–चमकीले गाढ़े रंग के, 4–6" लम्बे, रेखाकार, भालाकार, एवं दीर्घायत, लम्बाग्र एवं मसृण पुष्प–बड़े, सुगन्धित, रक्त वर्ण के, फलियाँ 6"–7" तक लम्बी।

पुष्पकाल–अप्रैल, जून ; प्रयोज्यअंग–मूल, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में नालों के आस–पास प्रायः देहरादून, राजपुर, ऋषिकेश आदि स्थानो में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** करवीरयोग, करवीरादितैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : करवीरः कटुस्तिक्तो वीर्ये चोष्णो ज्वरापहः।**

**चक्षुष्य कुष्ठकण्डूघ्न, प्रलेयाद्विषमन्यथा।।** *(ध.नि.)*

**करवीर द्वयं तिक्तं कषायं कटुकं च तत्।**

**व्रणलाधव कृन्नेत्र कोपकुष्ठव्रणापहम्।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–काली दुधी।

लैटिन–Ichnocarpus frutescens Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** चक्रारोही, क्षीरी क्षुप, काण्ड–काला, हरा, पत्र–2-3" लम्बे, दीर्घवृतीय, दीर्घायत, लट्वाकार, भालाकार, लम्बाग्र एवं मृदुरोमिल, पुष्प–सफेद रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्य अंग–काण्ड़।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमांऊ के उष्णकटिबन्धीय भागों शिवालिक वनखण्ड देहरादून वनखण्ड टिहरीवनखण्ड अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर, काशीपुर, हलद्वानी आदि स्थानों पर 900 मीटर की ऊँचाई तक उपलब्ध है। सारिवा के नाम से इसका उपयोग कतिपय फार्मेसियों में किया जाता है।

**कुल-अर्कादिवर्ग ASCLEPIADACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में गुल्म, लता एवं क्षुप पाये जाते हैं। काण्ड़–दुग्धिल, रसदार पर्ण–अभिमुख, चक्राकार, उपपत्ररहित, अखण्डित, पुष्प–नियमित द्विबीजपर्ण, उभयलिंगी, पुष्प बाह्यकोष एवं पुष्पाभ्यनतर कोष पाँच–पाँच, फल–युग्म, कोषमय, बीज–रोमश रूईयुक्त।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कृष्णसारिवा ; स्थानिक–काली दुधी।

लैटिन–Cryptolpis buchanani R. & S.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी दुग्धयुक्त, परिस्तृत काष्ठीय लतायें होती है। काण्डत्व बैंगनी आभा लिए हुए, पतली पर्त के रूप में छूटती है। पत्र–3" से 6'' लम्बे, मसृण, दीर्घायत, दीर्घवृत्तीय, लम्बाग्र एवं सवृन्त, पुष्प–पीताभ श्वेत, फल–गोल, लम्बे एवं दो–दो एक साथ।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्य अंग–मूल, काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरीवन खण्ड, नरेन्द्र नगर, धोन्टी, श्रीनगर एवं देहरादून आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** सर्पविष में वामक एवं सर्पदंश में मूल का लेप करते है।

**द्रव्यनाम**–लैटिन-Periploca calophylla Falc.

**वानस्पतिक स्वरूप :** अरोमिल क्षुप शाखा–परिसृत, पत्र–3'' लम्बे, संकीर्ण, भालाकार, लम्बे, तीक्ष्णाग्र, चमकीले, पुष्प–हरिताभ पीतवर्ण का, फलियाँ 6'' तक लम्बी, पतली, सुगन्धित।

पुष्पकाल-अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग-मूल, काण्ड़।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक नम स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है। इसे शास्त्रीय कृष्ण–सारिवा के स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह ने प्रचलित कृष्ण सारिवा के विषय में सन्देह व्यक्त किया है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–मूर्वा।

लैटिन–Marsdenia tenacissima W & A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, दूध वाला क्षुप, काण्ड़–छाल, कार्की, मूल–माँसल सफेद रंग की, पत्र–4" से 6" लम्बे, लट्वाकार, हृदयाकार, सवृन्त एवं लम्बाग्र, पुष्प–हरिताभ, पीत वर्ण के, फल–श्रृंगवत्।

पुष्पकाल–अप्रैल, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह हिमालय के उष्ण भागों में प्रायः व्यासी, देवप्रयाग, देहरादून, रानीपोखरी आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मूर्वा सरागुरूः स्वादुस्तिक्ता पित्तास्त्रमेहनुत्।**
**त्रिदोष तृष्णा हृद्रोग कण्डु कुष्ठज्वरापहा।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मूर्वा, भेद ; स्थानिक–खरचू।

लैटिन–Marsdenia royle Wight.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही क्षुप, काण्ड–दूधवाला, मृदुरोमिल, पत्र–3" से 6" तक लम्बे, अण्डाकार, लम्बाग्र, पत्र–वृन्त वाला भाग गहरा, हृदयाकार, पुष्प–छोटे, नारंगी रंग के, फल–रूक्ष, दो–दो एक साथ।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–मूल, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई पर प्रायः घुत्तू, गंगी, गुप्तकाशी, फाटा, जोशीमठ, मन्सूरी, अल्मोड़ा आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकतुण्ड़ी ; स्थानिक–ककवां।

लैटिन–Asclepias curassavica Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षीरी क्षुप, काण्ड़ 3–5 फुट तक लम्बा, अरोमिल, पर्ण–सम्मुख, भालाकार, दीर्धायत, 2–3" तक लम्बे, पुष्प–नारंगी रंग के, फल–एकाकी।

पुष्पकाल–मार्च, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक नदियों के किनारे घुत्तू, उत्तरकाशी, जमुनाघाटी आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसे विषैला मानते हैं। मूल–वामक है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अर्क ; स्थानिक–आक, मदार; लैटिन–Calotropis procera Br.

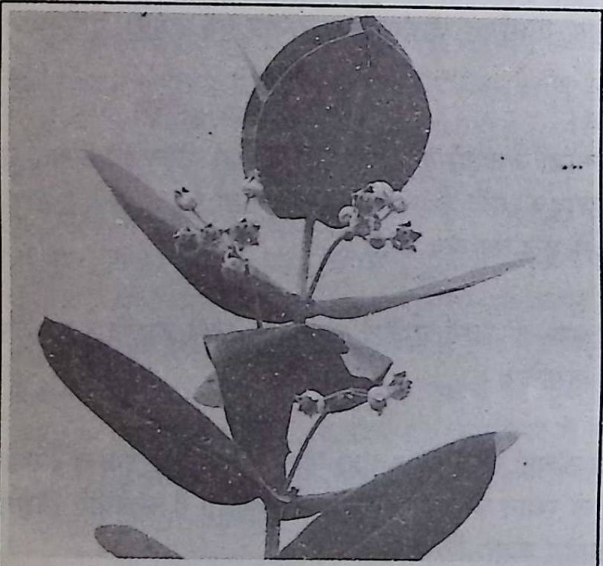

*रक्त अर्क (Calotropis procera Br.)*

*श्वेत अर्क (Calotropis gigantea Br.)*

**वानस्पतिक स्वरूप :** आक का गुल्म के आकार का बहुशाखीय दुग्धमय पौधा हैं। काण्ड़–अरोमिल, पत्र–लम्बे, गोल, मांसल, 5–6" तक लम्बे, दीर्घायत पुष्प–लाल, गुलाबी रंग के, फल–बीज, तेल युक्त।

पुष्पकाल–जनवरी, मई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, दुग्ध।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरीवन खण्ड, नरेन्द्रनगर, टिहरी, देहरादून, ऋषिकेश, कोटद्वार, हल्द्वानी आदि स्थानों में पाया जाता है। इसकी दूसरी जाति भी देहरादून एवं ऋषिकेश के आस–पास पाई जाती है। जिसे अर्लक या श्वेत अर्क Calotropis gigantea Br. कहते है

**स्थानिक प्रयोग :** कास में मूलचूर्ण का उपयोग ग्रामीण लोग करते हैं। उदर रोगों में अर्कदुग्ध का उपयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**शास्त्रीय योग :** अर्कलवण, अर्कतेल, कनकासव, महाविषगर्भतैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अर्कस्तिक्तो भवेदुष्णाः शोधनः परमस्मृतः।**
**कण्डूव्रणहरो हन्ति जन्तुसंसति मुच्छताम्।।** *(ध.नि.)*
**अर्कद्वयं सरं वात कुष्ठ कण्डूविषव्रणान्।**
**निहन्ति प्लीह गुल्मार्शः श्लेष्मोदर शकृत्क्रिमीन्।।**
**क्षीरमर्कस्य तिक्तोष्णां स्निग्धं सलवणं लधु।**
**कुष्ठ गुल्मोदरहरं श्रेष्ठ मेतद् बिद्वरेचनम्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–उत्तमारणी।

लैटिन–Daemia extensa R. Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, रोमिल, क्षुप, काण्ड–मृदु, दूधिया, पत्र–2" से 3" लम्बे लट्वाकार एवं तीक्ष्ण पत्राग्र, पुष्प–सवृन्त, हरे, पीले रंग के, फलियाँ, जोड़ों में, 3–4" तक लम्बी, सूक्ष्म, कंटकी एवं वृश्चिकाकार।

पुष्पकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वन खण्ड, रानीपोखरी, देहरादून काशीपुर, रामनगर, हलद्वानी आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अर्कपुष्पी।

लैटिन–Holostemma integrifolia Planch.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही क्षुप, काण्ड–मृदु, दुधिया, पत्र–सम्मुख, 3" से 5" लम्बे, लट्वाकार एवं हृदयाकार, पुष्प–सुगन्धित, गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई से सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः देहरादून, रानीपोखरी, डोईवाला के समीप कहीं–कहीं पाया जाता है। अर्कपुष्पी नामक द्रव्य विचारणीय है, वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह ने अर्कपर्णी–Tylophora asthmatica W & A की सम्भावना का संकेत किया है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का उपयोग वामक एवं विषघ्न के रुप में करते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–टेरनी, अटेरनीं।

लैटिन–Tylophora hirsuta Wight.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही क्षुप, काण्ड–रोमिल, रूक्ष, पत्र–लट्वाकार, भालाकार रोमिल, एवं लम्बाग्र, पुष्प–गुलाबी रंग का, पुष्पच्छत्री ; फालिकिल्स–लम्बे, भालाकार।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–जनवरी ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह गढ़वाल के उष्ण भागों में टिहरी वन खण्ड, डोईवाला देहरादून, कोटद्वार आदि स्थानों में यत्र–तत्र मिलता है। इसकी दूसरी जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग गर्भस्त्राव के लिये करते है एवं सर्प विष तथा पागल कुत्ते के काटने में खिलाते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जीवन्ती ; हिन्दी–डोडीशाक।

लैटिन–Leptadenia reticulata W & A.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसकी चक्रारोही, पीताभ क्षीरवाली लताये होती है। पुराना काण्ड कार्कयुक्त, श्वेताभ, पत्र–2–3" लम्बे, अण्डाकार, दीर्घायत, अरोमिल, दीर्घवृत्तीय एवं सरल तट, पुष्प–नारंगी, सफेद रंग के, फालिकिल्स–अरोमिल, दो–दो के जोड़ों में।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; फलकाल–जनवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वन खण्ड, डोईवाला, ऋषिकेश



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

एवं देहरादून आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मवेशियों के दूध बढ़ाने के लिए इसके पंचाग का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** जीवंत्यादिधृत, च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : चक्षुष्या सर्वदोषध्नी, जीवन्ती मधुराः हिमाः।** *(ध.नि.)*

**जीवन्ती मधुरा शींता, रक्तपित्त निलापहा।**
**क्षय दाह ज्वरान् हन्ति, कफवीर्य विवर्धिनी।।** *(रा.नि.)*

**जीवन्ती मधुरा शीता, सु स्निग्धा ग्राहिणी लधुः।**
**चक्षुष्या सर्वदोषध्नी वल्यावृष्या रसायनी।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भिलोड्य ; स्थानिक–गिलोठी।

लैटिन–Ceropegia bulbosa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** रोमिल शाक, काण्ड 6–12" लम्बा, विसर्पी, पत्र–अण्डाकार, दीर्घायत, पुष्प–गुलाबी लाल रंग का, मूल–कन्दिल, गोलाकार, स्वाद में मधुर, सफेद रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनों जनपदों में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,600 मीटर की ऊँचाई तक चकराता, जौनसार, मसूरी, रानीखेत आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल कंदो को खाते है। कन्द बल्य होते हैं। इसके अतिरिक्त इस कुल की औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी इस क्षेत्र में पायी जाती हैं।

| | |
|---|---|
| 1. Cynanchum vincetoxicum Pers. | 3,000–3,400 मी० की ऊँचाई तक |
| 2. Cynanchum glaucum Wall. | 1,800–2,200 मी० की ऊँचाई तक |
| 3. Hoya lanceolata Wall. | 1,500–1,800 मी० की ऊँचाई तक |
| 4. Hoya longifolia wall. | 1,500–1,800 मी० की ऊँचाई तक |

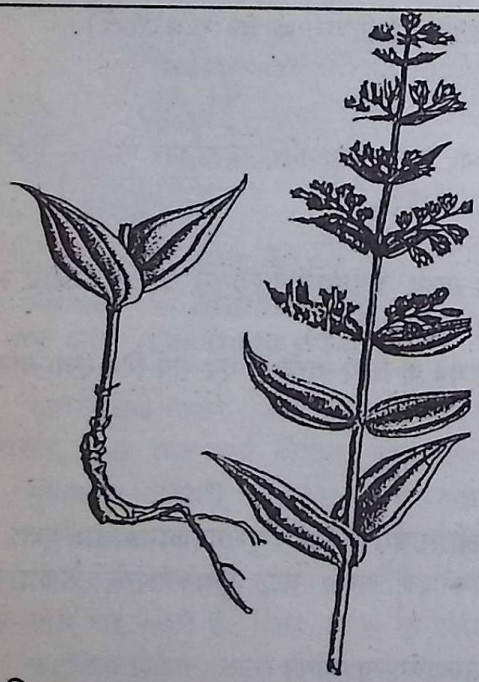

*चिरायता (Swertia chirata Buch. Ham)*

**कुल-किरातादिवर्ग GENTIANACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में प्रायः वर्षायु शाकीय पौधे एवं बहुवर्षायु गुल्म पाये जाते हैं। काण्ड चतुष्कोणीय पत्र–अभिमुख, सादे नलिकाकार, फल–नीरस, एवं बारीक बीज वाले। इस वर्ग की वनस्पतियाँ कटु तिक्त, ज्वरघ्न, रक्तशोधक एवं दाह शामक होती हैं। इस वर्ग में मुख्य रूप से किराततिक्त (चिरायता), त्रायमाण, (गाफिसदेशी) तिक्ता, आदि द्रव्य पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–चिरायता, स्थानिक–चिरैतू ; लैटिन–Swertia chirata Buch-Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षायु शाक काण्ड तलोत्य, कोणीय, गोलाकार 30 से० मी० से 80 से०मी० तक लम्बा, पर्ण–भालाकार, तीक्ष्णाग्र, अभिमुख पुष्प हरिताभ पीतवर्ण के, बैंगनी रंग से चित्रित, बीज बारीक पतले।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके अतिरिक्त हिमालय में इसकी अन्य किस्में पाई जाती हैं जोकि निम्न प्रकार से है

1. चिरायता–Swertia purpurascens Wall. पुष्प वाह्यदल एवं दलपुञ्ज 5, खण्डित, प्रत्येक दलपुंज पर ग्रन्थि गुलाबी–बैंगनी रंग की, 2,700 मीटर से 3600 मीटर की ऊँचाई तक।

2. Swertia cordata Wall पुष्प पीताभ श्वेत वर्ण के, 2,400 मी० से 3,300 मीटर की ऊँचाई।

3. Swertia cuneata Wall. 3,300 मी० से 3,600 मीटर तक।

4. Swertia petiolata Royle.

5. Swertia paniculata Wall.

6. Swertia angustifolia Ham. पुष्प श्वेताभ रंग के, 900 मीटर से 1,200 मी० ऊँचाई तक।

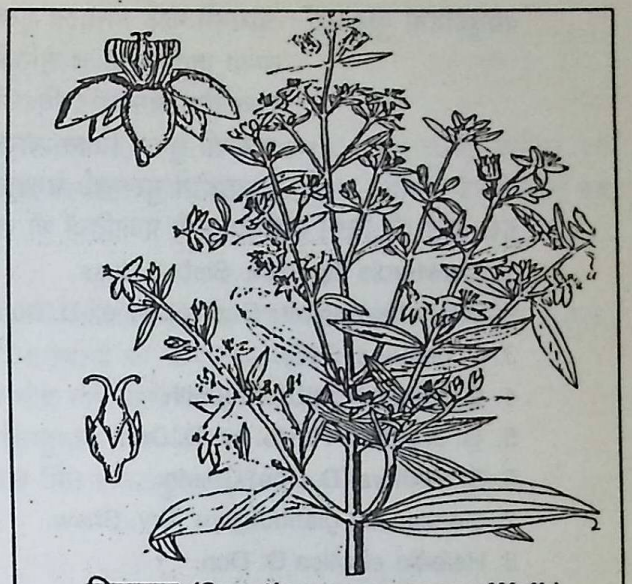

*चिरायता (Swertia purpurascens Wall.)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ के एलपाईनजोन के भूभागों में भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी यमुनाघाटी, पिंडारघाटी, कालीघाटी, दारमाघाटी आदि सभी बुग्यालों में उपरोक्त किस्में पाई जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण चिरायता का क्वाथ मियादी बुखार में एवं रक्तशोधक के रूप में प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** सुदर्शन चूर्ण, चन्द्रप्रभावटी, चन्दनासव, सर्वज्वरहरलौह, लोध्रासव, आयुष–64 ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : किरातको रसे तिक्तः सरः शीतो लधुस्तथा।**
**श्लेष्मपित्तास्त्र शोफार्शः कास तृष्णा ज्वरापहः।।** *(ध.नि.)*
**किरातक सारको रूक्षः शीतलस्तिक्तको लधुः।**
**सन्निपात ज्वरश्वास, कफ पित्तास्त्रदाहनुत्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–त्रायमाण ; स्थानिक–कडू।
लैटिन–Gentiana karroo Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके एक वर्षायु काण्ड एवं बहुवर्षायु मूलवाले क्षुप होते हैं। काण्ड 10 से 25 से. मी. ऊँचा शाखारहित कृष्णाभवर्ण का राइजोम सदृश, स्वाद में तिक्त, पत्र–मूलज, दीर्घायत, 3-5" लम्बे, स्वाद में तिक्त पुष्प–नीले रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ;
प्रयोज्यअंग–पंञ्चाग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 2,900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक कांणाताल, नागटिब्बा, जमुनाघाटी, माणीकनाथ आदि स्थानों पर कहीं–कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** उदरशूल एवं ज्वरों में ग्रामीण पंचागचूर्ण का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** त्रायमाणधृत, त्रायमाणक्वाथ।

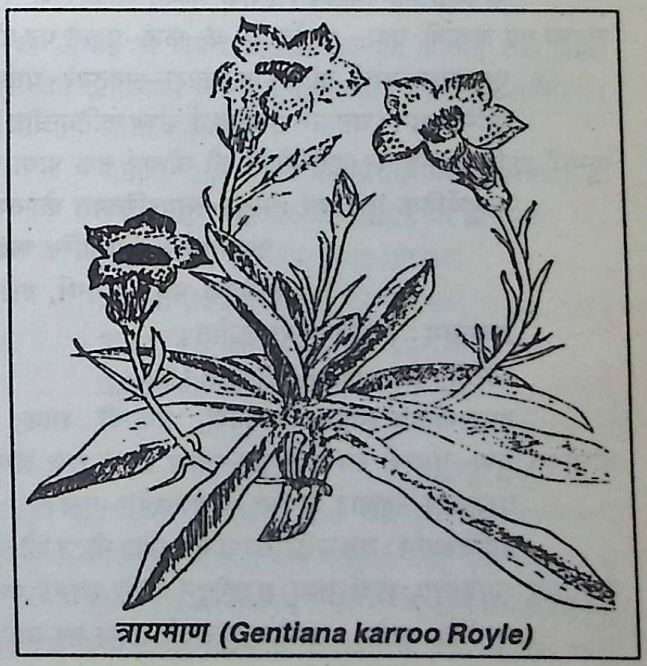

*त्रायमाण (Gentiana karroo Royle)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : त्रायन्ती कफ पित्तास्त्र गुल्मज्वरहरामता ।**
**उष्णा कटुकषाया च सूतिकाशूलनाशिनी ।।**
**रक्त पित्त श्रमच्छर्दि विषघ्नी तिक्तवल्कला ।।** *(ध. नि.)*
**त्रायन्ती तुवरा तिक्ता सरापित्त कफापहा ।**
**ज्वरहृद्रोग गुल्मार्शः भ्रमशूल विषप्रणुत् ।।** *(भा. प्र.)*

इस कुल की निम्न औषधोपयोगी प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पायी जाती है :

| | |
|---|---|
| 1. Crawfurdia japonica Sieb. & Juss. | 2,600 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 2. Gentiana capitata Buch-Ham. ex D. Don. | 3,500 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 3. G. detansa. Fries. | 3,500 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 4. G. tenella (Rottb.) H. Smith. | 2,800 से 3,000 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 5. G. argentea Royle. ex. D. Don. | 2,900 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 6. G. tubiflora (D. Don) Griseb. | पञ्चांग क्वाथ वृक्कशूल में उपयोगी |
| 7. Gentianella glanduligera Airy. Shaw. | 3,600 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 8. Halenia elliptica D. Don. | 2,200 की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 9. Lamatogonium carinthiaceum (Wulff.) Reichb. | 3,000 से 3,500 की ऊँचाई पर उपलब्ध |

**कुल-श्लेष्मतकादिवर्ग BORAGINACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस कुल में वृक्ष, गुल्म एवं शाकीय बनस्पतियाँ पाई जाती है। पर्ण एकान्तर, कभी–कभी अभिमुख, अखण्ड, बहुदा लोम युक्त एवं उपपंत्रयुक्त एवं उपपत्ररहित होते है। पुष्प–द्विलिंगी, संयुक्तदल, पुष्प बाह्यदल, एवं आभ्यन्तर दल संख्या में 5, पुष्प अनेक वर्ण के। इस वर्ग में श्लेष्मातक, अधःपुष्पी, गाजवान, रतनजोत आदि वनस्पतियाँ पाई जाती है। ये वनस्पति प्रायः विषघ्न, कुष्ठघ्न, केश्य, ब्रणरोपक होती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–श्लेष्मातक ; हिन्दी–लिसोड़ा।

लैटिन–Cordia dichotama Forsit.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के पर्णपाती वृक्ष होते है। पत्र– 3" से 6" तक लम्बे, लट्वाकर, सवृन्त एवं क्रकची, पुष्प– सफेद रंग के, फल–पकने पर पीले रंग का माँसल।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण कटिबन्धीय वनों में टिहरी वन खण्ड नरेन्द्र नगर, जौनसार, जमुनाघाटी, कुमायुँ आदि स्थानों पर 900 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मधुर स्तुवरस्तिक्त केश्यश्च कफ पित्तहृत्।**
**फलमामं तु विष्ठाम्भि रूक्षपित्त कफास्त्रजित्।।**
**तत्पक्कं मधुरं स्निग्धं, श्लेष्मलं शीतलं गुरूः।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–रतनजोत।

लैटिन–Onosma echioides Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, प्रकन्दी शाक, काण्ड़–विसर्पी, रोमिल, पत्र–मूलज, रोमिल, भालाकार, दीर्घायत, पुष्प–गुलाबी रंग के ; मूल–लाल, 5-6'' तक लम्बा।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक भागीरथीघाटी, भैरोघाटी, जाड़गंगा, केदारनाथ, हरकीदूनं आदि स्थानों पर कहीं–कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण मूल को शरीर पर घाव होने पर लेप करते हे। तैलों को लाल करने के लिए भी



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मूल का उपयोग किया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गोजिह्वा ; स्थानिक–लालजड़ी, रतनजोत।

लैटिन–Macrotomia benthami DG.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, प्रकन्दी शाक, काण्ड़–पुष्पदण्ड सहित 8-10" तक लम्बा, रोमिल एवं उर्ध्वसंस्थित, पत्र–मूलज, 6-8" तक लम्बे, भालाकार दीर्घायत, खरस्पर्श, रूक्ष, तीक्ष्णाग्र, पुष्प–रोमिल, बैंगनी नीले रंग का, मूल लाल रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी, अलकनन्दाघाटी, जमुनाघाटी हरकीदून आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग चोट लग जाने पर लेप के रूप में करते है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : गोजिह्वा तुवरा तिक्ता स्वादुपाक रसा हिमा।**
**वातला ग्राहिणी हृद्या, कफ पित्त हरालधुः।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अधःपुष्पी

लैटिन–Trichocdesma indicum Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी, शाक, काण्ड़ 6-13" तक लम्बा, रूक्ष, रोमिल, पत्र–सम्मुख, 1-4" लम्बे, अवृन्त, दीर्घायत, भालाकार, कुण्ठिताग्र एवं रोमिल, पुष्प–बैगंनी नीले, अधोमुख।

पुष्पकाल–दिसम्बर, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वन खण्ड, धनशाली, धुत्तू, कुण्ड़, श्रीनगर आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग दन्तकृमि में दातुन के रूप में करते है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–अन्धाहुली।

लैटिन–Cynoglossum wallichii D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, क्षुप, पत्र–रूक्ष, अण्ड़ाकार, भालाकार, दन्तुर, पुष्प–गहरे, नीले।

पुष्पकाल–जून, जूलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मी० की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनी घाटी, जमुनाघाटी, काणांताल, मसूरी, चकराता आदि स्थानों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इस कुल की औषधोपयोगी निम्न जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती है। यथा :–

| | |
|---|---|
| 1. Cynoglossum micranthum Desf. | 1,800–2,700 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 2. Cynoglossum zeylanicum Thumb. | 1,800–2,700 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 3. Cynoglossum lanceolatum Forsk. | 2,900 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 4. Hackelia glochidiata (Wall.) Brand. | 3,500 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 5. Lasiocaryum diffusum (Brand.) Johnston | 3,800 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |
| 6. Macrotomia euchroma (Royle) Pauls | 3,000 मी० की ऊँचाई पर उपलब्ध |

**कुल-त्रिवृतादिर्ग CONVOLVULACEACE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में गुल्म, लता एवं शाकीय क्षुप पाये जाते है। काण्ड़ प्रायः परिसृत, पर्ण–एकान्तर, साधारण अखण्डित, या पालियुक्त, हृदयाकार, उपपत्ररहित, पुष्प–नियमित, द्विबीज पर्ण, संयुक्त दल, पुष्प आकार में फनल सद्यश, पत्रकोणोद्भूत् या घण्टिकासद्यश, बाह्यकोश स्थायी, पुंकेशर 5, बीज कोष 2 खण्डों में, इस वर्ग में त्रिवृत, आकाशवल्ली, शंखपुष्पी आदि कतिपय औषध उपयोगी द्रव्य पाये जाते है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः कषाय, कटु,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

सारक, ज्वरध्न, उदर एवं मानसिक रोगों में उपयोगी होती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शंखपुष्पी भेद।

लैटिन–Evolvulus alsinioides Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी शाक, काण्ड़–विसर्पी, मृदुरोमिल, पत्र–अवृन्त, ½" तक लम्बे, भालाकार या लट्वाकार, मृदुरोमिल, अच्छिन्न तट एवं निशिताग्र पुष्प–नीले रंग के।

पुष्पकाल–अप्रैल से जुलाई तक ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक सभी–घाटियों में यत्र–तत्र पाया जाता है। निचले मैदानी भागों में कहीं–कहीं कनोनवुलस प्लुरिकालिस प्रजाति भी मिलती है।

**शास्त्रीय योग :** अमृतादिरसायन, शंखपुष्पी तैल, ब्राह्मी बटी, ब्राह्मीधृत, सारस्वतचूर्ण।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शंखपुष्पी सरामेध्या वृष्यामानसरोगहृत्।**

**रसायनी कषायोषणा, स्मृति कान्ति बलप्रदा ।।** *(भा.प्र.)*

**शंखपुष्पी सरास्वर्था, कटुस्क्ति रसायनी।**

**अनुष्णा वर्ण मेधग्निवलायुः कान्तिदाहरेत्।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कृष्ण बीज ; हिन्दी–कालादाना।

लैटिन–Ipomaea hederacea Jacq.

**वानस्पतिक स्वरूप :** कालादाना की एक बर्षीय आरोही लता होती है। इसका काण्ड़ प्रायः रोमश होता है। पर्ण–2" से 5" लम्बे, पत्रवृन्त, छोटा, अण्डाकार, हृदयाकार, गहरे 3 खण्डों में विभक्त, पुष्प–नीला, बैगनी रंग का, बीज काले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–बीज।

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ उत्तरखण्ड़ के दोनो जनपदो में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में मिलती हैं।

इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती है जो निम्न है।

1. Ipomaea hispida R.& S. 2. Ipomaea coccinea Linn.

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आकाशवल्ली ; हिन्दी–अमरवेल।

लैटिन–Cuscuta reflexa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आकाश बेल की पक्षरहित परोपजीवी लता होती हैं। यह हरियाली लिए पीले रंग की डोरी सद्यश काँटेदार झाड़ियों या अन्य वृक्षों पर आवृत होती है। पुष्प–छोटे, सफेद रंग के घंटाकृति तथा एकलक्रम में छत्राकार गुच्छकों में निकलते है। फल–गोल–गोल काले चिकने एवं बारीक बीज होते है

पुष्पकाल–मार्च, अगस्त ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड की समस्त घाटियों में पाई जाती हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : आकाशवल्ली कटुका मधुरा पित्तनाशिनी।**

**वृष्यारसायनी बल्या, दिव्यौषधिः परास्मृता।।** *(रा.नि.)*

**कुल-कण्टकार्यादिवर्ग SOLANACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय पौधे एवं गुल्मक पाये जाते है। गुल्म प्रायः उर्ध्वसंस्थित, पर्ण–एकान्तर क्रम में, साधारण, उपपत्ररहित, पत्रकोणोद्भूत पुष्प बाह्यकोष स्थायी, 5 खण्डवाले, आभ्यन्तर कोष के दल भी 5, आपस में मिले हुए, फनल के आकार में, पुंकेशर 5, स्त्रीकेशर 1, द्विबीजपर्ण, संयुक्तदल, फल–मांसल, गोल या चारकोषीय, बीज–चपटे एवं संख्या में अनेक होते है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः कासघ्न, ज्वरघ्न, हृदयरोगनाशक, वातवेदनाशक, प्रतिश्याय एवं वेदनाशामक होते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कन्टकारी ; हिन्दी–कटेली।

लैटिन–Solanum zanthocarpum Schrad.

**वानस्पतिक स्वरूप :** विसर्पी, काँटेदार शाक, पत्र–आयताकार, 3-4" तक लम्बे, पत्र–तट, काँटेदार, पुष्प–नीले रंग के, फल–काँटेदार, पकने पर पीले।

पुष्पकाल–मार्च से अगस्त ;

प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग के क्वाथ का उपयोग कास में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कण्टकारीधृत, दशमूलारिष्ठ, दशमूल, च्यवनप्राश, कासामृत।

*कन्टकारी (Solanum zanthocarpum Schr)*

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कण्टकारी सरातिक्ता कटुका दीपनी लधु।**
**रूक्षोष्णा पाचनी कास श्वासज्वर कफानिलान्।।**
**शुक्रस्य रेचन भेदि तिक्तं पित्ताग्निकृल्लधु।**
**हन्यात् कफ मरूत्कण्डू कासभेदः कृमिज्वरान्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वृहती ; हिन्दी–बडी कटेरी।

लैटिन–Solanum indicum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित क्षुप, काण्ड–कांटेदार, 3-6" फुट तक लम्बा, पत्र–3" से 5" लम्बे लट्वाकार, खण्डित, रोमिल एवं काँटेदार, पुष्प–नीले, फल–काकमाची सदृश, पकने पर नांरगी रंग के।

पुष्पकाल–दिसम्बर, मार्च ; फलकाल–मई से अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

इसके अतिरिक्त निम्न जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती है जिनका कि उपयोग कण्टकारी (वृहती) के नाम से किया जाता है। यथा :

1. Solanum torvum Swart.
2. Solanum khasianum Clarke.
3. Solanum melongena Linn.
4. Solanum verbascifolium Linn.

*वृहती (Solanum indicum Linn)*

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ उत्तराखण्ड के शिवालिक वनखण्ड से लेकर 1,500 मी. की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग क्वाथ का उपयोग ग्रामीण कास रोग में करते हैं कामला (पीलिया) होने पर कण्टकारी के फलों की माला बनाकर पहनते है।

**शास्त्रीय योग :** वृहत्यादिक्वाथ, दशमूलारिष्ठ, अमृतारिष्ठ, दशमूलतैल, च्यवनप्राश।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : बृहती कटुका तिक्ता, सौष्णावात कफापहा।**
**दीपनी पाचनी हृद्या, ग्राहिणी ज्वरकुष्ठनुत्।।** *(कै.नि.)*

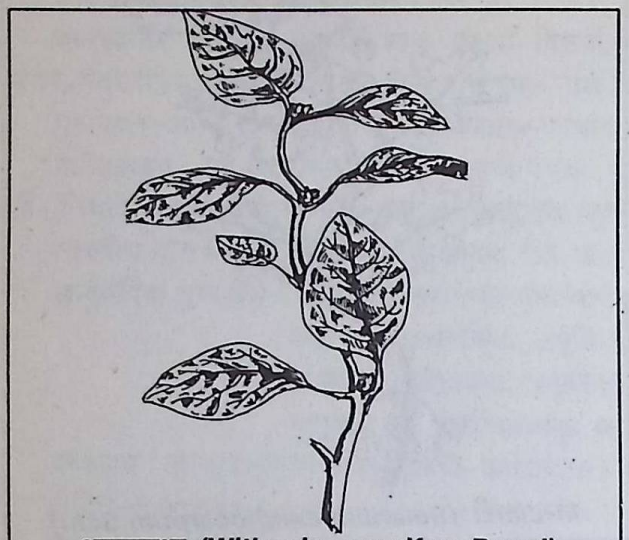

*अश्वगन्धा (Withania somnifera Dunal)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अश्वगन्धा; हिन्दी–असगंध।
लैटिन–Withania somnifera Dunal.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, बहुवर्षी क्षुप, काण्ड 3 से 4 फुट तक लम्बा, शाखीय, पत्र–मृदुरोमिल, एकान्तर, लट्वाकार, कुण्ठिताग्र, पुष्प–छोटे, कक्षीय, हरिताभ, फल–रसदार, बाह्यादलकोष में एवं नारंगी रंग के।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 900 मीटर की ऊँचाई तक गाँवों के समीप धरासू, उत्तरकाशी, टिहरी, कोटद्वार, आदि स्थानों पर पाया जाता है। बाजार में असगंध नागोरी के नाम से जो मृदु एवं भंगुर वसामय मूल मिलते है उसकी प्रायः खेती की जाती है। यह असगंध सर्वोतम औषधि मानी जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** अश्वगन्धाचूर्ण, अश्वगन्धारिष्ठ, धातुपौष्ठिकचूर्ण, शतावर्यादिचूर्ण, स्वर्णमकरध्वज, रसराजरस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अश्वगन्धाऽनिलश्लेष्म शोथ श्वित्रक्षयापहा।**
**बल्यारसायनी तिक्ता, कषायोष्णाऽतिशुक्रला।।** *(भा.प्र.)*
**अश्वगन्धा कषायोष्णा, तिक्ता वृष्यारसायनम्।**
**बलपुष्ठिप्रदाहन्ति, कफकासानिलब्रणान्।।** *(कै.नि.)*

*पारषीकयवानी (Hyoscyamus niger Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पारषीकयवानी ; हिन्दी–खुरसानी अजवायन।
लैटिन–Hyoscyamus niger Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड, शाखीय, 2 से 5 फुट तक लम्बा, रोमश, चिपचिपा, उग्रगन्ध युक्त, पर्ण–धतूरे के समान रोमिल, चिपचिपे, गन्धयुक्त पत्रतट–दन्तुर, सवृन्त, आयताकार, अण्ड़ाकार होते है। पुष्प–बैंगनी सफेद रंग के बीज–भूरे, धूसर, वृक्काकार, धारीहीन एवं खाकी रंग के गन्धहीन होते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह 3,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः बद्रीनाथ,वसुधारा, धौलीघाटी एवं मलारी, पिंड़ारीघाटी, मेदनी–बुग्याल आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** सुपारी पाक, मुस्तादिरस, अमृतभल्लातकपाक, मल्लतैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पारसीक यवानी तु यवानी सद्यशी गुणः।**
**विशेषात्पाचनीरूच्या ग्राहिणीमादिनी गुरूः।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकमाची ; स्थानिक–मकोय।

लैटिन–Solanum nigrum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, अरोमिल शाक काण्ड 1-2 फुट लम्बा, शाखीय, पत्र–अण्ड़ाकार या दीर्घायत एवं दन्तुर, पुष्प–सफेद रंग के, फल–गूदेदार, हरा पकने पर लाल या काला।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–फल, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सभी धाटियों में तथा गांवों के आस–पास पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** यकृतविकार एवं शोथ में मकोय अर्क देते हैं। पत्र का प्रयोग शाक के रूप में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** अर्कमकोय, पुनर्नवादि मण्डूर।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : त्रिदोष शमनी वृष्स्या काकमाची रसायनी।**
**नात्युष्णाशीतवीर्या च भेदनी कुष्ठनाशिनी।।** *(च.सू.अ. 27)*
**काकमाची कटुस्तिक्ता सरोष्णा कफनाशिनी।**
**शूलार्शः शोफदोषध्नी, कुष्ठकण्डूतिहारिणी।।** *(रा.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कृष्ण धत्तूर ; स्थानिक–कालाधतूरा।

लैटिन–Datura stramonium Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी शाक, काण्ड–उर्ध्वसस्थित, 2-4 फुट तक लम्बा, पत्र–सवृन्त, 4-6" तक लम्बे, लट्वाकार, खण्डित तट, दन्तुर, पुष्प–सफेद रंग के, फल–सम्पुट (कैपसूल) एवं बीज काले।

पुष्पकाल–मई से अगस्त ; फलकाल–शीतकाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय क्षेत्र में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता है। इसकी अन्य दूसरी जाति भी इन घाटियों के उष्ण भागों में मिलती हैं। जिसे श्वेत धत्तूर Datura metel Linn. कहते हैं।

*कृष्ण धत्तूर (Datura stramonium Linn)*

**शास्त्रीय योग :** कनकासव, महाविषगर्भतैल, त्रिभुनकीर्तिरस, कफकुठार रस।

**आयुर्वेदीय गुण धर्म : धत्तूरः कटुरूष्णाश्च क्रान्तिकारी ब्रणार्तिनुत्।**
**त्वग्दोषखर्जुर कण्डूति, ज्वरहारी भ्रमःप्रदः।।** *(ध.नि.)*
**धुस्तरो मदवर्णाग्नि वातकृज्ज्वर कुष्ठनुत्।**
**कषायोमधुरस्तिकतो यूकालिक्षविनाशक।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–ताम्रकूट ; स्थानिक–तमाखू।

लैटिन–Nicotiana tabacum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड़–मृदुरोमिल 1-2 फुट लम्बा, पत्र–दीर्घायत, लट्वाकार, रोमिल, पुष्प–पीले रंग के।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** इसकी उत्तराखण्ड के सभी गांवो में खेती की जाती है, विशेष कर मलेथा, देवप्रयाग, श्रीनगर आदि में।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सूची ; हिन्दी–बेलोडोना (देशी)।

लैटिन–(A) Atropa acuminata Royle. (B) Atropa belladonna Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह उत्तराखण्ड के कुछ क्षेत्रों में खेती द्वारा उगाया जाने वाला पौधा हैं। काण्ड 1 मी. से लेकर 2 मी. तक लम्बा, बहुशाखीय, मसृण, पर्ण–एकान्तर, कभी–कभी अभिमुख, मृदुलोमश, लट्वाकार–अभिलट्वाकार एवं तीक्ष्णाग्र होते है। पुष्पहरिताभ वर्ण के पत्रकाणोद्भूत फल–माँसल गोल, पकने पर काले चमकीले वर्ण के, बीज–संख्या में अनेक चपटे होते है। इसकी विदेशी किस्म की भी खेती की जाती हैं। जिसे Atropa belladonna कहते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,000 मीटर की ऊँचाई तक रैथल, भटवाड़ी, मसूरी, नैनीताल, रानीखेत आदि स्थानों पर लगाये हुये पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त Nicandra physaloides Gaertn प्रजांति भी उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं।

## कुल-तिक्तादिवर्ग SCROPHULARIACEAE

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीयक्षुप एवं गुल्म पाये जाते हैं। पर्ण–साधारण, एकान्तर, अभिमुख, उपपत्ररहित, पुष्प–द्विबीजपर्ण, उपरिस्थगर्भाशय, पुष्प आभ्यन्तरकोष नलिकाकार चार एवं पांच पाली में, पुष्प–पीले, लाल, श्वेत नील एवं श्वेत वर्ण के होते हैं। फल–कोषीय या मांसल, बीज–बारीक गोल–चपटे संख्या में अनेक होते हैं। इस वर्ग के द्रव्य ज्वरध्न, रक्तशोधक, कृतविकारनाशक एवं सारक होते हैं।

*कुटकी (Picrorhiza kurroa Royle)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कुटकी, कटुरोहिणी हिन्दी–कुटकी ; स्थानिक–कडू।

लैटिन–Picrorhiza kurroa Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वहुवर्षी विसर्पी शाकीय वनस्पति है। भौमिक काण्ड–बहुवर्षीय, एवं काण्ड ग्रन्थियों से मूल निकलते हैं। काण्ड एक मीटर तक परिसृत पर्ण–5 से. मी. से 8 से. मी. लम्बे, पत्रतट–सूक्ष्मदन्तुर, लट्वाकार, सवृन्त, पुष्प–मज्जरी सद्यश नीले बैंगनी रंग के।

पुष्पकाल–मई, जुलाई ; फलकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–काण्ड, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में यह गढ़वाल, कुमाऊँ के एलपाइनजोन में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,700 मीटर की ऊँचाई प्रायः भिलंगनाघाटी, पंवाली, ताली, किनकोलियाखाल, सहस्त्रताल, वालगंगाघाटी, भागीरथीघाटी, अलकनन्दाघाटी, मन्दाकिनी घाटी, आदि सभी घाटियों में पाया जाता है। व्यापारिक रूप से इन घाटियों में कुटकी का संग्रह किया जाता है। अनैतिक विदोहन होने के कारण यह वनस्पति भी लुप्तप्रायः की श्रेणी में आ रही हैं। अतः हिमालय में इसकी कृषि कार्यक्रमों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसे केदारीकडू के नाम से उदरशूल, अपच एवं यकृत विकार में चूर्ण के रूप में प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** आरोग्यवर्धिनी महासुदर्शनपूर्ण, सर्वज्वरहरलौह, योगराजगुग्गुलु, आयूष 64, रक्तशोधक वटी, कुमार्यासव, तिक्तादिक्वाथ।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

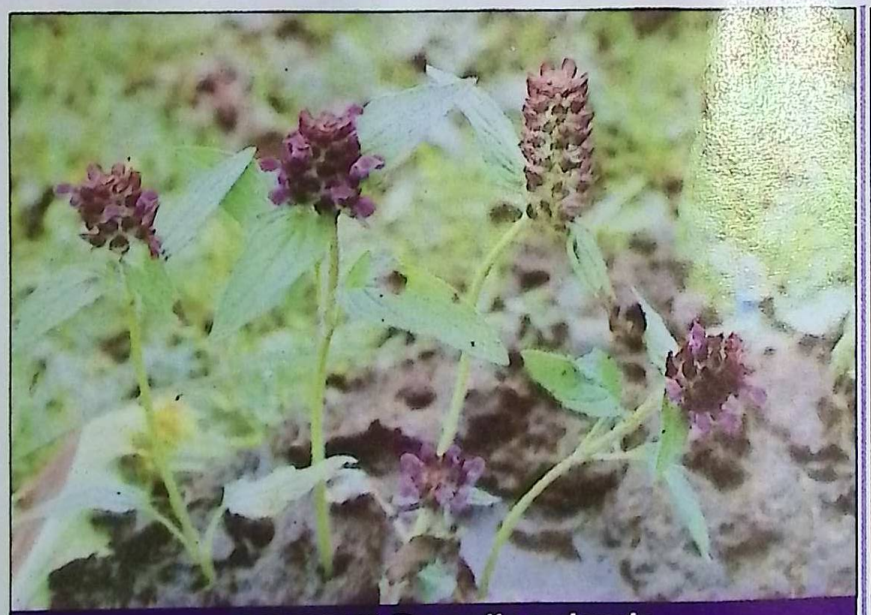

उस्तखद्दूस Prunella vulgaris

जोगीपादशाह (योगेश्वर) Saussurea simpsoniana

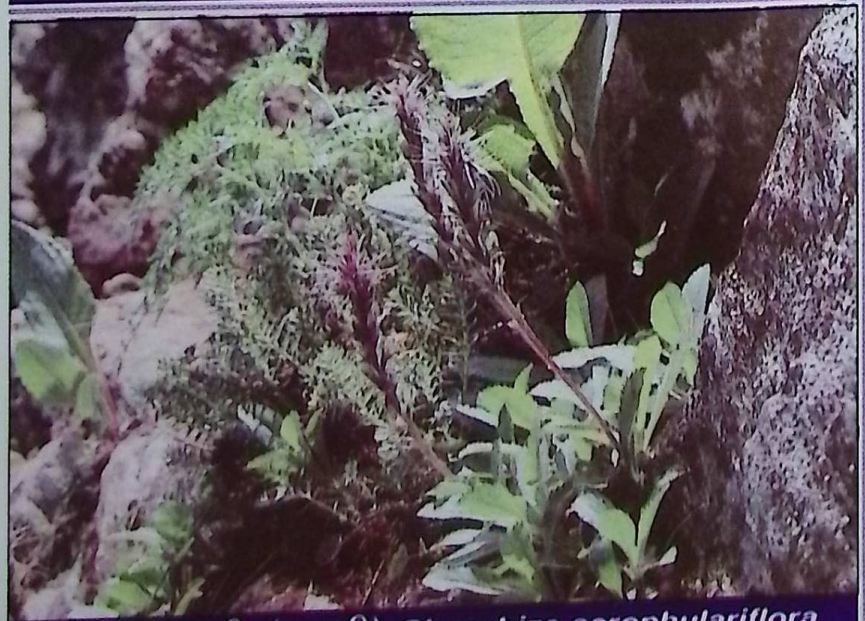

केदार कडुवी (कुटकी) Picrorhiza scrophulariflora

गुग्गल Tanacetum logifolium

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust.
Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कट्वी तु कटुका पाके तिक्ता रूक्षा हिमालधुः।**
**भेदनी दीपनी हृद्या कफ पित्त ज्वरापहाः।।**
**प्रमेह श्वास कासास्त्रः दाहकुष्ठ कृमिप्रणुत्।।** *(भा.नि.)*

**द्रयनाम :** संस्कृत–ब्राह्मी ; स्थानिक–जलनीम, नीरब्राह्मी।

लैटिन–Bacopa monnieri Pennell.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह जलीय एवं नमदार स्थानों पर मिलने वाली प्रसरणशील, बहुवर्षीय, शाकीय वनस्पति है। पर्ण–मसृण, कुष्ठिताग्र, दन्तुर कुल्फापत्रसद्यश, पुष्प–जामुनी श्वेताभवर्ण के, पत्र स्वाद में तिक्त।

पुष्पकाल–जुलाई, सितम्बर ; फलकाल–सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

*जलनीम (ब्राह्मी) Bacopa monnieri Pennell*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में उष्णकटिबन्धीय भागों में जलीय एवं नमदार स्थानों पर शिवालिक वनखण्ड, रायवाला, लच्छीवाला, देहरादून वनखण्ड, अल्मोड़ा जनपद के काशीपुर, मोहान आदि स्थानों में नदियों के आस–पास सुलभ हैं।

**टिप्पणी :** ब्राह्मी के नाम से प्रायः Centella asiatica का उपयोग भारत के उत्तरी भागों में प्रचलित हैं। दक्षिण के वैद्य ब्राह्मी से जलनीम (Bacopa monnieri) का प्रयोग करते हैं एवं Centella acsiatica को मण्डूकपर्णी स्वीकार करते हैं। देखिये विस्तृत विवरण Centella acsiatica में।

**शास्त्रीय योग :** ब्राह्मीधृत, ब्राह्मीतैल, ब्राह्मीरसायन, ब्राह्मीवटी, सारस्वतारिष्ठ, सारस्वतधृत।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : ब्राह्मी हिमा सरातिक्ता, लधुर्मेध्या च शीतला।**
**कषायामधुरा स्वादु पाकाऽयुष्यारसायनी।।** *(भा.नि.)*
**वलाग्निवर्ण स्वरवर्धनानि मेध्यानि चैतानिरसायनानि।** *(च.चि.अ. 1)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–गीदड़तमाखू ; स्थानिक–भंमाक्।

लैटिन–Verbascum thapsus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंश्रित शाक, 80 से. मी. लम्बा, तूलसद्यश रोमिल, पर्ण–मूलज, 1-2" लम्बे, अच्छिन्न, दीर्घायत, भालाकार, अवृन्त, पुष्प–पीले रंग, बीज, बारीक।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिवन्धीय भागों में टिहरी वनखण्ड, उत्तरकाशी वनखण्ड, अल्मोड़ा वनखण्ड, वागेश्वर, रानीखेत, नैनीताल आदि स्थानों पर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मवेशियों के खुरपका रोग में इसके पानी से घाव धोते हैं। पञ्चांग को विषैला मानते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हृत्तपत्री, तिलपुष्पी ; हिन्दी–डिजिटलिस।

लैटिन–Digitalis lanata Ehrh.

**वानस्पतिक स्वरूप :** तलोत्य एकवर्षीय काण्ड वाला शाकीय पादप, पर्ण–लट्वाकार, भालाकार, एकान्तर, पुष्प–तिलपुष्पसद्यश, श्वेताभ गुलाबी रंग के, फल–कोषीय, बीज–धूसर वर्ण के, इसकी अन्य किस्म की भी खेती की जाती है जिसे Digitalis purpurea Linn. कहते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक रानीखेत, नैनीताल, भुवाली, मंसूरी आदि स्थानों में इसकी खेती की जाती है। यह हृदयावसादक, मूत्रजनन एवं हृदय की रक्तवाहिनियों एवं गति को नियमित रखता है। इसके अतिरिक्त इस कुल की कतिपय औषधोपयोगी प्रजातियाँ एवं किस्में उत्तराखण्ड हिमालय के बुग्यालों में पाई जाती हैं। जिनमें कुछ निम्न प्रकार से हैं।

| | |
|---|---|
| 1. Euphrasia schlagintweitii Wettst. | 2,800-3,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 2. Hemiphragma heterophyllum Wall. | 2,100 मीटर की ऊँचाई तक |
| 3. Lindenbergia grandiflora Benth. | 1,100-1,500 मीटर की ऊँचाई तक |
| 4. Lindernea ciliata (colosm) Pennell. | 1,800 मीटर की ऊँचाई तक |
| 5. Majus japonicus (Thumb) Kuntze. | 1,900-2,100 मीटर की ऊँचाई तक |
| 6. Pedicularis bicornuta Klotzsch. | 3,500 मीटर की ऊँचाई तक |
| 7 P. longiflora Rudolf. | 3,500 मीटर की ऊँचाई तक |
| 8. P. megalantha Don. | 3,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 9. Scrophularia decomposita Royle. ex. Benth. | 3,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 10. S. calycina Benth | 3,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 11. Verbascum thapsus Linn. | 1,600 मीटर की ऊँचाई तक |
| 12. Veronica cana Wall ex DC. | 2,100 मीटर की ऊँचाई तक |
| 13. V. laxa Benth. | 2,200 मीटर की ऊँचाई तक |

**कुल : श्योनाकादिवर्ग BIGNONIACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में वृक्षक पाये जाते है। पर्ण–अभिमुख, बहुधा–संयुक्त, उपपत्र, रहित, एवं बड़े पालियुक्त होते हैं। पुष्प–विगुल की आकृति में, द्विबीजपर्ण, पुष्प–बाह्यकोष 5 दलों का घण्टाकृतिका, पंखुडियाँ 5 नीचे से जुड़ी हुई पुंकेशर 4 दो छोटे दो बड़े, फली लम्बी, चपटी सेम जैसी, बीज–चपटे पतले पंखसद्यश होते हैं इस वर्ग के द्रव्य ग्राही, दीपन, उदरोगनाशक, वातनाशक, बेदनास्थापन एवं स्वेद जनन होते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–श्योनाक ; हिन्दी–टरलू, सोनापाठा ; स्थानिक–टाटपलांगू।

लैटिन–Oroxylum indicum Vent.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष, काण्ड छाल–हरिताभ, पत्र–सम्मुख, पुष्प–बड़े बैगनी रंग के, फली–तलवार जैसी, चपटी, कठोर 1 से 1½ फुट लम्बी।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्य अंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्र नगर, जौनसार, जमुनाघाटी, कोटद्वार, हल्द्वानी, रामनगर आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** बृहतपंचमूल, दशमूलारिष्ठ, दशमूलतैल, अमृतारिष्ठ, च्यवनप्राश,

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : श्योनाक कटुकःपाके कषायोस्तिक्तकोहिमः।**

**संग्राही दीपनः कास श्लेषमापित्तामवातजित्।।** *(कै.नि.)*

**टिण्टुकः शिशिरस्तिक्तों बस्तिरोगहरः परः।**

**पित्त श्लेष्माभवातातेसार कासारूर्चीजयेत्।।** *(ध. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पाटला ; हिन्दी–पाड़ल।

लैटिन–Stereospermum suaveolens DC.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष, काण्ड छाल–धूसरवर्ण की एवं खुरदरी, पपड़ीदार, पत्र–सम्मुख असम, पिच्छाकार,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पत्रक– 5" से 9", दीर्घवृत्तीय, लम्बाग्र, रूक्ष, क्रकची, पुष्प–गहरा बैगनी फलियाँ–8"–12" तक लम्बी।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–छाल, बीजयुक्तमज्जा।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वनखण्ड, नरेन्द्रनगर, जौनसार, कोटद्वार, देहरादून, हल्द्वानी आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** दशमूलारिष्ठ, दशमूलतैल, च्यवनप्राश, महानारायणतैल,

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पाटलाऽरूचिशोथास्त्र श्वासतृड् छर्दि नाशिनी।**
**नात्युष्ण तुवरं स्वादु तत्पुष्यं कफवातनुत्।**
**पित्तातिसार दाहघ्नं फलं हिक्कास्त्रपित्तनुत्।।** *(ध. नि.)*
**पाटला तुवराऽनुष्णा तिक्तादोषत्रयापहा।**
**अरूचिश्वास शोथार्थ छर्दि हिध्मातृषापहा।।** *(कै. नि.)*

**कुल : तिलादिवर्ग PEDALIACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–विच्छुआ।

लैटिन–Martynia diandra Glox.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, मृदुरोमिल शाक, काण्ड़ 3–5 फुट लम्बा, पत्र–3" से 6" लम्बे, सम्मुख, हृदयाकार, रोमिल, एवं सूक्ष्म दन्तुर, पुष्प–गुलाबी या बैगनीरंग के, फल–कठोर एवं अग्रभाग दो बड़िशाकार काँटो के रूप में।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–फल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः कूड़े–करकट वाले स्थानो पर मिलता है। आजकल इसके फलों का प्रयोग काकनाश के नाम से हो रहा है जो ठीक नही है। क्योंकि यह मूलतः भारतीय पादप नहीं है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तिल।

लैटिन–Sesomum indicum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके एक वर्षीय मृदु क्षुप पाये जाते है जिसकी खेती की जाती है। पौधे पर जगह–जगह में स्त्रावी ग्रन्थियां पाई जाती हैं। पर्ण–अभिमुख क्रम से स्थित, काण्ड के मध्य में लट्वाकार तथा किनारे दन्तुर, ऊपरी भाग की पत्तियाँ प्रायः सरल रूपरेखा में भालाकार, आयताकार एवं एकान्तर क्रम में स्थित होती है। पुष्प–बैगनी, श्वेताभवर्ण के नलिकाकार, फली–कोषीय, लम्बगोल, चतुष्कोणाकार तथा अग्रसर कुण्ठित सा होता है। बीज–संख्या में अनेक, चपटे, तैलिय, रंग भेद से तीन किस्म के तिल पाये जाते हैं कृष्ण (काला), लाल, श्वेत।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–बीज, तैल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में ग्रामीणो द्वारा खेती की जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** तिलतैल का प्रयोग खाद्य सामग्री एवं चिकित्सा में किया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** तिलादिगुटिका, च्यवनप्राश, आयुर्वेदिक तैलकल्कों में प्रधानतः तिलतैल का प्रयोग किया जाता हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : स्निग्धोष्णो मधुरस्तिक्तः कषायकटुकस्तिलः।**
**त्वच्यः केश्यश्च वल्यश्च, वातघ्न कफ पित्तकृत्।।** *(च. सू. 26)*
**ईषत्कषायो मधुरः सतिक्तसांग्राहिकः पित्तकरस्तयोष्णः।**
**तिलोविपाके मधुरोबलिष्ठ, स्निग्धोव्रणालेपनं एव पथ्यः।।** *(सू.सू.अ.46)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

*वासा (Adhatoda vasica Nees)*

**कुल : वासादिवर्ग ACANTHACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आटरूषक, वासा; स्थानिक–वासींगु।

लैटिन–Adhatoda vasica Nees.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित क्षुप, काण्ड 3–4 फुट लम्बा, पर्ण–4" से 8" तक लम्बे, भालाकार या दीर्घवृत्तीय, मृदुरोमिल, एवं सवृन्त, पुष्प–सफेद रंग के, खिलने पर व्याघ्रमुख सदृश खुला हुआ।

पुष्पकाल–दिसम्बर, अप्रैल ;

प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक सभी स्थानो पर सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** वासावलेह, वासारिष्ठ, वासाचन्दनादितैल, वासाक्षार, च्यवनप्राश, जन्मघुट्टी, वसन्तकुसुमाकर, वासाक्षार।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वृषागस्त्योपुष्पाणि तिक्तानि कटुविपाकानि क्षयकासापहराणि च।** *(सू. स. अ. 46)*

**वासातिक्ता कटुःशीता कासध्नी रक्तपित्रजित्।**

**कामलाकफ पित्तास्त्र, ज्वरश्वास क्षयापहा।।** *(रा. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकजंघा ; स्थानिक–काकनड़ी।

लैटिन–Peristrophe bicalyculata Nees.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड 3–5 फुट लम्बा, षड़कोण युक्त, रोमिल, पत्र–2" से 3" लम्बे, अण्डाकार, लम्बाग्र, रोमिल, अवृन्त एवं काण्ड, के ऊपर के पत्रों के अपेक्षा नीचे के बड़े, पुष्प–छोटे, गुलाबी, या जामुनी रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानो पर सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग का गुमचोट में वाह्य सेक करते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वासिंगु।

लैटिन–Barleria cristata Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुपक, काण्ड 1 से 3 फुट तक लम्बा, पत्र–दीर्घवृत्तीय, आयताकार, अच्छिन्न, रोमिल, सवृन्त एवं पत्र तट सरल, पुष्प–गुलाबी या बैगनी रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** क्वाथ का प्रयोग क़ालीखांसी में ग्रामीण लोग करते हैं। इसके अतिरिक्त इस कुल की औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड में पाई जाती है। यथा–

1. Strobilanthus kuntianus Anders
2. Pteracanthus alatus Wall. ex. Nees.
3. P. angustifrans Breamek.
4. Aechmanthera tomentosa Nees.

1800 मी. से 2100 मी. की ऊँचाई तक अल्मोड़ा एवं पिथौरागढ़ जनपद के पर्वतीय अंचलों में उपलब्ध है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल : निर्गुण्डयादिवर्ग - VERBENACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय पादप एवं गुल्म तथा मध्यम आकार के वृक्ष पाये जाते हैं। पर्ण– अभिमुख, प्रायःसाधारण, मसृण, पत्राग्र तीक्ष्ण, सपुष्प, द्विबीजपर्ण, संयुक्तदल, उपरिस्थगर्भाशय, पुष्प– छोटे, मज्जरी में, पुष्प बाह्यकोष नलिकाकार, फल– एक बीजी अथवा बहुबीजी एवं माँसल। इस कुल के द्रव्य प्रायः कटु, तिक्त, वातघ्न, कृमिघ्न, कासघ्न, दीपन, एवं भग्नसन्धानकर होते हैं। इस वर्ग में निर्गुण्डी (संभालू), प्रियंगु (दहिया), भारंगी, अरणी (अग्निमन्थ), गम्भारी, वकार (अग्निमन्थ भेद) आदि द्रव्य पाये जाते हैं।

*निर्गुण्डी (Vitex negundo Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–निर्गुण्डी ; हिन्दी–संभालू ; स्थानिक–सिवांली।

लैटिन–Vitex negundo Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती क्षुप, काण्ड–शाखीय, 10 से 15 फुट तक लम्बा, पत्र संयुक्त, 3–5 पत्रक –भालाकार, अरोमिल, एवं पत्राग्र तीक्ष्ण, पुष्प–नीले बैगनी रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मी. की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानों पर सुलभ है।

**शास्त्रीय योग :** निर्गुण्डीतैल, निर्गुण्डीकल्प।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : निर्गुण्डी कटुतिक्तोष्ण कृमिकुष्ठज्वरापहा।**
**वातश्लेष्मप्रशमनी प्लीहगुल्मापचीहरेत्।।** *(ध. नि.)*
**सिन्दुवारः कटुस्तिक्तः कफवातक्षयपहः।**
**कुष्ठ कण्डूतिशमनः शूलहृत्कासिसिद्धिदः।।** *(रा. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–प्रियंगु ; स्थानिक–दहिया।

लैटिन–Callicarpa macrophylla Vahl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** प्रियंगु के बहुशाखीय गुल्म होते है। काण्ड–4–8 फुट लम्बा, मुदुरोमिल, पर्ण–सम्मुख, तुल रोमिल, 6–9''लम्बे, भालाकार, दन्तुर, एवं लम्बाग्र पुष्प–कक्षीय, गुलाबी रंग के, फल–माँसल, सुगन्धित।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल,

फलकाल–सितम्बर, अक्टूवर ;

प्रयोज्यअंग–फल (बीज)।

*प्रियंगु (Callicarpa macrophylla Vahl)*

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः धोन्टी, धनशाली, श्रीनगर, उत्तरकाशी, आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण फलों का उपयोग मुखपाक में करते है।

**शास्त्रीय योग :** प्रियंगुवादि तैल।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : प्रियंगु शीतला तिक्ता मोहदाहविनाशिनी।**
**ज्वर वान्तिहरा रक्तमुद्रितं च प्रशानयेत्।।** *(ध. नि.)*
**प्रियंगु शीतला तिक्ता दाह्यपितास्त्र दोषृजित्।**
**वाञ्चिभ्रान्ति ज्वरहरा, वक्रजाऽविनाशिनी।।** *(रा. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भारंगी।

लैटिन– Clerodendron serratum Spreng.

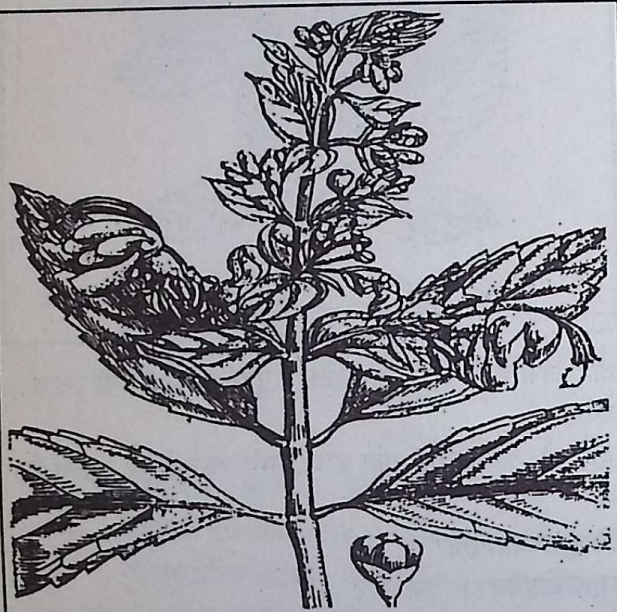

*भारंगी (Clerodendron serratum Spreng)*

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके तलोत्थ, बहुवर्षीय गुल्म होते हैं। काण्ड– 3–4 फुट तक लम्बा, अरोमिल, नालीदार, पत्र–4" से 5" तक लम्बे, भालाकार, दन्तुर एवं पत्राग्र–तीक्ष्ण, पुष्प–नीले रंग के, फल–पकने पर काले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, सितम्बर ;

प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में प्रायः धोन्टी, धनशाली, देहरादून आदि स्थानो पर पाया जाता है। आजकल बाजार में प्रचलित भारंगीछाल Clerodendron नहीं है। वास्तव में यह Gardenia turgida Roxb का काण्डत्वक् है जिसे देहरादून के व्यापारी भारंगी के नाम से संग्रह करते है।

**शास्त्रीय योग :** भारंग्यादिक्वाथ, दशमूलारिष्ठ, कनकासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भारंगी तु कटु तिक्तोष्ण, कासश्वास विनाशिनी।**
**शोफव्रण कृमिघ्नी च, दाहज्वर निवारिणी।।** *(रा. नि.)*
**भार्गी रूक्षा कटुस्तिक्ता, रूच्योष्णा पाचिनीलघुः।**
**दीपनी तुवरा गुल्म रक्तजिन्नाशयेदूध्रुवम्।।**
**शोथकास कफ श्वास पीनसज्वर मारूतान्।।** *(भा. प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–ब्रह्मयष्टि ; स्थानिक–चिंगारी, वकांरी।

लैटिन–Clerodendron siphonanthus R. Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप या शाकीय पादप, काण्ड 4–5 फुट लम्बा, नलिकाकार, पत्र–3" से 5" लम्बे, भालाकार, सवृन्त, पुष्प–सफेद पीताभ रंग के। फल पकने पर रक्त वर्ण का।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 600 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,600 मीटर की ऊँचाई तक देहरादून, डोईवाला, सहस्त्रधारा, मन्सूरी आदि स्थानो पर यत्र–तत्र पाया जाता है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अग्निमन्थ ; हिन्दी–अरणी।

लैटिन–Clerodendron phlomides Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, पत्र– 1½" से 2½" तक लम्बे, लट्वाकार, कुण्ठिताग्र, दन्तुर या



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

सरल तट, पुष्प–सफेद रंग के गुच्छों में।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनो जनपदों में देवप्रयाग, टिहरी वनखण्ड, देहरादून कोटद्वार, शिवालिक वनखण्ड में गाँवों के आसपास बाड़ों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त शिवालिक वनखण्ड में अन्य जाति भी पाई जाती है। जिसे भाँट Clerodendron infortunatum Gaerth. भी कहते है।

**शास्त्रीय योग :** वृहत्पञ्चमूल, दशमूलतैल, दशमूलधृत, दशमूलारिष्ठ, च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तर्कारी कटुका तिक्ता, तथोष्णाऽनिलपाण्डुनुत्।**
**शोथश्लेषमाग्नि माधामविवन्धाश्चविनाशयेत्।।** *(ध. नि.)*
**तर्कारी कटुका तिक्ता, तुवरामधुराऽग्निदा।**
**वीर्योष्ण हरते वात कफश्वयक्षुपाण्डुताः।।**
**अग्निमन्थो गुणौस्त द्वद्विशेषात्वातशोथहा।।** *(कै. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अरणी भेद ; स्थानिक–बकार, वकारू।

लैटिन–Premna barbata Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, पत्र–5–6'' तक लम्बे, दीर्घायत एवं लट्वाकार, तीक्ष्णाग्र, दन्तुर, पुष्प–छोटे एवं पीताभ वर्ण के, सुगन्धित।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** ये जातियाँ उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पायी जाती हैं।

इसके अतिरिक्त निम्न दो जातियाँ भी इन घाटियों में यत्र–तत्र पाई जाती है। यथा –

1. Premna latifolia Roxb.
2. Premna herbacea Roxb.

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गम्भारी (गंभार) ; हिन्दी–गम्हारी।

लैटिन–Gmelina arborea Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम ऊँचाई के वृक्ष होते है। टहनियाँ श्वेताभ एवं मसृण होती है। पर्ण–चौड़े लट्वाकार प्रायः हृद्धत, लम्बाग्र, सवृन्त, अभिमुख क्रम में होते है। पुष्प–प्रायः पर्णकोणोद्भूत, मज्जरीसद्यश, घण्टीकार या नलिकाकार पीताभ वर्ण के होते है। फल अण्डाकार तथा पकने पर पीला तथा स्वाद में मधुर कषाय, माँसल एवं चर्मिल होता है।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल

फलकाल–जून, जुलाई।

प्रयोज्यअंग–मूलत्वक, छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** इसके वृक्ष उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में शिवालिक वन क्षेत्रों, देहरादून, कोटद्वार, रामनगर आदि स्थानो पर पाये जाते है

**स्थानिक प्रयोग :** दशमूलक्वाथ, दशमूल तैल, दशमूलधृत, दशमूलारिष्ठ, चन्दनासव च्यवनप्राश,उशीरासव

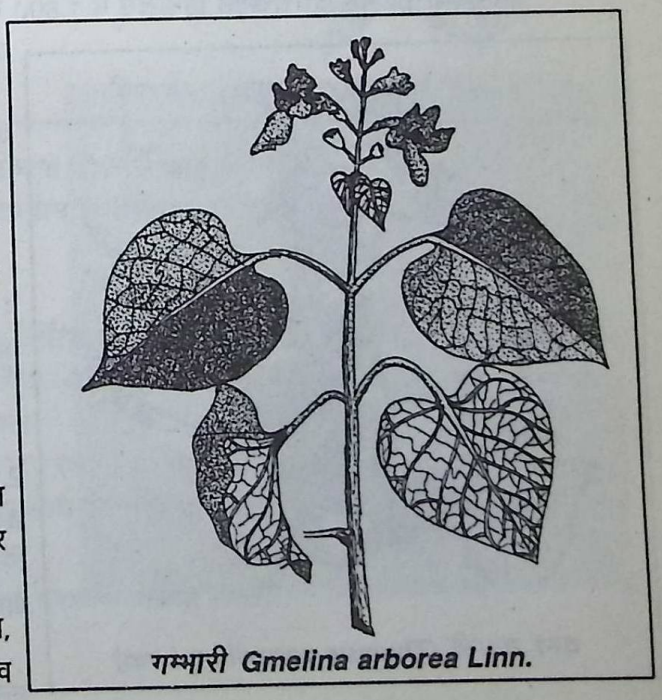

*गम्भारी Gmelina arborea Linn.*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :** **काश्मरी कटुकातिक्ता गुरूष्ण कफ शोथनुत्।**
**त्रिदोषविष दाहर्ति ज्वर तृष्णास्त्रदोषजित्।।** *(रा नि.)*
**श्रीपर्णी मधुरा तिक्ता, वीर्योष्णा तुवरागुरूः।**
**दीपनी पाचिनी मेध्या, भेदनी भ्रमशोषजित्।।** *(कै. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शाक ; हिन्दी–सागौन।

लैटिन–Tectona grandis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सागौन के विशाल पर्णपाती वृक्ष होते है। इसके पर्ण बहुत लम्बे–चौड़े, ऊपर से खुरदरे एवं पृष्ठ श्वेताभ, मृदुरोमिल होता हैं। पुष्प–श्वेताभ वर्ण के गुच्छों में, फल–छोटे व्यास के, गोलाकार, कोषीय, बीज–रोमिल, कठोर होता है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; फलकाल–शीतकाल; प्रयोज्यअंग–छाल, बीज, पुष्प।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में इसके वृक्ष रोपित पाये जाते है।

**कुल : तुलस्यादिवर्ग LABIATAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय क्षुप एवं झाड़ीदार गुल्म पाये जाते है। इस वर्ग की वनस्पतियाँ प्रायः सुगन्धित, मृदु एवं एक वर्षीय होती है। पर्ण–अभिमुख, उपपत्ररहित सुगन्धित, द्विबीजपर्ण, पुष्प–छोटे–छोटे, द्विओष्ठीय, श्वेत, रक्त, नील वर्ण के। बीजों को जल में भिगोने से पिच्छिल लुआव निकलता है। इस वर्ग में तुलसी, पुदीना, वन्ययवानी, द्रोणपुष्पी आदि वनस्पतियां मिलती हैं। इस वर्ग के द्रव्य प्रायः कफघ्न, ज्वरघ्न, पाचन, विषघ्न होते हैं।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–उस्तखदूस।

लैटिन–Prunella vulgaris Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, रोमिल शाक, काण्ड 4–12'' लम्बा, पत्र–अण्डाकार, दीर्घायत, 1–2'' लम्बे, अच्छिन्न एवं कुण्ठिताग्र पुष्प–बैंगनी गुलाबी।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–बीज, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,600 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता है।

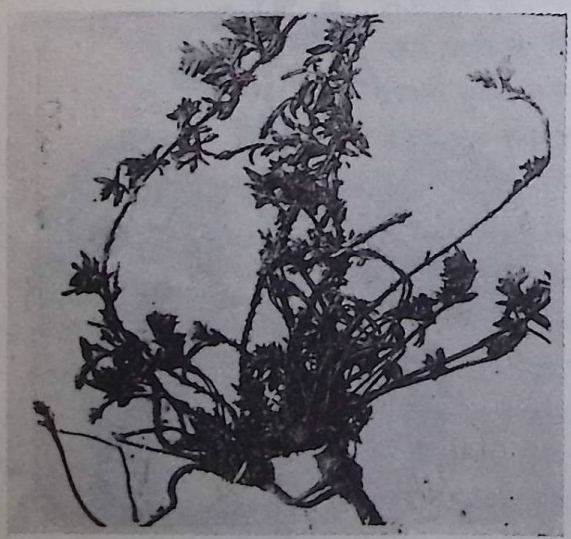

*वन्य यवानी (Thymus serpyllum Linn)*

**स्थानिक प्रयोग :** कासघ्न एवं ज्वरघ्न के रुप में पञ्चांग का उपयोग।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वन्य यवानी।

लैटिन–Thymus serpyllum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** विसर्पी, सुगन्धित शाक, पर्ण 1–2'' व्यास में, पत्र–सम्मुख, मृदुरोमिल लट्वाकार, एवं अच्छिन्न, पुष्प–छोटे बैगनी, लाल रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई। प्रयोज्य अंग–पञ्चांग

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनो जनपदों में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः अलकनन्दाघाटी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, पिंडारीघाटी, कालीघाटी के घास वाले ढलानो पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** उदरशूल एवं उदरकृमि में इसके सत्व का प्रयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–द्रोणपुष्पी ; स्थानिक–गुमा।

लैटिन–Leucas cephalotes Spreng.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड–चौपहल एवं मृदुरोमिल, पर्ण 2" से 4" लम्बे, दन्तुर, पुष्प–गुच्छों में, अग्रस्थित, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानो पर वर्षाकाल के बाद सुलभ है।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग क्वाथ का प्रयोग मियादी बुखार एवं कास में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : द्रोणपुष्पी कटुः सोष्ण रूच्यावात कफापहा।**
**अग्निमांद्यहर चैव, कामला ज्वरहारिणी।।** (रा. नि.)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पूतिहा ; स्थानिक–पुदिना।

लैटिन–Mentha longifolia Huds.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पुदीना के बहुवर्षी क्षुप प्रायः नमदार स्थानो पर पाये जाते है। काण्ड–प्रसनणशील एवं कुछ जमीन से उठा हुआ होता हे। पत्र–सम्मुख, भालाकार एवं सवृन्त, कुण्ठित, पुष्प–अग्रस्थित, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के दोनो जनपदो में नदी–नालो के आसपास 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानो पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त दूसरी एक जाति इन घाटियों में पाई जाती है। जिसे Mentha arvensis Linn. (पिपरमेन्ट) कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पाचन के रूप में एवं उल्टी, दस्तो में पञ्चांगका प्रयोग करते है। चटनी के रूप में पुदीना का उपयोग होता है।

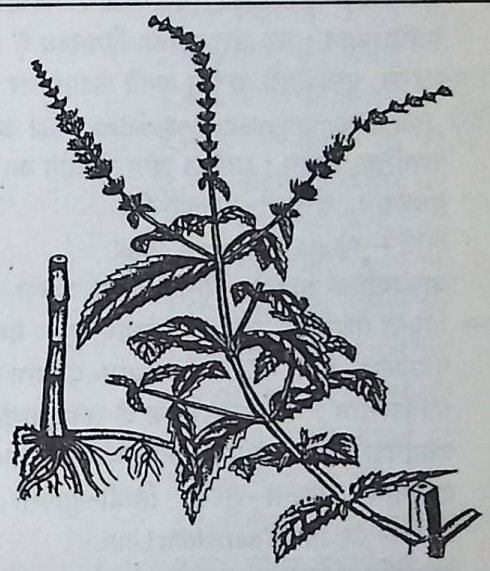

*पिपरमेन्ट (Mentha arvensis Linn)*

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पूतिहा कटु रूष्णाश्च, रोचनो दीपनस्तथा।**
**हन्तिवातं कफंशूलं, बम्याध्यान कृर्मीस्तथा।।** *(नि. र.)*

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–कमरकस।

लैटिन–Salvia plebeia R. Br.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सुगन्धित शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, मृदुरोमिल एवं काण्ड–चौपहल, पर्ण–लट्वाकार, दीर्घायत एवं दन्तुर। पुष्प–मञ्जरियों में श्वेताभ वर्ण के। बीज–बारीक, पानी में डालने पर लसदार जेली बनाने वाले।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–बीज, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों के नम स्थानो पर 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, देहरादून आदि स्थानो में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी 1500 मीटर से 2100 मीटर की ऊँचाई तक पाई जाती हैं।

1.Salvia lanata Roxb. 2. Salvia moorcrofiana Wall.

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–करू।

लैटिन–Roylea calycina Btiguct.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** मृदुरोमिल क्षुपक, पत्र–सम्मुख, 1–2'' लम्बे, अण्डाकार, दन्तुर एवं सवृन्त, पुष्प–कक्षीय, चक्रों में गुलाबी सफेद रंग के।

पुष्पकाल–फरवरी, मार्च ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरी वन खण्ड, घोन्टी, धनशाली, काशीपुर, हल्द्वानी, रामनगर, आदि स्थानो पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्र क्वाथ का प्रयोग ज्वरों में करते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–फणिञ्झक ; स्थानिक–फांगलो।

लैटिन–Pogostemon parviflorus Benth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सुगन्धित क्षुप, काण्ड़–चौपहल, मृदुरोमिल, पत्र–सम्मुख, लट्वाकार, 3–7'' लम्बे, अच्छिन्न, एवं लम्बाग्र, पुष्प–बैगनी रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिंमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 1,600 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, गुप्तकाशी, धरासू आदि स्थानो पर पाया जाता है। इसकी एक अन्य जाति इन घाटियों में मिलती है। जिसे Pogostemon plectranthoides Desf कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का उपयोग ज्वरों में करते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–नीलकण्ठी।

लैटिन–Ajuga brateosa Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** रोमिल, शाक, काण्ड़–उर्ध्वसंस्थित या विसर्पी, पत्र–लट्वाकार, 1–4'' लम्बे, दन्तुर या अच्छिन्न, अवृन्त तथा अधः पृष्ठ पर श्वेताभ, पुष्प–बैगनी रंग या नीले रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मी. की ऊँचाई तक सभी घाटियों में पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग क्वाथ का प्रयोग रक्तविकार एवं फिरंग (सोजाक) में करते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सुरसा ; हिन्दी–तुलसी।

लैटिन– Ocimum sanctum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** तुलसी के कोमल काण्डीय छोटे पौधे होते हैं। काण्ड बहुशाखीय, मृदूरोमिल , पर्ण–सुगन्धित, लट्वाकार, पुष्प–मञ्जरी में शाखाग्रों पर, मञ्जरी 8 से 15 सै.मी. लम्बी होती है।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–पत्र, बीज, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** तुलसी सर्वत्र सुलभ है इसके पौधे बगीचों एवं घरों में सर्वत्र लगाये हुए पाये जाते है। इसकी अन्य कई किस्मों की खेती भी की जाती है। यथा–

1. Ocimum basilicum Linn. 2. O. gratissimum
3. Ocimum americanum Linn. 4. O. cleremedelicum (कर्पूर तुलसी)

**स्थानिक प्रयोग :** जुखाम, खांसी एवं बुखार में कालीमिर्च के साथ पत्तियों का उपयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** तुलस्यादियोग, देशीचाय, ज्वरध्नीवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : हिक्का कास विषश्वास पार्श्वशूल विनाशनः।**

**पित्तकृत् पार्श्वशूलध्नः सुरसः पूतिगन्धहा।।** *(च. सू. अ. 39)*
**तुलसी लधु रूष्णा च रूक्षा कफविनाशिनी।**
**कृमिदोषं निहन्येषा, रूचिकृद्वन्हिदीपनी।।** *(ध. नि.)*
**तुलसी कंटुका तिक्ता, हृद्योष्ण दाहपित्रकृत्।**
**दीपनी कुष्ठ कृचछास्त्र पार्श्वरूक्क कफवातजित्।।** *(भा. प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जंगली मरूवक।

लैटिन– Origanum vulgare Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड 1–2 फुट लम्बा, मृदुरोमिल, पत्र–सुगन्धित, लट्वाकार, अच्छिन्न, पुष्प–छोटे, गुलाबी, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी आदि स्थानो पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** धनसत्व का प्रयोग उदरविकार, ज्वरध्न के रूप में करते हैं।

इसके अतिरिक्त इस कुल की औषधोपयोगी निम्न प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रो में पायी जाती है।

| | |
|---|---|
| 1. Ajuga parviflora Benth. | 2,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Clenopodium umbrosum ( M. B.) C. Koch. | 2,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Colquhounia coccinea Wall. | 2,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. Ganiotome furcata (Link) of Kuntze. | 1,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. Elsholtza patrinii (Hep) Gorcke. | 2,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 6. E. flave Benth. | 2,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 7. E. fruticosa (D. Don) Rehder. | 2,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 8. E. strobilifera Benth. | 3,300 मीटर की ऊँचाई पर |
| 9. Lamium album Linn. | 3,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 10. Leucas hyssopifolia Benth. | 1,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 11. Leucas lanata Benth . | 1,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 12. Micromeria biflra Benth. | 2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 13. Nepeta discolor Royle.ex.Benth. | 2,900 मीटर की ऊँचाई पर |
| 14. Nepeta deucophylla Benth. | 3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 15. Nepeta govaniana Benth. | 2,900 मीटर की ऊँचाई पर |
| 16. Perilla frutescens (Linn) Britton. | 1,300 मीटर की ऊँचाई पर |
| 17. Phlomiss bracteosa Royle.ex.Benth. | 3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 18. Plecranthus gerardianus Benth. | 2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 19. Plactranthus japonicus (Burmf) Koidz. | 2,000-3,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 20. P. striatus Benth. | 1,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 21. Salvia hians Royle.ex.Hk. | 3,000-3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 22. Salvia lanta Roxb. | 2,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 23. Salvia nubicola Sweet. | 2,000-3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 24. Stachys serica Wall. | 2,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 25. Scutellaria prostrata Jasq. | 2,100-3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 26. Thymus serpyllum Linn. | 2,600-3,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 27. Micromeria biflora Benth. | 2,600-3,800 मीटर की ऊँचाई पर |

ये सभी किस्में उत्तराखण्ड में पाई जाती हैं। इनमें उड़नशील तैल पाये जाते हैं। तिब्बती चिकित्सा में सभी किस्मों का उपयोग होता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल : पुनर्नवादिवर्ग NYCTAGINACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय प्रसरणशील पौधे एवं गुल्म पाये जाते हैं। पर्ण–सादें अभिमुख, अनियमित आकार में, सवृन्त, द्विबीजपर्ण, पुष्प–सादे, छोटे, पर्णकोणोद्भूत, पुंकेशर अनियमित, बीजकोश, एक खंड वाला होता है। द्रव्य प्रायः मूत्रल, वातप्रशमन, एवं यकृतविकार नाशक होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पुनर्नवा ; स्थानिक–पुर्णो।

लैटिन–Boerhaavia diffusa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पुनर्नवा के परिसृत काण्ड वाले पौधे होते हैं। मूल प्रायः बहुवर्षीय एवं वर्षाकाल के बाद नये पौधे निकलते हैं। पत्र–सम्मुख, लट्वाकार, श्वेताभ एवं बाह्यपृष्ठ हरित वर्ण का, पुष्प–छोटे गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण मैदानी भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** यकृतविकार एवं पाण्डु में पञ्चांग क्वाथ का प्रयोग करते है। कामला (पीलिया) में मूल को गले में बांधते हैं।

**शास्त्रीय योग :** पुनर्नवादिमण्डूर, पुनर्नवासव, पुनर्नवादिक्वाथ, पुनर्नवागुग्गुल, च्यवनप्राश, दशमूलारिष्ठ, कुमार्यासव।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पुनर्नवा भवेदुष्ण, तिक्ता रूक्षाकफापहा।**
**स शोथपाण्डुहृरोग, कासोरः क्षतशूलनुत्।।** *(ध. नि.)*
**रक्तापुनर्नवा तिक्ता सारिणी शोफनाशिनी।**
**रक्तप्रदर दोषध्नी, पाण्डुपित्तविमार्दिन।।** (रा. नि.)

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–गुलावाँस।

लैटिन– Mirabilis jalapa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, कन्दिल शाक, काण्ड़ 2–4 फुट लम्बा एवं रक्ताभ, पत्र लट्वाकार, सवृन्त, अरोमिल, एवं अच्छिन्न, पुष्प–श्वेत, गुलाबी वर्ण के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में प्रायः घोन्टी, धनशाली, घुत्तू, एवं उत्तरकाशी में गाँवों के आसपास पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पत्तों का उपयोग फोड़े–फुन्सियों पर लेप के रूप में करते है।

**कुल : ईसबगोलादिवर्ग PLANTAGINACEAE**

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–जंगली ईसबगोल।

लैटिन– Plantago major Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, पर्ण–चौड़े, लट्वाकार, मूलज या दीर्घायत–लट्वाकार, पुष्पदण्ड–6-12″ लम्बा एवं पुष्प–पीताभ हरित।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मी. ऊँचाई तक प्रायः घुत्तू, भटवारी, उत्तरकाशी, चकराता, मन्सूरी आदि स्थानों पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** भोटिया लोग अतिसार में इसके पंचांग का उपयोग करते है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल : अपामार्गादिवर्ग AMRANTHACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय क्षुप एवं गुल्म पाये जाते हैं। पर्ण–सादे उपपत्ररहित, एकान्तर, काण्ड–कोणीय, रोमश, मृदु, बहुशाकीय, प्रसर होता है। पुष्प–गुच्छों में, शाखाग्र या पत्रकोणीय, फल–स्थायी एवं प्रायः वस्त्रों पर चिपकने वाले। इस कुल के द्रव्य मूत्रल, शीतल सारक, दीपन, पाचक, कफनाशक होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अपामार्ग ; स्थानिक–चिरचिटा, उल्टोकुरो।

लैटिन– Achyranthes aspera Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** रोमिल क्षुपक, काण्ड–प्रायः दो फैली हुई शाखाओं में विभक्त, पत्र–सम्मुख, दीर्घायत, सवृन्त, पुष्प–स्पाइक, क्रम में, अधोमुखी, कंटकी, हरित एवं बैगनी रंग के, फल–वस्त्रादि में उलझने वाले।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त।

प्रयोज्यअंग–मूल, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मी. की ऊँचाई तक प्रायः सभी स्थानों पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसकी दूसरी जाति भी इन स्थानों पर कहीं–कहीं मिलती है जिसे–Achyranthes bidentata Blume कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** मूल का दातून दन्तशूल एवं दन्तकृमि में करते हैं। पञ्चांग क्षार का उपयोग कास–श्वास में करते हैं।

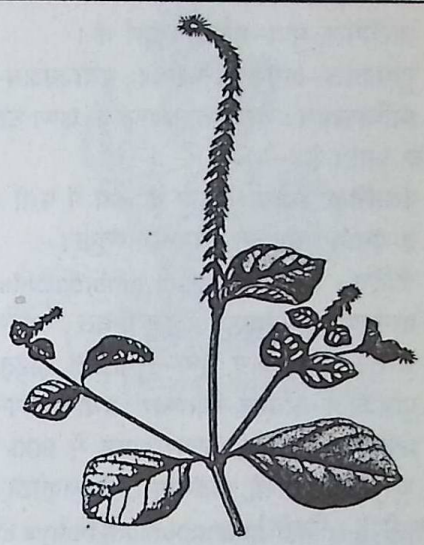

*अपामार्ग (Achyranthes aspera Linn)*

**शास्त्रीय योग :** अपामार्गक्षार तैल, सौभाग्यवटी, कासामृत, अगत्यहरीतकी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अपामार्गस्तु तिक्तोष्णः कटुकः कफनाशनः।**
**अर्शः कण्डु दरामध्नो रक्त हृद्ग्राहि वान्ति कृत्।।** *(ध. नि.)*
**अपामार्ग कटुस्तिक्तस्तीक्ष्णो दीपन : सरः।**
**पाचनो रोचनाश्छर्दि कफ भेदों निलापहः ।।**
**निहन्तीशूल हिध्मार्शो दद्रूकण्डूदरापची।।** *(कै. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तण्डुलीयक ; स्थानिक–काँटाचौलाई।

लैटिन– Amaranthus spinosus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** काँटेदार शाक, काण्ड 2–3 फुट लम्बा, पत्र–एकान्तर, दीर्घायत, लट्वाकार, अच्छिन्न, पुष्प–हरितवर्ण के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मी. की ऊँचाई तक सभी स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** रक्तप्रदर एवं श्वेतप्रदर में मूलस्वरस पिलाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मारीष ; स्थानिक–मारछा।

लैटिन– Amaranthus paniculatus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, एकवर्षीशाक, काण्ड 3–4 फुट लम्बा, अरोमिल, पर्ण–सम्मुख, लट्वाकार, भालाकार, अच्छिन्न, पुष्प–मञ्जरी, अग्रस्थित, एवं लाल।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 900 मी. से 2700 मी. की ऊँचाई पर पाया जाता हैं। प्रायः खेती की जाती है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल : वास्तुकादिवर्ग CHENOPODIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय वनस्पति एवं बहुशाकीय गुल्म पाये जाते है। इस कुल के द्रव्य प्रायः कृमिध्न, सारक, दीपन एवं रक्तवर्धक होते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वास्तुक ; हिन्दी–बथुआ।

लैटिन– Chenopodium album Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित 2–3 फुट तक लम्बा मृदुरोमिल, पत्र–लट्वाकार, दीर्घायत, अरोमिल, पुष्प–हरिताभ वर्ण के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः खेतो के आस–पास सर्वत्र पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** शाक के रूप में पत्तों का उपयोग मलशोधक एवं कब्जहर हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सुगन्धवास्तुक।

लैटिन– Chenopodium ambrosioides Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सुगन्धित, उर्ध्वसंस्थित, शाक, शाखीय, 2–3 फुट तक लम्बा, पत्र–भालाकार, दीर्घायत, दन्तुर एवं लम्बाग्र, पुष्प–सुगन्धित, हरिताभ मञ्जरी में।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 900 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः धनशाली, घुत्तू, उत्तरकाशी, रूद्रप्रयाग, पीपलकोठी, आदि स्थानों पर पाया जाता है। इसकी दूसरी जाति भी इन घाटियों में पाई जाती है। जिसे chenopodium botrys Linn. कहते है।

**स्थानिक प्रयोग :** उदरकृमि में कालीमिर्च के साथ पत्तियों को पीस कर 500 मिलीग्राम की गोलीबनाकर सेवन करते हैं। बवासीर में भी इसकी पत्तियों का प्रयोग करते हैं।

**कुल : चुक्रादिवर्ग POLYGONACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में मुख्य रूप से शाकीय, एकवर्षायु वनस्पति पाई जाती है। काण्ड–गोल, कुछ अम्लता लिए हुए, कभी–कभी सुषिर, पर्ण–एकान्तर, सवृन्त, मसृण, स्वाद में अम्लीय, अण्डाकार, आयताकार होते हैं। पुष्प–समूह में मंजरीसद्यश। इस कुल की वनस्पतियां प्रायः दीपन, पाचन रूचिकर, सारक, ब्रणरोपक होती हैं।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–अञ्जुवार ; स्थानिक–अमली।

लैटिन– Polygonum amplexicaule D. Don

**वानस्पतिक स्वरूप :** अरोमिल उर्ध्वसंस्थित, शाक, काण्ड 2–3 फुट तक लम्बा, पत्र–लट्वाकार, हृदयाकार एवं सवृन्त, पुष्प–मञ्जरी, श्वेत, रक्तवर्ण की, मूल–प्रकंदी, भीतर से लालिमा लिए हुए।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः काणांताल, मन्सूरी, चकराता, देववन, भिलंगनाघाटी, भागीरथीघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। मूल रक्तशोधक एवं संग्राही।

**द्रव्यनाम :** यूनानी–रेवन्दचीनी ; स्थानिक–आर्चा।

लैटिन– Rheum emodi Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड उर्ध्वसंस्थित, नालीदार, अरोमिल, 2–3 फुट लम्बा, पत्रसवृन्त, मूलज 8–10" व्यास में, दीर्घायत, अच्छिन्न एवं स्वाद में अम्ल, पुष्प–सफेद, गुलाबी रंग के भौमिक, काण्ड, प्रकन्दी एवं लम्बा, मोटा, भीतर से पीताभ वर्ण का।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके अतिरिक्त दो अन्य जातियाँ भी यत्र–तत्र इन घाटियों में पाई जाती है।

1. Rheum moorcroftianum Royle ढोलु–पुष्प लाल
2. Rheum webbianum Royle. पुष्प गुलाबी

**प्राप्तिस्थान :** ये जातियाँ उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 2,700 मी. की ऊँचाई से लेकर 3,800 मी. ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, ताली, पंवाली, किनकोलियाखाल खतलिंग, सहस्त्रताल, मन्दाकिनीघाटी, केदारनाथ, वासुकीताल, हथनी, मदमहेश्वर, तुंगनाथ, एवं अलकनन्दाघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून, पिंडारीघाटी, कालीघाटी स्थानों में यत्र–तत्र पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का प्रयोग चोट पर करते हैं। इनके लम्बे पत्र आदि कूटकर प्रचलित अम्लवेतस की गुच्छियाँ बनाई जाती है। मूल स्वरस का रंग के रूप में उपयोग।

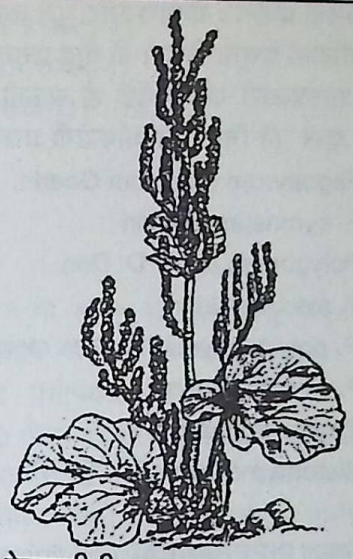

रेवन्दचीनी (Rheum emodi Wall)

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–कोटु ; स्थानिक–ओगल, फाफरा।

लैटिन– Fogopyrum esculentum Moench.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित, एक वर्षीय शाक, काण्ड 2–3 फुट, लम्बा, अरोमिल, रक्ताभवर्ण का, पत्र–हृदयाकार या त्रिभुजाकार, सवृन्त एवं लम्बाग्र, पुष्प–सफेद, गुलाबी फल–त्रिकोणाकार एवं काले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–फल, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सीमान्त गाँवों में इसकी खेती की जाती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग की सब्जी बनाकर खाते है एवं फलों से आटा तैयार किया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–विशल्यकर्णी।

लैटिन– Polygonum recumbens Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एकवर्षी, विसर्पी शाक, काण्ड–मृदु, शाकीय, 1 से 2 फुट लम्बा, पत्र, भालाकार 7" से 9" लम्बे, अवृन्त, पुष्प–छोटे, सफेद, गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त। प्रयोज्यअंग–पञ्चांग

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,600 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः काँणाताल, मन्सूरी, चकराता, भिंलगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी एवं जमुनाघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का प्रयोग दूषित ब्रणों में लेप के रूप में करते हैं। कुछ स्थानिक वैद्य पत्तियों को एनेस्थेटिक के रूप में उपयोगी बतलाते हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–वकरौल्या, काँतलू, निर्विषी।

लैटिन– Polygonum rumicifolium Royle.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीशाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 2–3 फुट लम्बा, अरोमिल, मूल–प्रकन्दी रक्ताभ, श्वेत, गन्ध वाले, पत्र–सम्मुख, दीर्घायत, लट्वाकार एवं लम्बाग्र, पुष्प–गुलाबी, सफेद।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 3,000 मी. से 3,600 मी. की ऊँचाई तक प्रायः मन्दाकिनीघाटी, केदारनाथ, हथनी, मदमहेश्वर, तुंगनाथ, रूद्रनाथ, बद्रीनाथ हनुमान चट्टी आदि स्थानों पर कही–कही पाया जाता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग वत्सनाभ आदि विषों के प्रभाव को दूर करने के लिए करते हैं। इसके अतिरिक्त प्रसूता स्त्रियों के वात प्रसूत जन्य तृषा को कम करने के लिए चूर्ण का उपयोग किया जाता हैं। सम्भवतः यह शास्त्रकारों की निर्विषी हो सकती हैं।

इस कुल की निम्न ओषधोपयोगी प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पाई जाती है।

| | |
|---|---|
| 1. Fagopyrum tataricum Gaertn. | 2,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. F. cymosum Meissn | 2,100 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Polygonum offine D. Don | 3,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. P. aviculare Linn. | 1,800 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. P. polystachynun Wall ex meissn | 1,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 6. P. vivparum Linn. | 3,200 - 3,600 मीटर की ऊँचाई पर |
| 7. Oxyria digyna Hill | 3,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 8. Bistorta macrophylla (कुकड़ी) | 3,800 - 4,000 मी., मुल कास, श्वास में उपयोगी। |

**कुल--पिप्पलीकुल PIPERACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में एक वर्षायु, प्रसणशील लतायें, एवं गुल्मनुमा पौधे पाये जाते हैं। पर्ण–एकान्तर, अखण्डित, हृदयाकार एवं मसृण होते हैं। पुष्प–छोटे पत्र के सामने, बाह्यभ्यन्तर, संयुक्तकोष में, फल–एकल बारीक बीजों वाला, चरपरा सा होता है। इस वर्ग में पान, पिप्पली, मरीच, कंकोल आदि कतिपय उपयोगी द्रव्य पाये जाते हैं। इस कुल के द्रब्य, कटु, दीपन, पाचन, रुचिकर, कफवातध्न, एवं उदर विकार नाशक होते हैं।

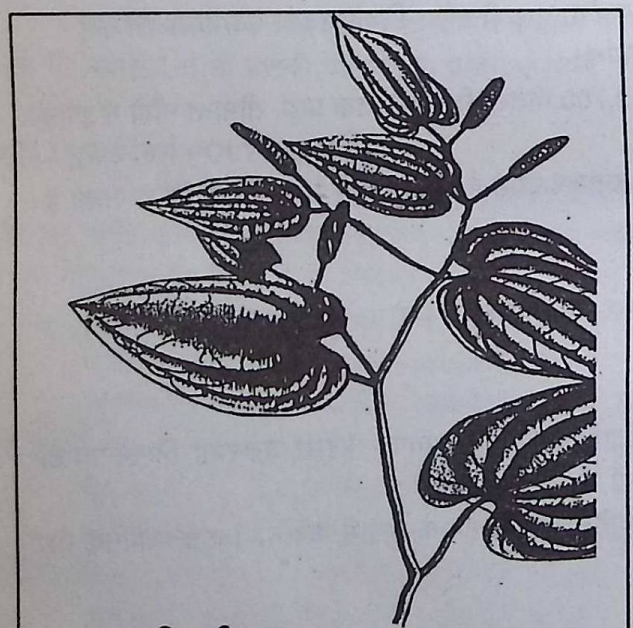

*पिप्पली (Piper longum Linn)*

**द्रब्यनाम :** हिन्दी–पिप्पली ; स्थानिक–पिप्पली।
लैटिन– Piper longum Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही प्रसरणशील, भूशायी लता, मूल–ग्रन्थिल, बहुवर्षीय, शाखापर्वो से मूल निकलकार काण्ड आगे परिसृत होता है। पर्ण–5 से. मी. से 7 से. मी. लम्बे, एकान्तर, हृदयाकार, लट्वाकार, अवृन्त एवं काण्डसंसक्त, मूल सुगन्धित, स्वाद में चरपरा, पुष्प–एकलिंगी, कोणपुष्पक, शुण्डाकार, फल–शहतूत सद्यश, कृष्णाभ धूसरवर्ण के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर।
फलकाल–शीतकाल।
प्रयोज्यअंग–मूल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्णकटिवन्धीय भागों लच्छीवाल, डोईवाला, देहरादून, अल्मोडा जनपद के तराई भावर के छायादार एवं नमदार स्थानों, हलद्वानी, लालकुआँ, टिहरी जनपद के घोन्टी, पिलखी आदि स्थानों पर इसके पादप पाये जाते हैं। कुछ समय पूर्व व्यापारिक रूप से इन स्थानों में पिप्पली का संग्रह होता था परन्तु अब इन स्थानों में पिप्पली लुप्त प्रायः की श्रेणी में आ गई है। अन्य प्रजाति Piper brchysta मसूरी आदि स्थानों पर पाई जाती है। जिसे पहाड़ी पान कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मशालों के रूप में पिप्पली का उपयोग करते है। दीपन–पाचन और कासध्न मानते हैं।

**शास्त्रीय योग :** पिप्पल्यासव, संजीवनीवटी च्यवनप्राश, कासवटी, आनन्दभैरव, कनकासव, चन्द्रप्रभावटी।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पिप्पली दीपनीवृष्णा स्वादुपाका रसायनी।**
**अनुष्णाकटुका स्निग्धा, वातश्लेष्म हरीलघुः।।**
**पिप्पली पाचिनी हन्ति, वातश्लेष्मोदरज्वरान्।**
**कुष्ठप्रमेह गुल्मार्शः पृष्ठशूलाममारूतान्।।** *(भा. प्र.)*

**कुल-जरगूकुल PHYTOLACCACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–जरगू

लैटिन – Phytolacca acinosa Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंश्रित शाकीय वनस्पति, काण्ड 1 मी. से 1½ मी. ऊँचे, मृदु, पर्ण–दीर्घ भालाकार, दन्तुर, पत्र को मसलने पर कुछ गन्धयुक्त, पुष्प–मज्जरीसद्यश, हरिताभ, पीत वर्ण के, फल–मांसल।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; पुष्पकाल–फलकाल, के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं में 2,100 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,300 मीटर तक यह भागीरथीघाटी, अलकनन्दाघाटी, म्यूंडारघाटी, जमुनाघाटी, एवं पिंडारीघाटी में कहीं–कहीं पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण पत्तियों को उबालकर एवं पुन धोकर सब्जी बनाकर खाते हैं। पानी में उबालने पर इसका विषैला प्रभाव नहीं रहता है। यह प्रदाह एवं हृदयरोग में उपयोगी माना जाता है।

**कुल : कर्पूरादिवर्ग LAURACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष, गुल्मनुमा वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। गुल्म बहुशाखीय, मसृण, पर्ण–सादे, सदाहरित, तैल ग्रथियुक्त एवं सुगन्धित, पुष्प–शाखोभूत संयुक्तकोष, आकार में छोटे पीताभ हरितवर्ण के। इस कुल द्रव्य प्रायः दीपन, रूचिकर, सुगन्धित तैलीय, पीनस (प्रतिश्याय), एवं कफ वात शामक होते है। मुख्य रूप से दालचीनी, तेजपत्र, कपूर, मेदालकड़ी, लम्बपाती आदि द्रव्य पाये जाते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पत्र ; हिन्दी–तेजपत्र।

लैटिन– Cinnamomum tamala Hees

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष, काण्डत्वक् हरिताभ, धूसर वर्ण के, रेखांकित, चबाने पर रसदारसुगन्धित, इसकी छाल को तज कहते हैं। पर्ण–एकान्तर या सम्मुख, 4-6" लम्बे, दीर्घायत मसृण तैलीय ग्रथियुक्त, पुष्प–हरित पीताभ वर्ण के। छाल एवं पत्र सुगन्धित, चबाने पर स्वाद में मधुर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–पुष्पकाल के बाद ; प्रयोज्यअंग–पत्र, तज (छाल)।

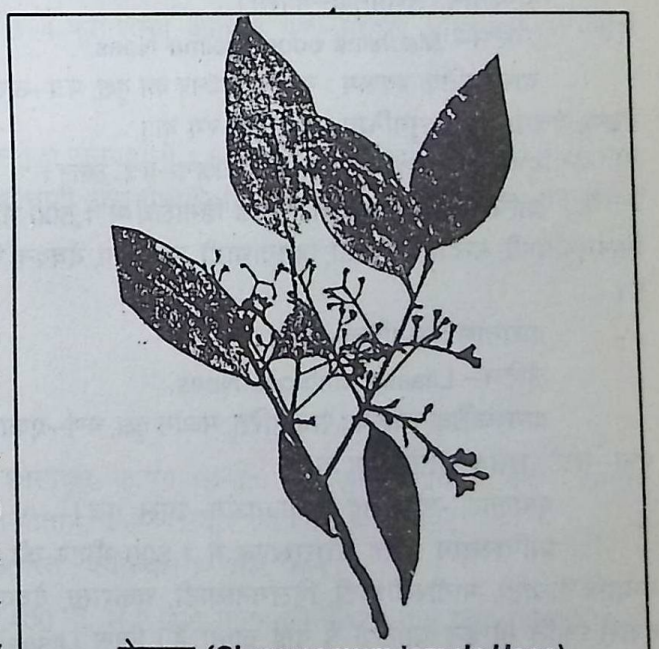

*तेजपत्र (Cinnamomum tamala Hees)*

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल एवं कुमाऊं में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक इसके गुल्म, टौन्सघाटी, जमुनाघाटी, भिंलगनाघाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, दूधातोली, लोहाघाट, अल्मोड़ा जनपद में रानीखेत, दूनागिरी, एवं कफकोट ब्लाक में उपलब्ध है। दिन प्रतिदिन इसके अनैतिक विदोहन होने से स्वयंजात पादप लुप्त होते जा रहे हैं। पहाड़ों में दालचीनी (C. zeylanicum) का कृषि कार्य भी प्रारम्भ किया जा रहा हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** पत्र एवं छाल का मशालों के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। मधुमेह में तेजपत्र एवं नीमपत्र तथा बिल्वपत्र का चूर्ण बनाकर सेवन करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** सीतोपलादिचूर्ण, लवणभास्कर चूर्ण, कासवटी, ब्राह्मीवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : त्वचं लधूष्णां कटुकं स्वादुतिक्तं च रूक्षकम्।**
**पत्तलं कफवातध्नं कण्डू पामाऽरूचिनाशनम्।।**
**हृद्रोगवस्तिवातार्शः कृमि पीनसकासजित्।।** *(भा. प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कर्पूर ; हिन्दी–कपूर।

लैटिन– Cinnamomum camphora Nees.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के वृक्ष होते हैं। इन वृक्षों का रोपण किया जाता है। काण्ड बहुशाखीय, पर्ण तैल ग्रन्थियुक्त, पुष्प–पत्रकोणोद्भ छोटे श्वेताभवर्ण के।

पुष्पकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–पत्र, धनसत्व (कपूर)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के देहरादून जनपद एवं अल्मोड़ा जनपद के उष्ण भागों में इसके वृक्ष लगाये हुये पाये जाते हैं। इसके पत्रों से कपूर तैयार किया जाता है। इसके अतिरिक्त तुलसी कुल की वनस्पति ओसिमम क्लिरिमेन्डिकम् के पत्तों से धनसत्व (कपूर) तैयार किया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** धूपनसामग्री एवं मच्छरों को भगानें के लिये पत्तों का धुवां देते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कर्पूर कटुतिक्तं च, मधुरं शिशिरं विदुः।**
**तड्भेदो विषदोषध्नं, चक्षुष्यं मदकारकम्।।** *(ध. नि.)*
**कर्पूरो मधुरस्तिक्तः सुरभिः शीतलो लधुः।**
**चक्षुष्यो लेखनो वृष्यः कफमेदोविषापहः।।** *(रा. नि.)*

**शास्त्रीय योग :** कर्पूररस, कर्पूरासव, पंचगुणतैल, कर्पूरादिवटी, कासवटी, षड्विन्दु तैल।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कोला।

लैटिन– Machilus odoratissima Nees.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार का वृक्ष, पत्र–अरोमिल, 4–6'' लम्बे लट्वाकार, भालाकार, अच्छिन्न, एवं तीक्ष्ण, पत्राग्र, पुष्प–सुगन्धित एवं सफेद रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,500 मी. ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, चकराता, देववन, नैनीताल, रानीखेत आदि स्थानों पर यत्र तत्र पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–रासूर।

लैटिन– Litsaea umbrosa Nees.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, मध्यम वृक्ष, पर्ण–एकान्तर, 3–6'' लम्बे, दीर्घायत, भालाकार, अरोमिल सवृन्त, पुष्प–छोटे, छत्रक, सफेद रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; प्रयोज्यअंग–छाल, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः मन्दाकिनीघाटी, भागीरथीघाटी, भिलंगनाघाटी, चकराता, देववन, जौनसार आदि स्थानों पर पाया जाता हैं। इसकी दूसरी जाति भी इन घाटियों में पाई जाती हैं। जिसे Litsaea lanuginosa Nees कहते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मेदासक ; स्थानिक–मेदालकड़ी।

लैटिन– Litsea chinensis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** इसके मध्यम आकार के सदाहरित वृक्ष पाये जाते है। छाल–बाहर से कार्की एवं अन्दर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

से रक्ताभ वर्ण की होती है। पर्ण–अभिप्रासवत् सवृन्त, पत्र मसलने पर सुगन्धित लम्बाग्र एवं अधः पृष्ठ धूसरवर्ण का होता है। पुष्प–सवृन्त, मूर्धज, गुच्छों में, फल–गोलाकार।

पुष्पकाल–जून, अगस्त ; फलकाल–शीतकाल ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** इसके वृक्ष उत्तराखण्ड के उष्णकटिबन्धीय बनो में पाये जाते हैं। देहरादून, कोटद्वार, रामनगर, हल्द्वानी आदि स्थानों पर यत्र–तत्र उपलब्ध हैं।

**कुल : वन्दाकादिवर्ग LORANTHACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में शाकीय वनस्पतियाँ पाई जाती है। ये वनस्पतियाँ प्रायः परोपजीवी होती है। पर्ण–अभिमुख, मांसल अखण्ड, उपपत्र–रहित, द्विबीजपर्ण, फल–माँसल एक बीज वाला अथवा बहुबीजी होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वन्दाक ; स्थानिक–बांदा, वान्दो।

लैटिन– Dendrophthose falcata (L.F.) Etti.

**वानस्पतिक स्वरूप :** दूसरे वृक्षों पैदा होने वाला अधिपादप, पर्ण–मांसल, लट्वाकार दन्तुर एवं अरोमिल, पुष्प–गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक वृक्षों के उपर प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**कुल : अर्गुवादिवर्ग THYMALIACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–सतपुड़ा।

लैटिन– Daphne popyracea Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, क्षुप, काण्ड 3–4 फुट लम्बा, शाकीय, पर्ण–सम्मुख, भालाकार एवं मसृण, पुष्प–सफेद रंग के, फल--पकने पर लाल।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं अल्मोड़ा जनपदों में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मी. की ऊँचाई तक प्रायः चम्बा, काणांताल, मन्सूरी, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी, भिंलगनाघाटी, पिन्डारीघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**कुल : इलेजिनेसी ELAEAGINACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–आमील (आमींण)।

लैटिन– Hippophae rhamnoides Serv.

**वानस्पतिक स्वरूप :** काँटेदार, सदाहरित, छोटावृक्ष, काण्ड़ 15–20 फुट लम्बा, शाकीय, पर्ण–एकान्तर, लट्वाकार, दीर्घायत एवं अरोमिल, पुष्प–कक्षीय, हरित पीताभ, फल–रसदार एवं स्वाद में अम्ल।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 2,400 मी. से 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भागीरथीघाटी, सुक्की, हर्षिल, गंगोत्री, एवं मन्दाकिनीघाटी, अलकनन्दाघाटी,जमुनाघाटी आदि स्थानों पर पाया जाता है।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण इसके फलों की चटनी बनाकर प्रयोग करते है। इन स्थानों पर Hippophae salicifolia D.Don नामक प्रजाति भी कहीं–कहीं मिलती है। ग्रामीण लोग इसके पके फलों से जैम तैयार करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

*आमलकी (Emblica officinales Gaertn)*

**कुल : एरण्डादिवर्ग EUPHORBIACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में वृक्ष एवं शाकीय वनस्पतियां पाई जाती है। पर्ण–विन्यास–एकान्तर या अभिमुख, पर्ण–उपपत्र युक्त या उपपत्ररहित द्विबीजपर्ण, सादे, खंडित, विभक्त, दुग्धिल होते है। पुष्प–छोटे, उपरिस्थ, बीज–चित्रित और गोलाई लिए हुए लम्बे होते हैं। प्रायः काण्ड को तोड़ने पर दूध निकलता है। इस वर्ग में एरण्ड, दन्ती, आमलकी, भूम्यामलकी, स्नूही, कम्पील्लक, नागदन्ती आदि उपयोगी द्रव्य आते हैं। इस कुल की वनस्पतियां प्रायः भेदन, वातसंशमन, उदररोगनाशक होती है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आमलकी ; हिन्दी–आंवला।

लैटिन– Emblica officinales Gaertn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष पत्र–वृन्तहीन एवं ½ इंच तक लम्बे, पुष्प–श्वेत पीताभ, फल–गोल, धारीदार, मांसल।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई ; फलकाल–जनवरी, मार्च; प्रयोज्य अंग–फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मी. ऊँचाई तक प्रायः टिहरीवन खण्ड, उत्तरकाशी तथा रामनगर, हल्द्वानी आदि प्रायः सभी स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** च्यवनप्राश, आमलकीरसायन, धात्रीलौह, त्रिफलावूर्ण, त्रिफलागुग्गुल, आरोग्यवर्धनी–वटी, चित्रकहरीतकी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अम्लं स मधुरं तिक्तं कषायं कटुकं सरम्।**
**चक्षुष्यं सर्वदोषध्नं वृष्यमामलकी फलम्।।**
**हन्ति वाले तदम्लत्वात्, पित्तं माधुर्य शैत्यतः।**
**कफं रूक्ष कषायत्वात्, फलेभ्योऽम्याधिकं च तत्।।** *(सू. सू. अ. 6)*
**विद्यादामलके सर्वान् रसान् लवणवर्जितान्।।** *(चरक)*

*कम्पिल्लक*
*(Malloutus phillippinensis Muell Arg)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कम्पिल्लक ; स्थानिक–रीणों, कमील।

लैटिन– Malloutus phillippinensis Muell Arg.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–शाखीय, पत्र–एकान्तर, प्रायः अनिश्चित आकार के, 3–9'' लम्बे, लट्वाकार या लट्वाकार–दीर्घायत, अच्छिन्न तट, पुष्प–ललिमा लिए हुए पीले रंग के, फल–तीन खण्डों में एवं फलरज लाल रंग का।

पुष्पकाल–सितम्बर, नवम्बर ; फलकाल–मार्च, मई ; प्रयोज्यअंग–फलरज, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** फलरज चूर्ण का प्रयोग गुड़ के



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

साथ उदरकृमि में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कृमिघातिनीवटी, कम्पिल्लवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : गुल्मोदर विवन्धाध्म, श्लेष्म कृमि विनाशनः।।** *(ध.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–एरण्ड ; स्थानिक–अरण्ड।

लैटिन-- Ricinus communis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित क्षुप 5 से 8 फुट लम्बा, शाखीय, पर्ण–एकान्तर, हस्ताकार एवं खण्डित खण्ड अच्छिन्न तट, पुष्प–एकलिंगी परन्तु नर और स्त्री दोनो प्रकार के।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल, बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पत्तों का उपयोग गुमचोट में बाह्य सेक के लिए करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** एरण्डादिक्वाथ, रास्नादिक्वाथ, बृ. सैन्धवादितैल, एरण्डपाक।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : एरण्ड तैल मधुरं गुरू श्लेष्माभिवर्धनम्।**
**वातासृग्गुल्म हृदोग जीर्वज्वर हरं परम्।।** *(च. सू. अ. 29)*
**एरण्ड़ तैलं मधुरंमुष्णं तीक्ष्णं कटु-कषायानु रसंः,**
**सूक्ष्मं स्त्रोतो विशोधनं त्वचं वृषे, मधुरविपांक, वयः,**
**स्थापनं योनिशुक्र विशोधनं आरोग्यमेधा कान्तिस्मृति,**
**बलकरं वातकफमधो भाग दोषहरं च।** *(सु. सू. अ. 45)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–दन्ती ; स्थानिक–दंती।

लैटिन– Baliospermum montanum Muell.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंश्रितगुल्म, बहुशाखीय, काण्ड 2 मीटर तक ऊँचा पत्र–एकान्तर, विभिन्न आकार के लट्वाकार, खण्डित, अरोमिल, लम्वाग्र, पर्णतट–विच्छेदों में पुष्प–एकलिंगी, हरित–पीतवर्ण के फल–तीन खण्डों वाला, बीज–चित्रित, मसृण, कोष वाले तैलीय।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई।

फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

प्रयोज्यअंग–मूल, बीज, पत्र।

**प्राप्तिस्थान :** इसके गुल्म उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊं के उष्ण कटिवन्धीय भूभागों, टिहरी गढ़वाल–धोन्टी, धनशाली, देहरादून वनवृत, अल्मोड़ा जनपद के तराई–भावर में प्रायः 900 मीटर की ऊँचाई तक सड़कों एवं खेतों के आस–पास यत्र–तत्र उपलब्ध है।

**दन्ती *Baliospermum montanum Muell.***

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का उपयोग जलोदर, यकृतविकार एवं ज्वरध्न के रूप में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** दन्त्यारिष्ठ, यकृतप्लीहारीलौह, अभयारिष्ठ, कुमार्यासव, अर्शकुठाररस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कफपित्तोदरानाह शोथशूलगुदाडरान्।**
**विदाह कण्डू कुष्णास्त्र प्लीहगुल्माश्मरीकृमीन्।।** *(कै. नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**दन्ती द्रवन्तिका चोष्णा, कटुपाकरसालधुः।**
**विकाशिनी सरातीक्ष्णा, दीपनी पाचिनी हरेत्।।** *(कै. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भूम्यामलकी ; स्थानिक–भूंईआंवला।

लैटिन–Phyllanthus urinaria Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाक, काण्ड–रक्ताभ, मृदु 2–2½ फुट तक लम्बा, पर्ण–अवृन्त ¼" से ½" लम्बे, दीर्घायत या रेखाकार, पुष्प–छोटे, रक्ताभ वर्ण के, फल 1/8" व्यास में तथा गोल।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह गढ़वाल के उष्ण भागों में 1,200 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः नम स्थानों पर पाया जाता हैं। इसकी एक अन्य जाति भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। जिसे Phyllanthus niruri Linn. कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** यकृतविकार, मधुमेह में ग्रामीण पञ्चांग का प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भूधात्री तु कषायाम्ल पित्तमेह विनाशिनी।**
**शिशिरा मूलरोगर्ति शमनी दाहनाशिनी।।** *(रा. नि.)*
**तामलकी हिमातिक्ता, कषाया मधुरा लधुः।**
**रोचनी पाण्डुपित्तास्त्र, कफ कुष्ठ विषापहा।।**
**जेय्चश्वास तृषादाह हिध्याकास क्षतक्षयान्।।** *(कै. नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सप्तला ; स्थानिक–चोंपालु।

लैटिन– Euphorbia pilosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित शाक, काण्ड 1 से 2 फुट लम्बा पत्र–एकान्तर, भालाकार दीर्घायत, अरोमिल एवं अच्छिन्न तट, पुष्प–हरिताभ पीतवर्ण के, एक वर्षी शाक के मूल कन्द सद्यंश, मृदु ।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह गढ़वाल में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक बणचूरी, घुत्तू, काँणाताल, मन्सूरी, चकराता, देववन, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी एवं जोशीमठ, रानीखेत, आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल का प्रयोग विरेचन के लिए एवं काण्ड का वमन के लिए करते हैं। सम्भवतः चरकोक्त उभयतोभागहर द्रव्य यही सातला हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : सातला कटुका पाके वातला शीतल लधुः।**
**तिक्ता शोथ कफानाह, पित्तोवर्तरक्तजित्।।** *(भा. प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–दुग्धिका ; स्थानिक–दुधी।

लैटिन– Euphorbia hirta Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाक, काण्ड 1–2 फुट तक लम्बा, पत्र–सम्मुख, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत–भालाकार, पुष्प–हरिताभ वर्ण के। इसकी एक अन्य जाति भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। जिसे Euphorbia thymifolia Linn. कहते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग चूर्ण का प्रयोग कालीमिर्च के साथ ववासीर में ग्रामीण करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : दुग्धिकोष्णा गुरूरूक्षा वातला गर्भकारिणी।**
**स्वादुक्षीर कटुस्तिक्ता, सृष्ठमूत्रामलापहा।।**
**स्वादुविष्ठम्भनी वृष्या, कफ कुष्ठ कृमिप्रणुत्।।** *(भा. प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–स्नूही ; स्थानिक–शुलू।

लैटिन– Euphorbia nivulia Buch-Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–दुग्धयुक्त, काँटेदार, शाखीय, शाखाएँ–चक्राकार क्रम में, पत्र–एकान्तर, माँसल, अवृन्त, दीर्घायत, अनुपर्णा, दो–दो काँटो में परिवर्तित, पुष्प–छोटे–छोटे पीत वर्ण के। दूसरी जाति भी इन घाटियों में मिलती है। जिसे Euphorbia royleana Boiss. कहते हैं।

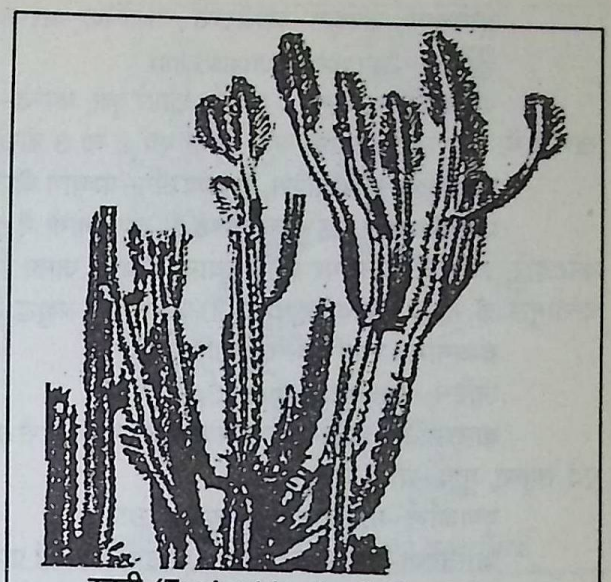

स्नूही (Euphorbia nivulia Buch-Ham)

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–दुग्ध।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में प्रायः टिहरी वन खण्ड इन्द्रोला, धनशाली, श्रीनगर, रूद्रप्रयाग आदि सभी स्थानों पर मिलता हैं।

**शास्त्रीय योग :** स्नुहीतैल, वज्रसार, क्षारसूत्र।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**

**विरेचनां सर्वेषां सुधा तीक्ष्णतमा मता।**
**संधांत हिमिनत्याशु दोषाणां कुष्ठविभ्रमा।।**
**पाण्डुरोगादरे गुल्मे कुष्ठे दूषीविषार्दिते।**
**श्वयथौ मधुमेहे च दोषविभ्रात्त चेतसि।।** *(च. क. अ.10)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अधोगुडा।

लैटिन– Euphorbia acaulis Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी मूल, काण्ड–एकवर्षी, पर्ण–मूलोद्भव, माँसल, दूधिया, 3 या 4 पत्र, पुष्प– पीले रंग के मूल–मूलीसद्यश, लम्बा, मोटा एवं दूध वाला।

पुष्पकाल–दिसम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के शिवलिक वनखण्ड में कहीं–कहीं पाया जाता हैं। वनस्पति विशेषज्ञ ठा. बलवन्त सिंह ने शास्त्रीय अधोगुड़ा इसी द्रव्य के होने की सम्भावना व्यक्त की हैं। यह तीव्र विरेचक द्रव्य, वनमूली के नाम से प्रसिद्ध हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–पुत्रंजीव ; स्थानिक–जियोपोता।

लैटिन– Putranjiva roxburghii Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–शाखीय, पत्र–दीर्घायत, भालाकार, अरोमिल, लम्बाग्र, पुष्प–पीले रंग के, फल–मुदुरोमिल, कठोर।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पत्र, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, देहरादून, जौनसार आदि स्थानों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूल को विषैला मानते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : पुत्रजीवो गुरूर्वृष्यों, मर्भदः श्लेष्मवात ह्यत।**
**सृष्ठ मूत्रमलो रूक्षो, हिमाः पटुः कटुः।।** *(भा. प्र.)*
**दुग्धिकोष्णा गुरूरूक्षा वातला गर्भकारिणी ।**
**स्वादुक्षीरा कटुस्त्रिवक्ता, सृष्ठ मूत्रामलापहा।।**
**स्वादुविष्ठम्भनी वृष्या, कफ कुष्ठ कृमिप्रणुत्।।** *(भा. प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–व्याघ्रैरण्ड ; स्थानिक–अरण्डी।

लैटिन– Jatropha curcas Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** क्षुप या छोटा वृक्ष, काण्ड–अरोमिल, शाखीय,पत्र– 4" से 6" लम्बे, हृदयाकार, 3–5 खण्डो में, पुष्प छोटे पीताभ, फल–गोल एवं 2 या 3 बीजों वाले।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग बीज।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में 900 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः टिहरीवन खण्ड देहरादून कोटद्वार, हल्द्वानी, रामनगर आदि स्थानों में पाया जाता हैं। हरिद्वार, देहरादून की कुछ फार्मेसियाँ इसके काण्ड का दन्तीमूल के नाम से ब्यवहार करते हैं, जो सर्वथा अशुद्ध है।

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–एकदानियां।

लैटिन– Bridelia retusa Spring.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, पर्ण–3" से 6" लम्बे, अधोमुख, लट्वाकार, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत, अरोमिल एवं सवृन्त, पुष्प–छोटे, पीतवर्ण के।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में प्रायः ऋषिकेश, राणीपोखरी, डोईवाला, नरेन्द्रनगर, कोटद्वार, रामनगर आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इस कुल की औषधोपयोगी निम्न वनस्पतियाँ भी इन स्थानों पर मिलती है यथा–

1. पानी गम्हार–Trewia nudiflora Linn.
2. चामरी–Glochidion velutinum Wight.
3. खिन्ना–Sapium insigne Trimen.
4. Acalypha brachystachya Harem
5. Arochne cordifolia (Decne) Hurusawa
6. Euphorbia hypericifolia Linn.
7. Phyllanthus virgatus J.G. Forst

(सभी पौधे 1,800 मीटर की ऊँचाई तक पाये जाते है।)

**कुल-बक्सेसी BUXACEAE**

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–पापरी।

लैटिन–Buxus wallichiana Baill.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–शाखीय एवं सदाहरित, पर्ण–सम्मुख, अरोमिल, भालाकार, तीक्ष्णाग्र एवं पुष्प–पीले रंग के।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में मिलता हैं।

**कुल-वटादिवर्ग URTICACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस कुल में वृक्ष, गुल्म एवं शाकीय वनस्पतियां पाई जाती है। पर्ण–एकान्तर, साधारण, दीर्घलोभी, पुष्प–छोटे, एक लिंगी या द्विलिंगाश्रयी, कर्णिका के अन्दर जमे हुए एवं बीज कोष एक खण्ड़ वाला होता हैं काण्ड एवं पत्र को तोड़ने पर दूध निकलता है। इस वर्ग में बट, उदुम्बर, पीपल, प्लक्ष, आदि कतिपय पंचक्षीरी वृक्ष आते है। इस कुल के द्रव्य ग्राही, रक्तदोषहर, व्रणरोपक, वेदनास्थापन दाहनाशक होते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–उदुम्बर ; स्थानिक–पिलखु।

लैटिन– Ficus racemosa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** वृक्ष, काण्ड–त्वक् रक्ताभ–धूसर वर्ण की, पत्र 3–4'' लम्बे, लट्वाकार, दीर्घायत, अच्छिन्न, एवं तीक्ष्णाग्र, फल–पकने पर लाल रंग के।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

फलकाल–अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में प्रायः टिहरी बन खण्ड, नरेन्द्रनगर आदि स्थानों पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसकी अन्य साधारण एवं प्रसिद्ध जातियां भी यत्र–तत्र इन घाटियों के उष्ण भागों में पायी जाती है। यथा :

1. काकोदुम्बरिका – Ficus hispida Linn.
2. जंगली अंजीर – Ficus palmata.
3. वट – Ficus bengalensis Linn.
4. प्लक्ष – Ficus infectoria Roxb.
5. पीपल – Ficus religiosa Linn.
6. तिमिला – Ficus roxburghii Wall.
7. Ficus sarmentosa Buch-Ham. var. ludduca Roxb.

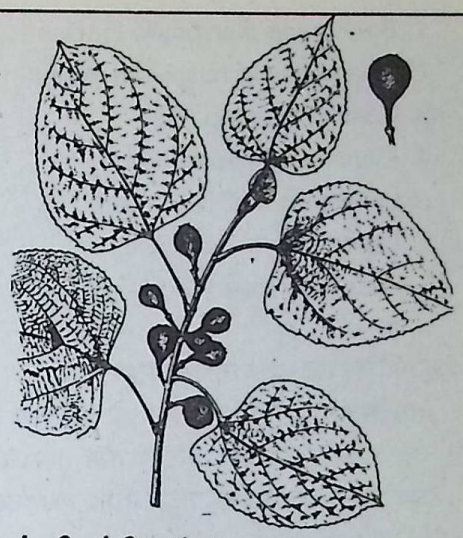

*जंगली अंजीर (बेडू) - Ficus palmata.*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वृश्चिकाली ; स्थानिक–कंण्डाली, सिसनू ; हिन्दी–बिच्छूबूटी।

लैटिन–Girardiana diversifolia Eriss or G. zeylanica Deene.

**वानस्पतिक-स्वरूप :** उर्ध्वसंस्थित क्षुप, रोमिल, रोम लग जाने पर खुजली पैदा करने वाला 3 से 5 फुट लम्बा, पत्र–3" से 5" तक लम्बे, लट्वाकार, तीक्ष्ण, रोमिल, सवृन्त, एवं लम्बाग्र पुष्प–मंजरी, सफेद, रोयेदार।

पुष्पकाल–दिसम्बर, जनवरी ; प्रयोज्यअंग–पत्र, मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण भागों से लेकर 1,500 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग नवीन पत्ते का उपयोग शाक के बनाने के लिए करते हैं। इसके अलावा काण्ड शाखाओं द्वारा पक्षाघात वाले अंग को स्पर्श कराने से लाभ होता है।

**द्रव्यनाम :** हेमर, कीटमारा।

लैटिन–Ulmus wallichiana Planch.

**वानस्पतिक स्वरूप :** पर्णपाती, मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–त्वक्, धूसर वर्ण की, पत्र– 8" से 12" तक लम्बे, पत्रक 2" से 3" तक लम्बे, लट्वाकार, दीर्घायत एवं दन्तुर, पुष्प–गुलाबी रंग के।

पुष्पकाल–फरवरी ; प्रयोज्यअंग–छाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तूद ; स्थानिक–केमू।

लैटिन–Morus alba Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, पत्र–2" से 3" लम्बे लट्वाकार, भालाकार एवं लम्बाग्र, पुष्प–एकलिंगी परन्तु दोनो प्रकार भिन्न–भिन्न स्पाइक मञ्जरिओं में।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** ये जातियां उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में सड़को के समीप यत्र–तत्र पायी जाती है। इसकी अन्य जाति भी इन घाटियों में उष्ण भागों में पाई जाती हैं। जिसे Morus serrata Roxb. कहते हैं। इस कुल की कुछ औषधोपयोगी अन्य जातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पायी जाती हैं जो निम्न हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

1. Boehmeria platyphylla D. Don — 1,700 – 2,100 मी० की ऊँचाई पर
2. Chamabainia cuspidate Wight — 1,700 – 2,100 मी० की ऊँचाई पर
3. Conostegia hirta Miq — 1,600 मी० की ऊँचाई पर
4. Elatostema sessile Forst — 1,600 मी० की ऊँचाई पर
5. Lecanthus wallichii Wedd. — 1,600 मी० की ऊँचाई पर
6. Laportea terminalis Wight — 1,600 मी० की ऊँचाई पर
7. Pilea umbrosa Wedd. — 2,700 मी० की ऊँचाई पर

**कुल-विजयादिवर्ग CANNABINACEAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में गुल्म एवं क्षुप पाये जाते है। पत्र एकान्तर, मृदुगन्धवाला, पुष्प–स्त्रीपुष्प एवं पुष्प भेद से अलग–अलग होता है। इस कुल में भाँग मुख्य रूप से पाया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बिजया, भांग ; स्थानिक–भाँग्लु।

लैटिन–Cannabis sativa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** भाँग के एक वर्षायु, गन्धयुक्त, तलोत्थ क्षुप होते हैं। स्त्री एवं पुरूष भेद से अलग–अलग पौधे पाये जाते हैं। काण्ड 3 से 5 फुट तक लम्बा, रोमिल पर्ण–अभिमुख, एकान्तर क्रम में स्थित, पत्रतट–तीक्ष्ण, दन्तुर, पुष्प–हलके पीताभ वर्ण के, नरपुष्प छोटे, पुष्प–मञ्जरियों में रालदार द्रव्य लगा होता है जिसे गाँजा कहते हैं। भाँग के पत्तों को रगड़ने पर जो रालदार पदार्थ हाथ पर चिपक जाता है तथा उसे खुरचकर संग्रह किया जाता है इसे ही चरस कहते है।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय के उष्ण भागों में 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में उपलब्ध हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** बीजो का उपयोग मशालों के रूप में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** जातिफलादिचूर्ण, मदनानन्दमोदक, विजयवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भंगा तु दीपनी रूच्या ग्रहिणी पाचनी लधुः।**
**निद्रा पित्रप्रदोष्णं च, कामदा कफ वातजित्।।** *(शो. नि.)*

**कुल-अक्षोड़ादिवर्ग JUGLANDACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–अक्षोड़ ; स्थानिक–अखरोट।

लैटिन–Juglans regia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, पत्र–विषम, पिच्छाकार, संयुक्त, 6–15'' लम्बें, पत्रक–अवृन्त, सम्मुख, दीर्घवृत्तीय, दीर्घायत, अच्छिन्न तट, फल–गोल, रोमिल।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; फलकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; प्रयोज्यअंग–गिरी, मूलछाल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में मिलता है। जंगली किस्म के अखरोट का फल कठोर होता है।

**स्थानिक प्रयोग** - फलमज्जा (गिरी) सूखे मेवों के रूप में प्रयोग करते हैं। छाल का उपयोग दान्तुन के रूप में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : अक्षोड़ो मधुरो वल्यः स्निग्धोष्णो वात पित्तजित्।**
**रक्तदोष प्रशमनः शीतल कफ कोपनः।।** *(रा.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल : कटफलादिवर्ग MYRICACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कटःफल ; स्थानिक–काफल।

लैटिन–Myrica nagi Thumb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, काण्ड–त्वक्, धूसर वर्ण की, पत्र–4" से 8" लम्बे, भालाकार, अधोमुख, कुण्ठिताग्र एवं अच्छिन्न तट, फल–अण्डाकार एवं रक्तवर्ण के।

पुष्काल–अक्टूबर, दिसम्बर।

प्रयोज्यअंग–छाल, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,500 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक चम्बा, काणांताल, गजा, उत्तरकाशी, मंसूरी, चकराता, रानीखेत आदि सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग फलों को खाते हैं। लोकपरम्परा में पके फल ग्रीष्मऋतु का बहुत प्रसिद्ध फल हैं। छाल का उपयोग नसवार के रूप में करते हैं।

*कटःफल (Myrica nagi Thumb)*

**शास्त्रीय योग :** कट्फलादिक्वाथ, कट्फलचूर्ण, कट्फलादिनस्य।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कटः फलः कटुरूष्णाश्च कास, श्वास ज्वरापहः।**
**प्रतिश्यायहरौ रूच्चौ, मुखरोग शभः प्रदः।।** *(रा. नि.)*

**कुल- भोर्जपत्रादिवर्ग BETULACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–भूर्ज ; स्थानिक–भोज।

लैटिन– Betula utilis D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमकार वृक्ष, काण्ड–छाल, सफेद कार्की, बादामी रंग की एवं परतदार, पत्र–2" से 3" लम्बे, लट्वाकार, लम्बाग्र, दन्तुर एवं गण्ड बिन्दुओं से युक्त। एक लिंगी परन्तु नर एवं स्त्री पुष्पों की स्पाइक अलग–अलग।

पुष्पकाल–अप्रैल, मई।

प्रयोज्यअंग–छाल, भूर्जग्रन्थि।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 2,400 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मी. की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगनाघाटी, भागीरथी घाटी, जमुनाघाटी, अलकनन्दाघाटी, एवं हरकीदून, टौन्स आदि स्थानों पर सुलभ है।

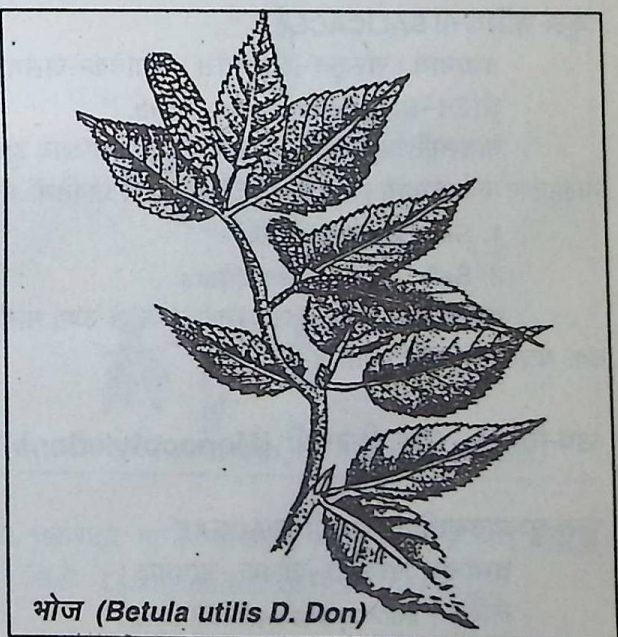

*भोज (Betula utilis D. Don)*

**स्थानिक प्रयोग :** इसके पुराने वृक्षों की शाखाओं पर फंगस के कारण बाह्य ग्रंथियाँ हो जाती हैं जिसे आचार्यो ने भुर्जग्रन्थि लिखा है ग्रामीण लोग इसे भुजगेड़ा कहते है । यहाँ कुछ लोग भुजगेड़ा को संततिनिरोध में उपयोगी बतलाते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : भूर्जः कटु कषायोष्णो भूतरक्षा करः परः।**
**त्रिदोष शमनो पथ्यो कुष्ठ कौटिल्य नाशनः।।**
**पित्त रक्त रूजां हन्ति मन्त्र कार्येषुः सिद्धिदः।।** *(रा. नि.)*

**कुल-माजुफलादिवर्ग FAGACEAE**

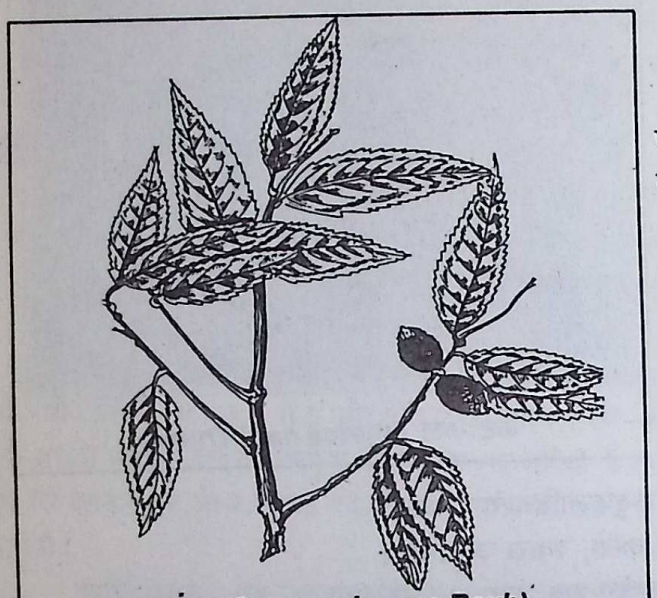

*बांझ (Quercus incana Roxb)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–बांझ।

लैटिन– Quercus incana Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार, सदाहरित वृक्ष, पत्र–दीर्घायत, लट्वाकार एवं दन्तुर पुष्प–एक लिंगी, परन्तु दो प्रकार की मंजरिकाओं में, फल–बादामी रंग का।

पुष्पकाल–जून, जुलाई;

प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, फल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 1,200 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में सुलभ है। इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती है। यथा :

1. रवरसू–Quercus dilatats Lindl.
2. मौरू–Quercus semecarpifolia Sm.

**कुल-सैलिकेसी SALICACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जलवेतस ; स्थानिक–जलमाल्या।

लैटिन–Salix tetrasperma Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यमाकार वृक्ष, शाखाये झुकी हुई, पत्र–3" से 6" लम्बे, अरोमिल, दीर्घायत लट्वाकार भालाकार एवं लम्बाग्र। इसके अतिरिक्त निम्न जातियाँ भी इन भी इन घाटियों में पायी जाती है।

1. Salix elegans Wall.
2. Salix daphnoides Villars.

**प्राप्तिस्थान :** जलवेतस उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में नदी एवं गांवों के समीप प्रायः 1,600 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाया जाता है।

## उप-विभाग - एक बीजपत्री (Monocotyledons)

**कुल-मुञ्जातकादिवर्ग ORCHIDACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जीवक–ऋषभक।

लैटिन– Microstylis wallichii Lindl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड भौमिक, आभासी, शुल्ककन्द, काण्ड–पुष्पदण्ड सहित 6–7 लम्बा, पत्र–लट्वाकार, भालाकार, अरोमिल एवं तीक्ष्णाग्र, पुष्प–छोटे एवं पीले रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई। प्रयोज्यअंग–भौमिक काण्ड।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, मन्सूरी, चकराता, देववन आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

**वक्तव्य :** आजकल हरिद्वार, देहरादून की फार्मेसियाँ इन्ही भूमिगत काण्डों का जीवक ऋषभक के नाम से विक्रय करती हैं। इन स्थानों से काफी मात्रा में इस अष्ठवर्गीय द्रव्य का संग्रह किया जाता हैं ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**

**जीवकर्षभकौं ज्ञेयौ हिमाद्रिशिखरोद्भवौ।**
**रसोनकन्दवत् कन्दौ, निस्सारौ सूक्ष्मपत्रकौ।।**
**जीवकः कूर्चकाकारः ऋषभो वृषश्रृंगवत्।**
**जीवकर्षकौ वल्यौ, शीतौ शुक्रकफप्रदौ।।**

*(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जीवकभेद।

लैटिन– Microstylis muscifera Ridle

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीशाक, मूल–कन्दिल, गोल, सफेद रंग का, पत्र–संख्या में 2, दीर्घायत या लट्वाकार, कुण्ठिताग्र, पुष्प–गुलाबी, पीले ।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती है जो निम्न लिखित है।

1. Microstylis cylindrostachya Rchb.
2. Microstylis mackinnoni Duthie

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ उत्तराखण्ड हिमालय में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः काणांताल मन्सूरी, नागटिब्बा, चकराता, देववन, भागीरथीघाटी, जमुनाघाटी एवं भिलंगनाघाटी आदि में पायी जाती है।

**द्रव्यनाम :** लैटिन Liparis rostrata Rchb. f.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय, स्थलीय आर्किड, काण्ड 6"–8" तक लम्बा, पुष्प–नारंगी पीले।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त।

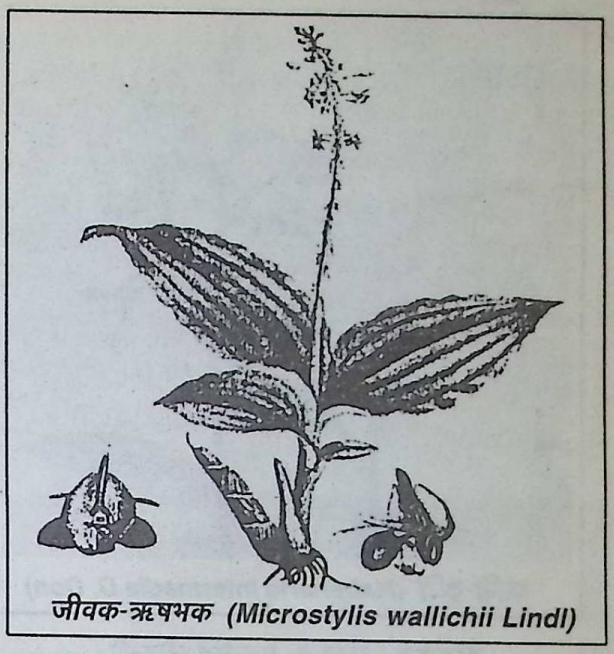

*जीवक-ऋषभक (Microstylis wallichii Lindl)*

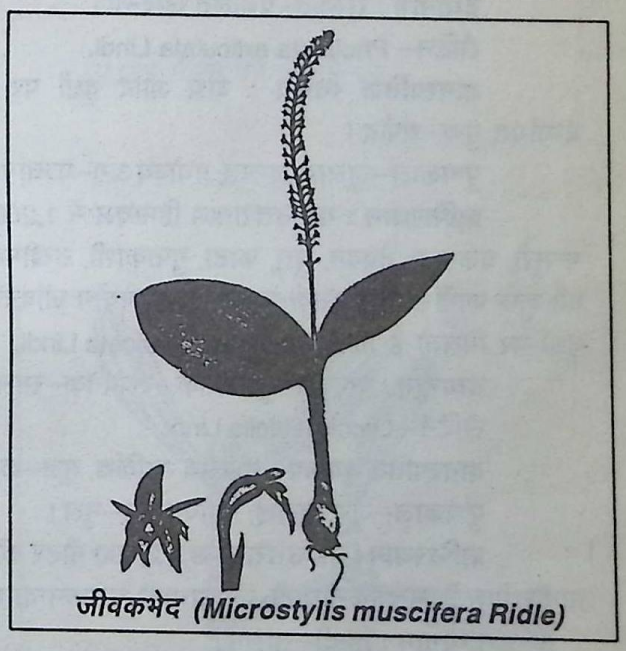

*जीवकभेद (Microstylis muscifera Ridle)*

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में कांणाताल, मन्सूरी, चकराता, नागटिब्बा आदि स्थानों पर यत्र–तत्र मिलता है। इसकी दूसरी जाति भी इन घाटियों में पायी जाती है। जिसे Liparis paradoxa Rchb. कहते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत– ऋद्धि–वृद्धि।

लैटिन– Habenaria intermedia D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** स्थलीय आर्किड, काण्ड–अरोमिल, 10"–24" तक लम्बा, पुष्प–सफेद मूलकन्द एक इन्च से दो इंच तक लम्बा होता है। देखने में श्वेत एवं स्वाद में मधुर होता है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ऋद्धि-वृद्धि (Habenaria intermedia D. Don)

**प्राप्तिस्थान :** यह काणांताल, मन्सूरी, चकराता, देववन, भिलंगनाघाटी, घुत्तू, गंगी पौवागी, भागीरथी घाटी, हर्षिल, मन्दाकिनीघाटी, रैथल, भटवाड़ी अलकनन्दाघाटी आदि स्थानों पर 1,800 मीटर की ऊँचाई से 2,700 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र सुलभ है। इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में मिलती है।

1. Habenaria acuminata Thw.
2. Habenaria goodyeroides D. Don.
3. Habenaria griffithii HK.

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**

**ऋद्धि-वृद्धिश्च कन्दौ द्वौ भवतः कौशले चले ।**
**श्वेतलोभान्वितः कन्दौ, लताजातः सरंध्रकः ।।**
**तूल ग्रान्थि समा ऋद्धि, वामावर्त फला च सा ।**
**वृद्धिस्तु दक्षिणावर्ता, फला प्रोक्ता महर्षिभि ।।**

*(भा. पू. ख.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–प्रचलित जीवन्ती।

लैटिन– Pholidota articulata Lindl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बांझ आदि वृक्षों पर पैदा होने वाला अधिपादप, काण्ड–पीला, माँसल पत्र–दीर्घायत, पुष्प–सफेद।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त; प्रयोज्य अंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखंड हिमायल में 1,200 मी. से 3,000 मी. की उँचाई तक आगराखाल, कांणाताल, मन्सूरी, चकराता, देववन, घुत्तू, फाटा, गुप्तकाशी, उखीमठ आदि स्थानों पर उपलब्ध है। आजकल हरिद्वार–देहरादून की कुछ फार्मेसियों में इसके पञ्चांग का उपयोग जीवन्ती के नाम से होता है। इसके अतिरिक्त अन्य जाति भी इन वृक्षों पर मिलती है जिसे Pholidata imbricata Lindl. कहते है।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मुञ्जातक ; स्थानिक–सालमपञ्जा, हत्थाजोड़ी।

लैटिन– Orchis latifolia Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** स्थलीय आर्किड, मूल–कन्दिल, हस्ताकार, 5 खण्डों में विभक्त, पुष्प–गुलाबी, सफेद।

पुष्पकाल–जून, जुलाई; प्रयोज्य अंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में 2,400 मीटर की ऊँचाई से 3,300 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः भिलंगना घाटी, भागीरथीघाटी, मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी अलकनन्दा घाटी, देववन, टौन्स आदि स्थानों में यत्र–तत्र पाया जाता है।

**द्रव्यनाम :** हिन्दी–सालप।

लैटिन– Eulophia compestris Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** स्थलीय, आर्किड, मूल–कन्दिल, गोल, सफेद रंग के, पुष्प–गुलाबी लाल रंग के।

पुष्पकाल–जून,जुलाई; प्रयोज्य अंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में पंवाली काँटा, दुफन्द, कल्याणी, हर्षिल, रैथल, दयारा एवं जमुनाघाटी, नागटिब्बा आदि स्थानों पर पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में यत्र–तत्र पाई जाती है । यथा–

1. Eulophia herbacea Lindl.  2. Eulophia harmuskii Duthie.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इन कन्दों को पौष्टिक एवं वीर्यवर्धक मानते हैं। बाजार में सालप नाम से इन जातियों के कन्द प्रायः मिलते हैं।

इसके अतिरिक्त इस कुल की अन्य औषधोपयोगी जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती है जो कि निम्नलिखत है –

| | |
|---|---|
| 1. Calanthe tricarinata Lindl. | 2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Cypripedium elegans Reiche f. | 3,300 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Dendrobium narmale Falc. | |
| 4. Dendrobium alpestre Royle | |
| 5. Dendrobium amoenum Wall | 1,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 6. Epipactis latifolia Swartz | 3,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 7. Epipactis royleana Lindl. | 2,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 8.Gastrodia orobanchoides Benth | 2,100 मीटर की ऊँचाई पर |
| 9. Goodyera repens (Linn) R.. Br. | 3,700 मीटर की ऊँचाई पर |
| 10. Hemipilia cordifolia Lindl. | 2,200 मीटर की ऊँचाई पर |
| 11. Oreorchis indica HK . | |
| 12. Oreorchis micrantha Lindl. | |
| 13. Malaxis acuminata D. Don. | |
| 14. Spiranthes sinensis (Pess) Ames | 2,000 मीटर की ऊँचाई पर |
| 15. Dactylorhiza hatagirea D. Don. | |
| 16. Vanda parviflora Lindl. - वंगीय रास्ना | |
| 17. Vanda cristata Lindl. | |
| 18. Viscus album Linn. - वन्दाक | |

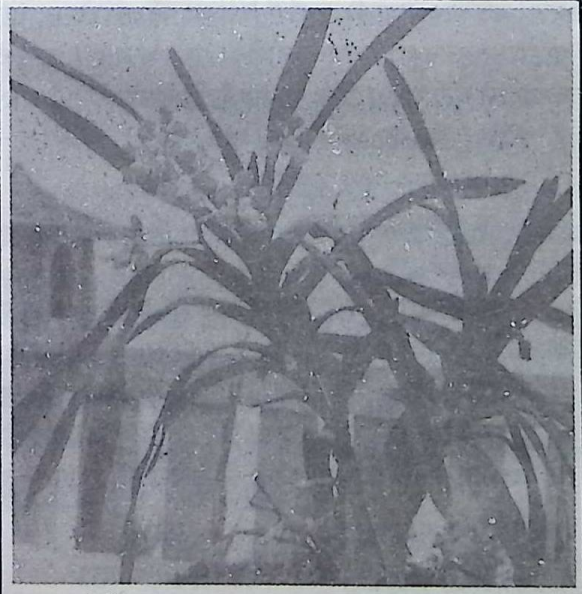

*वंगीयरास्ना (Vanda parviflora Lindl)*

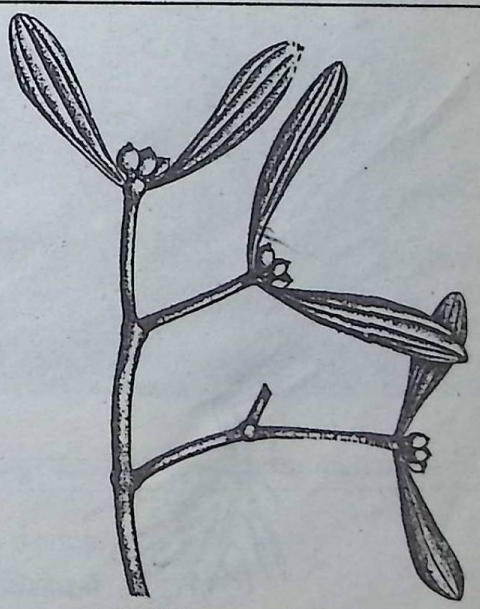

*वन्दाक (Viscus album Linn)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कुल- हरिद्राकुल ZINGIBERACEAE (Scitamineae)**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में गुल्म एवं वहुवर्षीय कन्दिल पौधे पाये ज़ाते है। पर्ण–क्रम एकान्तर, एकबीजपर्ण, पत्रकाण्ड से परिवेष्ठित, पुष्पवाह्यकोष एवं पुष्पाम्यन्तर कोष के दल 2–3, पुंकेशर–1, अधःस्थ और तीनखण्ड वाला होता है। इस वर्ग में हरिद्रा (हल्दी), आद्रक (अदरख), शटी (कपूरकचरी), केमुक (केऊं), कर्चूर (कचूर), एला (इलायची) आदि कतिपय उपयोगी द्रव्य पाये जाते हैं। इस वर्ग के द्रव्य वर्ण्य, लेखन, कुष्ठध्न पाण्डु, विष, प्रमेह कास पीनस एवं त्वक्‌रोगों उपयोगी पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–केमुक (केबुक) ; स्थानिक–केऊं।

लैटिन–Costus speciosus (Koem.) Sm.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी तलोत्थ शाक, मूलस्तम्भ प्रकन्दी, बहुवर्षायु, पर्ण–अवृन्त, पुष्प–गुच्छों में श्वेत–गुलाबी रंग के, बीज कृष्णवर्ण के, प्रकन्द आद्रक कन्द सदृश मोटे एवं गन्धहीन।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; फलकाल–अगस्त, सितम्बर ; प्रयोज्यअंग–मूल (प्रकन्द)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ के उष्णकटिवन्धीय भागों शिवालिकवनखण्ड, देहरादून वनखण्ड, कालसी, टिहरीवनखण्ड, जौनसार, तराई भावर, एवं अल्मोड़ा जनपद में 1,500 मीटर की ऊँचाई तक वर्षाकाल के बाद इसके पादप पाये जाते हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग मूलकन्दों से साधित तैल का उपयोग आमवात एवं सन्धिवात में करते हैं। मूल में विशेष रूप से गर्भाशय संकोचक गुण पाया जाता है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : केमुकं कटुके पाके तिक्तं ग्राही हिमं लधुः।**
**दीपनं पाचन हृद्यं, कुष्ठकासप्रमेहास्त्रनाशनः।।** *(भा. प्र)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काकोली, (अष्ठवर्ग) ; हिन्दी–काकोली।

लैटिन– Roscoea procera Wall. or Roscoea alpina Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षीय शाकीय पादप, काण्ड 6–12" तक लम्बा, मृदुरोमिल, पर्ण–अवृन्त, एकान्तर, आयताकार, दीर्घायत, पुष्प–श्वेत–गुलाबी रंग के, मूल–कन्दिल मूशली सद्यश संख्या में 5 से 6 तक वाह्यसतह कृष्णाभ एवं तोड़ने पर श्वेताभ। इसकी काकोली मूल सदृश अन्य किस्म भी हिमालय में पाई जाती है जिसे Roscoea alpina कहते हैं।

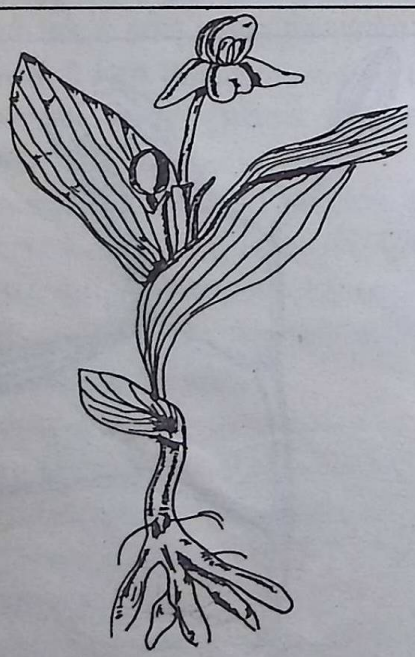

*काकोली (Roscoea alpina Wall)*

पुष्पकाल–जून, जुलाई।

फलकाल–पुष्पकाल के बाद।

प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ के सभी जनपदों में इसकी दोनों प्रजातियाँ 1,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,700 मीटर की ऊँचाई तक वर्षाकाल के बाद सर्वत्र उपलब्ध है। काकोली अष्ठवर्ग का द्रव्य है। जीवक–ऋषभक के समान यह जीवनीय एवं रसायन है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**

**पीवरी सद्यशःकन्द सक्षीरप्रियगन्धवत्।**
**यथास्यात् क्षीरकाकोली, काकोल्यपितथाभवेत्।।**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तवक्षीर ; स्थानिक– वणहलदो।

लैटिन– Curcuma angustifolia Roxb.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूलस्तम्भ–प्रकन्दिल, पत्र–हल्दी के समान दीर्घायत, पुष्प–गुलाबी, सफेद। पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह गढ़वाल के उष्ण भागों में घुत्तू, धनशाली, पयांकोटी, देहरादून, आदि स्थानों पर यत्र–तत्र मिलता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हरिद्रा ; हिन्दी–हलदी ; स्थानिक–हलदू।

लैटिन– Curcuma longa Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** हल्दी के बहुवर्षायु, कोमल काण्डीय 60 से 90 सै.मी. ऊँचे पौधे होते है। पत्र फलक रूप रेखा में आयताकार, अग्र एवं आधार दोनो तरफ उत्तरोत्तर कम चौड़े होते जाते है। पुष्प–पीताभ,सवृन्त काण्डज, मञ्जरियों में खिलते हैं। भौमिककाण्ड, गाँठदार, पीतवर्ण होते हैं।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के सभी भागों में इसकी खेती की जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** मशालों के रूप में, घरेलू उपचार में विशेष उपयोगी।

**शास्त्रीय योग :** हरिद्राखण्ड, दशमूलारिष्ठ, अश्वगन्धारिष्ठ, कुमार्यासव, चन्द्रप्रभावटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : हरिद्रा तु रसे तिक्ता, रूक्षोष्णा विषकुष्ठनुत्।**
**मेहकण्डु ब्रणान् हन्ति, देहवर्णविशोधनी।** *(ध.नि.)*
**निशा तिक्ता कटूरूक्षा वर्ण्योष्णा कफपित्तहा।**
**पाण्डु ब्रणापचीमेह त्वग् दोष विषशोथजित्।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शटी ; हिन्दी–कपूरकचरी।

लैटिन– Hedychium spicatum Ham.

**वानस्पतिक स्वरूप :** कपूरकचरी के हल्दी सदृश बहुवर्षायु कन्द वाले क्षुप होते है। पत्र 30 सै.मी. तक लम्बे आयताकार, एवं मसृण होते है। पुष्प–समूह में विदण्डिक, श्वेतवर्ण के सुगन्धित होते है।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त

प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड में 1,500 मीटर से 2,700 मीटर की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता है। कांणाताल, चकराता वनखण्ड, भिलंगनाघाटी अल्मोड़ा, नैनीताल आदि सभी जनपदों में सुलभ हैं। श्वास के रोगी को मूल चूर्ण 3–4 ग्राम मात्रा दिन में दो बार देते हैं। शादी–आदि मांगलिक कार्यो में उबटन के रूप में प्रयोग।

*कपूरकचरी (Hedychium spicatum Ham)*

**शास्त्रीय योग :** हिमांशु तैल, शट्यादिचूर्ण शट्यादिक्वाथ, संजीवनी वटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शटीस्यात् कटुतीक्ष्णो सन्निपात ज्वरापहा।**
**कफास्त्र व्रणकासध्नी, वक्रशुद्धिविशोधनी।।** *(ध.नि.)*
**छर्दिकास व्रणश्वास, शूल हिध्माज्वरापहाः।।** *(कै.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

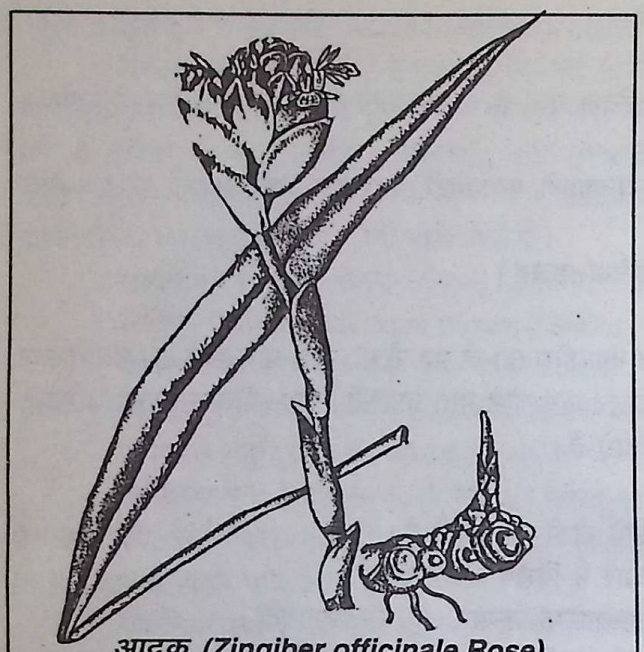

आद्रक (Zingiber officinale Rose)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–आद्रक ; हिन्दी–अदरक।

लैटिन– Zingiber officinale Rose.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मूल द्विवर्षायु, काण्ड–वार्षिक, 80 से 90 से.मी. तक ऊँचा, बहुशाखीय काण्ड, पर्ण–बाँस के पत्रों के सदृश, स्निग्ध, पुष्प–हरिताभ, बैगनी ओष्ठयुक्त, मंजरियों में भौमिक काण्ड अनियमित, ग्रन्थियुक्त होते हैं।

पुष्पकाल–शीतकाल।

प्रयोज्यअंग–भौमिककाण्ड (कन्द)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के चकराता, देहरादून, उत्तरकाशी, नैनीताल आदि सभी जिलों में इसकी खेती की जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** मशालों के रूप में विशेष रूप से प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** तालीसादीचूर्ण, हिंगवाष्ठकचूर्ण, लवण भास्कर, चित्रकादिवटी, अविपत्तिकर चूर्ण, आनन्द भैरव रस, संजीवनी वटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : नागर कफ वातध्नं विपाके मधुरं कटु।**
**वृष्योष्णे रोचनं हृद्यं, सस्नेह लधु दीपनम्।।**
**कफनिलहरं स्वर्य विवन्धानाहशूजित्।**
**कटुष्णां रोचनं हृद्यं, बृष्यंचैवाद्रकंस्मृतम।।** *(सु.सू.अ. 46)*

**कुल-तालमूल्यादिवर्ग AMARYLLIDACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तालमूली ; हिन्दी–काली मुशली।

लैटिन– Curculigo orchioides Gaertn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** द्विवर्षीय शाक, मूलस्तम्भ–सीधा, लम्बा, खड़ा एवं काले रंग का, पर्ण–मूलज, पुष्प–पीले रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूलस्तम्भ।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में टिहरीवन खण्ड, धनशाली, उत्तरकाशी, धरासु, जमूनाघाटी में 800 मीटर से 1,800 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** कौंचपाक, शतावरीपाक

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : मुशली मधूरा विर्योषणा वृहणीगुरूः।**
**तिक्तंरसायनी हन्तिः गुदजान्यनिलं तथा।।** *(भा० प्र०)*

**कुल : आइरिडेसी IRIDACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हैमवती, वचा।

लैटिन– Iris kumoonensis Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड–एक वर्षीय, मूल स्तम्भ–प्रकन्दी, गाँठदार पत्र–मूलोद्भ, पुष्प–नीले रंग के।

**प्राप्तिस्थान :** भिलंगनाघाटी, ताली, पंवालीकाटा, सहस्त्रताल, खतलिंग, मन्दाकिनीघाटी, केदारनाथ, हथनी,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मदमहेश्वर, वासुकीताल, भागीरथीघाटी, हर्षिल, गोमुख एवं जमुनाघाटी, हरकीदून आदि स्थानों में 3,000 मीटर से 3,800 मीटर तक। इसकी अन्य जाति भी इन घाटियों में पाई जाती है जिसे Iris nepalensis D. Don. कहते है। सम्भवतः यह शास्त्रीय हैमवती बचा (दूधिया) हैं।

**कुल : वाराहीकन्दादिवर्ग DIOSCOREACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वाराही, गृष्ठिकाकन्द ; स्थानिक–गेंठी।

लैटिन– Dioscorea bulbifera Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, एक वर्षीय शाक, मूलकन्द–वाराह सद्यश, रोमावृत, पत्र–एकान्तर, हृदयाकार, पुष्प–सफेद रंग के, मंजरिओं में। इसके अतिरिक्त इन घाटियों में अन्य कई जातियाँ पाई जाती है जिनमे निम्न मुख्य हैं।

1. Dioscorea deltoidea Wall–किरीष–मुलकन्द भीतर से पीले रंग के।
2. Dioscorea belophylla Vaight –तुरड, तैल्डू।
3. Dioscorea pentaphylla Linn.

**प्राप्तिस्थान :** ये जातियाँ उत्तराखण्ड के उष्ण भागों से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक टिहरी वनखण्ड, उत्तरकाशी, रैथल, भटवारी, घुत्तू, रामबाड़ा आदि स्थानो पर यत्र–तत्र मिलती हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** तैल्डू के कन्द बृस्य, बाजीकर एवं स्वादिष्ट होते हैं।

**शास्त्रीय योग :** च्यवनप्राश।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वाराहकन्द श्लेष्मध्नः कटुको ऽसपाकतः।**

**मेह कुष्ठ कृमिहरो, वल्यौ वृष्यो रसायनः।** *(सू० सू०अ० 46)*

**कृमिकुष्ठ किलासध्नो वात्तध्नो गुल्मनाशनः।**

**स्निग्धश्चोष्णश्च वृष्यश्च लशुनः कटुको गुरू।।** *(च०अ०सू० 29)*

**कुलः रसोनादिवर्ग LILIACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शतावरी ; स्थानिक–झींजणी।

लैटिन– Asparagus racemosus Willd.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, काँटेदार शाक, मूल–कन्दिल, गुच्छों में, पुष्प–सफेद, फल–पकने पर लाल रंग के।

पुष्पकाल–जनवरी, फरवरी ; प्रयोज्यअंग–मूल।

इसकी अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती हैं, जो निम्न लिखित हैं।

1. Asparagus curillus Buch-Ham.
2. Asparagus adscendens Roxb.
3. Asparagus gracilis Royle
4. Asparagus filicinus.–चिड़ियाँ मूसली

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ गढ़वाल एवं कुमाऊँ के उष्ण भागों से लेकर 2,400 मीटर की ऊँचाई तक यत्र–तत्र पाई जाती है।

***शतावरी (Asparagus racemosus Willd)***

**स्थानिक प्रयोग :** पित्तशामक, स्तन्यवर्धन के रूप में ग्रामीण मूल स्वरस एवं चूर्ण का उपयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**शास्त्रीय योग :** शतावरीधृत, नारायण तैल, धातुपौष्टिक चूर्ण, शतावरीचूर्ण, सुपारीपाक, लक्ष्मीविलासरस, वसन्तकुसुमाकर, सारस्वतारिष्ठ, फलकल्याणधृत।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : शतावरी हिमातिक्ता स्वाद्वी गुर्वी रसायनी।**
**सु स्निग्धा शुक्रलाबल्या स्तन्य भेदोऽग्निपुष्ठिदा।।**
**चक्षुष्या वातपित्तास्त्र, गुल्मातीसारशोथाजित्।** *(कै.नि.)*
**वातपित्तहरी वृष्या, स्वादुत्तिक्ता शतावरी।**
**महती चैव हृद्या च, मेध्याग्निबलबर्धिनी।।** *(सु.सू.अ.46)*

*क्षीरकाकोली (Lilium polyphyllum D. Don)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–क्षीरकाकोली; कन्दमूल।
लैटिन– Lilium polyphyllum D. Don.

**वानस्पतिक स्वरूप :** एक वर्षी शाक उर्ध्वसंस्थित 1 से 2 फुट लम्बा, पत्र–भालाकार मूलकन्द प्याज के समान छिलके वाला एवं परतदार होता है। स्वाद में मधुर। पुष्प–गुलाबी सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त।
प्रयोज्यअंग–मूलकन्द।

**प्राप्तिस्थान :** यह पंवाली कांटा, ताली, अमरधार, रैथल, केदारनाथ, मदमहेश्वर आदि स्थानों में कहीं–कहीं पाया जाता है। इसके कन्दो का उपयोग आजकल क्षीरकाकोली के नाम से कही–कही किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस कुल की अन्य जातियाँ इन घाटियों में 3,000 मीटर की ऊँचाई तक पाई जाती हैं। यथाः

| | |
|---|---|
| 1. Nomocharis oxypetala Royle | 3,300-3,800 मीटर तक |
| 2. Nomocharis nana E.H. | 3,300-3,800 मीटर तक |
| 3. Fritillaria roylei Hook | 3,300-3,800 मीटर तक |
| 4. Fritillaria cirrhosa D. Don | 3,300-3,800 मीटर तक |
| 5. Lillium wallichianum Schult | 2,700-3,000 मीटर तक |

**टिप्पणी :** ये सभी पौष्टिक कन्द उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध है।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : यत्र स्यात्क्षीरकाकोली काकोली तत्र जायते।**
**पीवरी सदृश कन्दः स क्षीर प्रियगन्धवत्।।**
**सा प्रोक्ता क्षीरकाकोली लिंगमुच्चते।**
**यथास्तात्क्षीर काकोली काकोल्यपि तथा भवते्।।** *(भा.पू.ख. हरीतक्यादिवर्ग)*

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–दूधियावच।
लैटिन– Paris polyphylla Smith.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, मूल प्रकन्दी, श्वेत, ग्रन्थिल, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित 1 से 2 फुट लम्बा, पत्र–4" से 9" अल्पवृत वाले, दीर्घायत, या भालाकार चाक्रिक क्रम में, पुष्प–हरित रक्तवर्ण के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड में रैथल, भटवारी, चकराता, देववन, जोशीमठ आदि स्थानों पर कहीं–कहीं पाया जाता है। देहरादून के व्यापारी इसी के मूल को दूधिया वच के नाम से बेचते है। यूनानी हकीम विशेषरूप से उपयोग करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** स्थानिक–कुकरदाढ़ी।

लैटिन–Smilax aspera Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** आरोही, काँटेदार क्षुप, पत्र–2" से 5" लम्बे, पुष्प–सफेद, फल–माँसल, पकने पर लाल रंग का।

पुष्पकाल–सितम्बर, नवम्बर; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** चम्बा, काणांताल, धनौल्टी, मन्सूरी, चकराता, देववन एवं अन्य सभी घाटियों में सुलभ हैं। इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती हैं ।

1 Smilax macrophylla Roxb.

2. Smilax parvifolia Wall.

*कलिहारी (Gloriosa superba Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–लाङ्ली,कलिहारी।

लैटिन–Gloriosa superba Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** लम्बा, लता सदृश फैला हुआ अरोमिल शाक, काण्ड 5 से 8 फुट तक लम्बा, शाकीय–विनम्र, पुष्प–लाल एवं पीताभ, मूल–कन्दिल, हलाकार, श्वेतवर्ण के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** टिहरी वनखण्ड,घोन्टी, उत्तरकाशी, श्रीनगर आदि उष्ण भागों में सुलभ हैं।

**शास्त्रीय योग :** कासीसादितैल, लांगलीरसायन।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : लाङ्ली कटुरूणा च, कफवात विनाशिनी,**
**तिक्ता सरा च श्वयथु गर्भशल्य व्रणापह।।** *(ध.नि.)*
**लाङ्ली कटुका तिक्ता सक्षारा पित्तलासरा।**
**तीक्ष्णोष्ण गर्भहालध्वी, वस्तिशूल निवर्हणी।।** *(कै.नि.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कोलकन्द ; स्थानिक–जंगली प्याज।

लैटिन– Urginea indica Kunth.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, भौमिक काण्ड –शल्की, कन्द, पर्ण–मूलज, पत्र 5–6 संख्या में, पुष्प–पुष्पदण्ड पर सफेदी लिए हुए।

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–कन्द।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में टिहरी वनखण्ड, धोन्टी, धनशाली उत्तरकाशी, धरासु, श्रीनगर आदि स्थानों पर पाया जाता हैं।

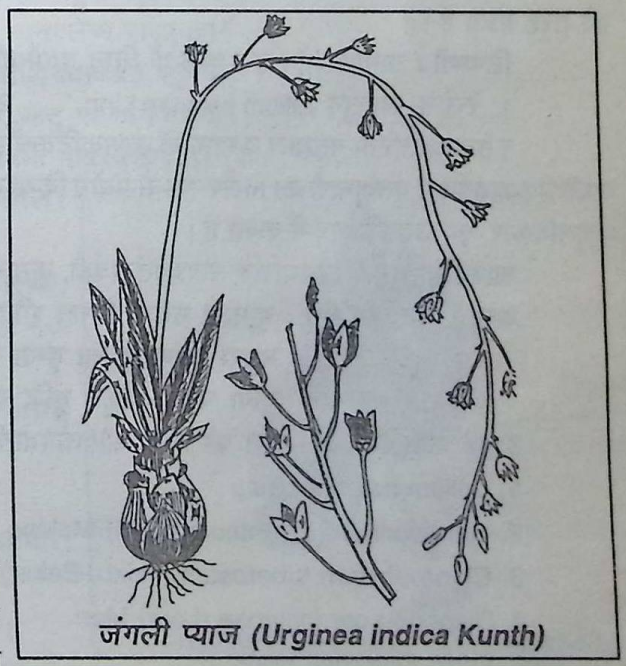

*जंगली प्याज (Urginea indica Kunth)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत– मेदा–महामेदा।

लैटिन– Polygonatum vertecillatum Allaion

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, शाक, काण्ड–अरोमिल, 2–4 फुट लम्बा, पर्ण–चक्रों में प्रत्येक चक्र में 4–8 अवृन्त, रेखाकार, पुष्प–सफेद, फल –पकने पर लाल रंग के मूल–कन्दिल, सफेद रंग के, स्वाद में मधुर। इसकी



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

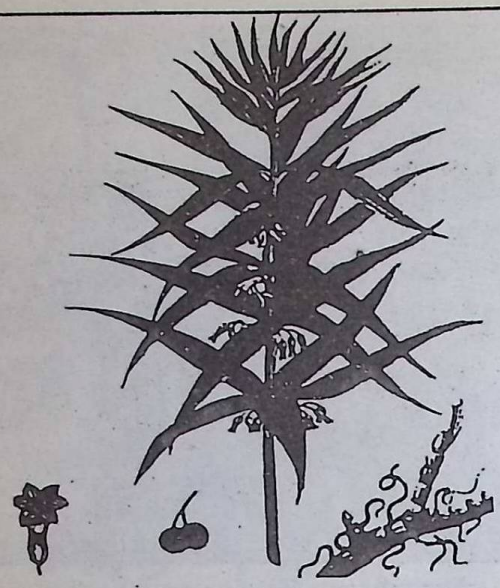

मेदा-महामेदा (Polygonatum vertecillatum Allaion)

दूसरी जाति भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। जिसे Polygonatum cirrhifolium Royle कहते हैं।

पुष्पकाल–मई, जून ; प्रयोज्य अंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** भागीरथी घाटी, रैथल, भटवारी, दयारा, हर्षिल एवं टकनौर रेंज, भिलंगनाघाटी, घुत्तू, पंवाली, गंगी, पोवागी, मन्दाकिनीघाटी, रामबाड़ा, गौरीकुण्ड कालीमठ, चकराता, देववन, मन्सूरी, चकराता आदि स्थानों में उपलब्ध हैं। इन घाटियों से इसके मूल का संग्रह किया जाता हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–जम्बरिक ; स्थानिक–जम्बू।

लैटिन– Allium stracheyi Baker.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, सुगन्धित शाक, मूल–कन्दिल, पत्र–मूलज, रेखाकार एवं सुगन्धित होता हैं। पुष्प–सफेद रंग के।

पुष्पकाल–जून, जुलाई ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पाई जाती हैं और शाकार्थ उपयोग में लाई जाती है। यथा–

| | |
|---|---|
| 1. Allium wallichii Kunth | 3,000-3,600 मीटर |
| 2. Allium victorialis Linn. | 3,000-3,600 मीटर |
| 3. Allium govanianum Wall. | 3,000-3,600 मीटर |

**प्राप्तिस्थान :** भिलंगनाघाटी, पवाली, ताली, किनकोलिया–खाल, सहस्त्रताल, मन्दाकिनीघाटी, त्रिजुगीनारायण, केदारनाथ, हथनी, मदमहेश्वर, भागीरथीघाटी हर्षिल, सुक्की, गंगोत्री एवं अलकनन्दा, जमुनाघाटी आदि में सुलभ हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग इसके पञ्चांग को शाक के रूप में प्रयोग करते हैं। भोटिया लोग जम्बूतृण (फर्न) के नाम से पञ्चांग बेचते हैं। मशालों में इसका उपयोग ग्रामीण करते हैं। इसका उपयोग सस्कारार्थ प्रयुक्त द्रव्यों की तरह होता हैं।

**टिप्पणी :** ग्रामीण लोग इस कुल के निम्न द्रव्यों की खेती करते हैं। शाकों में इनका उपयोग कियाजाता है।

1. रसोन, लहसुन Allium sativum Linn. 2. पलाण्डु, प्याज– Allium cepa Linn.

इसके अतिरिक्त गढ़वाल कुमाऊं के उष्णकटिवन्धीय प्रदेशों में धृतकुमारी, धीक्वार–Aloe vera लगाई हुई पाई जाती है। आयुर्वेद में धृतकुमारी का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता जाता है। ग्रामीण लोग पत्रसार का उपयोग गठियावात, यकृतविकार, एवं उदरविकार में करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** कुमार्यासव, रजप्रवर्तनीवटी, कुमारीवटी।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : कुमारी भदेनी तिक्ता शीता नेत्र्या रसायनी।**
**मधुरा वृंहणी बल्या वृष्या वातविषःप्रणुत्।।**
**गुल्म प्लीहा यकृत वृद्धि कफज्वरहरी भवेत्।** *(भा.प्र.)*

इसके अतिरिक्त इस कुल की निम्न औषधोपयोगी प्रजातियाँ भी उत्तराखण्ड क्षेत्र में पायी जाती हैं यथा–

| | |
|---|---|
| 1. Allium rubellum Bieb | 3,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 2. Cardiocrinum giganteum (Wall) Makino | 2,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 3. Chlorophytum tuberosum (Roxb.-Baker) | 2,400 मीटर की ऊँचाई पर |
| 4. Disporum cantoniense (Lour) Merr. | 2,500 मीटर की ऊँचाई पर |
| 5. Fritillaria royleii Hook | 2,900 मीटर की ऊँचाई पर |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

6. Nomocharis oxypetala (Royle) Balf . f. — 3,200 मीटर की ऊँचाई पर
7. Polygonatum verticillatum Allioni. — 2,400 मीटर की ऊँचाई पर
8. Smilacina pallida Royle. — 3,900 मीटर की ऊँचाई पर
9. Smilax elegans Wall ex. Benth. — 2,700 मीटर की ऊँचाई पर
10. Trillium govanianum Wall. — 2,900 मीटर की ऊँचाई पर

वचा (Acorus calamus Linn)

**कुल : वचादिवर्ग ARACEAE**

**वर्ग लक्षण :** इस वर्ग में प्रायः बहुवर्षी कन्द वाले एवं भौमिक काण्ड वाले पादप पाये जाते हैं। सपुष्प, द्विबीजपर्ण, पर्ण एकान्तर, प्रायः सादे, विभक्त, पुष्प एक जातीय, छोटे अवृन्त, फल प्रायः मांसल। इस वर्ग में मुख्यतया वचा, सूरण, मानकन्द आदि द्रव्य आते हैं। ये द्रव्य दीपन, पाचन, कृमिध्न, संज्ञास्थापन एवं अर्शोध्न होते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–वचा ; स्थानिक–वच।

लैटिन– Acorus calamus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षीशाक, मूलप्रकन्दी, गाँठदार, एवं सुगन्धित, पत्र–मूलज, गहरे हरे।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** भिलंगनाघाटी, घोन्टी, पिलखी, कोठार, घुत्तू, भागीरथीघाटी उत्तरकाशी, बचुरी, भटवारी, एवं मन्दाकिनीघाटी, जमुनाघाटी, कांणाताल, देववन कोटद्वार आदि जलासन्न स्थानों पर इन घाटियों से इसके मूल का काफी मात्रा में संग्रह किया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** जूं एवं डेंगू के मच्छर को मारने के लिए वचचूर्ण का प्रयोग करते हैं।

**शास्त्रीय योग :** वचादिचूर्ण, सारस्वतारिष्ठ, सारस्वतचूर्ण, स्मृतिसागररस।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : वामनी कटु तिक्तोष्ण, वातश्लेष्म रूजापहा।**
**कण्ठ्या मेध्या च, कृमिहृद्विवधाध्मान शूलनुत्।।** *(ध०नि०)*
**वचा तिक्ता कटुः पाके, कटु रूष्णामपाचनी।**
**दीपनी वामनीमेध्य, जीवनी वाक्स्वरप्रदा।।** *(कै० नि०)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–गजपिप्पली ; स्थानिक–हथकौंल।

लैटिन– Scindapsus officinalis Sch.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, आरोहीलता, काण्ड–माँसल, 6 फुट तक लम्बा फल–माँसल, फलों का गज पिप्पली के नाम से संग्रह एवं प्रयोग होता हैं।

**प्राप्तिस्थान :** यह 900 मीटर की ऊँचाई तक व्यासी आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म :**
**चरके हस्तिपिप्पली गज कणा इति नाम्ना पढ़यते।**
**गजकृणा कटुवार्त ष्लेष्म हृद्धह्मिवर्धिनी।**
**उष्ण निहन्त्यतीसारं श्वासकंठामयकृमीन्।।**
*(आ०प्र०)*

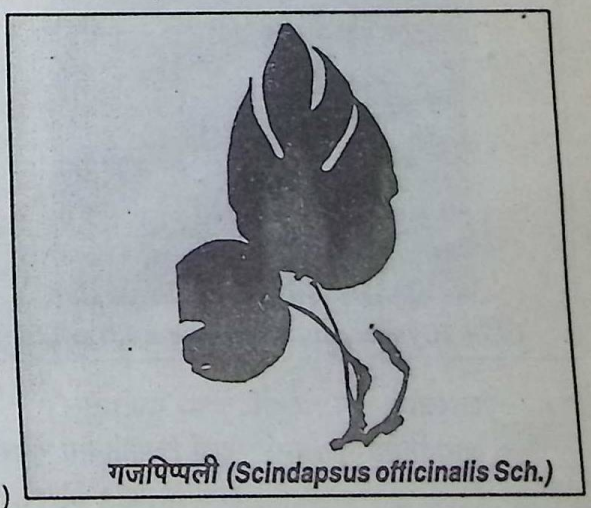
गजपिप्पली (Scindapsus officinalis Sch.)



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

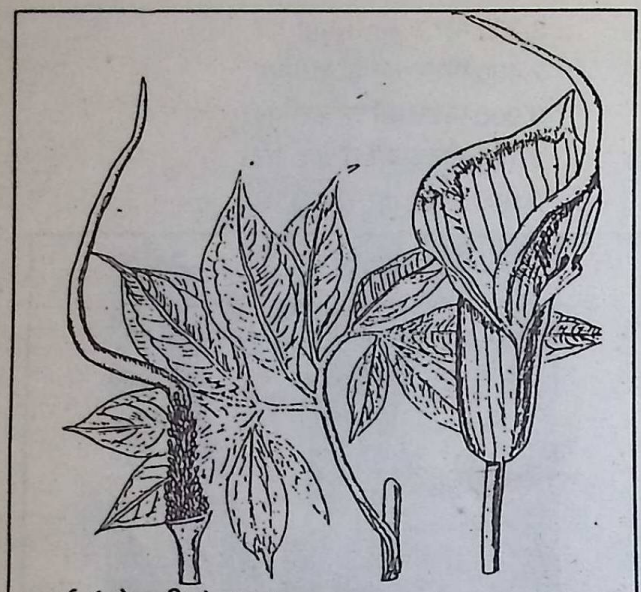

सर्पा (कोब्रामीन) (Arisaema concinnum Schott)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सर्पा ; स्थानिक–कोब्रामीन।
लैटिन– Arisaema concinnum Schott

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित एवं सर्पसद्यश, चित्रित, मूल कन्दिल, कन्द–सफेद एवं रक्ताभ पुष्पक्रम स्पेडिक्स, सर्पफण सद्यश। इसके अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। यथा :

1. Arisaema jacquemontii Bl.
2. Arisaema tortuosum (Wall) Schott

पुष्पकाल–जून, जुलाई।

**प्राप्तिस्थान :** 1,800 मीटर से 3,300 मीटर की ऊँचाई तक भिलंगनाघाटी, पौवागी, घुत्तू, गंगी, मन्दाकिनी घाटी, गौरीकुण्ड, रामबाड़ा, केदारनाथ, अलकनन्दाघाटी, जमुनाघाटी, मन्सूरी, चकराता, देववन आदि स्थानों में। ये सभी जातियाँ विषैली होती हैं। ग्रामीण लोगो का कहना हैं कि मूलकन्दों को कच्चे खाने से मुँह में छाले डालता हैं एवं खाने से विषैला प्रभाव होता हैं।

**कुल-उशीरादिवर्ग GRAMINAE**

**वर्गलक्षण :** इस वर्ग में तृण जातीय उपयोगी द्रव्य आते हैं। सपुष्प, एक बीजपर्ण, पर्ण–अखण्ड, पुष्प–वल्क सद्यश। इस वर्ग में मुख्य रूप से उशीर, वंश, दूर्वा, यव इक्षु, कुश, शर, दर्भ आदि तृण जातीय वनौषध आते हैं।

रोहिष (Cymbopogon schoenanthus Linn)

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–रोहिष।
लैटिन– Cymbopogon schoenanthus Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड एवं पञ्चांग, सुगन्धित, काण्ड 4 से 8 फुट लम्बा। इसकी अन्य कई उपयोगी जातियां बगीचों में पाई जाती हैं। यथा–

1. Cymbopogom citratus (DC.) Stop.
2. Cymbopogon jwarancusa Schult.

पुष्पकाल–मार्च, अप्रैल ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ बगीचों में देहरादून, चकराता आदि स्थानों पर मिलती हैं। जिनकी खेती की जाती हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत, दूर्वा ; स्थानिक–दुबलो।
लैटिन– Cynodon dactylon Linn (Pers.)

**प्राप्तिस्थान :** यह सर्वत्र सुलभ घास हैं। ग्रामीण लोग पूजन कार्य के लिये इसका प्रयोग करते हैं एवं पित्त के बढ़ जाने पर दूर्वा स्वरस मिश्री के साथ देते हैं।

**शास्त्रीय योग :** दूर्वादिक्वाथ दूर्वाद्यतैल।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : दूर्वा हिमातिक्ता मधुरा तुवराहरेत्।**
**कफ पित्तास्त्र विसर्प, तृष्णादाहत्वगामयान्।।** *(भा.प्र.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–बंश ; हिन्दी–बांस।

लैटिन– Bambusa bambos Druee.

**वानस्पतिक स्वरूप :** मध्यम आकार के गुल्म, मूलस्तम्भ मोटा, काण्ड सीधा खड़ा होता हैं। काण्ड अन्दर से पोला, पत्र–हरे रंग के, भालाकार, रेखाकार तथा पत्राग्र नुकीला। पुष्प–शाखाग्र, पुष्प दण्डों पर श्वेताभ।

पुष्पकाल–मार्च, मई ; प्रयोज्यअंग–पत्र, बीज, सार (बंशलोचन)।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के तराई भाबर के क्षेत्रों शिवालिक वनखण्ड, कोटद्वार आदि स्थानो पर इसके गुल्म पाये जाते हैं। बंशलोचन मादा बांस के ग्रन्थिकोटरो से प्राप्त किया जाता हैं।

**शास्त्रीय योग :** तालीसादिचूर्ण, सितोपलादिचूर्ण

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : बंशस्तु शीतलः स्वादु, कषाययोंवस्तिशोधनः।**
**छेदनः कफ पित्तास्त्र कुष्ठ शोथव्रणापहः।।** *(कै.नि.)*
**रूक्षः कषायानुरसो मधुरः कफ पित्तहा।**
**मेद कृमि विषध्नश्च, बल्योवेणु यवोस्मृतः।।** *(च.सू.अ. 29)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–कुश ; हिन्दी–कुशा।

लैटिन– Desmostachya bipinnata Stapf.

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–काश ; हिन्दी–कांस।

लैटिन– Saccharum spontaneum Linn.

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शर ; हिन्दी–समसर।

लैटिन– Saccharum munja Roxb.

**प्राप्तिस्थान :** यह सब तृण जाती के पौधे हैं तथा नदी–नालों के आस–पास पाये जाते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–उशीर ; हिन्दी–खस।

लैटिन– Vetiveria zizanioides Nash.

**वानस्पतिक स्वरूप :** खस तृण जाति का सुगन्धित मूलवाला पौधा हैं। इसका मूल गुच्छबद्ध बहुवर्षायु होता हैं। मूल स्तम्भ से अनेक सूत्राकार लम्बी–लम्बी सुगन्धित जड़ें निकलती हैं। पत्र कुश सदृश, रोमष होते हैं। पुष्प–मञ्जरी में धूसर वर्ण के होते हैं।

*उशीर (Vetiveria zizanioides Nash)*

पुष्पकाल–मार्च, मई ; प्रयोज्यअंग–मूल।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड के उष्ण मैदानी भागों में नमदार एवं नालो के समीप गीली जमीन में सर्वत्र पाया जाता हैं।

**शास्त्रीय योग :** उशीरासव, उशीरादिचूर्ण, दशमूलारिष्ठ, सर्वज्वरहरलौह, सारस्वतारिष्ठ लवंगादिचूर्ण, सारिवाद्यारिष्ठ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : उशीरं शीतल रूक्षं, स्वादु तिक्तं हिमंलधु।**
**पाचनं स्तम्भनं हन्ति शोषदाहमदज्वरान्।।**
**तृष्णास्त्र विषर्दौगन्ध, कृच्छ्रकुष्ठवमिव्रणान्।।** *(कै०नि०)*

## कुल-साईपरेसी CYPERACEAE

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–मुस्ता ; स्थानिक–मोथा।

लैटिन–Cyperus rotundus Linn.



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी शाक, काण्ड–उर्ध्वसंस्थित, 2–3 फुट तक लम्बा, त्रिकोणाकार, कन्द–काले रंग के।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड के उष्ण भागों में खेतों के आसपास सभी जलासन्न स्थानों में पाया जाता हैं।

**विभाग : Gymnosperms (अनावृतबीजी)**

**कुल : सोमादिवर्ग GENTACEAE**

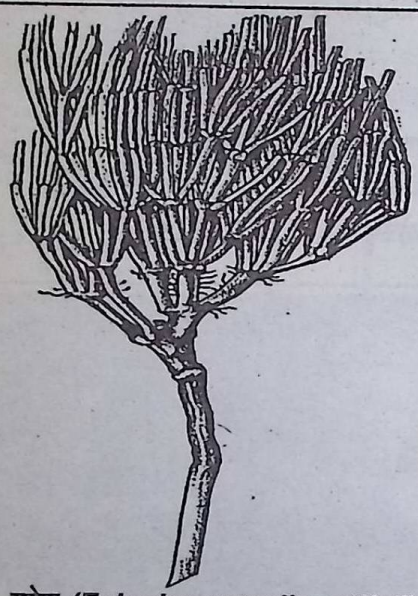

*सोम (Ephedra gerardiana Wall)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सोम; हिन्दी–जोड़गंगा; प्रचलित–सोमकल्प, सोमलता।

लैटिन– Ephedra gerardiana Wall.

**वानस्पतिक स्वरूप :** बहुवर्षी, विसर्पी क्षुप, शाखाऐं–पथरीली, पहाड़ियों पर फैली हुई एवं जोड़दार, पत्र–सूक्ष्म, शल्की, पर्व– 1–2 इंच लम्बे, पुष्प–पीताभ एवं फल रक्तवर्ण के।

पुष्पकाल–जुलाई, अगस्त ; प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड गढ़वाल में, गंगोत्री, गोमुख, हर्षिल, जाड़गंगा, जमुनाघाटी, हरकीदून, अलकनन्दाघाटी, बद्रीनाथ, वसुधारा, नीतीपास, मलारी, धौलीघाटी आदि स्थानो पर 2,700 मीटर की ऊँचाई से 3,800 मीटर की ऊँचाई तक कहीं–कहीं पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** पञ्चांग चूर्ण का प्रयोग कास–श्वास में करते हैं।

**कुल : कुप्रसेसी CUPRESSACEAE**

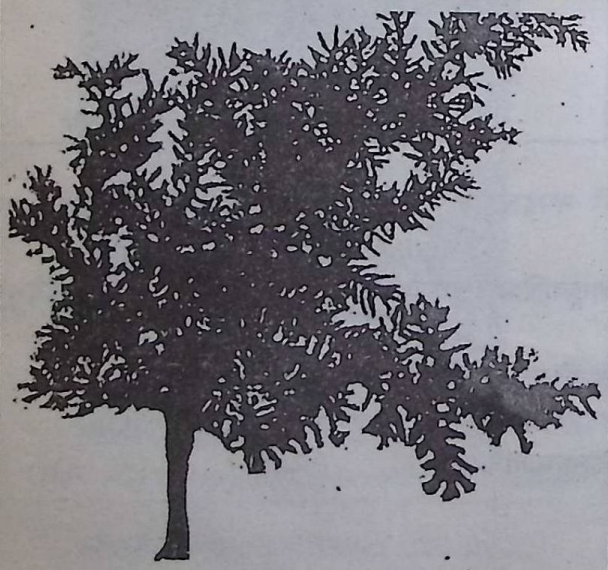

*हाऊबेर (Juniperus communis Linn)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–हपुषा ; हिन्दी–हाऊबेर ; स्थानिक–ठेलु, धूपलकड़ी।

लैटिन– Juniperus communis Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित, विसर्पी क्षुप, काण्ड–शाखीय, पत्र–¼" से ¾" लम्बें रेखाकार, तीक्ष्णाग्र, सुगन्धित, फल–मांसल पकने पर बैगनी काले रंग के।

फलकाल–अगस्त,सितम्बर।

प्रयोज्यअंग–फल,पञ्चांग।

निम्न जातियाँ भी ऊँचाई वाले भागों में पाई जाता है।

1. Juniperus recurva Ham.
2. Juniperus squamata Ham.

**प्राप्तिस्थान :** ये सभी जातियाँ हिमालय के बर्फीले भागों में 3,300 मीटर की ऊँचाई से लेकर 4,200 मीटर की ऊँचाई तक पाई जाती हैं। भिलंगनाघाटी, खतलिंग सहस्त्रताल, किनकोलियाखाल, भागीरथीघाटी, गंगोत्री, गोमुख, देववन, मन्दाकिनीघाटी में केदारनाथ, वासुकीताल,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मदमहेश्वर एवं अलकनन्दाघाटी, जमुनाघाटी, हरकीदून आदि स्थानों पर मिलता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का उपयोग द्रव्य–धूप के रूप में करते हैं एवं विशेष ऊँचाई वाले स्थानों पर इसके ताजे हरे पञ्चांग ईधन के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके फलों का हाउबेर के नाम से संग्रह होता हैं। फलों का उपयोग मद्य बनाने में करते हैं।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : हपुषा तुबरा तिक्ता कटुष्णा दीपनी गुरूः।**
**ग्रहणी शूल गुल्मार्शो वात्तपित्तोदरापहा।।** *(कै.नि.)*

**कुल- तालीसादिवर्ग TAXACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–स्थौणेयक।

प्रचलित–तालीसपत्र ; स्थानिक–थुनेर।

लैटिन–Taxus baccata Linn.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित वृक्ष, पत्र–दो कतारों में, लम्बे, रेखाकार, तीक्ष्णाग्र -एवं सूखने पर सुगन्ध युक्त, बीज पकने पर रक्तवर्ण का।

प्रयोज्यअंग–पत्र, छाल।

**प्राप्तिस्थान :** भागीरथीघाटी, रैथल, दयारा, डोडीताल, एवं टकनौर रेञ्ज, भिलंगनाघाटी, जमुनाघाटी, मन्दाकिनीघाटी, चकराता, देववन, कांणाताल आदि सभी स्थानों पर पाया जाता हैं।

**टिप्पणी :** छाल एवं पत्र के सत्व टैक्सोल का कैन्सर में उपयोग किया जाता हैं।

*थुनेर (Taxus baccata Linn)*

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग छाल का चाय बनाने में उपयोग करते हैं। इन घाटियो से पत्तो का काफी मात्रा में संग्रह किया जाता हैं बाजार में इसके पत्र तालीस पत्र के नाम से मिलते हैं।

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–तालीस ; स्थानिक रौंसली।

लैटिन– Abies webbiana Lindl.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित वृक्ष, शाखाऐं–प्रायः झुकी हुई। पत्र–1" से 2" लम्बे रेखाकार, पतली, काण्ड से सर्पिल क्रम से निकली हुई, ऊपरी पृष्ठ चमकीला एवं गहरे हरे रंग का, अधः पृष्ठ के दोनो ओर दो–दो रेखायें एवं पत्र के अग्रभाग पर प्रायः दो तीक्ष्ण और कठोर नोक, फल–गोल, आयताकार। इसकी अन्य जाति भी इन घाटियों में पायी जाती हैं। जिसे Abiex pindrow Spach (रौंसली) कहते हैं। पूर्वी हिमालय में इसका भी संग्रह तालीस के नाम से होता हैं।

**प्राप्तिस्थान :** यह जमुनाघाटी, हनुमानचट्टी, देववन, मुनाली, भागीरथीघाटी, गंगोत्री, जाड़गंगा आदि स्थानों पर यत्र–तत्र पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** तालीस के नाम से पत्तों का संग्रह किया जाता है।

**शास्त्रीय योग :** तालीसादिचूर्ण, सुपारीपाक, कनकासव, तालीसादिवटी,

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : तालीसपत्रं तिक्तोष्णं मधुरं कफ वातनुत्।**
**कास हिक्का क्षयश्वास, छर्दिदोष विनाशकृत्।।** *(श.नि.)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## ANTICANCER DRUG : (Taxus baccata) Boost to Taxol Supply Planned

Supplies of the anticancer drug taxol will be multiplied this year enabling researchers to expand clinical trials, and physcians to make it available to more patients on a compassionate basis.

Significant progress in taxol's development was reported last week by wintnesses from the National Cancer Institute (NCI) and Drug firm Bristol Myers Squibb at a joint hearing before three House subcommittees.

The hearing was held to discuss a proposed bill, the pacific Yew Act of 1991, aimed at increasing the availability of taxol by requiring the federal government to improve its managment of the Pacific yew tree, Taxus brevifolia Pacific yew tree bark is the only source of taxol currently approved for human use. As a result, the drug has been in critically short supply (C&EN), Sept. 2, 1991, Page 11).

However, Bristol Myers squibb announced at the hearing that it is scaling up production dramatically this year, it plans to deliver 16 kg of formulated taxol to NCI in 1992, about a 12 fold increase over last year. The increased supply stems from a new production plant that has come on line, and from improved process efficiencies.

Taxol has shown very promising activity against advanced overian cancer, advanced breast cancer, and other tumor types, witnesses reported at the hearing. The drug is in phase III clinical trials for ovarian cancer, and in phase II trials for other cancers. Taxol has been approved as an investigations drug by the Food & Drug Administration, but has not yet been cleared for commercial use.

In exchange for exclusive access to NCI clinical and preclinical data on taxol to support marketing approval, Bristol Myers Squibb has agreed to supply NCI with the drug at no cost for clinical research. The Compa by expects to file a new drug application by mid-1992 with FDA to market taxol for refractory ovarian cancer, and it believes the application could be approved on an accelerated basis by next year.

Moreover NCI and Bristol Myers Squibb are investigating alternative sources for taxol. Both view yew harvesting as a stopgap measure until other process are available.

For the next one or two years. The harvesting of Taxus Bark will be the only effective source of this much needed drug Says Bruce Chabner, Director of the division of cancer treatment at NCI. However, he adds, "NCI and Bristol Myers Squibb are working with the biomedical and agrucultural research communities to develop alternative methods. These include total (Synthesis) Partial Synthesis) alternative renewable Sources such as needles or twings, cultivation of faster-growing species, plant tissue culture, and hydroponics.

According to Bristol Myers Squibb, sources other than Bark will begin to be used for



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust.

तालीस पत्र (थुनेर) Taxus baccta Linn.

बड़मूला Megacarpea polyandra

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

commercial taxol production within two year, Reliance on bark will decrease substantially within three years, and the need for bark should cease completely within five years the company project.

Chabner believes "The ultimate source is going to be semisynthesis from a precursor." Robert A. Holton and co-workers at Florida State University have developed a semisynthesis of taxol from precursors found in leaves and twings of various yew trees and bushes Bristol Myers squibb has licensed the process and is trying to scale it up.

The French pharmaceutical firm Rhone-Poulence Rorer also produce the patented taxol analog Taxotere this way Clinical Trials of Taxotere have been very Promising, and NCI recently signed an agreement with Rhone-Poulence Rorer to help test the drug. NCI plans to hold an International conference on Taxol and related compounds this fall.

**कुल-देवदार्व्यादिवर्ग PINACEAE**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–देवदारू ; स्थानिक–देवदार।

लैटिन– Cedrus deodara Lour.

**वानस्पतिक स्वरूप :** सदाहरित वृक्ष, शाखाएं फैली हुई, पत्र–त्रिकोणयुक्त, सूच्याकार, 1 से 1½" लम्बे एवं पेचदार क्रम से निकले हुए फल–एकाकी, 4–5" लम्बा।

पुष्पकाल–सितम्बर, अक्टूबर ; फलकाल अप्रैल, मई ; प्रयोज्यअंग–काष्ठसार, बुरादा, तैल।

**प्राप्तिस्थान :** यह उत्तराखण्ड हिमालय में 2,700 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,600 मी० की ऊँचाई तक प्रायः सभी घाटियों में पाया जाता हैं।

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग काष्ठसार से तैयार किया हुआ तैल, आमवात एवं पक्षाघात में उपयोगी बताते हैं।

**शास्त्रीय योग :** देवदार्व्यादिक्वाथ, देवदार्व्यादिचूर्ण, रास्नादिक्वाथ।

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : देवदारू लधु तिक्तोष्णं कटु पाकि च।**
**विवन्धाध्मानशोथाम तन्द्राहिक्कास्त्र जित्।।** *(भा.प्र.)*

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–सरल ; स्थानिक–चीड़, कुल्यैं।

लैटिन– Pinus roxbughii Sargent.

**वानस्पतिक स्वरूप :** विशाल वृक्ष, पत्र–9" से 12" लम्बे, त्रिकोणाकार, तीन–तीन के समूह में, फल–3–5" तक लम्बे, तीक्ष्ण, काले नोक वाले।

प्रयोज्यअंग–बीज, रेजीन (विरोजा)।

**प्राप्तिस्थान :** यह 600 मीटर की ऊँचाई से लेकर 2,100 मीटर की ऊँचाई तक सर्वत्र पाया जाता हैं । इन स्थानो से काफी मात्रा में इनसे रेजीन निकाला जाता हैं। इसकी अन्य किस्में ऊँचाई वाले स्थानो पर पाई जाती हैं। यथा–

1.कैल–Pinus excelsa Wall.

2.राई, मुरण्डा–P. morinda Link.

**आयुर्वेदिक गुण धर्म : सरलः कटु तिक्तोष्ण कफ वाताविनाशनः।**
**त्वग् दोष शोथकण्डूदूतिव्रणध्नः, कोष्ठशुदिद्वद।।** *(रा.नि.)*
**दुष्ठव्रण शोधनाः कृमि कफ कुष्ठनिलहराश्च।।** *(सु.सू.अ. 39)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

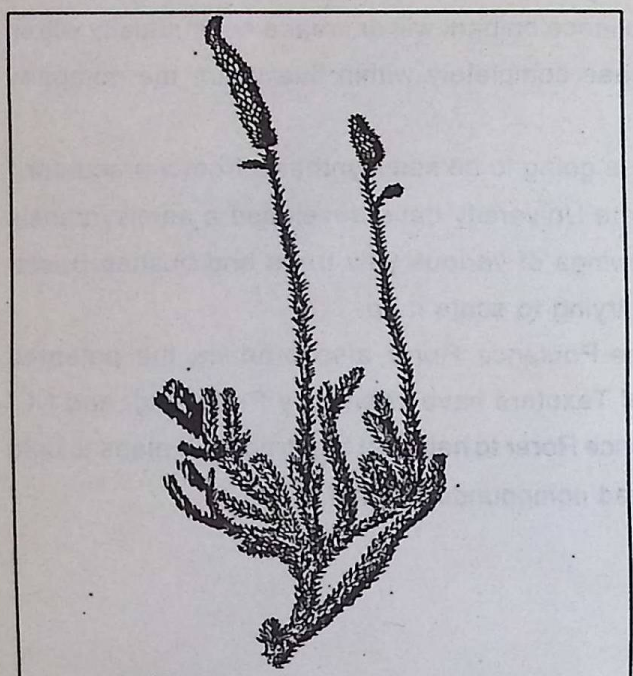

वेली (Lycopodium clavatum Linn)

**CRPTOGAM (ब्रायोफ़ाइटा)**

**कुल : शैलेयकुल PARMELIACEAE (Lichens)**

**द्रव्यनाम :** संस्कृत–शैलेय, शिलापुष्प ; स्थानिक–छड़ीला, झूला।

लैटिन– Parmelia perlata Ach.

**वानस्पतिक स्वरूप :** यह पत्थरों एवं वृक्षों पर लटकने वाला लाइकेन है। इसका अधः पृष्ठ श्वेताभ बाहरी कृष्ण वर्ण का होता है। अधिक श्वेताभ घना छड़ीला श्रेष्ठ माना जाता हैं। हिमालय में कई किस्में पाई जाती हैं।

प्रयोज्यअंग–पञ्चांग।

**प्राप्तिस्थान :** उत्तराखण्ड हिमालय के गढ़वाल, कुमाऊं के सब–एलपाईन जोन में 1,800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई तक बांझ, बुरांस के वृक्षों पर यह किस्म पाई जाती है।

**स्थानिक प्रयोग :** शिरःशूल में जल में पीस कर सिर में लेप करने से लाभ होता है। यह हृद्य, मूत्रल, दीपन, वेदनास्थापन, शोथहर, कण्डू, अश्मरी एवं रक्तविकारों में उपयोगी। यकृतरोगों में छड़ीला उपयोगी है।

**टिप्पणी :** इसके अतिरिक्त हिमालय में कई किस्मों के सविष एवं निर्विष लाईकेन्स पाये ज़ाते हैं। स्थानिक भाषा में च्यू कहते है। निर्विष किस्मों में गुच्छी, खुम्बीं Agaricus campertris एवं अमिनियाँ आदि किस्में हैं। गुच्छी का उपयोग स्वदिष्ट बल्य शाक के रूप में करते हैं। यह माँस के समान गुणकारी पौष्टिक एवं बाजीकर है।

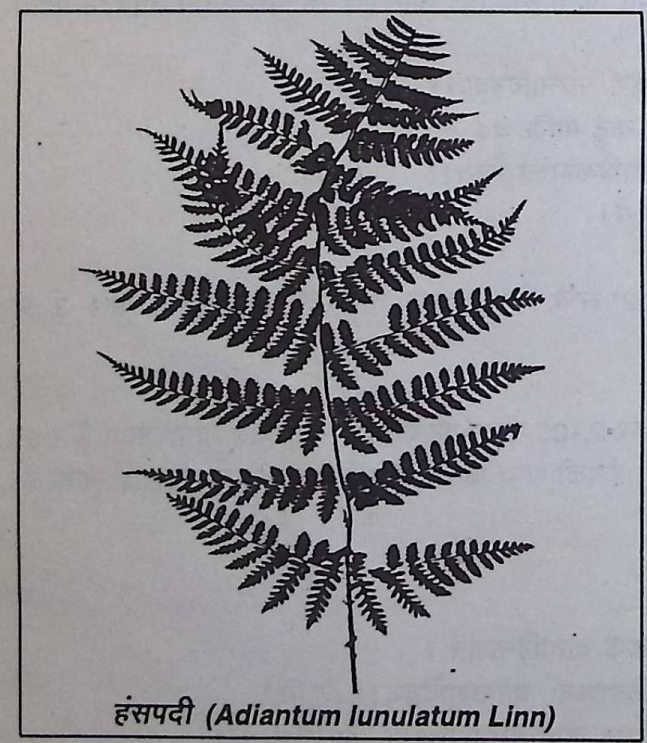

हंसपदी (Adiantum lunulatum Linn)

**कुल : LYCOPODIACEAE**

इस कुल में औषधोपयोगी निम्न किस्में हिमालय की घाटियों में सुलभ हैं।

1. Lycopodium clavatum Linn. – वेली।
2. Lycopodium setaceum Linn.
3. Pleopeltis thumbergiana Kauef.

**कुल : POLYPODIACEAE**

1. Adiantum lunulatum Linn. – हंसपदी।
2. Adiantum candatum Linn.
3. Polypodium amoenum Wall.

**कुल EQUISETACEAE**

**द्रव्यनाम :** हिन्दी– जोड़–तोड़।

लैटिन – Equisetum debile Roxb.

**स्थानिक प्रयोग :** ग्रामीण लोग पञ्चांग का उपयोग मूत्रल एवं उपदंश में करते हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# लोक प्रचलित स्थानिक जड़ी-बूटियों से उपचार (फोकलोर)

**स्वर भंग : PHAYNGITIS**

सामान्य भाषा में स्वर भंग को गला बैठना, खरखरी लगना कहते हैं। आवाज बैठ जाती हैं या फटी–फटी आवाज हो जाती हैं। ऐसी दशा में ग्रामीण लोग जड़ी–बूटियों द्वारा घरेलू उपचार करते हैं। उनकी सामान्य जानकारी इस प्रकार से हैं :

1. मेथी 5 ग्राम 500 मिली० पानी में क्वाथ विधि से तैयार कर गले की खरास या खरखरी में गरारे करने से लाभ होता हैं।

2. अमरूद के पत्तो को पानी में उबालकर खरास में गरारे करने से लाम होता हैं।

3. अखरोट (अखोड़) की छाल के क्वाथ से गरारे करने पर लाभ होता हैं।

4. पहाड़ी पान के पत्तो के साथ बच (बचा) घिस कर मधु के साथ चाटने से स्वर भंग में लाभ होता हैं।

5. मुलैठी को दिन में 3–4 बार चबाने से स्वर भंग में लाभ होता हैं।

6. टौन्सील (तुण्डिका शोथ) होने पर बाँझ (क्वरकस) की छाल का सेवन एवं गरारे करने से लाभ होता हैं।

**कास (खाँसी) : COUGH**

1. अदरक के रस में शहद मिलाकर दिन में 3–4 बार दो–दो चम्मच सेवन से लाभ मिलता हैं।

2. कच्ची हल्दी की गाँठ दूध में घिसकर दिन में 2 बार पीने से लाभ होता हैं।

3. वासा (वासिंग) के पञ्चांग का क्वाथ तैयार कर पुनः चीनी में पका कर शर्वत तैयार कर कास (खाँसी) में लाभ होता हैं।

4. तुलसी के पत्ते, पान के पत्ते का रस एवं 2–3 दाने काली मिर्च साथ मिलाकर दिन में 2–3 बार एक–एक चम्मच सेवन करने से लाभ होता हैं।

5. वनफशा (डुण्डीविराली) के फूल एवं पिप्पली (पहाड़ी पान) की जड़ का क्वाथ दिन में 2–3 बार देने से लाभ होता हैं।

6. सामान्य रूप से तालीसादिचूर्ण 3–4 ग्राम की मात्रा में गरम जल या शहद के साण दिन में 2 या 3 बार प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

**श्वास-कास : BRONCHIAL ASTHAMA**

1. कूठ कड़वा 3 से 5 ग्राम की मात्रा में दिन में 3 बार गरम पानी के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. शुद्ध मीठा विष 250 मि० ग्राम, शुद्ध सुहाग 250 मि०ग्राम श्रृंगभस्म 250 मि० ग्राम तीनों को मिलाकर शहद के साथ दिन में 3 बार चाटने से लाभ होता हैं।

3. पुष्कर मूल चूर्ण 2 ग्राम टूटगंठा (इफेड्रा) 2 ग्राम चूर्ण दोनो मिलाकर दिन में 3 बार गरमजल के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं। बचा (बच) के छोटे–छोटे टुकड़े मुह में रखकर चूसते रहे श्वास के रोगी को आराम मिलता हैं।

4. वासामूल 50 ग्राम शिरीष छाल 50 ग्राम यवकूट चूर्ण 15–20 ग्राम की मात्रा में 1 लीटर पानी में क्वाथ विधि से तैयार कर सेवन करने से कास–श्वास में विशेष लाभ होता हैं।

6. सूखे दाड़िम (अनार) के फलो के छिलके आग में भून कर एवं इस भुने छिलके में नमक लगाकर चूसने से बलगम वाली खांसी में लाभ होता हैं।

7. काकड़ासींगी तुलसी के पत्ते के साथ मिलाकर शहद में चाटने से श्वास में लाभ होता हैं।

**हिक्का (हिचकी) : HICCAUGH**



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

1. हिचकी आने पर मोर पंखी की भस्म 250 मि० ग्रा० एवं बड़ी इलायची का चूर्ण मिश्री के साथ मिलाकर दिन में 3 बार गरम पानी के साथ चाटने से लाभ होता हैं।

2. बचा (बज) चूर्ण 250 मि० ग्राम मुलैठी चूर्ण 2 ग्राम दिन में 3 बार मधु के साथ चाटने से लाभ होता हैं।

3. गिलोय 50 ग्राम, वासापत्र 50 ग्राम, पुनर्नवामूल 50 ग्राम, देवदार काष्ठ 50 ग्राम यवकूट कर 15 से 20 ग्राम चूर्ण को क्वाथ विधि से तैयार कर दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता है।

4. विदारीकन्द एवं कपूरकचरी (शटी) का चूर्ण मधु के साथ लेने पर लाभ होता हैं।

**उदरशूल पेटदर्द : ABDOMINAL COLIC**

1. पाड़ी (पाठामूल), पीली जड़ी दोनो का मूल चूर्ण 3–4 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. कुटकी, जवाँण (अजवायन) अतीस का मूल चूर्ण. 2-3 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

3. हींग गरम पानी में घोल कर नाभी पर लेप करने से लाभ होता हैं।

4. हींग घी में भूनकर जँवाण (अजवाइन) एवं नमक मिलाकर 3 ग्राम की मात्रा दिन में तीन बार गरम पानी से प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

5. त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला) के चूर्ण को दिन में दो तीन बार 3–4 ग्राम की मात्रा में सेवन करने से पेट के दर्द में लाभ होता हैं।

6. पथरी के दर्द (वृक्कशूल) में पाषाण भेद (पत्थरफोड़ी) के चूर्ण को 3 ग्राम की मात्रा में कुल्थी क्वाथ में दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

7. मक्का (मुंगरी) की दाड़ी का क्वाथ सुबह शाम पीने से पथरी में लाभ होता हैं।

8. पैत्तिक शूल ( Biliarycolic) में कच्ची हल्दी कढ़ाई में भूनकर उसका चूर्ण 2 ग्राम की मात्रा में दूध के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

9. आँवला एवं मुलैठी चूर्ण 3 ग्राम की मात्रा में शतावरी स्वरस के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

10. पेट में ग्रहणी घाव (Duodenal ulcer) होने पर शतावरी और भाँगरे का रस 15 से 20 मि०ली० दिन में दो बार पीने से लाभ होता हैं।

11. ताजे आंवले के रस में मुलैठी चूर्ण रसौंत के साथ मिलाकर सेवन करने से ulcer में लाभ होता हैं।

**प्रवाहिका (पेचीस) : DYSENTERY**

1. दाड़िम (अनार) के फलों के छिलको का चूर्ण 3 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. बेलगिरी का चूर्ण 3–4 माशा की मात्रा दिन में आँवले के ताजे रस के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

3. कच्ची–पक्की, भूनी सौंफ, सेमलमूशली दोनो का चूर्ण 3–4 ग्राम की मात्रा में मिश्री के साथ सेवन करने पर आँव (पेचीस) में लाभ होता हैं।

**अतिसार (दस्त) : DIARRHOEA**

2. दाड़िम के फल का छिलका, धाय के फूल का चूर्ण तैयार कर 3–4 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार पानी के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

2. आम की गुठली (बीज मज्जा) एवं पाठा पञ्चांग चूर्ण किलमोड़े (दारूहल्दी) क्वाथ के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

3. पुदीना एवं प्याज के रस के साथ नमक चुटकी भर मिलाकर देने से लाभ होता हैं।

4. खूनी दस्त में बेल गिरी का चूर्ण 3 ग्राम सेंधानमक 250 मि० ग्राम बेलगिरी 2 ग्राम मिलाकर दिन में तीन बार जल या मट्ठे के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

**अरूचि (खट्टीडकार) : ANOREXIA**

1. खट्टी डकार एवं गले की जलन में शतावरी एवं आँवला चूर्ण को दिन में तीन बार 3–4 ग्राम की मात्रा में शीतल जल के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. सौंठ, काली मिर्च, पिप्पली का समभाग चूर्ण 2-3 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार गरम जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

3. अजवायन (जंवाण) सफेद जीरा, कालानमक, हरड़ का छिलका का चूर्ण बनाकर 3-4 ग्राम की मात्रा में सेवन करने से भूख लगती है।

4. अदरक को नमक के साथ मिलाकर खाना खाने से पहले चबाने से अरोचक में लाभ होता हैं।

5. रसौंत 3 ग्राम, छोटी इलायची 1 ग्राम, मुलैठी चूर्ण 2 ग्राम के अनुपात में मिलाकर दिन में तीन बार जल के साथ प्रयोग करने पर खट्टी–डकारें एवं अम्लपित्त ( Acidity ) में लाभ होता है।

6. अजीर्ण एवं अग्निमाँद्य होने पर सौंठ का चूर्ण अजवाइन के साथ मिलाकर सेवन करने से लाभ होता हैं।

7. अजवाइन, कालाजीरा, कालानमक, समान भाग में लेकर चूर्ण तैयार कर इसमें भूनी हींग 500 मि०ग्राम की मात्रा में मिलाकर दिन में दो बार गरम जल के साथ सेवन करने से अग्निमाँद्य में लाभ होता हैं।

**कामला (पीलिया) : JAUNDIC**

1. अपामार्ग (चिरचिटा), दारूहल्दी की जड़ (किनगोड़) इसको क्वाथ विधि से तैयार कर काढ़े को दिन में 3 बार पीने से पीलिया में लाभ होता हैं।

2. पुर्ननवा की जड़ का क्वाथ एवं जड़ को गले में बाँधने से विशेष लाभ होता हैं।

3. जंगली भटकटैया (कण्टकारी) के पके फलों की माला गले में बाँधने से पीलिया में लाभ होता हैं।

4. कुटकी 500 मि०ग्रा०, रसौन्त 500 मि०ग्रा० दिन में 2 या 3 बार जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

5. मकोय की सब्जी या पञ्चांग क्वाथ का प्रयोग यकृत के रोगो में ग्रामीण लोग करते हैं।

6. मूली स्वरस 2–3 औंस की मात्रा में दिन में 2–3 बार पीने से लाभ होता हैं। नींबू पानी भी लाभ करता हैं।

7. धृतकुमारी (पंतग्वार) का गूदा 5–6 ग्राम की मात्रा में हलका सा नमक मिलाकर तथा कड़ाई में तलकर सेवन करने से यकृत के रोगों में लाभ होता हैं।

8. चिरायता, भृंगराज (भाँगरा), शरपुंखा, दारूहल्दी का क्वाथ दिन में तीन बार सेवन करने से बढ़े हुए जिगर (यकृत) में लाभ होता हैं।

9. पीलिया (कामला) में गन्ने का रस पीने से लाभ होता हैं।

**अर्श-बबासीर : PILES/HOEMORROIDES**

1. अरिष्ठक (रीठा) के छिलको की भस्म तैयार कर 500 मि०ग्राम की मात्रा में दिन में 2 या 3 बार चाटने से लाभ होता हैं।

2. भाँग के पत्तों की पोट्टली तैयार कर गुदा प्रदेश में बाँधने से बेदना और सूजन में लाभ होता हैं।

3. जंगली बथुआ (चीनोपोड़ियम एम्ब्रेस्वाइडिस) तीन पत्ते, कालीमिर्च 3 दाने की एक मात्रा के अनुपात से चूर्ण तैयार कर दिन में 3 बार गरम पानी के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

4. छोटी दुधी (दुग्धिका) 5 ग्राम, हरड़ 3 ग्राम, कालीमिर्च 5 दाने की एक मात्रा के अनुपात से चूर्ण तैयार कर दिन में 3 बार गरम पानी के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

5. चित्रक मूल छाल, दाड़िम के फूल समान भाग में लेकर 4–5 ग्राम चूर्ण मठे के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

6. सूरणकन्द की भाजी का सेवन करने से बवासीर में लाभ होता हैं।

7. गुदा के बाहर आने पर कड़वे तेल में 250 मि० ग्राम नमक मिलाकर गुदा में लगाने से लाभ होता हैं।

8. भाँग (भाँगलु) के पत्तो का गूदा में लेप करने से काँच आना में लाभ होता हैं।

9. त्रिफला चूर्ण रात्री को नियमित रूप से सेवन करने पर कब्ज दूर होती हैं। बवासीर में लाभ होता हैं।

**अफारा (पेटफूलना) : TYMPANITES**

1. जंगली अजवाइन (थायमस सरपाईलम) के पञ्चांग को जल में उबाल कर इस जल को छान कर दिन में 3 बार 3 से 5 औंस की मात्रा में प्रयोग करने से अफारा ठीक होता हैं।

2. घी में भुनी हुई हींग, काला जीरा एवं शुद्ध सुहागा फूल समान भाग में लेकर गरम पानी के साथ 3 से 4 ग्राम की मात्रा में प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

3. सौंठ, काली मिर्च, पिप्पली समान भाग में लेकर चूर्ण को यवक्षार 250 मि०ग्रा० मिलाकर गरम जल के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

4. हींग को गुनगुने पानी में घिस कर नाभी पर लेप करने से अफारे में लाभ होता हैं।

**उदर कृमि : WORM INFESTATION**

1. पलाश बीज ( ठाक) का छिलका उतार कर 250 मि० ग्राम से 500 मि० ग्राम की मात्रा में गुड़ के साथ दिन में गरम पानी के अनुपान में देने से लाभ होता हैं।

2. कमीला फल रज 250 मि० ग्राम काली मिर्च 2 दाने एवं गुड़ के साथ मिलाकर गरम जल के साथ रात्री को एक सप्ताह तक देने से उदर कृमि नष्ट हो जाते हैं।

3. दाड़िम के पेड़ की छाल, ढाक फूल, हींस की जड़ का क्वाथ दिन में तीन बार प्रयोग करने से लाभ होता है।

4. गुदा में चुन्नटें (सफेद कीड़े) होने पर सरसों के तेल में हल्दी और पुष्ककमूल मिलाकर मलद्वार पर लगाने से लाभ होता हैं।

**नासागत रक्तस्त्राव (नकसीर) : EPISTAXIS**

1. दूव का ताजा स्वरस 3–5 बूँद तक नासा में डालने पर नकसीर में लाभ होता हैं।

2. वासा (अडूसा) पत्रक्वाथ 25 मि० लि० की मात्रा में दिन में 2-3 बार पीने से लाभ होता हैं।

3. आमलकी चूर्ण एवं छोटी इलायची, सौंफ मिश्री का चूर्ण दिन में 3–4 ग्राम की मात्रा में शीतल जल से सेवन करने पर लाभ होता हैं।

4. शिर में शीतल जल की शिरोधारा करने से लाभ होता है।

**उच्च रक्तचाप : HIGH BLOOD PRESSURE**

1. जटामाँसी के मूलकन्द तेज उबलते एक पाव पानी में डाल कर पुनः पाँच मिनट तक ढाँक कर रख लेने के बाद इस जल को छानकर 2 या 3 बार प्रतिदिन पीने से लाभ होता हैं।

2. ब्राह्मी पत्र, शंखाहुली पञ्चांग चूर्ण, 3 से 4 ग्राम की मात्रा में दिन में तीन बार गरम जल के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

3. तगर (सुमंयाँ), धवलबरूआ (सर्पगन्धा) चूर्ण 2 से 4 ग्राम की मात्रा गरम जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

4. प्याज का रस 10 मि०ली० मात्रा में सुबह साँय लेने से लाभ होता हैं।

5. रक्तचाप के कम होने पर बिदारीकन्द, शतावर, आँवला शंखाहुली, छोटी इलायची इनको समभाग में लेकर कपड़छन 3–4 ग्राम की मात्रा दिन में दो बार प्रयोग करने से लाभ होता है।

**मूत्रकृच्छ (पेशाब का रूक-रूक कर आना) : RETETION OF URINE**

1. गोखरू पञ्चांग, ककड़ी बीज, काँसमूल, सरकण्ड़ा मूल के क्वाथ को 10 मि० ली० की मात्रा में दिन में तीन बार पिलाने से पेशाब खुल कर आता हैं।

2. बरूण छाल, पाषाण भेद एवं कटफल (काफल) एवं पुनर्नवा मूल के क्वाथ का प्रयोग ग्रामीण बैद्य मूत्रकृच्छ में करते हैं।

3. ताजे शतावर के रस को ककड़ी बीज चूर्ण के साथ प्रयोग करने से पेशाब खुलकर आता हैं।

4. देवदारकाष्ठ एवं दारूहल्दी (किनगोड़) छाल का क्वाथ पीने से पेशाब खुल कर आता हैं।

5. मूली की जड़ का ताजा रस पीने से लाभ होता हैं।

6. सिलफोड़ा (पत्थरफोड़ी) डोडिमोकार्पस के मूल चूर्ण को जल के साथ 3 से 4 ग्राम की मात्रा में 2 बार लेने से लाभ होता है।

**प्रमेह (धात) (मधुमेह) : DIABETES**

1. सेमलमूशली की जड़, केंवाच बीज चूर्ण 1 से 3 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार गाय के दूध से प्रयोग करने से पेशाब में धात जाने पर लाभ होता हैं।

2. विदारीकन्द (विरालु), काली मूसली एवं गिलोय सत्व तीनो का चूर्ण 3–4 ग्राम की मात्रा में पीने से धात (प्रमेह) में लाभ होता हैं।

3. जामुन की गुठली, आम की गुठली मज्जा, करेले के बीज समान भाग में लेकर चूर्ण तैयार कर 3 से 4 ग्राम की मात्रा दिन में 3 बार जल के साथ सेवन करने से मधुमेह में लाभ होता हैं।

4. नीमपत्र, जामुनपत्र, विल्वपत्र, इन तीनों का चूर्ण तैयार कर 3–4 ग्राम की मात्रा में जल के साथ सुबह सेवन करने से मधुमेह में लाभ होता हैं।

5. तेजपत्र, कुटकी, चिरायता का समभाग चूर्ण दिन में 2 बार जल के साथ सेवन करने से मधुमेह में लाभ होता हैं।

6. आँवला, जामुन गुठली, गिलोय, मंजीठ, हरिद्रा सभी का सम भाग चूर्ण 3 से 4 ग्राम की मात्रा में दिन में दो या तीन बार प्रयोग करने से मूत्रशर्करा में लाभ होता हैं।

**अनिद्रा (नींद का न आना) : LOSS OF SLEEP**

1. मकोय काली (काली गिवांई) के क्वाथ के साथ धवलबरूआ 500 मि० ग्रा० की मात्रा दिन में दो बार प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

2. बचा चूर्ण 250 मि० ग्राम, जटामाँसी 1 ग्राम, ब्राह्मी पत्र 2 ग्राम तीनो का चूर्ण बनाकर उपरोक्त मात्रा से दिन में 3 बार लेने से नींद ठीक आने लगती हैं।

3. विदारीकन्द एवं ब्राह्मी (जलनीम) पञ्चांग 3–4 ग्राम मात्रा में रात्री को दूध के साथ लेने से नींद आने लगती हैं।

4. पैर के तलुओं पर कड़वे तैल की मालिश करें।

5. मन के उच्चार होने पर मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), जलनीम (ब्राह्मी) (Bacopa moniari), तगर, शंखपुष्पी, मुलैठी, खुरसानी अजवाईन मिलाकर कपड़छन चूर्ण दिन में दो बार जल या दूध के साथ लेने पर लाभ होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**अपस्मार (मृर्गी) : EPILEPSY INSANITY**

1. ब्राह्मी (बकोपा मोनियारी), वच (धोड़ बच), शतावरी, जटामाँसी का चूर्ण तैयार कर 3–4 माशा की मात्रा में नियमित 3–4 महीने तक प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

2. प्याज और राई के स्वरस को नासिक़ा में 2–4 बूँद डालने से मिरगी के रोगी को होश आने लगती हैं।

3. पागलपन की दशा में ब्राह्मी, भूतकेशी, जटामाँसी सर्पगन्धा, बचा इनको समान भाग लेकर गोदुग्ध एवं गोधृत के साथ प्रयोग करने से पागलपन में लाभ होता हैं।

4. बचचूर्ण को 500 मि.ग्रा. से 1 ग्रा० की मात्रा में ब्राह्मीपत्र स्वरस के साथ लगाकर प्रयोग करने पर लाभ होता हैं।

5. कच्चे आँवला एवं बादाम गिरी को पीस कर शिर पर लेप करने से भी लाभ होता हैं।

6. लहसुन स्वरस की 2–3 बूँद नाक में प्रयोग करें।

7. तीव्र सुगन्धित पादप माँसी, रैमासी, भूतकेश, राई, धूपलकड़ी इनका धूपन करने पर भी मिरगी में लाभ होता हैं।

**श्वित्र (सफेद दाग) : LEUCODERMA**

1. गोमुत्र 10 मि० ली० से 15 मि० ली० की मात्रा में प्रातः लगातार पीने से एवं स्नान करने से लाभ होता हैं।

2. धौल (श्वित्र) पर सरसों एवं मंजीठ का लेप तैयार कर बाह्म प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

3. खदिरकाष्ठ (खैर) का क्वाथ लगातार पीने से लाभ होता हैं। लेप भी श्वित्र में लाभ करता हैं।

**शीतपित्र (पित्ती उछलना) : URTICARIA**

1. कच्ची हल्दी पीसकर दूध के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

2. सिसूणू (बिच्छूबूटी) की जड़ कूटकर उसके रस को 10 मि० लि० की मात्रा में शहद के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

3. गेरू के चूर्ण को घी के साथ मिलाकर मालिश करने से शीतपित्त में लाभ होता हैं।

4. मंजीठ, दारूहल्दी, एवं चिरायता सभी को समभाग क्वाथ छान कर दिन में दो बार प्रयोग करने से लाभ होता हैं ।

5. मसुर के बीजों को भिगोकर उसमें कच्ची हल्दी मिलाकर लेप करने से लाभ होता हैं।

**विषमज्वर (जाड़ा बुखार) : MALARIA**

1. चिरायता, कुटकी, छित्तवन छाल (सप्तपर्ण) का क्वाथ दिन में 2–3 बार लगातार पीने से जाड़े से आने वाले बुखार में लाभ मिलता हैं।

2. दारूहल्दी (किलमोड़ी), निर्गुण्ड़ी (सेंवाली), नीम पत्र इनका काढ़ा बनाकर पिलाने से भी मलेरिया बुखार ठीक होता हैं।

3. गिलोय, करज्जफल एवं पीलीजड़ी का क्वाथ भी ग्रामीण वैद्य मियादी बुखारो में देते हैं।

4. तुलसी पत्र, कालीमिर्च एवं सौंठ का चूर्ण गरम पानी के साथ सेवन करें।

**श्वेतप्रदर (पैखा) : LEUCORRHOEA**

1. ताजी गिलोय (गुर्च) का रस 12–15 मि० ली० शहद के साथ दो बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. जंगली चौलाई (काँटेवाली) की जड़ का स्वरस 15 मि०ली० की मात्रा में दिन में दो बार सेवन करने से श्वेतप्रदर में लाभ होता है।

3. पके गूलर के फलो को सुखाकर एवं इसका चूर्ण तैयार कर तीन से चार ग्राम की मात्रा में कंटेली चौलाई



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

के मूल स्वरस के साथ सेवन करने से लाभ होता हैं।

**रक्तप्रदर (छूतहुण) : MENORHOEA**

1. मासिक धर्म ऋतुकाल से अधिक दिनों या ऋतुकाल में ज्यादा होने पर केले का मूल स्वरस 10 मि.ली. दिन में दो बार प्रयोग करे।

2. बासमती चावलों को रात्री को पानी में भिगोकर इस पानी को पिलाने से रक्तप्रदर में लाभ होता हैं।

3. शतावरी, नागकेशर, सौंफ, मिश्री को समभाग में लेकर पकाकर पिलाने से अनार्त्तव में लाभ होता हैं।

4. कालेतिल का चूर्ण 10 ग्राम की मात्रा में अजवाँण एवं गुड़ के साथ सेवन करने से मासिक धर्म खुलकर आता हैं।

5. घी में हींग को भून कर 500 मि.ग्रा. की मात्रा में उष्ण जल के साथ दिन में 2–3 बार प्रयोग करने पर लाभ होता हैं। मासिक धर्म खुल कर आता है।

**योनिशोथ (खुजली-जलन) : VAGINITIS**

1. त्रिफला (हरड़, बहेड़ा आँवला) इसके कषाय से योनि प्रक्षालन करने से योनिकण्डु में लाभ होता हैं।

2. भाँगरा, नीलकण्ठी, के क्वाथ से योनि प्रक्षालन करने से योनिकण्डु में लाभ होता हैं।

3. दारूहल्दी, मंजीठ एवं भाँगरा इन तीनो द्रव्यों से साधित पिचु योनी में धारण करने से योनिशोथ एवं योनिकण्डू में लाभ होता हैं।

4. बड़, गूलर, पीपल, पिलखन इनकी छालो के कषाय से योनि प्रक्षालन करने से योनिदुर्गन्ध एवं स्त्राव में लाभ होता हैं।

**स्तन्यरोध (दूध का सूख जाना) : POOR LACTATION**

1. विदारी कन्द, शतावर, छोटीदुधी इनका चूर्ण 3 से 4 ग्रा० की मात्रा में दूध के साथ सेवन करने से स्त्रियों में दूध की मात्रा बढ़ जाती हैं।

2. चावल का माँड़ एवं भट्ट (सोयाबीन) के खाने से भी दूध की मात्रा बढ़ती हैं।

3. दूध और गुड़, गोला (नारियल) के सेवन करने से स्त्रियों में दूध बढ़ता हैं।

4. स्तनशोथ या ग्रन्थी होने पर एरण्डबीज, मकोय एवं हल्दी इनको पीस कर लेप करने से लाभ होता हैं।

5. हल्दी एवं धतूरे के पत्रों को पीस कर लेप करने से लाभ होता हैं।

6. गिलोय, मंजीठ, मकोय, दारूहल्दी इन द्रव्यो को 4–5 ग्राम की मात्रा में लेकर 1 किलो पानी में पकाकर चतुर्थांश शेष रहने पर दिन में दो बार पिलाने से स्तनग्रन्थी शोथ में लाभ होता हैं।

**आवाज न आना : DELAYED SPEECH**

1. बज (धोड़ बच) 250 मि० ग्राम चूर्ण शहद में मिलाकर चटाने से लाभ होता हैं या तुलसी स्वरस के साथ प्रयोग करें।

2. ब्राह्मी पत्र, पिप्पलामूल चूर्ण 250 मि० ग्राम की मात्रा में दिन में 2 या 3 बार शहद के साथ चटानेसे लाभ होता हैं।

3. मुलैठी, कुलन्जन, छोटी ईलायची तीनो का चूर्ण दिन में 3 बार 2 ग्राम से 3 ग्राम की मात्रा में गरम जल के साथ प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

4. पान के पत्ते में मुलैठी, पिप्पलामूल एवं इलायची रखकर चूसने से लाभ होता हैं।

**सूखारोग (फक्व)**

1. पुर्ननवामूल, तुलसीपत्र, एवं सूखे आँवला समान भाग लेकर 2 ग्राम चूर्ण दिन में 3 बार पानी से देने पर



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लाभ होता हैं।

2. आँवला, असगन्ध का चूर्ण 1 से 3 ग्राम की मात्रा में दूध के साथ देने से सूखारोग ठीक होता हैं।

3. निर्गुण्डी (सिंवाली) तैल की मालिश करने से लाभ होता हैं।

**कर्णमूल शोथ (हप्पू) : MUMPS**

1. भाँग (भाँगलु) के बीजो को पीस कर हलका गरम करके शोथयुक्त स्थान पर लेप करने से लाभ होता हैं।

2. गिलोय, दारूहल्दी, मंजीठ इसके काठे को दिन में तीन बार पिलावें।

3. चूना और शहद मिला कर किसी कपड़े में लगाकर कान की जड़ में चिपका दे।

4. निर्गुण्डी पत्र एवं एरण्डपत्र के साथ लोवान मिलाकर गुन–गुना लेप करने से लाभ होता हैं।

**खसरा : MEASLES**

1. गिलोय, नीमपत्र का क्वाथ 10 से 15 मि०ली० की मात्रा में दिन में दो या तीन बार पिलावें।

2. पित्तपापड़ा, चिरायता, मोथा का क्वाथ 10 से 15 मि०ली० की मात्रा में दिन में 2 या तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

3. नीम की पत्ती एवं मंजीठ (मंजेठो) को पीसकर शरीर पर लेप करने से खाज कम होती हैं। साथ में तुलसी पत्र स्वरस अदरख के साथ शहद मिलाकर चटावें।

4. रोगी के बिस्तर में नीमपत्र रखने से संक्रमण नहीं होता।

5. छोटी माता (काकड़) के निकलने पर भी उपरोक्त प्रयोग ग्रामीण लोग करते हैं। प्राथमिक अवस्था में लाभ होता हैं।

6. ग्वीराँल (काचनार) छाल, शिरीष छाल दोनो को क्वाथ विधि से तैयार पानी पिलाने से चेचक (शीतला) में भी लाभ होता हैं।

**ज्वर (बुखार) : FEVER**

1. गिलोय 25 ग्राम, देवदारू काष्ठ, 25 ग्राम की मात्रा में लेकर 500 मि० ली० पानी में उबालकर चौथाई शेष रहने पर छानकर सुबह–शाम बार–बार पीने से लाभ होता हैं।

2. तुलसी 25 ग्राम, गिलोय 25 ग्राम, चिरायता 25 ग्राम, आधा लीटर पानी में उबालकर चौथाई शेष रहने पर छान कर दिन में तीन बार पीने से लाभ होता हैं।

3. पित्तपापड़ा 25 ग्राम, गुर्च (गिलोय) 25 ग्राम, दारूहल्दी 25 ग्राम तुलसी पत्र 25 ग्राम की मात्रा में 1 लीटर पानी में पका कर चौथाई शेष रहने पर छान कर दिन में 2 या 3 बार पिलाने से लाभ होता हैं।

4. नीमपत्र, गिलोय, कुटकी इसको क्वाथ विधि से तैयार कर 10 से 15 मि० लीटर की मात्रा में दिन में 2 या 3 बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

**शिरःशूल (सिरदर्द) : HEADACHE**

1. पहाड़ीपान की जड़, तुलसी, कालीमिर्च, सौंठ इन को कूट कर चूर्ण 3 से 4 ग्राम में दिन में 3 बार प्रयोग करने से लाभ होता हैं।

2. गरम पानी में निम्बु निचोड़कर पीने से लाभ होता हैं।

3. सिर पर पुदीना और करेले के फूल पीसकर लेप करने से लाभ होता हैं।

4. काफल (कटःफल) छाल के चूर्ण का नस्य लेने से सिरदर्द में आराम होता हैं।

5. भोटिया लोग तीव्र शिरः शूल में माथे के पास दहनकर्म करते हैं जिससे शिरःशूल में आराम होता है।

6. आँक की जड के 1–3 ग्राम चूर्ण की फंकी भरने से पसीना आकर सिरदर्द और बुखार में लाभ होता हैं।

7. नख छिकनी के चूर्ण को सूंघने से सिरदर्द में लाभ होता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**तृष्णा (बार-बार प्यास का लगना) : EXCESSIVE THIRST.**

1. जामुन की पत्तियो को उबालकर एवं पानी को छानकर सौंफ इलाइची का चूर्ण 2–3 ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार लेने से लाभ होता हैं।

2. पीपल की छाल 100 ग्राम 1 लीटर पानी में उबालकर चौथाई शेष रहने पर 10 से 15 मि० ली० काढ़ा दिन में 2 या 3 बार पीने से प्यास शान्त होती हैं।

3. गिलोय, पित्तपापड़ा, खश, इनका काढ़ा तैयार कर 10 से 15 मि० ली० की मात्रा में मिश्री मिलाकर पीने से प्यास शान्त होती हैं।

4. सौंफ, इलाइची को पानी में उबालकर इस पानी को पीने से प्यास शान्त होती हैं।

**शोथ (सूजन) : INFLAMATION**

1. पुर्ननवा की जड़, मकोय काली पञ्चांग, इनके क्वाथ को दिन में 3 बार 10 से 15 मि० ली० मात्रा में सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. दारूहल्दी (किनगोड़) जड़, पाषाण भेद (सिलफोड़ा), पीलीजड़ी (ममीरी) इनको 20 ग्राम मात्रा में लेकर 1 लीटर जल में पकाकर चौथाई शेष रहने पर 10 से 15 मि०ली० मात्रा में दिन में तीन बार पीने से सूजन कम होती हैं।

3. पाठा की जड़, कपूरकचरी ( बणहल्दु), पुनर्नवा की जड़ इनका कपड़छन चूर्ण 3 से 4 ग्राम की मात्रा में कुशा की जड़ के क्वाथ के साथ पीने से लाभ होता हैं।

4. पंया (पद्मकाषठ) की छाल, दारूहल्दी (किलमोड़ी) की जड़ इनके क्वाथ का प्रयोग।

5. पतंग्वार (घीक्वार, घृतकुमारी) के गूदे की भाजी सेवन करने से सूजन कम होती हैं।

6. मकोय या पुर्ननवा की पत्तियो की भाजी शोथ में सेवन करने से लाभ होता हैं।

**मोटापा : OBSITY**

1. दारूहल्दी (किनगोड़) छाल, (असन) छाल प्रत्येक 100 ग्राम लेकर 1 लीटर पानी में पकाकर चौथाई शेष रहने पर 10 से 15 मि० ली० पानी दिन में 2 या तीन बार सेवन करने से लाभ होता हैं।

2. एक भाग शहद 10 भाग गरम पानी में मिलाकर सुबह खाली पेट पीने से मोटापा कम होता हैं।

3. जौ के आटे की रोटी का सेवन एवं प्रतिदिन सुबह दिन एवं शाम को नींबू पानी पीने से मोटापा कम होता हैं।

4. सुबह प्रातः काल भ्रमण, व्यायाम एवं योगासन करने से मोटापा कम होता हैं । तथा शरीर सुडौल हो जाता हैं।

5. गोमूत्र ताजा 5 से 10 मि० ली० की मात्रा में सुबह शाम सेवन करने से मोटापा कम होता हैं तथा शरीर निरोग रहता हैं।

**कजोरी (दौर्बल्य) : DEBILITY**

1. विदारी कन्द, शतावरी, मूशली (सेमल) इनको सम भाग लेकर चूर्ण बना ले। 3–5 ग्राम की मात्रा में दूध के साथ लेने से लाभ होता हैं।

2. कौंच के बीज (दाकली), असगंध (अश्वगन्धा), कालीमूसली सभी को समान भाग मिश्री मिलाकर दूध के साथ लेने से लाभ होता हैं।

3. सालम पंजा, बिदारी कन्द, कालेतिल इनको समभाग लेकर चूर्ण तैयार कर 3–4 ग्राम की मात्रा में 500 मि. ग्रा. शिलाजीत मिलाकर सेवन करने से लाभ होता हैं।

4. धुड़बच (बचा) 250 मि० ग्राम, असगंध 3 ग्राम, शिलाजीत शुद्ध 250 मि० ग्राम चूर्ण तैयार कर दिन में 2 बार दूध के साथ सेवन करने से दुर्बलता दूर होती हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**गठियावात (जोड़ो का दर्द) : ARTHRITIS**

1. सौंठ का चूर्ण 5 ग्राम की मात्रा में दिन में 2 बार गरमजल के साथ ग्रामीण लोग प्रयोग करते हैं।

2. लहसुन को सरसों के तैल में पकाकर इस तैल की मालिश करने से लाभ होता हैं।

3. धतूरे के पत्ते, निर्गुण्डी के पत्ते, एरण्ड के पत्ते, तैल में पका कर इस तैल को छान कर ग्रामीण लोग मालिश करते हैं। इस तैल को पीठ दर्द होने पर भी ग्रामीण लोग मालिश में प्रयोग करते हैं।

**अग्निदग्ध (जलना) : BURNS**

1. शरीर के किसी अंग के जलने पर ताजे आलू को पीस कर ग्रामीण लोग लेप करते हैं । आलू के लेप करने से जलन कम होती हैं तथा फफोंले नहीं पड़ते हैं।

2. जले स्थान पर घृत कुमारी (पंतकुआर) के पत्ते का गूदा पीस कर लेप लगाते हैं।

3. दाड़िम (अनार) के पत्तों को पीस जले स्थान पर ग्रामीण लोग लगाते हैं।

4. जौ को जलाकर उस राख में तिल तेल मिलाकर लेप करने से लाभ होता हैं।

**मोच का आना : SPRAIN**

1. हल्दी को पानी में पीस कर उसका गरम लेप मोच वाली जगह पर लगाते हैं।

2. हल्दी और प्याज को बराबर मात्रा में लेकर मोच वाली जगह पर उसका लेप करते हैं।

3. निर्गुण्डी (सेंवाली) के पत्तो के क्वाथ का सेक बराबर मोच वाली जगह पर करते हैं।

4. गरम पानी में नमक मिलाकर सेक करते हैं।

**कीड़े का काटना : INSECT BITE**

1. चाँगेरी (चलमोड़ी) को पीस कर किसी कीड़े के डंक मारने वाली जगह पर लेप करते हैं।

2. तंबाकू के पत्तों को हल्का पानी में गर्म कर उसकी एक दो बूँद आँख में डालते हैं। ऐसा करने पर बिच्छू के ड़ंक का विष कम होता हैं।

3. नीमपत्र का लेप एवं निम्बपत्र स्वरस पीने को देते हैं।

4. शिरीष पुष्प और छाल को पीस कर डंक मारे स्थान पर लेप करते हैं।

5. कुत्ते के काटने पर लालमिर्च को पीस कर दंश स्थान पर लेप करते हैं।

6. पागल कुत्ते के काटने पर स्नुही (शुलं) के तने का गूदा अदरख के रस के साथ ग्रामीण लोग पिलाते हैं।

7. निर्गुण्डी (सेंवाई) के पत्तो का लेंप दंश स्थान पर करते हैं।

**सर्पदंश (सांप का काटना) : SNAKE BITE**

1. सर्पदंश (काटे वाले स्थान) के अंग ऊपर एवं नीचे से रस्सी के द्वारा कस कर बाँधते है। और दंश वाले स्थान पर चीरा लगाते हैं। विषयुक्त खून के बहने से विष शरीर में नहीं फैलता ऐसी ग्रामीणो की धारणा हैं।

2. साँप के काटे हुए अंग पर चीरा लगाकर लालमिर्च पीस कर उसका लेप करते हैं।

3. लहसुन और तम्बाकू की पत्तियाँ साथ चबाने को देते हैं।

4. विष को कम करने के लिए तुलसी, काली मिर्च, पटोलपत्र, निम्बपत्र, सेन्धानमक पीसकर शहद के साथ चाटते हैं।

5. पान के पत्ते का रस निकालकर काली मिर्च के साथ घोट कर उसको घी के साथ मिलाकर पिलाते हैं।

6. शिरीष छाल, इन्द्रायण (इलाडुः) की जड़ का चूर्ण बकरी के मूत्र या गोमूत्र में देते हैं।

7. बड़ा निंबू (गल–गल) के बीजो को पीस कर उसका लेप एवं मुख द्वारा रोगी को खाने के लिए देते हैं। ऐसा करने पर विष का प्रभाव कम होता हैं।

8. अपामार्ग (चिरचिटा) की जड़ को पीस कर उसका लेप एवं मुख द्वारा उसका प्रयोग किया जाता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# उत्तराखण्ड के जनपदों में घरेलू कुटीर उद्योग एवं खाद्य सामग्री में उपयोगी वनस्पतियाँ

आदिकाल से ही मानव एवं जीव–जन्तु अपनी आवयश्कताओं के लिए वनसम्पदा पर निर्भर रहता आया है। हमारे दैनिक उपयोग की अनेकानेक वस्तुओं का स्रोत वनसम्पदा ही है। जिसमें जीवनरक्षक जड़ी–बूटियाँ, कृषि में उपयोगी काष्ठ, चित्रकला, वाद्यसंगीत, कुटीर उद्योग, उर्जा, मसाले, सुगन्धित तैल, खाद्य सामग्री में उपयोगी वनस्पति पादप मुख्य हैं। यद्यपि विस्तृत रूप से औषधोपयोगी उल्लेख प्रस्तुत रचना में दिया गया है तथापि संक्षिप्त जानकारी इस तालिका में भी दी जा रही है जो कि निम्न प्रकार से है।

**1. इमारती काष्ठ में उपयोगी वृक्ष :**

| | | |
|---|---|---|
| 1. लोरी, सुराछ | Cupressus torulosa Don. | काष्ठ देवदार से भी मजबूत होता है |
| 2. देवदारू, देवदार | Cedrus deodara Loud. | औषधोपयोगी बहुवर्षी हिमालय का सदाहरित वृक्ष। |
| 3. सरल, चीड़ कुल्थै | Pinus roxburghii Sargent. | लीसा का स्रोत, इमारती काष्ठ में उपयोगी। |
| 4. कैल | Pinus excelsa Wall. | इमारती काष्ठ में उपयोगी। |
| 5. राई, रोई | Picea morinda Link. | लकड़ी जलावन में उपयोगी। |
| 6. मोरीन्डा | Abies webbiana Lindl. | इमारती काष्ठ में उपयोगी। |
| 7. तालीस | A. pendrow Spach. | इमारती काष्ठ में उपयोगी। |
| 8. तुन, तुण | Cedrela toona Roxb. | काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु। |
| 9. सीसम, शिंशया | Dalbergia sissoo Roxb. | काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु। |
| 10. शाल | Shorea robusta Gaertn. | काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु। |
| 11. हरिद्र, हलदू | Adina cordifolia Benth. | काष्ठ इमारती लकड़ी हेतु। |
| 12. वांझ, वान | Quercus incana Roxb | काष्ठ का उपयोगी कृषिउपकरणों में। |
| 13. तिनिश, सांदन | Ougeina dalbergioides Benth. | काष्ठ घरेलू उपयोग के वर्तन बनाने में। |
| 14. आसीन, असन | Terminalia alata. | काष्ठ का उपयोगी कृषिउपकरणों में। |

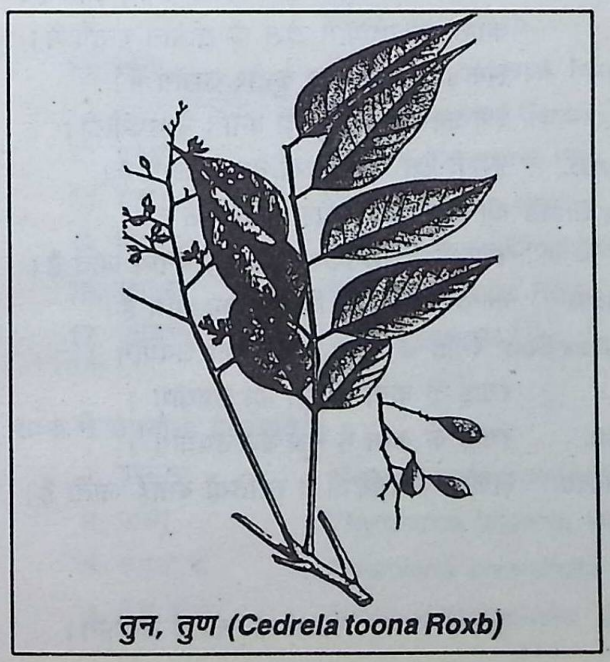

*तुन, तुण (Cedrela toona Roxb)*

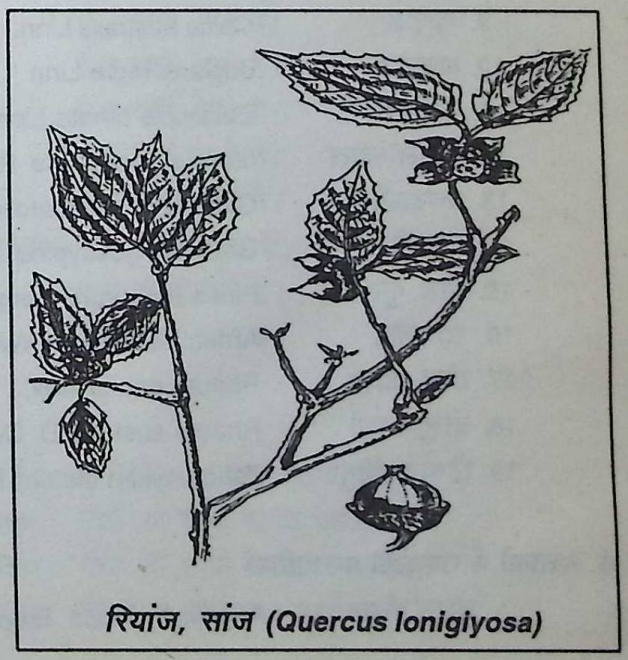

*रियांज, सांज (Quercus lonigiyosa)*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**2. ऊर्जा में उपयोगी वनस्पतियाँ :**

| | | |
|---|---|---|
| 1. दारूहरिद्रा | Berberis aristata DC. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 2. किनगोड | B. asiatica Roxb. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 3. किनगोड | B. lycium Hook F. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 4. भोजपत्र (भूर्ज) | Betulia utilis D. Don. | तान्त्रिक कामों में भोजपत्र का उपयोग। |
| 5. महानिम्ब, डैंकन | Melia azedarach A. Juss | गर्मियों में पत्तियों का उपयोग पशुचारा के लिये। |
| 6. वांझ (ओक) | Quercus incana Roxb. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 7. खरसू | Quercus semecarpifolia. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 8. कुरूवक, बुरांस | Rohododendron arborium. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |
| 9. सिमरू | Rohdodendron campanilatum D. Don. | " |
| 10. धूपी | Rhododendron anthopogon D. Don. | " |
| 11. तुंगला | Rhus parviflora Roxb. | काष्ठ जलवान में उपयोगी। |

**3. कुटीर उद्योगों में उपयोगी पादप :**

| | | |
|---|---|---|
| 1. रिंगाल | Arundinaria falcata Nees | चटाई, टोकरियाँ बनाने में इसका उपयोग। |
| 2. रिंगाल | A. spathiflora Gamble. | चटाई, टोकरियाँ बनाने में इसका उपयोग। |
| 3. रिंगाल | A. jaunsarensis Gamble. | चटाई, टोकरियाँ बनाने में इसका उपयोग। |
| 4. मालझन, भालू | Bauhinia vahlii Wof. A. | पत्तल बनाने के, एवं रेशों से रस्सी बनाई जाती है। |
| 5. भूर्ज, भोजपत्र | Betula utilis D. Don. | छाल का उपयोग कागज के रूप में। |
| 6. गेंठी | Boehmeria rugulosa Wedd. | काष्ठ से दूध, घी, रखने के वर्तन बनाये जाते है। |
| 7. गेंठी | Boehmeria platyphylla Don. | इसकी छाल में अच्छा रेशा होता है। |
| 8. पापरी | Buxus wallichiana Baill. | लकड़ी से खिलौने तथा बक्से बनाये जाते हैं। |
| 9. खड़िक | Celtis australis Linn. | काष्ठ का उपयोग खेल के सामान बनाने में। |
| 10. अखरोट | Juglans regia Linn | लकड़ी का उपयोग कुटीर उद्योग में। |
| 11. बवलिया | Eulaliopis binata Linn. | रेशे कागज की लुगदी बनाने में उपयोगी। |
| 12. भीमल भ्वील | Grewia oppsitifolia Roxb. | इसके रेशे से रस्सियाँ बनाई जाती हैं। |
| 13. कण्डाली | Girardiana diversifolia Eniss | काण्ड से रेशे तैयार किये जाते है। |
| 14. कपासी | Gerbera gossypina | रेशो से अच्छी किस्म के थैले बनाये जाते हैं। |
| 15. चीड़, कुल्यैं | Pinus roxburghii Sargent. | काष्ठ उद्योग एवं बिरोजा का स्रोत हैं। |
| 16. रतनजोत | Arnebia benthamii Wall ex Don. | रंगाई के काम में मूल का उपयोग । |
| 17. ढोलू, आर्चा | Rheum emodi wall, | रंगाई के काम में मूल का उपयोग । |
| 18. ढोलू, आर्चा | Rheum australe D. Don. | रंगाई के काम में मूल का उपयोग । |
| 19. टिम्बुरू, तिमुर | Zanthoxylum alatum Roxb. | लकड़ी से छड़ियाँ व लाठियाँ बनाई जाती है। |

**4. मशालों में उपयोगी वनस्पतियाँ**

| | | |
|---|---|---|
| 1. चोरा, चोरक | Angelica glauca Edgw. | मूल, बीज का मसालों के रूप में उपयोग। |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | |
|---|---|---|
| 2. जम्मू घास, फर्न | Allium stracheyi Baker. | मूल का मसालों में एवं पत्तों शाक में उपयोग। |
| 3. जम्मू घास, फर्न | Allium govanianum Wall. | मूल का मसालों में एवं पत्तों शाक में उपयोग। |
| 4. जम्मू घास, फर्न | Allium wallichii Kunth. | मूल का मसालों में एवं पत्तों शाक में उपयोग। |
| 5. जम्मू घास, फर्न | Allium humile Kunth. | मूल का मसालों में एवं पत्तों शाक में उपयोग। |
| 6. जम्मू घास, फर्न | Allium griffithianum Boiss. | मूल का मसालों में एवं पत्तों शाक में उपयोग। |
| 7. भांगबीज | Cannabis sativa Linn. | बीज का मसालों के रूप में उपयोग। |
| 8. जख्या, तिलपर्णी | Cleome viscosa Linn. | बीज का मसालों के रूप में उपयोग। |
| 9. तेजपात, | Cinnamomum tamala Nees. | पत्र, छाल का मसालों के रूप में उपयोग। |
| 10. कालाजीरा | Carum bulbocastanum Koch | बीज़ का मसालों के रूप में उपयोग। |
| 11. थांयों | Buplerum flacutum Linn. | बीज का मसालों के रूप में उपयोग। |
| 12. थांयो | Pimpinella sp. | बीज का मसालों के रूप में उपयोग। |

**5. स्वयंजात फल**

| | | |
|---|---|---|
| 1. भमोरा | Cornus capitata wall | फल खाये जाते है। |
| 2. कटःफल, काफल | Myrica nagi Thub. | फल खाये जाते है। |
| 3. चूलू | Prunus armeniaca Linn. | फल खाये जाते है एवं गिरी का तेल बनाते है। |
| 4. हिंसालू, हींस | Rubus elli | फल खाये जाते है। |
| 5. जामुन, फलेण्डा | Syzygium jambos Alst. | फल खाये जाते है। |
| 6. शहतूत, केमू | Morus alba Linn. | फल खाये जाते है। |
| 7. तिमला, तिमुलु | Ficus roxburghii Wall. | फल खाये जाते है। |
| 8. वेडू, अंज्जीर | Ficus palmata Forsk | फल खाये जाते है। |
| 9. किनगोड़ | Berberis lycium Royle | फल खाये जाते है। |
| 10. किनगोड | B. asiatica Roxb. | फल खाये जाते है। |
| 11. खेना | Ficus saemocarpa Miq | फल खाये जाते है। |
| 12. आडू, आरूक | Prunus persica Benth | फल खाये जाते है। |
| 13. पुलम | Prunus communis Hus | फल खाये जाते है। |
| 14. मेहल | Prunus pashia Ham. | फल खाये जाते है। |
| 15. खिंगारू | Cotoneaster microphylla Wall. | फल खाये जाते है। |
| 16. खजूरी | Phoenix humilis Royle. | फल खाये जाते है। |
| 17. खड़िक | Celtis australis Linn. | फल खाये जाते है। |

**5. शाक में उपयोगी वनस्पतियां :**

| | | |
|---|---|---|
| 1. वरमूला | Megacarpaca polyandra Benth | पत्तों का शाक खाया जाता है। |
| 2. जरगू | Phytolacca latbenia Hans | पत्तों का शाक खाया जाता है। |
| 3. कण्डाली | Girardiana diversifolia Eriss. | पत्तों का शाक खाया जाता है। |
| 4. तैड़, तैडू | Dioscora belophylla Voigh. | मूलकन्द उबालकर खाये जाते है। |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

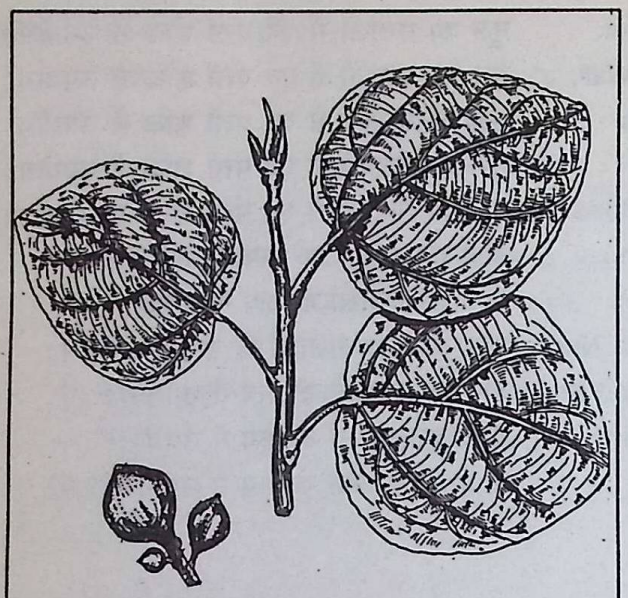

*तिमुल (Ficus roxburaghii Wall)*

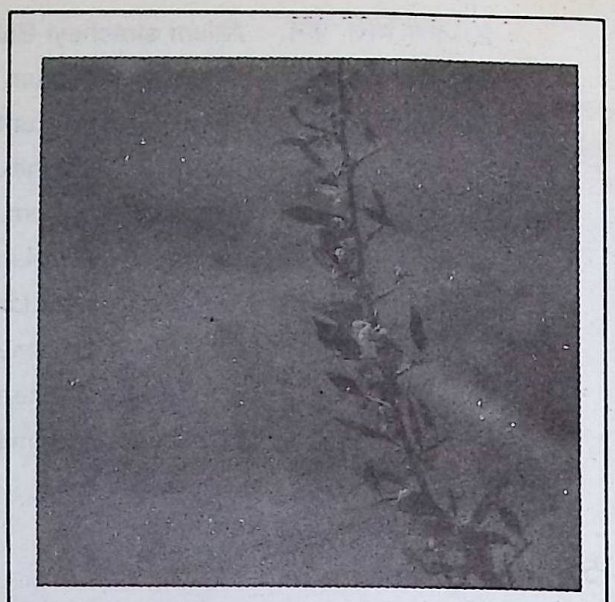

*भेकल (Prinsepia utilis Royle)*

| | | |
|---|---|---|
| 5. कांचनार, ग्वीरियाल | Bauhinia purpurea Linn. | पुष्प कलिका का शाक खाया जाता है। |
| 6. लिंगडू | Pteridium aquilium | इसके पर्णाग (कोपलो) की शब्जी बनाई जाती है। |
| 7. तिमला, तिमुल | Ficus roxburghii Wall. | कच्चे फलो का शाक खाया जाता है। |
| 8. साकिना, साकिनू | Indigofera heterantha Wall. | पुष्प कालिका का शाक खाया जाता है। |
| 9. मीठीनीम, कढ़ीपत्ता | Murraya koenigie Spreng | पत्ती का उपयोग दालों में किया जाता है। |
| 10. कोटू, ओगल, | Fagopyrum esculentum Moen. | पत्तों का शाक एवं बीजों का आटा बनाते है। |
| 11. चौलाई, मारच्छा | Amaranthus blitum Linn. | पत्तों का शाक एवं बीजों का आटा बनाते है। |

**6. धरेलू चिकित्सा में उपयोगी स्थानिक जड़ी बूटियाँ।**

| | | |
|---|---|---|
| 1. वच, वज | Acorus calamus Linn. | मूल (राईजोम)। |
| 2. मीठाविष, मिठू | Aconitum falconeri Stapf | मूलकन्द। |
| 3. अतीस | Aconitum heterophyllum Wall | मूल–कन्द। |
| 4. किनगोड़ | Berberis aristata DC. | रसौंन्त (धन)। |
| 5. तोतरो | Berberis chitria Royle | रसौन्त(धनसत्व)। |
| 6. मांसी | Nardostachys jatamansi DC | भौमिककाण्ड़। |
| 7. सुमयां, तगर | Valeriana wallichii DC | मूल। |
| 8. हत्थाजड़ी | Dactylorhiza hatagirea | मूल। |
| 9. सालमपज्जा | Orchis latifolia Linn. | मूल। |
| 10. ढोलू, आर्चा | Rheum emodi Wall | मूल। |
| 11. ढोलू, आर्चा | Rheum webbianum Royle. | मूल। |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | |
|---|---|---|
| 12. कड़वी, केदारीकडू | Picrorhiza kurroa Royle | मूल–काण्ड। |
| 13. चिरैतू | Swertia chirata Buch-Ham | पञ्चांग। |
| 14. टिमरू | Zanthoxylum alatum Roxb | बीज, छाल। |
| 15. वन्पशा | Viola serpens Wall | पुष्प, पत्र। |
| 16. निर्गुण्डी–सिमारू | Vitex negundo Linr.. | पत्ते। |
| 17. धौलु, धाय | Woodfordia fruiticosa Kurz. | पुष्प। |
| 18. धूप, गूगल | Jurinea macrocephala Benth. | मूल। |
| 19. भेंकल | Prinsepi utilis Royle. | बीज–तैल |
| 20. ब्रह्मकमल | Saussurea obvallata. | पुष्प। |
| 21. भिडुंण | Ampelocissus latifolia | फल। |
| 22. बकरोली | Osyris wighiana | पत्तियाँ उबालकर चायपत्ती के रूप में उपयोग। |
| 23. शेल्डू, कपूरकचरी | Hedychium spicatum Ham | मूलकन्द। |
| 24. विसभस्या | Andrachne cordifolia | इसकी पत्तियों को विच्छू काटने पर लगाते है। |
| 25. तंगलों, तुंगला, | Rhus parviflora | पत्तियों को सुखाकर तम्बाकू के रूप में प्रयोग। |
| 26. हेमर | Alnus sp. | इसकी छाल का उपयोग सन्धिविच्युति एवं अस्थिभग्न में प्लास्टर के रूप करते हैं। |
| 27. पद्मक, पंया | Prunus cerasoides D. Don. | काष्ठ। |

इसी प्रकार दहिया, नीलकंठी मंजीठू, बेल, कूजा आदि वनस्पतियां उपयोगी हैं।

## उत्तराखण्ड से प्राप्त पशु-चारा में उपयोगी पेड़-पौधे

समस्त उत्तराखण्ड के जनपदों में मवेशियों के लिए हरा चारा जलवायु के अनुसार हर मौसम में कैसे सुलभ हो यह एक समस्या इन पर्वतीय आंचलों में दिनोदिन बढती जा रही है। इस समस्या का निदान तभी सम्भव होगा कि पशु–चारा में उपयोगी वृक्षों, गुल्मों का बड़े पैमाने पर रोपण किया जाय ताकि हर मौसम में मवेशियों को चारा उपलब्ध हो सके। इस दिशा में उत्तराखण्ड सेवा निधि, अल्मोड़ा ने कुछ महत्वपूर्ण सामग्री पेड़ों से वर्ष भर चारा कैसे प्राप्त करें, प्रकाशित की हैं। कतिपय सन्दर्भ साभार पाठकों की जानकारी हेतु इस तालिका में अंकित किया गया है जो निम्न प्रकार से है :

| क्र. स. | स्थानिक नाम | प्रवृत्ति | स्थानिक प्रयोग |
|---|---|---|---|
| 1. | कीमू | पतझड़ | पत्तियां चारे के लिये। |
| 2. | वेडू, अज्जीर | पतझड़ | फल खाये जाते है। |
| 3. | वर, वरगद | सदाबहार | पत्तियों का उपयोग पत्तल के लिये |
| 4. | रियांज, सांज | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 5. | वांज | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 6. | फलियान्ट, हरिज्ज | सदाबहार | पशुचार में उपयोगी |
| 7. | तिलांज, मोरू | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 8. | खरसू, खरू | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 9. | खडिक, खर्क | पतझड़, | पशुचारा में उपयोगी |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

खरसू, खरू *Quercus semecarpifolia*

खडिक *Celtis australis Linn.*

| | | | |
|---|---|---|---|
| 10. | काकड़ा, काकड़ी | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 11. | कचनार, गुरियाल | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 12. | खागसा, खागसू | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 13. | तिमुल, तिमला | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 14. | गरूवा गैर, गौल्ड | पतझड़ | पशुचारा में उपयोगी |
| 15. | शहतूत, केमू | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 16. | सांदन, तिनिश | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 17. | गूलर | पतझड़ | पशुचारा में उपयोगी |
| 18. | खैना, खनिया | सदाबहार | पशुचारा में उपयोगी |
| 19. | च्यूरा | पतझड़ | लघु उद्योग में महत्वपूर्ण वृक्ष है। बीजों से प्राप्त तैल से मोमबत्ती बनाई जाती है। |
| 20. | भीमल, म्यूंल | पतझड़, | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 21. | फरसैन | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 22. | वहेड़ा | पतझड़ | पशुचारा में उपयोगी |
| 23. | धव, धौड़ी, वांकली | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 24. | कुश्म, गोशम | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 25. | वदर, वेर | सदाबहार | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 26. | कठवेर | सदाबहार | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 27. | गया | सदाबहार | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 28. | गेंठी | सदाबहार | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 29. | मेहल, मोहल | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 30. | सियांस, स्यांरू | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 31. | चमलई | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 32. | कंणदी | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | |
|---|---|---|---|
| 33. | करंज्ज, करौज्ज, | सदाबहार | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 34. | चनचारी | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |
| 35. | दादुल, दुधला | पतझड़ | पशुचारा, कुटीर उद्योग में उपयोगी |

इनमें फलियांट (क्विरकस ग्लोका), खरसू (क्विरकस सेमिकर्पिफोलिया) तिलांज, मोरू (क्विरकस प्लोरीवण्डा), रियांज, सांज (क्विरकस लानीजियोसा) 2,000 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,000 मीटर की ऊँचाई पर सदाहरित वृक्ष पाये जाते हैं।

उत्तराखण्ड में विभिन्न उंचाईयों पर अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती है। पशुचारा में वृक्ष, गुल्म, लता झाड़ी, घास आदि मुख्य हैं। वर्षा के समाप्त होने पर सूखे के कारण कतिपय जनपदों में पशुचारे की बड़ी समस्या है। इसलिये जलवायु के अनुसार ग्रामीण अंचलों में पशुचारा के उपयोगी उपरोक्त वृक्षों का रोपण योजनाबद्ध तरीके से किया जाय।

## पर्यावरणविद् सुन्दरलाल बहुगुणा के विचार ''पर्यावरण संन्तुलन में वृक्षारोपण एवं जल स्रोतों का संरक्षण।''

(अमर उजाला ब्यूरो)

श्रीनगर (गढवाल) 25 जुलाई। चिपको नेता सुन्दरलाल बहुगुणा ने कहा है कि पर्यावरण के संतुलन एवं विकास की सही दिशा में आगे बढ़ने के लिए भूमि उपयोग में परिवर्तन करना पड़ेगा एवं वृक्षारोपण को बढावा देना होगा। उन्होने कहा कि धरती पर जब मिट्टी और पानी बढ़ेंगे तभी वास्तविक विकास होगा। इसके लिए पृथ्वी को वनों से आच्छादित करना होगा पूरे क्षेत्र पर ऐसी वनस्पतियां उगाई जायें जो जल स्रोतों को पुनजीर्वित कर सके और मिट्टी के क्षरण को रोककर उपजाऊपन को बढ़ा सकें।

चिपको नेता यहां अपनी जन सम्पर्क एवं लोकशिक्षण यात्रा के दौरान जिला परिषद के पूर्व सदस्य एवं पत्रकार धर्मानन्द उनियाल के निवास पर पत्रकारों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं से बातचीत कर रहे थे। बहुगुणा ने कहा कि जल स्रोतों के संरक्षण के लिए आवश्यक है कि प्राकृतिक रूप से उगने वाली झाड़ियों और पेड़ों जैसे बांझ, बेडू, हिसांलु, सिस्यारू, तिमला, जंगली गुलाब (कुंज), साल आदि को पुर्नजीवित किया जाये तथा जल स्रोतों के आसपास के क्षेत्र को दूर तक संरक्षित किया जाये। चिपको नेता ने कहा कि लोगों का जीवन सम्पन्न हो, इसके लिए आवययक है कि पूरे क्षेत्र में चाहे वह सुरक्षित वन क्षेत्र हो, सिविल स्वयं वन हों या तीखे ढलानों पर निजी खेती का क्षेत्र हो, उसमें खाद्य चारा और रेशा देने वाले वृक्षों की खेती की जाये।

उन्होने कहा कि प्राचीन काल में यहाँ सघन वन थे। अंग्रेजी हकुमत ने इन वनों को लकड़ी की खान में बदल दिया इससे मिट्टी का क्षरण शुरू और पानी का संरक्षण समाप्त हो गया।

उन्होने कहा कि पहाड़ की सम्पदा को लौटाने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक परिवार कम से कम तीन सौ वृक्ष जैसे अखरोट, पांगर, पिकननट, बादाम शहद देने वाले पदम व मौसमी फल वाले लगाये 1500 वृक्ष चारा प्रजाति के 200 रेशा प्रजाति के लगाये। पौधे वही लगने चाहिए जो लोगों को स्थायी रोजगार–फल, फूल, पत्ते आदि दे। और पेड़ खड़ा रहे इस प्रकार की योजना को सफल बनाने के लिए सरकार को चाहिए कि निजी खेती पर वृक्ष लगाने वालों को अनाज के रूप में मुआवजा दे।

बहुगुणा ने कहा कि विकास का बुनियादी मतलब मिट्टी पानी की वृद्धि होनी चाहिए। मिट्टी और पानी बढ़ेगे तो विकास होगा। उन्होने कहा कि भूमि उपयोग पर सबकी एक राय होनी चाहिए। बहुगुणा ने कहा कि विचार की दृष्टि से समाज में एक प्रकार की जड़ता आ गई है। आज हमारे गांवों में स्कूल, अस्पताल और सड़कों को विकास का पैमाना माना जा रहा है। जबकि पर्यावरण की उपेक्षा की जा रही है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# तृतीय भाग

# खनिज प्रकरण

## उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध औषधोपयोगी खनिजों का महत्व

औद्भिज द्रव्यो के साथ–साथ पार्थिव द्रव्यों (खनिजों) का उपयोग आर्षकाल से चला आ रहा हैं। चरक, सुश्रुत आदि संहिता ग्रन्थों में खनिज द्रव्यों का उल्लेख मिलता हैं। पार्थिव द्रव्यों का उपयोग इस शास्त्र के विकास के साथ–साथ अधिक होने लगा हैं। रस सिद्धो ने प्रायः सभी रोगों की चिकित्सा में खनिजद्रव्यों का विशेष रूप से उपयोग करने का यत्न किया हैं। खनिज द्रव्यो में लौह, महारस, साधारण रस, उपरस, रत्न और उपरत्न आते हैं। लौहवर्ग में धातु जिसे Metal कहते हैं, उनका समावेश हैं। यथा–स्वर्ण, रौप्य, ताम्र (तांवा), त्रपु (बंग), सीस (नाग) आदि द्रव्य हैं। महारसवर्ग में माक्षिक, विमल, शिलाजीत, चपल, खर्पर, तुत्थ, हिंगुल, अभ्रक एवं स्त्रोतोज्जन है। उपरस वर्ग में गन्धक, हरताल, मैनशिल, टंकण (सोहागा), फिटकारी, कासीस, गेरू आदि खनिज हैं। रत्नवर्ग में हीरा, मोती, पन्ना, लहसुनियाँ, गोमेद, माणिक, नीलम, पुखराज आदि रत्न हैं। उपरत्नवर्ग में वैक्रान्त सूर्यकान्त, पैरोजा, लाजवर्द और स्फटिक हैं। लवणवर्ग भी पार्थिव द्रव्यों मे हैं।

इस प्रकार से लौहवर्ग में सुवर्ण (सोना), रजत (चाँदी) ताम्र (ताँबा), बंग, नाग, यशद और अयस (लोहा) हैं। पीतल और काँस्य ये ताम्रप्रधान मिश्रलौह हैं। माक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, तुत्थ आदि ताम्रप्रधान मिश्रलौह हैं। सिन्दूर, मुरदासंग तथा सफेदा ये नाग से बनाये जाते हैं। सौवीराज्जन नागधातु का खनिज हैं। मण्डूर, विमल, कासीस, गैरिक, अभ्रक और शिलाजतु ये लौह के विकार या धातु हैं। सुधा (चूना), सुधा प्रधान खटिका, गोदन्ती एवं सफेद सुरमा हैं। सिकता में दुग्धपाषाण जहरमोहरा और हजुलयहुद आदि आते हैं।

इस प्रकार से आयुर्वेद में लौह धातु (खनिजो) का विषेश महत्व हैं। शतपथ ब्राह्मण सांहित्य में भी स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह और सीसा (नाग) इन पाँच धातुओं का उल्लेख मिलता हैं। यजुर्वेद आदि वैदिक ग्रन्थों में भी अश्म (पत्थर), मृतिका(मिट्टी), सिकत्ता (बालु), हिरण्य (सोना), लौह, त्रपु (वंग) सीसा (नाग) आदि धातुओं का उल्लेख मिलता हैं।

### खनिज द्रव्यों का वर्गीकरण

रसशास्त्र में पारद का किसी वर्ग में अंतर्भाव न कर उसको स्वतंत्र द्रव्य माना है। अन्य खनिज द्रव्यों का लोह, महारस, साधारण रस, उपरस, रत्न और उपरत्न इन छः प्रधान वर्गो में वर्गीकरण किया गया है यथा–

**1. लोह वर्ग :** प्राचीनकाल में जिन खनिजों में लोह धातु विधमान रहता है उन्हें धातु (मेटल) कहते हैं। सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, तीक्ष्ण (अयस्), त्रपु (वंग), सीस (नाग) और वैकान्त इन सात लोहों के खनिजों का स्वरूप लिखकर उनको स्वर्णधातु, रूप्यधातु, तीक्ष्णधातु, ताम्रधातु, त्रुधातु, सीसं धातु और वैक्रान्तक धातु नाम दिये हैं। संस्कृत भाषा में अयस् के लिए लौह शब्द का व्यवहार होता है। रसार्णव में सुवर्ण और रौप्य को शुद्धलोह, ताम्र और अयस् को साधारणलोह, तथा नाग और वंग को पूतिलोह नाम देकर छः प्रकार के अमिश्र लोहों का वर्गीकरण किया है। रस सिद्धों ने खर्पर से जस्ता निकाल कर जस्ते को भी लोहों में स्थान दिया। भारतीय रस–सिद्धों ने स्त्रोतोंज्जन से नाग (एन्टीमनी), फिटकरी से कांशीसत्व (एल्युमुनियम) और चपल से चपलसत्व ( विस्मिथ या सोलिनियम) इन लोहों का भी आविष्कार किया, परन्तु उनका प्रचार रससिद्धों में धातुवाद तक ही सीमित रहा। चिकित्सा एवं जन–साधारण में इसका प्रचार नहीं हुआ। यथा–

**सुवर्ण रजतंताम्रं, तीक्ष्णवंगो भुजंगमः।**
**लोहं तु षड्विधं प्रोक्तं यथापूर्व तदासयम्।।** *(रसार्णव)*
**सुवर्ण रजतं ताम्रं वंगं यशद सीसकम्।**
**लोहं चेते मताः सप्तः धातवों गिरिसम्भवा।।** *(आ.प्र.अ.)*


Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**2. महारस वर्ग :** रसार्णव में माक्षिक–स्वर्णमाक्षिक (कापर या यशद), विमल, शैल (शिलाजीत), चपल, रसक (खर्पर) सस्यक (मयुरतुत्थ), हिंगुल और स्त्रोतोज्जन इन आठ द्रव्यों को महारस नाम दिया है। रसेन्द्रचूणामणि में अभ्रक, राजावर्त, वैक्रान्त, सस्यक (मयूरतुत्थ) विमल, शिलाजीत, तुत्थ (खर्पर) और माक्षिक इन आठ द्रव्यों की महारसों में गणना की है। रसार्णवोक्त चपल, हिगुंल और स्त्रोतोज्जन के स्थान पर सोमदेव विरचित रसेन्द्रचूड़ामणि में अभ्रक, राजावर्त और वैक्रान्त को महारसों में रखा है। इससे स्पष्ट है कि इन दोनों में मतैव्य नहीं हैं, सोमदेव ने सम्यक का मयूरतुत्य एवं तुत्थ से खर्पर अर्थ किया है। यथा–

**माक्षिको विमलः शैलश्चपलो रसकस्तथा ।**
**सस्यको दरदश्चैव, स्त्रौताज्जनमयाष्ठमम् ।।** *(रसार्णव पटल 73)*

**3. उपरस वर्ग :** रसार्णव में गन्धक, हरताल, मैनशिल, फिटकरी, कासीस, गेरू, राजावर्त और कंकुष्ठ इन आठ द्रव्यों को तथा रसेन्द्रचूड़ामणि में गन्धक, हरताल, फिटकारी, मैनशिल, सोबीराज्जन, ककुंष्ठ, कासीस, और गेरू इन आठ द्रव्यों को उपरस नाम दिया है। आयुर्वेद प्रकाश में गन्धक, हिंगुल अभ्रक, हरताल, मैनशिल, स्त्रोतोज्जन, टंकण, लाजवर्द, चुम्बक, पत्थर, खड़िया, मिट्टी, गेरू, कासीस, शंख, कपर्द, फिटकरी (कांक्षी) इन सब की उपरसों में गणना की है। यथा–

**गन्धक स्तालक शिला सौरष्ट्री खगैरिकम् ।**
**राजावर्तश्च कंकुष्ठमष्ठावुपरसास्मृताः ।।** *(रसार्णव पटल 73)*
**गन्धक हिगुंलुमभ्रतालक शिलाः स्त्रोतोज्जनटंकण राजावर्तक चुम्बको च स्फटिका शंख गैरिकम्।**
**कासीसं रसकः कपर्द सिकता बोलाश्च कंकुष्ठकं सोराष्ट्री च मता अमीउपरसः।।** *(आयुर्वेदप्रकाश)*

**4. साधारणरस :** कर्मला (कम्पील्लक), चपल, संखिया, नौसादर, कपर्द (कौड़ी), अम्बर, गिरिसिन्दूर, और मूर्दासिंग इन आठों को रसेन्द्र चूड़ामणी में साधारण रस कहा है। यथा–

**कम्पिल्लश्चपलोगौरी पाषाणो नरसारकः ।**
**कपर्दो वह्निनारश्च गिरिसिन्दूर हिंगुलो ।।**
**मृदारश्रृंग मित्यष्ठौ, साधारण रसास्मृताः।** *(र०चू०म०)*

**5. रत्नवर्ग :** हीरा, प्रवाल, मोती, पन्ना, लहसुनियां, गोमेद, माणिक, नीलम और पुखराज ये नवरत्न कहलाते हैं।

**6. उपरत्न :** वैक्रान्त, सूर्यकान्त, चन्द्रकान्त, पैरोजा, लाजवर्द और स्फटिक आदि की गणना उपरत्नों में की गई है।

इन वर्गो में खनिज द्रव्यों के साथ कम्पिल्लक (कमीला), बोल जैसे उद्भिज तथा अग्निजार जैसे प्राणिज द्रव्यों की गणना भी की गई है। अतः रसशास्त्र में भी द्रव्यों के वर्गीकरण में मतेव्य नहीं हैं। इस दिशा में शोध कार्य अपेक्षित हैं।

**पारद :** रस शास्त्र में धातुवर्ग का अधिक उपयोग होता है। धातुओं के मारण (भस्म) एवं क्षारीकरण द्वारा उनके स्वरूप में परिवर्तन आता है। धातुओं के मारण में जड़ी–बूटियों का उपयोग उनके स्वरस एवं क्वाथ से भावना देने के रूप में होता है और इन औषधियों में चन्द्र आदि ग्रह, पुष्प आदि नक्षत्रों के सम्पर्क से विशिष्ट गुणों का उत्पन्न होना पाया जाता है। पारद को स्वेदनादिवेधन पर्यन्त 18 संस्कारों द्वारा संस्कृत होने पर इस कार्य के लिए उपयोगी जान्कर शरीर पर प्रयोग करने पूर्व उसकी धातुवेध द्वारा परीक्षा की जाती है। 18 संस्कारों से संस्कृत पारद ताम्र एवं वंग धातु को स्वर्ण और चांदी के रूप में अपनी धातुवेध शक्ति द्वारा परिवर्तन कर सकता है। उन सिद्ध पुरूषों ने अभ्रक, हरिताल, मनःशिला और स्वर्णमाक्षिक आदि के उपयोग से पारद में वेध शक्ति उत्पन्न की ओर फिर उस पारद से अनेक प्रकार की रसौषधियों का निर्माणकर उनको मुख में धारण करने के योग्य तैयार कर आरोग्य प्राप्ति के योग्य बनाया है। सिद्ध सम्प्रदाय के आज भी कुछ वैद्य विद्यमान हैं। यदि उनकी सहायता से शैल और नाथ सम्प्रदाय के रसशास्त्रज्ञ अनुसंधान कार्य करें तो भारतीय रस–शास्त्र अवश्यमेव विशेष रूप से समुन्नत हो सकता है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लेखक को उत्तराखण्ड हिमालय के वनौषधि सर्वेक्षण काल के समय कतिपय खनिजों की उपलब्धता के विषय में जो आँकडे उपलब्ध हुए हैं। उनकी संक्षिप्त जानकारी यहाँ पर दी गई है। आशा है कि इन खनिजों का विस्तृत सर्वेक्षण कर औषधोपयोगी दिशा में शोध कार्य की अधिक आवश्यकता है। भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षणों के आँकडों का अध्ययन कर आयुर्वेद चिकित्सा की दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धी होगी। इसी आधार पर उत्तराखण्ड के जनपदों में उपलब्ध खनिजों की संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार से है।

मुगल काल में गढ़वाल हिमालय लोहा एवं ताँबे की खानों के लिए प्रसिद्ध था। बछणस्यूँ के चाकू, खुंकरी एवं तलवारो की बड़ी माँग थी। सन् 1842 में कैप्टेन एच० ड्रमण्ड ने इंग्लैड के अनुभवी खनिजवेत्ता विलकिन की सहायता से इस क्षेत्र का सर्वे किया तथा खनिजों के सन्दर्भ में विवरण कुमाऊँ के कमिश्नर श्री जी०टी० लुशीनगटन को प्रस्तुत किये।

सन् 1865 में गढ़वाल में 24 लोहे, 9 ताँबे एवं 2 शीशे की खानो पर काम चलता था। 33 लोहे, 35 तांबे और 3 शीशे की खाने छोड़ दी गई थी। क्योंकि यातायात के साधनों का अभाव, दुर्गम पर्वत शिखरों एवं ईधन तथा श्रमिको की दुर्लभता इसका मुख्य कारण थे।

नवीन भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण के आधार पर उत्तराखण्ड हिमालय क्षेत्र में पाये जाने वाले खनिजो को हम दो भागो में बाँट सकते हैं।

1. गढ़वाल हिमालय में उपलब्ध खनिज
2. कुमाऊँ हिमालय में उपलब्ध खनिज

## गढ़वाल हिमालय में उपलब्ध खनिज

**1. जिप्सम (GYPSUM) :** यह खनिज देहरादून जिले, गढवाल के खरारीधाट, जरमोला एवं लक्षमणझूला के निकटवर्ती क्षेत्रों में उपलब्ध हैं। खरारीघाट जरमोला में अनुमानतः 1,58,504 टन जिप्सम का भण्डार हैं।

इसका खनिज का उपयोग प्लास्टर आफ पेरिस एवं पोर्टलैण्ड़ सीमेन्ट बनाने में किया जाता हैं।

**2. चूना पत्थर (LIME STONE) :** गढ़वाल क्षेत्र में चूने की चट्टाने मुख्यत मन्थाली क्षेत्र में 5 कि० मी० लम्बी पट्टी, ऋषिकेश के नजदीक 206 टंन का भण्डार उपलब्ध हैं। यहाँ का चूना पत्थर मुख्यतः कैल्केरीनाइट प्रकार का हैं। इसका उपयोग सीमेन्ट बनाने में किया जा सकता हैं। इसके अतिरिक्त मसूरी के पास लम्बीधार क्षेत्र में 80 लाख टन एवं छोरापिठी पहाड़ी में 12 मिलियन टन चूना पत्थर संचित हैं। लम्बीधार में संगमरमर की चट्टाने भी उपलब्ध हैं।

**3. टाल्क (TALK) :** यह खनिजों में सबसे मुलायम (कठोरता) हैं। इसे स्टीयेटाइट और सोपस्टोन भी कहते हैं। यह चमोली जिले में पिण्ड़र–काली गंगा धाटी में तथा अलकनन्दा धाटी में तोरसी, बेलाकुची और हयूमा के पास उपलब्ध हैं।

इसका उपयोग मुख्यत श्रृंगार साधनो, रंग बनाने में होता है। मैसिव (Massive) स्टीयेलाइट का उपयोग बिजली के स्विच बोर्ड में भी होता है।

**4. एसबेस्ट्स (ASBESTUS) :** यह खनिज गढ़वाल में परकण्डी, साटिना, गोनियाला, कण्डारा, ऊखीमठ तथा जोशीमठ में मिलता है। यह रेशमी रेशों के रूप में आग्नेय अल्ट्राबेसिक चट्टानो के सम्बद्व होता हैं। मन्दाकिनी नदी के किनारे चन्द्रापुरी के पास भी इसकी बैल्ट उपलब्ध है।

इस खनिज का उपयोग भवन की छतो, रस्सी बनाने एवं अग्निशामक कपड़ो के निर्माण में भी होता है। ग्रामीण लोग इसे औषधि के रूप में घावों की ड्रेसिंग जलने की चिकित्सा तथा दीपक के लिए बत्ती (विक) बनाने के लिए प्रयोग में लाते है।

**5. फिटकरी (एलम) (ALLUM) :** यह खनिज पौड़ी जिलें के कुछ भागो में मिलता हैं। यह एन्टीसैप्टिक गुण युक्त हैं तथा रक्त के बहने को बन्द करती हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**6. आर्सेनोपाइराइट (ARSENOPYRITE) :** मकू के नजदीक गढ़वाल जिले में कुछ स्थानो की चट्टानों में इसकी छोटी–छोटी शिरायें पायी गई हैं। इसका उपयोग कीटनाशक दवाओ एवं खरपतवार नाशक दवाओं में होता है।

**7. फास्फोराइट (PHOSPHORITE) :** यह खनिज दुरमाला क्षेत्र तथा माल देवता क्षेत्र में संचित हैं। सर्वेक्षण के अनुसार मालदेवता क्षेत्र में 5 मिलियन टन फास्फोराइट संचित हैं तथा दुरमाला में 3-4 मिलियन टन फास्फोराइट का भण्डार उपलब्ध है।

फासफेट का उपयोग उर्वरक (खाद) के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसको दियासलाई बनाने में भी प्रयोग किया जाता है।

**8. कापर, सीसा एवं जस्ता (COPPER, LEAD, ZINC) :** इन खनिजों की चट्टाने उत्तरकाशी,पौड़ी एवं चमोली जिले के पोखरी, मोहनखाल तथा धनपुर क्षेत्र में पायी गई हैं। चमोली जिले के आगर चट्टी, चौखुटिया व गैरसैण क्षेत्र में ताँबा, सीसा व जस्ता पाया जाता है। सीसे के एक टन से 1.31 से 3.04 औंस तक चाँदी की प्राप्ती होती है।

जे. एन. ढौडियाल (इंडी. मिन. वॉल्युम 3 पृ. 5-8,1977) के अनुसार गढ़वाल के दूधातोली पहाड़ के दक्षिण भाग में पायी जाने वाली चट्टानो में चाँदी जस्ता व सीसे की विद्यमानता है।

बी. के. श्रीवास्तव (इंडि. मिन. वॉल्युम 3 पृ. 48-50, 1978) ने उत्तरकाशी जिले के पिण्डकी गाँव से लगभग 1 कि. मी. द. पू. में विद्यमान नाइस में क्वार्ट्ज शिराओ में जस्ता, चाँदी व सीसे की उपस्थिति बताई हैं।

इसके अतिरिक्त कुनेत, बगौरी, कपरौली, अगरोड़ा, असेना, कोटी, डागर, धनकोट, डाँड़ाखाल एवं कंधारा में ताबें की खाने हैं। जिन पर अभी तक कार्य नही किया गया है। इसी तरह नागपुर में उत्तम श्रेणी का शीशा उपलब्ध है परन्तु दुर्गमता के कारण उसका निकाला जाना अति कठिन है। गढ़वाल में पिन्दकी तथा धनपुर के तछीरा स्थान पर चाँदी मिश्रित शीशे की कच्ची धातू उपलब्ध बताई जाती है।

**9. ग्रेफाइट (GRAPHITE) :** गढ़वाल की पट्टी लोहवा के कर्णप्रयाग, ग्बालदम मार्ग पर पाया जाता है। और वहाँ उसे रंग के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

**10. गंधक (SULPHER) :** गढ़वाल में गंधक के दो स्रोत पाये जाते हैं। प्रथम नागपुर परगने के हिमाच्छादित पर्वत माला में स्थित मदमहेश्वर मन्दिर के उत्तर पूर्वी भाग में तथा दूसरा अलकनन्दा संगम से 2 मील ऊपर है। तथा देहरादून में सहत्रधारा में भी गंधक के स्त्रोत है।

**11. मैग्नेसाइट (MAGNESITE) :** यह खनिज गढ़वाल की चूनामय चट्टानो में मिलता हैं। लेंसाकार मैग्नेसाइट चमोली जिले के अलकनन्दा घाटी में लगभग 130 कि. मी. लम्बाई में उपलब्ध है।

**12. यूरेनियम (URANIUM) :** जी. एच. भटनागर, वाई. सी. शर्मा, ए. के. भट्टाचार्य (1981) ने टिहरी गढ़वाल जिले के ब्रिजरानीगाड और रौसाल के आसपास मेटामारफिक (कायान्तरित) शैलो में यूरेनियम की उपस्थिति बताई हैं। यूरेनियम की मुख्य विद्यमानता भिलंगनाघाटी के ब्रिजरानीगाड और कोयलाखाल के बीच पायी जाने वाली प्लोराइट युक्त ग्रेनाइट नाइस और शिस्ट चट्टानों में है। यहाँ के यूरेनियम अयस्क के रासायनिक विश्लेषण से पता चला है कि इसमें 0.3% यूरेनियम आक्साइड ($U_3O_8$) तथा .005% थोरियम आक्साइड ($ThO_2$) मौजुद है।

## कुमाऊँ हिमालय में उपलब्ध खनिज

कुमाऊँ हिमालय में मुख्यतया मैग्नेसाइट, डोलोमाइट, स्लेट (पेविग्स्टोन) टाल्क, चूना पत्थर, ताँबा, सीसा, पाइराइट, ग्रेफाइट, जिप्सम आदि खनिजों के भण्डार उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त जो खनिज गम्भीरता ढूंडे नही गये हैं वे हैं गार्नेट, कायनाइट, बैराइट, यूरेनियम, एसवेस्ट्स आदि।

**1. मैग्नेसाइट (MAGNESITE):** भारत के सबसे विशाल मैग्नेसाइट भण्डार कुमाऊँ क्षेत्र में गंगोली घाट शैल समूह में काली नदी से लेकर पिण्ड़र नदी तक फैले हुए है। इस खनिज की एक पेटी बीसा बजेड़, चण्डाकबश्ती,



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

धारीगाँव के साथ रियामट, गणई फड़यारी व धूराफाट तक फैली हुई हैं तथा दूसरी पेटी पूर्व में पन्थसेरा, गेड़ासी, डुंगरी, देवलथल से बुंगाछीना तक फैली हुई हैं। इसके अतिरिक्त क्षिरौली–देवलधार में 79 लाख टन, गिरिछिना क्षेत्र में 35 लाख टन, काण्डा क्षेत्र में 67 लाख टन, पुंगरघाटी 122 लाख टन, लहौरघाटी में 129 लाख टन की मात्रा में मैग्नेसाइट उपलब्ध है।

मैग्नेसाइट के निम्न उपयोग हैं।

i. यह तापरोधी (रिफ्रेक्ट्री) ईटो के रूप में प्रयोग किया जाता हैं।

ii. कार्बन डाई आक्साइड के निकालने पर इससे कास्टिक मैग्नेशियम बनता हैं।

iii. मैग्नेशियम को अल्युमिनियम, जस्ता, ताँबा या निकल से मिश्रधातु (अलांय) बनाये जाते हैं। एल्यूमीनियम एवं मैग्नेशियम का अलाँय हवाई जहाजों, हैलीकाप्टरो तथा मोटरकारों के ढाँचे बनाने के काम आता हैं।

iv. मैग्नेसाइट का प्रयोग अनेक प्रकार के मैग्नीशियमी रसायन बनाने में किया जाता हैं।

v. मैग्नेशियम बाई सल्फाइड व मैग्नेशियम हाइड्रऑक्साइड भी बनाये जाते हैं।

**2. टाल्क (Talk):** कुमाऊँ में जिन स्थानो पर टाल्क भण्डारो का दोहन हो रहा हैं उनमें जखेरा, आगर–गिरछीना, लाहौर घाटी, बदौलीसेरा, पचार पुंगर घाटी, खूना, पैंया–पौड़ी, देवलथल तथा भुवाली आदि मुख्य है। मैग्नेसाइट एवं टाल्क का घनिष्ट सम्बन्ध है अतः दोनो साथ–साथ मिलते हैं।

टाल्क का उपयोग श्रृंगार–सामग्री बनाने के लिए किया जाता हैं। कीटनाशक के रूप में किया जाता हैं। राडार, रेडियो, टेलीवीजन आदि विद्युत उपकरणों में हाई फ्रिक्वेन्सी इन्सुलेटर के रूप में प्रयोग किया जाता हैं।

**3. चूना पत्थर (LIME STONE):** कुमाऊ क्षेत्र में चूना पत्थर के विशाल भण्डार उपलब्ध हैं। सौर शैल समूह, गंगोली हाट शैल समूह, पश्चिम के मन्धाली के समतुल्य हैं।

पिथौरागढ़ में इसकी तीन पेटियाँ मिलती हैं। एक पट्टी धरमधर के उत्तर से लेकर रामगंगा घाटी में मौलड़ा तक फैली हुई हैं। इस पट्टी में 34 लाख टन चूना आँका गया हैं।

दूसरी पट्टी बेरीनाग के द. प. में पोस्टला तथा कुल्थौरगाड़ तक फैली हुई हैं। इसमें लगभग 160 लाख टन चूना पत्थर संचित हैं। तीसरी पट्टी गंगोली क्षेत्र में नारगोल गाड़ से बगौर, चौनाला होते हुए सुईतोला तक 13 कि. मी. लम्बी व 30 मीटर चौड़ाई तक हैं।

अनेक स्थानों पर चूना पत्थर संगमरमर में परिणित हो गया हैं। बैजनी रंग के फाइलाइट के संग अन्तः संस्तरित चूनाश्म हल्के गुलाबी, हरे और सफेद रंग के हैं। जिनका उपयोग भवन निर्माण के लिए किया जा सकता हैं। चूने से अनेक रसायन बनते हैं। शक्कर उत्पादन में चाशनी के शोधन के लिए चूनाश्म का प्रयोग किया जाता हैं। शीशा बनाने के लिए चूने का प्रयोग किया जाता हैं। अग्निशामक गैस भी चूने से बनाई जाती हैं।

**4. डोलोमाइट (DOLOMITE):** यह भी तापसह (रिफ्रैक्ट्री) खनिज हैं । इसके भण्डार अल्मोड़ा, नैनीताल एवं पिथौरागढ़ जिलो में उपलब्ध हैं। गंगोली घाट शैल समूह मुख्यतः डोलोमाइट चूनाश्य का बना है। नैनीताल जिलें में नैनापीक पर्वतमाला जो डाब्कागढ़ तक फैली हैं, क्रोल शैल वर्ग की चट्टानों से बनी हैं।

इस खनिज का उपयोग उच्चताप सह के रूप में शीशा उद्योग, इस्पात उद्योग में किया जाता हैं।

**5. स्लेट तथा पटाल (PAVIGSTONE):** कुमाऊं क्षेत्र में स्टेल दो स्थानो पर अधिकता से मिलता हैं :

i. छोटे लेन्साकार निक्षेपो के रूप में उत्तरी भाग सौर शैल समूह मुख्यतः स्लेट का बना हैं।

ii. कुमाऊँ के अल्मोड़ा शैल वर्ग के शैल समूह में गुगाली खेत के भण्डार। नैनीताल की ब्लैनी शैल समूह से भी स्लेट मिलने के सम्भावना हैं।

स्लेट का उपयोग पहाड़ो में मकान की छत बनाने में किया जाता हैं।

**6. ताँबा (COPPER):** अस्कोट क्षेत्र में बैरी गाँव से लेकर गड़ाली तक चैल्कोपायराइट मिलता हैं। खोलियागाँव, नाकोट क्षेत्र में भी ऐसे भण्डारो की उपस्थिति का पता चला हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ताँबे की प्रमुख खाने देवलगढ़ परगने की धनपुर एवं डोबरी में बताई जाती हैं। नोटाखाने, थालाखाने एवं डाडाखाने भी उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त कुनेत, बगोरी, कपरौली, अगरोड़ा, असेना, कोटी, डागर धनकोट, डाँड़ाखान एवं कंधारा ऐसी ताँबे की खाने हैं। जिन पर अभी तक कार्य नही किया गया हैं।

**i. धनपुर खाने :** यह खाने उत्तर की ओर ऊँची व तेज ढाल पर ठोस डोलामाइट की पर्वत श्रेणी पर स्थित हैं। ताँबे में प्रमुख रूप से पाइराइट एवं भूरे या कच्चे ताँबे में लाल आक्साइड एवं थोड़ी मात्रा में हरा कार्बोनेट पाया जाता है। उत्तर से दक्षिण की ओर 150 फीट से 60 फीट लम्बी पेटी में हरा कार्बोनेट पाया जाता हैं।

**ii. डोबरी खाने :** डोबरी गाँव के पश्चिम में काफी प्राचीन खाने हैं। प्रमुख रूप से इन खानो में कौपर पाइराइट हैं। जिसमें 25 प्रतिशत ताँबा है। मशीनो के लिए डेढ़ मील की दूरी पर जल उपलब्ध हैं, तथा उसी स्थान पर ईधन के लिए लकड़ी भी सुलभ हैं। इसी पर्वत श्रेणी पर माल गिरी के निकट दूसरी खान है। रामगंगा नदी के दक्षिणी किनारे पर लोहबा पट्टी के अगरसिरा नामक स्थान पर भी तेज ढाल पर ताँबे की खान का होना बताया जाता हैं।

इसके अतिरिक्त ताँबा टिहरी में पिंदकी एवं चमोली में ग्वाड़ के निकट पाया जाता है।

**7. सीसा (गैलेना) (LEAD) :** इस खनिज की उपस्थिति के संकेत राँई, पिथौरागढ़ के शलम, भैसखाल, देवलगढ़, चण्डार आदि गाँव में मिले हैं। छानापानी (वागेश्वर) तथा विलोनसेरा के बीच जो निक्षेप है उनमें औसतन 3.34% सीसा तथा आंशिक रूप में चाँदी हैं।

**8. पायराइट (PYRITE) :** यह खनिज गौरीघाट के अँचल में धामीगाँव के आस पास तेजम शैल समूह में भी देखा गया है। इसका उपयोग गन्धक का तेजाब व गन्धक बनाने में होता हैं।

**9. ग्रेफाइट (GRAPHITE) :** इस खनिज की उपलब्धता अल्मोड़ा के उत्तर में कालीमाट एवं अल्मोड़ा शैल वर्ग के शिस्टी शैल समूह में स्थान–स्थान पर है। कालीमाट में माइका शिस्ट में 9% ग्रेफाइट मिलता हैं। तथा ग्रन्थिकाओ में इसकी मात्रा 37 प्रतिशत तक है।

**10. जिप्सम (ZIPSOME) :** यह खनिज नैनीताल जिले की निटालघाटी में धापला के पास मिलता हैं। इसके अतिरिक्त पनाई एवं नागरासु के निकट अलकनन्दा के तट पर मिलता है। वहाँ पर एक प्रकार का गहरे हरे रंग का जिप्सम पाया जाता हैं। इससे लोग बर्तन बनाया करते हैं। जिप्सम की एक पेटी टिहरी से लक्ष्मण झूला तक फैली हुई बताई जाती है।

**11. माइका (MAYCA) :** माइका की खान बन्दलीखाल एवं फुनेर में पायी जाती है।

**12. सोना (GOLD) :** अलकनन्दा एवं पिण्डर की बालु में सोने के कणों की उपस्थिती बताई गई हैं। कैप्टेन हर्बर्ट ने अलकनन्दा के निकट ग्रेनाइट के मैट्रिक्स में सोना पाया था लक्ष्मण झूला के निकट गंगा में तथा रामगंगा के अवसान के सन्निकंट सोने का होना बताया गया हैं।

**13. लोहा (IRON) :** यह खनिज उत्तसखण्ड हिमालय में निम्न स्थानो पर उपलब्ध है। सीली चाँदपुर पट्टी में राजबुंगना खान में समृद्ध हीमेटाईट उपलब्ध है। इसी पट्टी में खुश खान में माइकेशस अभ्रक युक्त कच्ची धातु का होना बताया जाता है। इसके अतिरिक्त लोहा लोभागाँव, भरनोनी, चोपड़ा, ड्योर, दूधातोली एवं जलाई आदि स्थानो में पाया जाता है।

**i नागपुर खानें :** पट्टी बिचला नागपुर से प्राप्त नमूने में भी अभ्रक युक्त कच्ची धातु का होना बताया जाता है। इसी पट्टी में जखोली एवं गिलेट खाने भी इसी प्रकार के कच्चे धातु की है। मल्ला दसोली पट्टी में हाथ गाँव के निकट अलकनन्दा के साथ आयरन पाइराइट की एक पट्टी चली गई हैं।

**ii. दशोली एवं बछणस्यू :** पट्टी मल्ली दशोली में स्थित पाकेखान के लोहे की कच्ची धातु का नमूना चुम्बकीय, समृद्ध धातु, काले रंग एवं रवेदार तथा चूनायुक्त संरचना में सुलभ है। इसी के निकट चार वाँग खान हैं। जो लोहे के लिए समृद्ध हैं। पट्टी बछणस्यू में डुगराखान से प्राप्त नमूना आइरन का हाइड्रेट आक्साइड हैं।

**iii. इंडियाकोट :** इडियाकोट पट्टी के पीपली एवं ड़ाँडातोली खानों में हेमेटाइट लोहे का पाया जाना बताया गया हैं। लोहवा खान में क्वार्टजाइट की अत्यधिक मात्रा में समृद्ध हेमेटाइट पाया जाता हैं। पट्टी वछणस्यूँ की लोहे की कच्ची धातु गढ़वाल में सर्वोत्कृष्ट बताई जाती हैं। यह लोहा सख्त होता हैं तथा भंजनशील नही होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

## उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध शिलाजीत (BLACK BITUMEN)

पर्वत शिलाओ के भीतर से शिलाओ के मद के रूप में जो स्त्राव बाहर आता हैं। उसे शिलाजतु (शिलाजीत) कहते हैं। यह शिलाजीत कालेरंग का वजनदार गोमूत्र के समान गन्ध वाला होता हैं। इसे लौह शिलाजतु कहते हैं। आयुर्वेद में शिलाजीत का चिकित्सा में विशेष रूप से उपयोग होता हैं।

मुख्यरूप से शिलाजीत कटु तिक्त एवं कषाय रस युक्त विपाक में कटु एवं उष्णवीर्य हैं। यह रसायन योगवाही बलकारक, मधुमेह एवं मेदोवृद्धि आदि रोगों में उपयोगी हैं। आधुनिक खोजो के आधार पर शिलाजीत में वनस्पतिक द्रव्य एवं खनिजो के मिश्रण का सारभूत स्त्राव हैं।

उत्तराखण्ड हिमालय में शिलाजीत के कतिपय महत्वपूर्ण स्रोत हैं। इसमें बद्रिनाथ, पैनखण्डा, अल्मोडा जनपद में खैरनार रोड पर गरम पानी से आगे जौरासी गाँव के पास शिलाजीत चट्टाने, पिथौरागढ के सीमान्त क्षेत्रो में शिलाजीत की चट्टाने पायी जाती हैं। तपोवन के समीप भी शिलाजीत स्त्राव युक्त चट्टाने उपलब्ध हैं। आज शिलाजीत की आयुर्वेदिक दृष्टि से महत्ता को देखते हुए उत्तराखण्ड में शिलाजीत चट्टानो की विस्तृत रूप से खोज करने की आवश्यकता है।

उत्तराखण्ड हिमालय में अन्य कई खनिज मिलने की सम्भावनायें हैं, जैसे ग्लास, लैड, बैराइट, यूरेनियम, कापनाइट, गार्नेट फास्फोराइट आदि।

## उत्तराखण्ड हिमालय में उपलब्ध औषधोपयोगी रत्न-उपरत्न

रत्न यह एक प्रकार के बहुमूल्य पत्थरो की जाति के पार्थिव द्रव्य हैं। जो पृथ्वी की खानो तथा समुद्र से प्राप्त किये जाते हैं। धन एवं कामना के इच्छुक व्यक्ति इनसे अधिक लगाव रखते हैं। इसीलिए इनको रत्न कहते हैं। वेदो में भी पृथ्वी को रत्नगर्भा कहा गया हैं। रत्न ओज को बढ़ाने वाले मन को प्रसन्न करने वाले एवं हृदय और मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करते हैं। रसायन होने से ये रत्न जरानाशक एवं कतिपय रोगों का शमन करते हैं। रत्नों को ग्रहों के आधार पर शरीर पर धारण करने से सिद्धि करने वाले होते हैं। रत्नों से तैयार की गई भस्में एवं पिष्ठी शीतवीर्य होने के कारण हृदय को बल देने वाली एवं कन्तिवर्धक होती हैं। आयुर्वेद एवं ज्योतिषशास्त्र के आधार पर रत्नों की संख्या नौ मानी गई हैं।

| क्र० स० | रत्नो के नाम | अंग्रजी नाम | सम्बन्धित ग्रह |
|---|---|---|---|
| 1. | माणीक्य (लाल याकूत सुर्ख) | RUBY | सूर्य |
| 2. | मुक्ता (मोती) | PEARL | चन्द्रमा |
| 3. | विद्रुम (प्रवाल–मूँगा) | CORAL | मंगल |
| 4. | मरकत (तार्थ्य, पन्ना) | EMERALD | बुध |
| 5. | पुखराज (पुष्पराज) | TOPAZ | बृहस्पति |
| 6. | हीरक (वज्र–हीरा) | DIAMOND | शुक्र |
| 7. | नील (नीलम) | SAPPHARE | शनि |
| 8. | गोमेद | CINAMON STONE | राहू |
| 9. | वैदूर्य (लहसुनियां) | CATSEYE | केतु |

इन रत्नो में मोती और प्रवाल (मूंगा) समुद्र से प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त छः उपरत्न बताये गये हैं। यथा– 1. वैक्रान्त, 2. सूर्यकान्त 3. स्फटिक 4. पैरोज 5. राजावर्त 6. लाल।

सूर्यकान्त, स्फटिका, चन्द्रकान्त आदि उपरत्न हिमालय में पाये जाते है। लेखक को वनौषधि सर्वेक्षण कार्यकाल में कतिपय औषधोपयोगी रत्नों एवं उपरत्नो की जानकारी मिली है। जिसकी संक्षिप्त जानकारी उपरोक्त शीर्षक में दी है। आशा हैं कि इस दिशा में उत्तराखण्ड हिमालय के भूभाग में भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण के द्वारा शोध कार्य करने की



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

आवश्यकता हैं। संक्षिप्त तालिका निम्न प्रकार से हैं।

**1. तुरसावा (जिरकान) :** यह रत्न जिरकोनियम तथा सिलिकन के आक्साइड़ से बना होता हैं। तुरसावा पारदर्शी पीले हरे एवं नीले पुट लिए हुए भी होता हैं। यह सुन्दर तथा कीमती रत्न हैं। इसकी कठोरता नीलम एवं हीरे कम होती है। यह केदारनाथ व हिमालय की पहाड़ियो में ग्रेनाइट चट्टान में अन्तर्वेशो के रूप में मिलने वाली पेग्मेटाइट में मिलता हैं।

**2. तुरमली (टूरमेलीन) :** रासायनिक संघटन की दृष्टि से तुरमली एल्यूमिनियम, लोहा आदि के बोरोसिलिकेट से निर्मित होती हैं पारदर्शी, तुरमली रत्न प्रायः लाल, हरे तथा पीले पुट लिए होती हैं। यह रत्न बद्रीनाथ (गढ़वाल) में मिलने वाली पेग्मेटाइट चट्टानो में पाया जाता हैं।

**3. तामड़ा या गोमेदक (गारनेट) :** गारनेट रत्न मैग्नीशियम चूना, लोहा, एल्युमिनियम एवं सिलिका के आक्साइड से निर्मित होते हैं। गोमेदक लाल–भूरे कत्थई पुट लिए अपारदर्शी रूप में भी मिलता हैं। अपारदर्शक गोमेदक रत्न नही माना जाता हैं। गोमेदक में कई रासायनिक तत्व विद्यमान होते हैं। इसलिए इसके कई प्रकार होते हैं जैसे गुलाबी, हरा, काला, नारंगी। इसमें प्रकाश के छितराब की क्षमता काफी कम होती हैं। गढ़वाल और कुमाऊँ की कायांतरित चट्टानो में गोमेदक मिलता हैं।

**4. पुखराज (टोपाज) :** यह रत्न एल्यूमिनियम, सिलिका तथा प्लोरीन के आक्साइड से निर्मित होता हैं। यह पीले भूरे रंग का पारदर्शी रत्न हैं। असली पुखराज की पहचान यह हैं कि रगड़ने पर इसमें से विद्युत उत्पन्न होने लगती हैं। यह रत्न गढ़वाल, कुमाऊँ की पेग्मेटाइट चट्टानो में पाया जाता हैं।

**5. स्फटिक (राक क्रिस्टल), कार्नग्राम एवं जमुनिया (एमिथिस्ट) :** रंगहीन स्फटिक में मैग्नीज, लोहा तथा टाइटेनियम तत्वो के अंश विद्यमान होते हैं। तो यह क्रमशः कार्नग्राम, जमुनिया आदि नाम से जाना जाता हैं। कभी–कभी कार्नग्राम से पुखराज का भ्रम हो जाता है। ऐसी स्थिति में आपेक्षित घनत्व एवं प्रकाश किरणो का रत्न में छितराव जैसे खनिज गुणो की मदद से भ्रम निवारण होता है। ये तीनो रत्न गढ़वाल–कुमाऊँ की कायातरित शैलो से संबंद्ध पेग्मेटाइट व ज्वालामुखी चट्टानो में पाये जाते हैं।

## उत्तराखण्ड हिमालय में स्थित भूउर्जा के स्रोत (गर्म पानी के चश्में)

सूर्य की किरणों से एवं गर्म पानी के झरनों से उर्जा प्राप्त करने के काफी प्रयत्न हुए हैं। क्योंकि ये ऊर्जा के नये साधन हैं। और परम्परागत साधन कोयला, पैट्रोलियम आदि के भण्ड़ार बहुत जल्दी समाप्त हो रहे हैं। जियोथरमल (भू–ऊर्जा) ऊर्जा पर 1880 से ही वैज्ञानिकों का ध्यान केन्द्रित हो गया था पर 1950 में इसको विकसित करने के लिए विश्व के इटली, उत्तरी अमेरीका, न्यूजीलैण्ड, जापान तथा रूस आदि देश प्रयत्नशील हुए। यह ऊर्जा आणविक एवं कोयले की अपेक्षा पाँच गुनी सस्ती हैं।

पृथ्वी के गर्भ में स्थित रेड़ियो धर्मी खनिजों के क्षय एवं भू वैज्ञानिक क्रियाओं द्वारा जो ऊष्मा उत्पन्न होती हैं। वह ऊष्मा पृथ्वी की सतह की ओर उन्मुख होती रहती हैं, तथा यह प्राकृतिक ऊष्मा चट्टानो के द्वारा भौम जल में प्रविष्ठ हो जाती हैं। जहाँ भी भौम जल का दबाव, तापक्रम की अपेक्षा कम होता हैं तो गर्म झरने फूट जाते हैं। इसके साथ भाप भी निकलती हैं। इसे बिजली में परिवर्तित किया जा सकता हैं।

गर्म पानी के चश्मों में नमक (लवण) घुली हुई अवस्था में मिलते हैं। इस पानी का रासायनिक संघटन हैं सोडियम–मैग्नीशियम के सल्फेट, बाइकार्बोनेट तथा क्लोराइड। कभी–कभी गर्म पानी में गंधक, बोरोन, आयोडाइड के अंश भी घुलनशील अवस्था में मिलते हैं। ऐसा देखा गया हैं कि गन्धक युक्त गर्म पानी में नहाने से चर्म रोग दूर हो जाते हैं। कभी इसके आसपास काई भी उग जाती हैं। इसे सुखा कर और लेप बना कर गठिया के उपचार में प्रयोग करने पर लाभ होता हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

उत्तराखण्ड में जगह–जगह पर गरम पानी के चश्में मिलते हैं। इस प्रकार के चश्में अभी तक पाँच हजार फीट के आस–पास व उससे अधिक ऊँचाई पर ही मिले हैं। उत्तराखण्ड में तो ऐसा प्रतीत होता हैं कि अभी भी गरम पानी के कई स्रोत लुप्त हैं, और खोज करने पर प्रकट हो सकते हैं। इसका एक प्रमाण जोशीमठ के पास मिला चश्मा हैं। लगभग 14-15 वर्ष पूर्व भूवैज्ञानिक ने जोशीमठ से लगभग 16 कि० मी० पर कई स्थानो पर पहाड़ी चट्टानो पर खुदाई की तो वहाँ से गरम पानी के फव्वारे फूट निकले। पानी का तापमान $100^0C$ के आसपास रिकार्ड किया गया। पानी के साथ गन्धक भी निकलता हैं जो स्रोत के आसपास एकत्र होता रहता है।

उत्तराखण्ड हिमालय में आज तक निम्न प्राकृतिक गर्म पानी के चश्मों का पता लगाया गया हैं।

1. केदार नाथ मार्ग पर गौरी कुण्ड।
2. यमनोत्री का तप्त कुण्ड, चावल आदि इस कुण्ड में पकाये जा सकते हैं।
3. श्री बद्रीनाथ धाम में तप्तकुण्ड।
4. यमनोत्री मार्ग पर जानकी बाई के पास गुनगुना पानी उपलब्ध हैं।
5. गंगोत्री मार्ग में गंगनानी में गर्म पानी का स्रोत।
6. श्री बद्रीनाथ मार्ग में जोशीमठ के पास तपोवन में तीन तप्तकुण्ड।
7. जोशीमठ से लगभग 16 कि. मी. पर तपोवन और रेणी के बीच गरम पानी के कई स्रोत मिल चुके हैं।
8. अमोलागाँव (परगना गंगा सलाण के निकट)।
9. पिण्डर नदी के बाये किनारे पर कुलसेनी के निकट।
10. बदलपुर पट्टी में पलैन नदी पर।
11. देहरादून जनपद में सहस्त्रधारा में गन्धक युक्त गर्म पानी का चश्मा।

हिमालय क्षेत्र में ऐसे कई गर्म पानी के झरने है जो हर दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं और इनसे भू–उर्जा विकसित करने की बहुत संभावनाएं भी हैं।

## उत्तराखण्ड के वन्य जीव जन्तू एवं उनका औषधीय महत्व

उत्तराखण्ड भू–भाग वन सम्पदा के साथ–साथ नाना प्रकार के वन्य जीव जन्तूओ से भी भरपूर हैं। भौगोलिक जलवायु के अनुसार वन्य जन्तू 800 मीटर की ऊँचाई से लेकर 3,800 मीटर की ऊँचाई तक उत्तराखण्ड में पाये जाते हैं। भावर के क्षेत्र एवं उपहिमालयी घाटियाँ, घने उष्ण कटिबन्धीय वनों में अधिकतर वन्य जीव–जन्तु पाये जाते हैं। उत्तराखण्ड में वन्य जीव जन्तुओ को संरक्षित करने के लिए सरकार द्वारा पौड़ी गढ़वाल में कार्बेट नैशनलपार्क, कोटद्वार के नजदीक मालिनी वन्यजन्तु विहार तथा राजाजी नैशनल पार्क की स्थापना की गई हैं। इसके अतिरिक्त टोन्स वन प्रभाग में गोविन्द पशुविहार तथा नन्दादेवी के समीप नन्दादेवी वन्यजन्तु विहार भी बनाये गये हैं।

इसी तरह अल्मोड़ा जनपद के महरूड़ी धरमधर का ''कस्तूरा मृग विहार'' तथा चमोली जनपद में काँचुला खर्क कस्तूरा मृग विहार विकसित किये गये हैं। इन मृग विहारो का मुख्य उद्देश्य लुप्त प्राय कस्तूरी मृगो के वंश की वृद्धि करना हैं। ताकि पर्यावरण का सन्तुलन बना रहे और इन वन्य जन्तुओ से औषध द्रव्य भी सुलभ हो सके।

आयुर्वेद चिकित्सा में काष्ठादि औषधि द्रव्यो के साथ–साथ खनिजों एवं जान्तव द्रव्यों का भी चिकित्सा में तथा कतिपय औषधि घटको में प्रयोग किया जाता हैं। मुख्य रूप से कस्तूरी, मृगश्रृंग, गोरोचन, मधु (शहद), अग्निजार (अम्बर), मुक्ता (मोती), प्रवाल, शंख, शाम्बूक (घेंघा), गन्धमार्जार, कछुआ, केकड़ा, भूनाग (केचुआ), मोर, मूत्र, पित्तपंचक, जंगली सुअर, मयूर (मोर पंख), बिल्ली, भैसा, रोहूमछली (इनके यकृत स्थित पित्त कोष), भालु का पित्ता, गोह, सर्पविष आदि वन्य जन्तु पशु–पक्षियों आदि जान्तव द्रव्यों का चिकित्सा हेतु उल्लेख किया गया हैं तथापि उत्तराखण्ड भूभाग में तराई भावर एवं शिवालिक वनखण्ड से लेकर हिमालय के एलपाइनजोन तक उपलब्ध वन्य जीव जन्तूओ के नाम पाठको की जानकारी हेतु दिया जा रहा हैं।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**1. मैदानी उष्ण कटिबन्धीय सघन बनो पाये जाने वाले जीव-जन्तु :** शेर, चीते, लकड़वग्धे, हाथी, भालु, नील गाय, जंगली बिल्ली, लोमड़ी, सियार, सौलु (सेही), जंगली सुअर, हिरण (मृग), वानर, लंगूर, खरगोश, काखड़, साँभर, बारहसिंगा एवं जंगली हाथी आदि जन्तु मुख्यतः पाये जाते हैं।

**2. उच्च हिमालयी बनो एवं पहाड़ो पर पाये जाने वाले जीव जन्तु :** हिमालय के ऊँचाई वाले स्थानो पर मुख्य रूप से पाण्ड़ा, जंगली सूअर, भालू, थार, बारहसिंगा, थाक (चंवरीगाय) तथा कस्तूरीमृग आदि जन्तु पाये जाते है। उंचे पहाड़ो पर जंगली कुत्ता भी पाया जाता हैं। जो कि अत्यन्त खतरनाक होता हैं।

**3. उत्तराखण्ड के मुख्य पक्षी :** मोर, बटेर, चकोर, तीतर, कठगोर, बगुला, हँस, बुलबुल, तोता, कबूतर, चील, गिद्ध, बाज, जंगली मुर्गी, जलमुर्गावी, धुधती, कोयल, आदि। हिमालय के ऊँचाई वाले स्थानों में मुनाल (यह बहुत सुन्दर पक्षी है), स्नौकौक (यह बर्फ की तरह सफेद होता हैं) तथा हिमालयी मैगपाई आदि दुर्लभ पक्षी ही दिखाई देते हैं।

जान्तव द्रव्यो में आयुर्वेद की प्राणरक्षक महौषधि कस्तूरामृग की नाभी से उपलब्ध मृगमद (कस्तूरी) के विषय में जानकारी दी जा रही हैं :

## कस्तूरी का स्रोत कस्तूरामृग

**कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग ढूढें बनमांहि।**
**ऐसे घट-घट राम हैं, दुनियां देखा नांहि।।** *(कबीरदास)*

संस्कृत साहित्य में कस्तूरी का उपयोग दौगंध्यहर, वर्ण्य, इत्र, सुगन्धित व सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में वर्णित हैं। आयुर्वेदिक संहिता ग्रंथों में भी कस्तूरी का उपयोग बाजीकरण (सैक्सटौनिक) वात–कफशामक, मस्तिष्क नाड़ी वल्य, हृद्य, शीतगंसन्निपात, एवं उन्माद, अपस्मार में किया जाता हैं। यह कस्तूरी नर कस्तूरा मृग के मुष्क प्रदेश में स्थित नाभी (नाफा) से प्राप्त की जाती है। नर कस्तूरामृग से कस्तूरी प्राप्त करने लिए इसका अवैध रूप से शिकार किया जाता है, जिसके कारण दिन–प्रतिदिन हिमालय में इन मृगों की संख्या घटती जा रही है। इन दुर्लभ मृगों के अनैतिक शिकार के कारण प्राकृतिक स्रोतों के दोहन के साथ–साथ पर्यावरण पर भी असर पडता जा रहा है। इन सभी तथ्यों एवं आयुर्वेद की प्राणरक्षण महौषधि होने के कारण भारत सरकार के केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद नई दिल्ली ने कस्तूरा मृगों के प्रजनन एवं कस्तूरा मृग को बिना मारे कस्तूरी प्राप्त करने के तरीकों के अधीनस्थ जिला–अल्मोड़ा महरूड़ी (धरमधर) 22,000 फीट ऊँचाई पर कस्तूरा मृग प्रजनन फार्म कार्यरत है। इस समय फार्म में लगभग नर एवं मादा मृगों की संख्या 20 के आस–पास है। केन्द्र इन मृगों को पालतू मृगों की तरह रखने के उपायों के साथ–साथ उनके रहन–सहन, स्वभाव, प्रजनन, चारा आदि विषयों का भी गहन अध्यन करता है। केन्द्र में मृगों को मारे बिना कस्तूरी प्राप्त करने के नवीन तकनीकी उपायों का भी पता लगाया जा रहा है। एक कस्तूरा मृग विहार चमोली जनपद के कांचूला रवर्क में भी स्थित है। भारत के अतिरिक्त चीन, रूस, मंगोलिया कस्तूरा प्रजनन केन्द्रों की स्थापना के साथ–साथ कस्तूरी प्राप्त करने की नवीन खोजों में अग्रसर है। भारत में इस समय मुख्य रूप से तीन कस्तूरा प्रजनन केन्द्र कार्यरत हैं।

1. हिमाचल प्रदेश में कूफरी केन्द्र।
2. चमोली गढ़वाल में काचुलाखर्क।
3. अल्मोडा जिले में महरूड़ी (धरमधर) केन्द्र।

महरूडी कस्तूरा फार्म उत्तर प्रदेश के पर्यटक विभाग के मानचित्र में अंकित है। देहली से महरूडी कस्तूराफार्म की दूरी लगभग 410 किलोमीटर है। मृगों की सुरक्षा दृष्टि से यह स्थान सुरक्षित घोषित है। फार्म को देखने के लिये निदेशक आयुर्वेद एवं अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से अनुमति लेनी पडती है।



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

**कस्तूरा मृग :** यह हिरण अत्यन्त शसंकित जाति का वन्य प्राणि है। जो कि मध्य हिमालय में उत्तराखण्ड हिमालय, काश्मीर, आसाम, नेपाल, भूटान, चीन, रूस आदि देशों के एलपाइन क्षेत्र में दस हजार फिट की ऊँचाई से लेकर चौदह हजार फिट की ऊंचाई तक पाया जाता है। मृग सुन्दर, मनोहर होता है। यह लगभग 2 फीट ऊँचा, बाल घने, लम्बे, धूसर वर्ण के व धब्बेदार होते हैं। पूंछ बहुत छोटी, बालों से ढकी कान खड़े होते हैं। मुख के निचले जबडे से 2 से 3 इंच लम्बे नुकीले दांत बाहर को निकले रहते हैं। मादा मृग के दांत बाहर को नहीं होते हैं। लिंगेन्द्रीय मणि को आवृत्त करने वाली त्वचा के प्रवर्धन से एक थैलीनुमा संरचना जिसे नाफा कहते हैं, उसमें विशेष प्रकार की सुगन्ध लिये तरल पदार्थ होता है, इसी मृगमद का नाम कस्तूरी है। यह नाफा शिशनावरण एवं नाभी के मध्य में स्थित होता हैं, जो कि छिद्रयुक्त एवं सघन धूसरवर्ण के बालों से ढका रहता है। हिरण की युवावस्था के मदकाल में यह सुगन्धित मदस्त्राव बनना प्रारम्भ हो जाता है। स्वस्थ एवं कामातुर मृग से 20 से 30 ग्राम तक कस्तूरी प्राप्त की जा सकती है। बाल, वृद्य, क्षीण एवं अस्वस्थ मृग से कम मात्रा में अल्पगन्ध वाली कस्तूरी प्राप्त होती है।

**यथा - मृगनाभी मृगमदो वेध्यमुख्यं मृगाण्डजम्।**
**कामातुरे च तरूणा कस्तूरी बहुलपरिमलाभवति।।** *(अ.हृ. कोष)*

**कस्तूरी की पहिचानः** नैपाली कस्तूरी नीलवर्ण की कामख्यीय (आसाम) की कस्तूरी कृष्णाभ वर्ण की सर्वश्रेष्ठ होती है। काश्मीर से मिलने वाली कस्तूरी कम गुणों वाली मानी जाती है। असली कस्तूरी रक्ताभ, श्यामवर्ण की पिंगलाभ, केवडे के समान तीक्ष्ण, सुगन्धयुक्त रवेदार होती है। इसमें उग्रसुन्धित तैल मशकोन पाया जाता वर्तमान में रसायनिक विधि से नकली कस्तूरी तैयार की जाती है। जिसकी सुगन्ध प्राकृतिक कस्तूरी से भिन्न एवं गुणहीन होती है।

**यथा - या गन्धं केतकीनां वहति भूशतरं वर्णतः पिंगलाभा।**
**स्वादे तिक्ता कटूष्णा, लधुपरितुलिता मर्दिता चिक्कणा स्यात्।**
**दग्धा नो यादि भस्यं, मिति चिमि कुरूते चर्मगंन्धा हुताशे।**
**साशुद्ध शोभनीया राजयोग्या प्रदिष्ठा।।** *(के. नि.)*

**मुख्ययोग-** कस्तूरी भैरवरस, मृगमदासव ।

आयुर्वेद में कस्तूरी से निर्मित औषघ योग कस्तूरी भैरवरस, चतुर्भुजरस, हिंगुकर्पूरवटी आदि कतिपय योगों का उपयोग सन्निपाज्वर, हृदयविकार, पक्षाघात, वातहव संस्थान विकार तथा विशेष रूप से ध्यजभंग (लिगेन्द्रियदोष), शीध्रपतन में वाजीकरण के प्रयोग में किया जाता है। अतः कस्तूरी एक कामोद्दीपक, दौंगन्ध्यहर, उग्रसुगन्धियुक्त व सौन्दर्य प्रसाधन में उपयोगी द्रव्य माना गया है। भारत में इन कस्तूरामृग फार्मो के विकास की अधिक सम्भावनाये हैं। उत्तराखण्ड हिमालय में भिलंगनाघाटी (टिहरी गढ़वाल), मदमहेश्वर, रूद्रनाथ, तुगंनाथ (चमोली गढ़वाल), रैथल, भागीरथीघाटी, उत्तरकाशी, दारमाघाटी, पिथौरागढ़ आदि क्षेत्रों में कस्तूरा मृगविहार हेतु उपयुक्त स्थल है। पर्यावरण मन्त्रालय एवं वनमन्त्रालय के अनुदान से इन क्षेत्रों में इन दुर्लभ मृगों के सम्वर्धन हेतु कस्तूरा–मृगविहारों की स्थापना की जानी चाहिए। कस्तूरी मृगों के फार्मो की स्थापना से उत्तराखण्ड में आर्थिक स्रोत बढ़ाये जा सकते हैं।

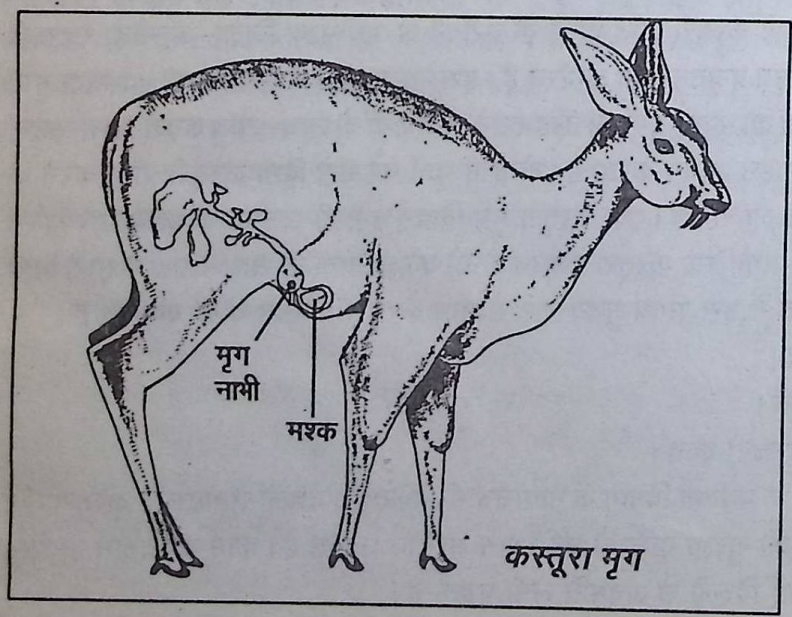

*कस्तूरा मृग*



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों की वैज्ञानिक तालिका

| | |
|---|---|
| Acuminate | लम्बाग्र |
| Acute | निशिताग्र, तीक्ष्णाग्र |
| Aestivation | पुष्पदल विन्यास |
| Adanate | संलग्न |
| Alternate | एकान्तर |
| Amplexicaule | स्तम्भालिंगी |
| Anther | परागकोश |
| Arragment | विन्यास |
| Auriculate | पालिरूप |
| Annulate | वलयाकार |
| Angiospermum | आवृतबीजी |
| Axillary | कक्षीय |
| Apex | अग्रक, पत्राग्र |
| Androecium | पुंकेशरी |
| Acicular | सूच्याकार |
| Aquatic | जलीय |
| Annuuals | एकवर्षी |
| Annual | वार्षिक |
| Annular | वलयाकार |
| Axil | कक्ष |
| Angular | कोणीय |
| Biennial | द्विवर्षी |
| Bifid | द्विशाखी |
| Bifoliate | द्विपर्णी |
| Bisexual | द्विलिंगी |
| Bract | सहपत्र |
| Bract-scale | सहपत्र–शल्क |
| Bracteole | सहपत्रिका |
| Brittle | भंगुर |
| Branching | शाखन |
| Bulb | शल्ककन्द |
| Bud | कालिका |
| Bark | छाल |
| Blade | पटल |
| Caducous | आशुपाती |
| Calyx | बाह्यदलपुञ्ज |
| Capitate | समुंड |
| Capitulum | मुंडक |
| Capsular-fruit | संपुटीफल |
| Capsule | सम्पुट |
| Chlorophyll | पर्णहरित |
| Circular | वृत्ताकार |
| Creeper | विसर्पी–लता |
| Crenate | कुंठदन्ती |
| Climber | आरोहीलता |
| Climbing plant | आरोहीपादप |
| Cyclic | चक्रीय |
| Cylindrical | वेलनाकार |
| Conical | शंक्वाकार |
| Cuneate | फणाकार |
| Cordate | हृदयाकार |
| Corolla | दलपुंज |
| Cymose | सीमाक्षी |
| Corky | काग/कार्की |
| Compound leaf | संयुक्त पत्र |
| Dentate | श्वदंती |
| Deciduous | पर्णपाती/पाती |
| Decumbent | भूशायी |
| Diclinious | एकलिंगी |
| Dicotyledon | द्विबीजपत्री |
| Disk floret | बिम्ब–पुष्पक |
| Divergent | अपसारी |
| Decurent | अधोवर्धी |
| Diameter | व्यास |
| Erect | उर्ध्वसंस्थित |
| Ellipse | दीर्घवृत्त |
| Elliptic | दीर्घवृत्तीय |
| Elliptical | दीर्घवृत्ताकार/दीर्घवृत्तीय |
| Entire | अच्छिन्न, सरलतट |
| Endogenous | अन्तर्जात |
| Epicarp | बाह्यफलभित्ति |
| Epiderm | बाह्यत्वचा |
| Epiphyte | अधिपादप |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | |
|---|---|---|---|
| Evergreen | सदाहरित, सदापर्णी | Hill | पहाड़ी |
| Ex-Stipellate | अनुपर्णी | Hill Forest | पहाड़ीवन, पर्वतीयवन |
| Family | कुल, कुटुम्ब | Hoary | श्वेतरोमिल |
| Female | स्त्री, मादा | Horticulture | उद्यान कृषि |
| Fibrous | रेशेदार | Hooked | अंकुशाकार |
| Fistular | नलीदार | Hooded | फणाकार |
| Flora | वनस्पति समूह | Imparipinnate | विषम पक्षाकार |
| Floret | पुष्पक | Inflorescens | पुष्पक्रम, मंजरी |
| Flower | पुष्प | Inter node | पर्व |
| Foliage leaf | सामान्य पत्र | Inter petiolar | अंतरावृतक |
| Foliate | पर्णिल | Involucre | सहपत्र चक्र |
| Fruit | फल | Juice | रस |
| Fugacious | आशुपाती | Joint | सन्धि |
| Fleshy | मांसल, गूदेदार | Lanceolate | भालाकार |
| Gall | पिटिका | Lateral | पार्श्व–पर्श्विक |
| Green | हरित | Latex | लेटेक्स, खड़क्षीर |
| Greenish | हरिताभ | Leaf | पर्ण,पत्र |
| Glabrous | अरोमिल | Leaflet | पत्रक |
| Genera | वंश, जीनस | Leaf stalk | पर्णवृन्त |
| Gland | ग्रन्थि | Legume | फलीं, शिम्बी |
| Glandular | ग्रन्थिल, ग्रंथिमय | Linear | रेखाकार |
| Globose | गोलाकार | Local | स्थानीय, स्थानिक |
| Globular | गोलाकार | Lobed | खंडित |
| Gynaeceum | जायांग | Lobe | पालि, खण्ड |
| Gymnosperm | अनावृतबीजी | Leaf margin | पत्र तट |
| Grey-Whitish | श्वेताभ | Lateral side | पार्श्व पृष्ट |
| Habit | प्रकृति | Male | नर/पुं. |
| Habitat | आवास | Margin | सीमा, तट |
| Hair | रोम | Marginal | सीमांत |
| Hairy | रोमिल | Micropyle | बीजाण्डद्वार |
| Hastate | भालाकार | Milky | क्षीरी, दुग्धयुक्त |
| Heart shaped | हृदयाकार | Modification | रूपान्तर, परिवर्तन |
| Heart wood | अंतः काष्ठ | Monandrous | एक–पुंकेसरी |
| Herb | शाक, बूटी | Membranous | झिल्लीमय |
| Herbaceous | शाकीय | Monoclinous | उभयलिंगी |
| Hermaphrodite | उभयलिंगी | Monocotyledon | एकबीपत्री |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | |
|---|---|
| Monoecious | उभय–लिंगाश्रयी |
| Morphological | आकृतिक |
| Multilocular | बहुकोष्ठी |
| Multicellular | बहुकोशिक |
| Nodose | गांठदार |
| Nodular | ग्रन्थिकी |
| Obcordate | अधोमुख हृदयाकार |
| Oblanceolate | अधोमुख भालाकार |
| Oblique | तिर्यक्, तिरछा |
| Oblong | दीर्घासत |
| Obcovate | अधोमुख अण्डाकार |
| Obtuse | कुंठाग्र |
| Opposite | विपरीत, सम्मुख |
| Orbicular | वर्तुल |
| Oval | अण्डाकार |
| Ovoid | अंडाभ |
| Ovate | लट्वाकार |
| Order | गण |
| Orang-Yellow | नारंगीपीत |
| Pair | युग्म,युगल |
| Palmate | हस्ताकार |
| Palmatifid | दीर्ण–हस्ताकार |
| Pappus | रोमगुच्छ |
| Parasite | परजीवी |
| Parasitic | परजीवी |
| Pedicel | वृंत्त,पुष्पवृन्त |
| Pedicle | वृंतक |
| Peduncle | पुष्पावलि–वृंत |
| Perianth | परिदल पुञ्ज |
| Perocarp | फलभित्ति |
| Petal | दल, पंखुड़ी |
| Pinnate | पिच्छाकार |
| Petiolate | सवृन्त् |
| Pari-pinnate | युग्म–पिच्छाकार |
| Petiole | वृंत, पर्णवृंत |
| Pinnatisect | दीर्णतम–पिच्छाकार |
| Pinnatipartite | दीर्णतर–पिच्छाकार |
| Pinnatisect | दीर्णतम–पिच्छाकार |
| Pinnatified | दीर्ण–पिच्छाकार |
| Pollon | पराग |
| Prickly | तीक्ष्णवर्धी |
| Projecting | प्रक्षेपी |
| Presudo bulb | आभासी, शल्ककन्द |
| Pubescent | रोमिल |
| Purple | नील–लोहित |
| Procumbent | शयान |
| Perennial | बहुवर्षी |
| Polymorphous | बहुरूपी |
| Qundrangular | चतुर्भुजी |
| Ray-floret | अर–पुष्पक |
| Raceme | असीमाक्ष |
| Racemose | असीमाक्षी |
| Rachis | पिच्छाक्ष |
| Radical | मूलज |
| Rectangular | समकोणिक |
| Recumbent | शयान |
| Rose | गुलाबी |
| Reddish-brouwn | रक्ताभ भूरा |
| Regular | समनियमित |
| Reniform | वृक्काकार |
| Reticulated | जालिकारूपी |
| Retuse | खांचाग्री |
| Rhizome | प्रकंद |
| Rhizomatus | प्रकंदी |
| Rhomboid | समान्तर |
| Root stock | प्रकन्द, मूलस्तंम्भ |
| Root tuber | मूलकन्द |
| Root hair | मूलरोम |
| Rough | रूक्ष |
| Scale leaf | शल्कपत्र |
| Sepal | बाह्यदल |
| Serrate | क्रकची |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

| | | | |
|---|---|---|---|
| Sessile | अवृंत | Tropical region | उष्णकटिबंधी प्रदेश |
| Shoot | प्ररोह | Trunk | काण्ड |
| Solitary | एकल | Tuber | कंद |
| Shrub | क्षुप, झाडी | Tuberous | कन्दिल |
| Simple | साधारण, सरल | Tubular | नलिकाकार |
| Simple fruit | एकल फल | Twiner | वल्लरी |
| Simple leaf | सरलपर्ण | Twing | टहनी |
| Species | जाती, स्पीशीज | Turbinate | लट्टूरूपी |
| Spike | स्पाइक | Trilocular | त्रि–कोष्ठकी, |
| Spinose | शूलमय | Tri-pinnate | त्रि–पिच्छाकार |
| Spiral | सर्पिल | Umbel | पुष्पछत्र |
| Stalk | वृन्त | Umbellate | पुष्पछत्री |
| Stem | तना,काण्ड | Unifoliate | एकपर्णी |
| Stipulate | अनुपर्णी | Unisexual | एकलिंगी |
| Stipule | अनुपर्ण | Upper surface | उर्ध्वपृष्ठ |
| Succulent | गूदेदार, रसदार | Verticillate | चक्रकी |
| Surface | पृष्ठ, सतह | Violet | बैंगनी |
| Spurred | दलपुटयुक्त | Velvety | मखमली |
| Sharp | तीक्ष्ण | Vasicant | स्फोटकर |
| Temperate zone | शीतोष्ण कटिबंध प्रदेश | Variety | किस्म/भेद |
| Tendril | प्रतान | Whorl | चक्कर |
| Terminal | अंतस्थ, अन्तिम, अग्रस्थित | Whorled | चकरदार |
| Terminal bud | अंतस्थ कलिका | Wing | पक्ष,पंख |
| Terrestrial | स्थलीय, भौमिक | Wing scale | पक्ष–शल्क |
| Thorn | कांटा | Wood | दारू, काष्ठ |
| Toothed | दन्तुर | Woody | काष्ठमय |
| Triangular | त्रिभुजीय,त्रिकोणीय | Woolly | लोमश, तूलरोमश |
| Tree | वृक्ष | Xygomorphic | एकव्यास, सममित |
| Trifoliate | त्रिपर्णक | | |



Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

# सन्दर्भ ग्रन्थ तालिका


1. अटकिंशन, ई. टी. — दि हिमालय गजेटियर, भाग I भाग II दिल्ली.
2. अरूण कुमार बडोनी (1995) — गढ़वाल हिमालय जैविक–विविधता संरक्षण, एवं विकास हेतु जड़ी–बूटी उद्योग.
3. आर. पी. धसमांणा (1995) — उत्तरायणी पत्रिका, नई दिल्ली.
4. ओसमेन्टन ए.ई (1927) — ए फोरेस्ट फ्लोरा आफ कुमाऊँ, इलाहाबाद.
5. के.सी चुनेकर (1969) — भावप्रकाश निघण्टु हिन्दी टीका.
6. केदारसिंह फोनियाँ — उत्तराखण्ड के धार्मिक एवं पर्यटन स्थल.
7. कांजीलाल, डी. (1926) — फ्लोरा आफ दि देहरादून एण्ड सहारनपुर फोरेस्ट.
8. कीर्तिकर,के. आर., बसु, वी.डी. (1935) — इन्डियन मेडिसिनल प्लान्ट्स (भाग–1से 4).
9. कोलेट, एच (1921) — फ्लोरा सिमलेन्सिस, कलकत्ता.
10. गुप्ता आर. के. (1968) — फ्लोरा नैनीतालेन्सिस, नई दिल्ली.
11. चोपड़ा, आर. एन. नायर, एस एल. (1966) ग्लासरी आफ इन्डियन मेडिसिनल प्लान्टस् (सी.एस. आई.आर).
12. ड़थी, जे. एफ. (1903-29) — फ्लोरा आफ अपर गंगेटिक प्लान्ट एण्ड ऐडजिसेन्ट शिवालिक एण्ड सवहिमालयन ट्रेक्टस् (भाग 1-3).
13. द्वारका प्रसाद उनियाल (1995) — उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक दस्तावेज प्रथमखण्ड, हिमालय टाईम्स.
14. नेथानी, वी.डी. (1964) — फ्लोरा आफ चमोली भाग दो, वॉटनिकल सर्वे आफ इन्डिया, हावड़ा.
15. पन्त, पी.सी. (1986) — फ्लोरा आफ कार्वेट नेशनल पार्क, वॉटनिकल सर्वे आफ इन्डिया.
16. पालीवाल, जी. एस. (1982) — दि वेजिटेशन वैल्थ आफ हिमालया, नई दिल्ली.
17. प्रेमस्वरूप सकलानि(1983) — हिमालय की सम्पदा.
18. डॉ. मायाराम उनियाल — उत्तराखण्ड वनौषधि दर्शिका, सी.सी.आर एस, भारत सरकार, नई दिल्ली.
19. डॉ. मायाराम उनियाल (1986) — मेडिसिनल फ्लोरा आफ गढ़वाल हिमालया, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि०; नागपुर.
20. डॉ. मायाराम उनियाल (1991) — प्रयोगात्मक अभिनव द्रव्यगुण विज्ञानम्, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि. पटना.
21. डॉ. मायाराम उनियाल (1994) — संस्कृत साहित्य में पर्यावरण एवं कालिदास की वनस्पतियाँ, श्री शर्मा आयुर्वेद मन्दिर, दतिया.
22. डॉ. मायाराम उनियाल (1995) — बिहार के आदिवासी एवं जड़ी–बूटियाँ, श्री वैद्यनाथ शोधसंस्थान, पटना.
23. डॉ. मोहन डवरवाल (1979) — हिमालयी पर्यावरण नियोजन एवं विकास के आधार तत्व.
24. यादव जी त्रिविक्रम आचार्य (1940) — द्रव्यगुण विज्ञानम् भाग दो, निर्णय सागर प्रेस, मुम्बई.
25. रनधावा, एम. ए. (1970) — दि कुमाऊँ हिमालया, नई दिल्ली.
26. राव, एम. ए. (1975) — हाई एटिट्यूट फ्लावरिंग प्लान्टस् आफ दि वेस्ट हिमालय, वो. सर्वे. हावड़ा.
27. डॉ शरदचन्द्र जोशीं एवं अन्य (1988) — पेड़ पौधों से वर्षभर चारा कैसे प्राप्त करें.
28. हूकर, जे. डी. (1872-1887) — फ्लोरा आफ ब्रिटिश इन्डिया, भाग 1 से 7.
29. स्मिथ, एफ. एस. (1938) — दि वैली आफ फ्लावर, लंदन.




Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Vaidyaraj Zandu Bhatji
National Ayurvedic Library
Punjabi Bagh, New Delhi-26
Call No.....
Book No.....
Acc No. 003674

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection